INDIA SCIENCE WIRE IN INDIAN MEDIA

AUGUST 2021 / Vol.5 / No. 8

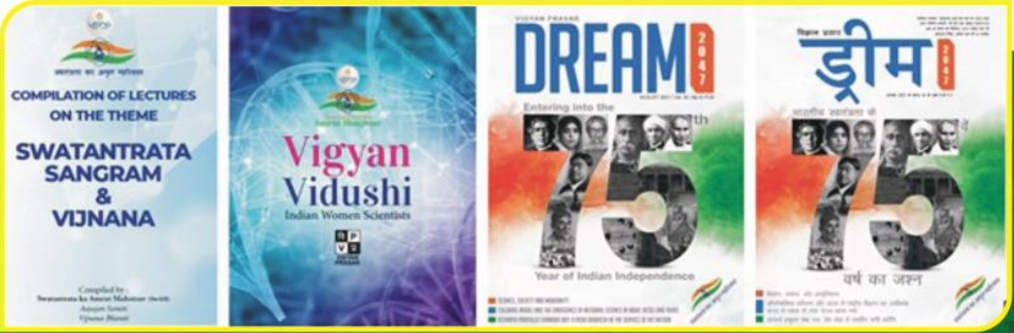

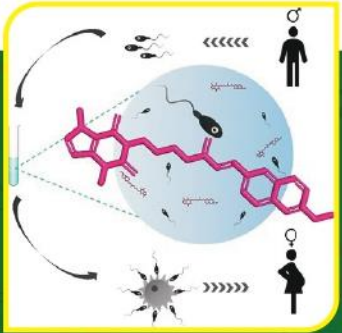

Highlights of India Science Wire (ISW) Stories

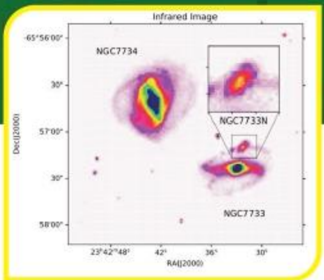

DST@ 1971-2021
विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग
DEPARTMENT OF SCIENCE & TECHNOLOGY

VIGYAN PRASAR

India Science Wire - highlighting Indian science in Indian media

The coverage of science and technology particularly relating to research done in Indian research institutions, is generally very poor in Indian media. There are several reasons for this situation, one of them being the lack of credible and relevant science content. In order to bridge this gap, Vigyan Prasar launched a unique initiative - India Science Wire (ISW) – in January 2017.

The news service is dedicated to developments in Indian research laboratories, universities and academic institutions. Almost all news stories released by this service are based on research papers by Indian scientists published in leading Indian and foreign journals. All news stories and features are written and edited by a team of professional science journalists with decades of experience in science journalism.

News stories based on happenings in Indian research labs are released to media houses on a daily basis. These stories are also uploaded on ISW website and are simultaneously promoted though social media – Twitter and Facebook. At present, the service is available in English and Hindi.

Reach out ISW Editor with story ideas, comments and suggestions at indiasciencewire@gmail.com

ISW website: http://vigyanprasar.gov.in/isw/isw.htm

ISW stories released and published in August 2021

S. No.	Story title	Date of release	Name of the writer
1.	आरंभिक गर्भाशय कैंसर की पहचान के लिए नया प्वाइंटकेयर उपकरण-ऑफ-	Aug 02	Ramanshi Mishra
2.	कोविड के इलाज में अश्वगंधा की उपयोगिता पर भारत और ब्रिटेन का साझा अध्ययन	Aug 02	Akash Popli
3.	Celebrating Indian scientists' contributions to independence movement	Aug 03	Sunderarajan Padmanabhan
4.	स्वाधीनता आंदोलन में भारतीय वैज्ञानिकों के योगदान का उत्सव	Aug 03	Umashankar Mishra
5.	इलेक्ट्रिक वाहनों में प्रयुक्त होने वाले मैग्नेट के निर्माण की नई तकनीक	Aug 04	Ramanshi Mishra
6.	भारत की 35 तितली प्रजातियों पर अस्तित्व का संकट	Aug 04	Umashankar Mishra
7.	लॉन्च हुआ भूकम्प की पूर्व चेतावनी देने वाला पहला मोबाइल ऐप	Aug 04	Akash Popli
8.	New polyhouse technology to help cultivate off-season crops	Aug 05	Umashankar Mishra
9.	पूर्वोत्तर में वैज्ञानिक शोध की अलख जगाएंगे सीडीआरआई और नाइपर	Aug 05	Umashankar Mishra
10.	New chairs to support research in IIT Delhi	Aug 06	Umashankar Mishra
11.	Researchers develop alternatives to curb antibiotic resistance	Aug 09	Umashankar Mishra
12.	ड्रेसिंग की नयी तकनीक से ठीक हो सकेंगे पुराने और जटिल घाव	Aug 09	Ramanshi Mishra
13.	Patent for KVIC technology to recycle plastic waste	Aug 10	Sunderarajan Padmanabhan

S. No.	Story title	Date of release	Name of the writer
14.	Scientists develop low-cost biodegradable wound dressing film	Aug 10	Umashankar Mishra
15.	जलवायु परिवर्तन पर 'रेड कोड अलर्ट'	Aug 10	Ramanshi Mishra
16.	Conference to highlight role of Indian scientists during independence movement	Aug 12	Sunderarajan Padmanabhan
17.	आईवीएफ की सफलता दर को और बेहतर बनाएगी नई तकनीक	Aug 12	Ramanshi Mishra
18.	नई वायुशोधक तकनीक विकसित कर - रहा है आईआईटी मद्रास	Aug 12	Ramanshi Mishra
19.	A new study may help make spinach leaf look like lettuce	Aug 17	Sunderarajan Padmanabhan
20.	Fifth edition of National Bio Entrepreneurship Competition launched	Aug 17	Sunderarajan Padmanabhan
21.	Film festival highlighting role of scientists in Indian independence movement concludes	Aug 18	Sunderarajan Padmanabhan
22.	Pineapple agroforestry could help tackle climate change and biodiversity loss	Aug 18	Umashankar Mishra
23.	भारत ने पार किया 50 करोड़ कोविड-19 नमूनों के परीक्षण का आंकड़ा	Aug 19	Umashankar Mishra
24.	Research paves way for better drugs for breast cancer	Aug 23	Sunderarajan Padmanabhan
25.	Researchers develop modified cotton fabric against harmful air pollutants	Aug 23	Umashankar Mishra
26.	"उद्योग, स्टार्टअप और अकादमिक जगत को सशक्त करेंगे 'साथी' केंद्र"	Aug 24	Umashankar Mishra
27.	First mRNA-based COVID 19 vaccine gets nod for phase II/III	Aug 24	Sunderarajan Padmanabhan

S. No.	Story title	Date of release	Name of the writer
	trial		
28.	Potential game-changer Indian vaccine for COVID-19	Aug 24	Sunderarajan Padmanabhan
29.	New algorithm boosts energy efficiency of wireless network	Aug 25	Umashankar Mishra
30.	आईआईटी मद्रास ने विकसित की उन्नत मोटर चालित व्हीलचेयर	Aug 25	Ramanshi Mishra
31.	Government incentive in offing for 75 start-ups in telemedicine, artificial intelligence, and digital health	Aug 26	Sunderarajan Padmanabhan
32.	Planet of possibilities-MARS	Aug 26	Dileep Mavalankar
33.	Vaccine against Chikungunya in making	Aug 26	Sunderarajan Padmanabhan
34.	आईआईटी गुवहाटी ने विकसित किया उन्नत ऊर्जा-भंडारण उपकरणों के लिए हाइड्रोजेल आधारित इलेक्ट्रोड्स	Aug 26	Ramanshi Mishra
35.	Roman Catholics of India's western coast genetically close to Gaud Saraswat Brahmins: Study	Aug 27	Sunderarajan Padmanabhan
36.	Study paves way for better energy storage devices	Aug 27	Sunderarajan Padmanabhan
37.	पूर्वोत्तर में 'वैज्ञानिक सामाजिक उत्तरदायित्व' का वाहक बना सीएसआईआर संस्थान	Aug 27	Umashankar Mishra
38.	New online platform to promote reuse, repair, recycle e-waste	Aug 31	Sunderarajan Padmanabhan
39.	वैज्ञानिकों को मिले निकटवर्ती आकाशगंगा में विलीन होते विशालकाय ब्लैक-होल	Aug 31	Umashankar Mishra

आरंभिक गर्भाशय कैंसर की पहचान के लिए नया पॉइंट-केयर उपकरण-ऑफ

गर्भाशय का कैंसर एक प्रकार का 'साइलेंट किलर' है क्योंकि शुरुआती अवस्था में इसके कोई विशेष लक्षण नहीं उभरते और अग्रिम चरण में जाकर ही गर्भाशय कैंसर के लक्षण प्रभावी रूप से प्रत्यक्ष होते हैं।

By amalendu upadhyay | Mon, 2 Aug 2021

New point-of-care tool for early uterine cancer detection

सबसे जानलेवा बीमारियों में से एक है कैंसर

नई दिल्ली, 02 अगस्त: कैंसर **सबसे जानलेवा बीमारियों में से एक है**। इसके उपचार की दिशा में प्रगति तो हुई है, परंतु इसके लिए बीमारी की शुरुआती अवस्था में ही उसका पता चल जाना आवश्यक है। तमाम प्रयासों के बावजूद **महिलाओं**

में **[गर्भाशय के कैंसर]** **की आरंभिक अवस्था में पहचान (Early detection of [uterine cancer] in women)** एक चुनौती रही है। **भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी)** ने **चेन्नई स्थित कैंसर इंस्टीट्यूट** (डब्ल्यूआईएके साथ मिलकर एक (ऑ-पाइंटफकेयर डिवाइस बनाने की ओर अग्रसर है-, जो महिलाओं में गर्भाशय के कैंसर का शुरुआती स्तर पर पता लगाने में मददगार होगी।

महिलाओं के कैंसर में सातवें स्थान पर आता है गर्भाशय कैंसर

आईआईटी मद्रास द्वारा जारी वक्तव्य में बताया गया है कि महिलाओं में जो कैंसर होते हैं**,** उनमें गर्भाशय कैंसर सातवें स्थान पर आता है। वहीं, कैंसर से होने वाली मौतों के मामले में गर्भाशय कैंसर आठवें स्थान पर आंका गया है।

वर्ष **2020** में विश्वभर में गर्भाशय कैंसर के कुल **3,14,000** मामले सामने आए**,** जिनमें से **44,000** भारत में दर्ज किए गए। जहां तक इससे होने वाली मौतों का प्रश्न है तो वर्ष **2020** में दुनिया भर में गर्भाशय कैंसर से **2,07,000** महिलाओं की मौत हुई**,** जिनमें से **32,077** भारतीय महिलाएं थीं। **गर्भाशय कैंसर से होने वाली मौतों (Uterine cancer deaths)** में वे महिलाएं भी शामिल हैं, जिनकी बीमारी शुरुआती स्तर पर ही पकड़ में आ गई थी।

एक 'साइलेंट किलर' है गर्भाशय का कैंसर | Uterine cancer is a 'silent killer'

गर्भाशय का कैंसर एक प्रकार का 'साइलेंट किलर' है क्योंकि शुरुआती अवस्था में इसके कोई विशेष लक्षण नहीं उभरते और अग्रिम चरण में जाकर ही **गर्भाशय कैंसर के लक्षण** प्रभावी रूप से प्रत्यक्ष होते हैं। विश्वसनीय उत्पादों या सटीक परीक्षणों का अभाव भी गर्भाशय कैंसर की शुरुआती अवस्था में पहचान को कठिन बना देता है। ऐसे में, आईआईटी मद्रास और डब्ल्यूएआई की यह पहल बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

कैंसर इंस्टीट्यूट में डिपार्टमेंट ऑफ मॉलिक्यूलर ऑन्कोलॉजी)department of molecular oncology) के प्रोफेसर और विभाग प्रमुख डॉ राजकुमार कहते हैं .टी .–

'गर्भाशय के कैंसर की शुरुआती अवस्था में ही पड़ताल को लेकर हुए शोध में हमने गर्भाशय कैंसर की 138 मरीजों, 20 बेनाइन गर्भाशय कैंसर के मरीज और (कम गंभीर)238 स्वस्थ व्यक्तियों के रक्त के नमूने लिए। इस शोध में प्रोटीन की प्रारंभिक पहचान के लिए लम्बी प्रोटीन श्रृंखलाओं के प्रोटिओमिक्स पर आधारित मात्रात्मक विश्लेषण किया गया। इनमें 507 रक्त प्रोटीन स्वस्थ व्यक्तियों की अपेक्षा एपिथिलियल ओवेरियन कैंसर में अलग तरह से दिखे।'

इस साझा के संबंध में आईआईटी मद्रास के एप्लाइड मैकेनिक्स विभाग के बायोमेडिकल इंजीनियरिंग के एसोसिएट प्रोफेसर डॉ वी वी राघवेन्द्र साई कहते हैं, 'यह साझेदारी हमें चिकित्सकों के साथ मिलकर काम करने और क्लीनिकल डायग्नोसिस में आने वाली बधाओं के निदान पर सक्रिय प्रणाली विकसित करने का एक बेहतरीन अवसर प्रदान करेगी। हमारा लक्ष्य एक अत्याधुनिक निदान प्रणाली को विकसित करना है ताकि कैंसर की जांच और उसके इलाज के तरीके में बेहतरी लाई जा सके।' **(इंडिया साइंस वायर(**

आरंभिक गर्भाशय कैंसर की पहचान के लिए नया प्वाइंटकेय-ऑफ-र उपकरण

By RD Times Hindi | August 3, 2021

नई दिल्ली: कैंसर सबसे जानलेवा बीमारियों में से एक है। इसके उपचार की दिशा में प्रगति तो हुई है, परंतु इसके लिए बीमारी की शुरुआती अवस्था में ही उसका पता चल जाना आवश्यक है। तमाम प्रयासों के बावजूद महिलाओं में गर्भाशय के कैंसर की आरंभिक अवस्था में पहचान एक चुनौती रही है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान केयर -ऑफ-के साथ मिलकर एक पाइंट (डब्ल्यूआईए) ने चेन्नई स्थित कैंसर इंस्टीट्यूट(आईआईटी) डिवाइस बनाने की ओर अग्रसर है, जो महिलाओं में गर्भाशय के कैंसर का शुरुआती स्तर पर पता लगाने में मददगार होगी।

आईआईटी मद्रास द्वारा जारी वक्तव्य में बताया गया है कि महिलाओं में जो कैंसर होते हैं, उनमें गर्भाशय कैंसर सातवें स्थान पर आता है। वहीं, कैंसर से होने वाली मौतों के मामले में यह आठवें स्थान पर आंका गया है। वर्ष **2020** में विश्वभर में गर्भाशय कैंसर के कुल **3,14,000** मामले सामने आए, जिनमें से **44,000** भारत में दर्ज

किए गए। जहां तक इससे होने वाली मौतों का प्रश्न है तो वर्ष **2020** में दुनिया भर में गर्भाशय कैंसर से **2,07,000** महिलाओं की मौत हुई**,** जिनमें से **32,077** भारतीय महिलाएं थीं।इससे होने वाली मौतों में वे महिलाएं भी शामिल हैं, जिनकी बीमारी शुरुआती स्तर पर ही पकड़ में आ गई थी।

गर्भाशय का कैंसर एक प्रकार का’साइलेंट किलर’ हैक्योंकि शुरुआती अवस्था में इसके कोई विशेष लक्षण नहीं उभरतेऔर अग्रिम चरण में जाकर ही इस बीमारी के लक्षण प्रभावी रूप से प्रत्यक्ष होते हैं। विश्वसनीय उत्पादों या सटीक परीक्षणों का अभाव भी गर्भाशय कैंसर की शुरुआती अवस्था में पहचान को कठिन बना देता है। ऐसे में, आईआईटी मद्रास और डब्ल्यूएआई की यह पहल बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

कैंसर इंस्टीट्यूट में डिपार्टमेंट ऑफ मॉलिक्यूलर ओन्कोलॉजी के प्रोफेसर और विभाग प्रमुख डॉराजकुमार .टी . कहते हैं– ‘गर्भाशय के कैंसर की शुरुआती अवस्था में ही पड़ताल को लेकर हुए शोध में हमने गर्भाशय कैंसर की 138मरीजों, 20 बेनाइन गर्भाशय कैंसर (कम गंभीर) के मरीज और 238 स्वस्थ व्यक्तियों के रक्त के नमूने लिए। इस शोध में प्रोटीन की प्रारंभिक पहचान के लिए लम्बी प्रोटीन श्रृंखलाओं के प्रोटिओमिक्स पर आधारित मात्रात्मक विश्लेषण किया गया। इनमें 507 रक्त प्रोटीन स्वस्थ व्यक्तियों की अपेक्षा एपिथिलियल ओवेरियन कैंसर मेंअलग तरह से दिखे।’

इस साझा के संबंध में आईआईटी मद्रास के एप्लाइड मैकेनिक्स विभाग के बायोमेडिकल इंजीनियरिंग के एसोसिएट प्रोफेसर डॉ वी वी राघवेन्द्र साई कहते हैं, ‘यह साझेदारी हमें चिकित्सकों के साथ मिलकर काम करने और क्लीनिकल डायग्नोसिस में आने वाली बधाओं के निदान पर सक्रिय प्रणाली विकसित करने का एक बेहतरीन अवसर प्रदान करेगी। हमारा लक्ष्य एक अत्याधुनिक निदान प्रणाली को विकसित करना है ताकिकैंसर की जांच और उसके इलाज के तरीके में बेहतरी लाई जा सके।’ (इंडिया साइंस वायर(

आरंभिक गर्भाशय कैंसर की पहचान के लिए नया प्वाइंटयर उपकरणके-ऑफ-

By Ram Bharose

अगस्त 2, 2021 IIT Madras, कैंसर

In India, around 5.8 lakh new cases of cancers were diagnosed in women in 2018

नई दिल्ली, 02 अगस्तरियों में से एक है। इसके उपचार की दिशा में प्रगति तो हुई कैंसर सबसे जानलेवा बीमा : है, परंतु इसके लिए बीमारी की शुरुआती अवस्था में ही उसका पता चल जाना आवश्यक है। तमाम प्रयासों के बावजूद महिलाओं में गर्भाशय के कैंसर की आरंभिक अवस्था में पहचान एक चुनौती रही है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान)आईआईटी) ने चेन्नई स्थित कैंसर इंस्टीट्यूट -के साथ मिलकर एक पाइंट (डब्ल्यूआईए) केयर डि-ऑफवाइस बनाने की ओर अग्रसर है, जो महिलाओं में गर्भाशय के कैंसर का शुरुआती स्तर पर पता लगाने में मददगार होगी।

महिलाओं के कैंसर में सातवें स्थान पर आता है गर्भाशय कैंसर

आईआईटी मद्रास द्वारा जारी वक्तव्य में बताया गया है कि महिलाओं में जो कैंसर होते हैं, उनमें गर्भाशय कैंसर सातवें स्थान पर आता है। वहीं, कैंसर से होने वाली मौतों के मामले में यह आठवें स्थान पर आंका गया है। वर्ष **2020** में विश्वभर में गर्भाशय कैंसर के कुल **3,14,000** मामले सामने आए, जिनमें से **44,000** भारत में दर्ज किए गए। जहां तक इससे होने वाली मौतों का प्रश्न है तो वर्ष **2020** में दुनिया भर में गर्भाशय कैंसर से **2,07,000** महिलाओं की मौत हुई, जिनमें से **32,077** भारतीय महिलाएं थीं। इससे होने वाली मौतों में वे महिलाएं भी शामिल हैं, जिनकी बीमारी शुरुआती स्तर पर ही पकड़ में आ गई थी।

एक प्रकार का 'साइलेंट किलर' है गर्भाशय का कैंसर

गर्भाशय का कैंसर एक प्रकार का 'साइलेंट किलर' है क्योंकि शुरुआती अवस्था में इसके कोई विशेष लक्षण नहीं उभरते और अग्रिम चरण में जाकर ही इस बीमारी के लक्षण प्रभावी रूप से प्रत्यक्ष होते हैं। विश्वसनीय उत्पादों या सटीक परीक्षणों का अभाव भी गर्भाशय कैंसर की शुरुआती अवस्था में पहचान को कठिन बना देता है। ऐसे में, आईआईटी मद्रास और डब्ल्यूएआई की यह पहल बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

कैंसर इंस्टीट्यूट में डिपार्टमेंट ऑफ मॉलिक्यूलर ओन्कोलॉजी के प्रोफेसर और विभाग प्रमुख डॉराजकुमार .टी . कहते हैं– 'गर्भाशय के कैंसर की शुरुआती अवस्था में ही पड़ताल को लेकर हुए शोध में हमने गर्भाशय कैंसर की 138 मरीजों, 20 बेनाइन गर्भाशय कैंसर के मरीज और (कम गंभीर)238 स्वस्थ व्यक्तियों के रक्त के नमूने लिए। इस शोध में प्रोटीन की प्रारंभिक पहचान के लिए लम्बी प्रोटीन श्रृंखलाओं के प्रोटिओमिक्स पर आधारित मात्रात्मक विश्लेषण किया गया। इनमें 507 रक्त प्रोटीन स्वस्थ व्यक्तियों की अपेक्षा एपिथिलियल ओवेरियन कैंसर में अलग तरह से दिखे।'

इस साझा के संबंध में **आईआईटी मद्रास)IIT Madras)** के एप्लाइड मैकेनिक्स विभाग के बायोमेडिकल इंजीनियरिंग के एसोसिएट प्रोफेसर डॉ वी वी राघवेन्द्र साई कहते हैं, 'यह साझेदारी हमें चिकित्सकों के साथ मिलकर काम करने और क्लीनिकल डायग्नोसिस में आने वाली बधाओं के निदान पर सक्रिय प्रणाली विकसित करने का एक बेहतरीन अवसर प्रदान करेगी। हमारा लक्ष्य एक अत्याधुनिक निदान प्रणाली को विकसित करना है ताकि कैंसर की जांच और उसके इलाज के तरीके में बेहतरी लाई जा सके।' (इंडिया साइंस वायर(

आरंभिक गर्भाशय कैंसर की पहचान के लिए नया प्वाइंटकेयर उपकरण-ऑफ-

August 3, 2021

नई दिल्ली: कैंसर सबसे जानलेवा बीमारियों में से एक है। इसके उपचार की दिशा में प्रगति तो हुई है, परंतु इसके लिए बीमारी की शुरुआती अवस्था में ही उसका पता चल जाना आवश्यक है। तमाम प्रयासों के बावजूद महिलाओं में गर्भाशय के कैंसर की आरंभिक अवस्था में पहचान एक चुनौती रही है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान ने (आईआईटी) केयर डिवाइस बनाने की ओर अग्रसर -ऑफ-के साथ मिलकर एक पाइंट (डब्ल्यूआईए) चेन्नई स्थित कैंसर इंस्टीट्यूट है, जो महिलाओं में गर्भाशय के कैंसर का शुरुआती स्तर पर पता लगाने में मददगार होगी।

आईआईटी मद्रास द्वारा जारी वक्तव्य में बताया गया है कि महिलाओं में जो कैंसर होते हैं**,** उनमें गर्भाशय कैंसर सातवें स्थान पर आता है। वहीं, कैंसर से होने वाली मौतों के मामले में यह आठवें स्थान पर आंका गया है।

वर्ष **2020** में विश्वभर में गर्भाशय कैंसर के कुल **3,14,000** मामले सामने आए**,** जिनमें से **44,000** भारत में दर्ज

किए गए। जहां तक इससे होने वाली मौतों का प्रश्न है तो वर्ष **2020** में दुनिया भर में गर्भाशय कैंसर से **2,07,000** महिलाओं की मौत हुई**,** जिनमें से **32,077** भारतीय महिलाएं थीं।इससे होने वाली मौतों में वे महिलाएं भी शामिल हैं, जिनकी बीमारी शुरुआती स्तर पर ही पकड़ में आ गई थी।

गर्भाशय का कैंसर एक प्रकार का'साइलेंट किलर' हैक्योंकि शुरुआती अवस्था में इसके कोई विशेष लक्षण नहीं उभरतेऔर अग्रिम चरण में जाकर ही इस बीमारी के लक्षण प्रभावी रूप से प्रत्यक्ष होते हैं। विश्वसनीय उत्पादों या सटीक परीक्षणों का अभाव भी गर्भाशय कैंसर की शुरुआती अवस्था में पहचान को कठिन बना देता है। ऐसे में, आईआईटी मद्रास और डब्ल्यूएआई की यह पहल बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

कैंसर इंस्टीट्यूट में डिपार्टमेंट ऑफ मॉलिक्यूलर ओन्कोलॉजी के प्रोफेसर और विभाग प्रमुख डॉराजकुमार कहते .टी . हैं– 'गर्भाशय के कैंसर की शुरुआती अवस्था में ही पड़ताल को लेकर हुए शोध में हमने गर्भाशय कैंसर की 138मरीजों, 20 बेनाइन गर्भाशय कैंसर के म (कम गंभीर)रीज और 238 स्वस्थ व्यक्तियों के रक्त के नमूने लिए। इस शोध में प्रोटीन की प्रारंभिक पहचान के लिए लम्बी प्रोटीन श्रृंखलाओं के प्रोटिओमिक्स पर आधारित मात्रात्मक विश्लेषण किया गया। इनमें 507 रक्त प्रोटीन स्वस्थ व्यक्तियों की अपेक्षा एपिथिलियल ओवेरियन कैंसर मेंअलग तरह से दिखे।'

इस साझा के संबंध में आईआईटी मद्रास के एप्लाइड मैकेनिक्स विभाग के बायोमेडिकल इंजीनियरिंग के एसोसिएट प्रोफेसर डॉ वी वी राघवेन्द्र साई कहते हैं, 'यह साझेदारी हमें चिकित्सकों के साथ मिलकर काम करने और क्लीनिकल डायग्नोसिस में आने वाली बधाओं के निदान पर सक्रिय प्रणाली विकसित करने का एक बेहतरीन अवसर प्रदान करेगी। हमारा लक्ष्य एक अत्याधुनिक निदान प्रणाली को विकसित करना है ताकिकैंसर की जांच और उसके इलाज के तरीके में बेहतरी लाई जा सके।' (इंडिया साइंस वायर(

आरंभिक गर्भाशय कैंसर की पहचान के लिए नया प्वाइंटकेयर उपकरण-ऑफ-

03/08/2021

V3news India

(इंडिया साइंस वायरकैंसर सबसे जानलेवा बीमारियों में से एक है। इसके उपचार की दिशा में प्रगति तो हुई है :(, परंतु इसके लिए बीमारी की शुरुआती अवस्था में ही उसका पता चल जाना आवश्यक है। तमाम प्रयासों के बावजूद महिलाओं में गर्भाशय के कैंसर की आरंभिक अवस्था में पहचान एक चुनौती रही है।

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान -ऑफ-के साथ मिलकर एक पाइंट (डब्ल्यूआईए) ने चेन्नई स्थित कैंसर इंस्टीट्यूट (आईआईटी) केयर डिवाइस बनाने की ओर अग्रसर है, जो महिलाओं में गर्भाशय के कैंसर का शुरुआती स्तर पर पता लगाने में मददगार होगी। आईआईटी मद्रास द्वारा जारी वक्तव्य में बताया गया है कि महिलाओं में जो कैंसर होते हैं, उनमें गर्भाशय कैंसर सातवें स्थान पर आता है।

वहीं, कैंसर से होने वाली मौतों के मामले में यह आठवें स्थान पर आंका गया है। वर्ष 2020 में विश्वभर में गर्भाशय कैंसर के कुल 3,14,000 मामले सामने आए, जिनमें से 44,000 भारत में दर्ज किए गए। जहां तक इससे होने वाली मौतों का प्रश्न है

तो वर्ष 2020 में दुनिया भर में गर्भाशय कैंसर से 2,07,000 महिलाओं की मौत हुई, जिनमें से 32,077 भारतीय महिलाएं थीं। इससे होने वाली मौतों में वे महिलाएं भी शामिल हैं, जिनकी बीमारी शुरुआती स्तर पर ही पकड़ में आ गई थी।

गर्भाशय का कैंसर एक प्रकार का 'साइलेंट किलर' है क्योंकि शुरुआती अवस्था में इसके कोई विशेष लक्षण नहीं उभरते और अग्रिम चरण में जाकर ही इस बीमारी के लक्षण प्रभावी रूप से प्रत्यक्ष होते हैं। विश्वसनीय उत्पादों या सटीक परीक्षणों का अभाव भी गर्भाशय कैंसर की शुरुआती अवस्था में पहचान को कठिन बना देता है। ऐसे में, आईआईटी मद्रास और डब्ल्यूएआई की यह पहल बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

कैंसर इंस्टीट्यूट में डिपार्टमेंट ऑफ मॉलिक्यूलर ओन्कोलॉजी के प्रोफेसर और विभाग प्रमुख डॉ राजकुमार कहते हैं .टी .– 'गर्भाशय के कैंसर की शुरुआती अवस्था में ही पड़ताल को लेकर हुए शोध में हमने गर्भाशय कैंसर की 138 मरीजों, 20 बेनाइन कम गं)भीर गर्भाशय कैंसर के मरीज और (238 स्वस्थ व्यक्तियों के रक्त के नमूने लिए।

इस शोध में प्रोटीन की प्रारंभिक पहचान के लिए लम्बी प्रोटीन श्रृंखलाओं के प्रोटिओमिक्स पर आधारित मात्रात्मक विश्लेषण किया गया। इनमें 507 रक्त प्रोटीन स्वस्थ व्यक्तियों की अपेक्षा एपिथिलियल ओवेरियन कैंसर में अलग तरह से दिखे।

'इस साझा के संबंध में आईआईटी मद्रास के एप्लाइड मैकेनिक्स विभाग के बायोमेडिकल इंजीनियरिंग के एसोसिएट प्रोफेसर डॉ वी वी राघवेन्द्र साई कहते हैं, 'यह साझेदारी हमें चिकित्सकों के साथ मिलकर काम करने और क्लीनिकल डायग्नोसिस में आने वाली बधाओं के निदान पर सक्रिय प्रणाली विकसित करने का एक बेहतरीन अवसर प्रदान करेगी। हमारा लक्ष्य एक अत्याधुनिक निदान प्रणाली को विकसित करना है ताकि कैंसर की जांच और उसके इलाज के तरीके में बेहतरी लाई जा सके।'

रिपब्लिक न्यूज़इंडिया

आरंभिक गर्भाशय कैंसर की पहचान के लिए नया प्वाइंटकेयर उपकरण-ऑफ-

By **Rupesh Dharmik** - August 3, 2021

नई दिल्ली: कैंसर सबसे जानलेवा बीमारियों में से एक है। इसके उपचार की दिशा में प्रगति तो हुई है, परंतु इसके लिए बीमारी की शुरुआती अवस्था में ही उसका पता चल जाना आवश्यक है। तमाम प्रयासों के बावजूद महिलाओं में गर्भाशय के कैंसर की आरंभिक अवस्था में पहचान एक चुनौती रही है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान के साथ (डब्ल्यूआईए) ने चेन्नई स्थित कैंसर इंस्टीट्यूट(आईआईटी) मिलकर एक पाइंटयर डिवाइस बनाने की ओर अग्रसर हैके-ऑफ-, जो महिलाओं में गर्भाशय के कैंसर का शुरुआती स्तर पर पता लगाने में मददगार होगी।

आईआईटी मद्रास द्वारा जारी वक्तव्य में बताया गया है कि महिलाओं में जो कैंसर होते हैं, उनमें गर्भाशय कैंसर सातवें स्थान पर आता है। वहीं, कैंसर से होने वाली मौतों के मामले में यह आठवें स्थान पर आंका गया है। वर्ष **2020** में विश्वभर में गर्भाशय कैंसर के कुल **3,14,000** मामले सामने आए, जिनमें से **44,000** भारत में दर्ज किए गए। जहां तक इससे होने वाली मौतों का प्रश्न है तो वर्ष **2020** में दुनिया भर में गर्भाशय कैंसर से **2,07,000** महिलाओं की मौत हुई, जिनमें से **32,077** भारतीय महिलाएं थीं।इससे होने वाली मौतों में वे महिलाएं भी शामिल हैं, जिनकी बीमारी शुरुआती स्तर पर ही पकड़ में आ गई थी।

गर्भाशय का कैंसर एक प्रकार का'साइलेंट किलर' हैक्योंकि शुरुआती अवस्था में इसके कोई विशेष लक्षण नहीं उभरतेऔर अग्रिम चरण में जाकर ही इस बीमारी के लक्षण प्रभावी रूप से प्रत्यक्ष होते हैं। विश्वसनीय उत्पादों या सटीक परीक्षणों का अभाव भी गर्भाशय कैंसर की शुरुआती अवस्था में पहचान को कठिन बना देता है। ऐसे में, आईआईटी मद्रास और डब्ल्यूएआई की यह पहल बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

कैंसर इंस्टीट्यूट में डिपार्टमेंट ऑफ मॉलिक्यूलर ओन्कोलॉजी के प्रोफेसर और विभाग प्रमुख डॉ .टी . राजकुमार कहते हैं– 'गर्भाशय के कैंसर की शुरुआती अवस्था में ही पड़ताल को लेकर हुए शोध में हमने गर्भाशय कैंसर की 138मरीजों, 20 बेनाइन गर्भाशय कैंसर के मरीज और (कम गंभीर)238 स्वस्थ व्यक्तियों के रक्त के नमूने लिए। इस शोध में प्रोटीन की प्रारंभिक पहचान के लिए लम्बी प्रोटीन श्रृंखलाओं के प्रोटिओमिक्स पर आधारित मात्रात्मक विश्लेषण किया गया। इनमें 507 रक्त प्रोटीन स्वस्थ व्यक्तियों की अपेक्षा एपिथिलियल ओवेरियन कैंसर मेंअलग तरह से दिखे।'

इस साझा के संबंध में आईआईटी मद्रास के एप्लाइड मैकेनिक्स विभाग के बायोमेडिकल इंजीनियरिंग के एसोसिएट प्रोफेसर डॉ वी वी राघवेन्द्र साई कहते हैं, 'यह साझेदारी हमें चिकित्सकों के साथ मिलकर काम करने और क्लीनिकल डायग्रोसिस में आने वाली बधाओं के निदान पर सक्रिय प्रणाली विकसित करने का एक बेहतरीन अवसर प्रदान करेगी। हमारा लक्ष्य एक अत्याधुनिक निदान प्रणाली को विकसित करना है ताकिकैंसर की जांच और उसके इलाज के तरीके में बेहतरी लाई जा सके।'
(इंडिया साइंस वायर(

गाँव कनेक्शन

गर्भाशय कैंसर की शुरूआत में ही पहचान कर लेगा प्वाइंटकेयर उपकरण-ऑफ-

आईआईटी मद्रास, चेन्नई स्थित कैंसर इंस्टीट्यूट केयर डिवाइस बनाने जा -ऑफ-के साथ मिलकर एक पाइंट (डब्ल्यूआईए) रही, जो महिलाओं में गर्भाशय के कैंसर का शुरुआती स्तर पर पता लगाने में मददगार होगी।

India Science Wire 3 Aug 2021

कैंसर सबसे जानलेवा बीमारियों में से एक है। इसके उपचार की दिशा में प्रगति तो हुई है, परंतु इसके लिए बीमारी की शुरुआती अवस्था में ही उसका पता चल जाना आवश्यक है। तमाम प्रयासों के बावजूद महिलाओं में गर्भाशय के कैंसर की आरंभिक अवस्था में पहचान एक चुनौती रही है।

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान मद्रास, चेन्नई स्थित कैंसर इंस्टीट्यूट केयर -ऑफ-के साथ मिलकर एक पाइंट (डब्ल्यूआईए) डिवाइस बनाने की ओर अग्रसर है, जो महिलाओं में गर्भाशय के कैंसर का शुरुआती स्तर पर पता लगाने में मददगार होगी।

आईआईटी मद्रास द्वारा जारी वक्तव्य में बताया गया है कि महिलाओं में जो कैंसर होते हैं, उनमें गर्भाशय कैंसर सातवें स्थान पर आता है। वहीं, कैंसर से होने वाली मौतों के मामले में यह आठवें स्थान पर आंका गया है। वर्ष 2020 में विश्वभर में गर्भाशय कैंसर के कुल 3,14,000 मामले सामने आए, जिनमें से 44,000 भारत में दर्ज किए गए। जहां तक इससे होने

वाली मौतों का प्रश्न है तो वर्ष 2020 में दुनिया भर में गर्भाशय कैंसर से 2,07,000 महिलाओं की मौत हुई, जिनमें से 32,077 भारतीय महिलाएं थीं। इससे होने वाली मौतों में वे महिलाएं भी शामिल हैं, जिनकी बीमारी शुरुआती स्तर पर ही पकड़ में आ गई थी।

गर्भाशय का कैंसर एक प्रकार का'साइलेंट किलर' है क्योंकि शुरुआती अवस्था में इसके कोई विशेष लक्षण नहीं उभरते और अग्रिम चरण में जाकर ही इस बीमारी के लक्षण प्रभावी रूप से प्रत्यक्ष होते हैं। विश्वसनीय उत्पादों या सटीक परीक्षणों का अभाव भी गर्भाशय कैंसर की शुरुआती अवस्था में पहचान को कठिन बना देता है। ऐसे में, आईआईटी मद्रास और डब्ल्यूएआई की यह पहल बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकती है।

कैंसर इंस्टीट्यूट में डिपार्टमेंट ऑफ मॉलिक्यूलर ओन्कोलॉजी के प्रोफेसर और विभाग प्रमुख डॉराजकुमार कहते हैं .टी ., "गर्भाशय के कैंसर की शुरुआती अवस्था में ही पड़ताल को लेकर हुए शोध में हमने गर्भाशय कैंसर की 138मरीजों, 20 बेनाइन गर्भाशय कैंसर के मरीज और (कम गंभीर)238 स्वस्थ व्यक्तियों के रक्त के नमूने लिए। इस शोध में प्रोटीन की प्रारंभिक पहचान के लिए लम्बी प्रोटीन श्रृंखलाओं के प्रोटिओमिक्स पर आधारित मात्रात्मक विश्लेषण किया गया। इनमें 507 रक्त प्रोटीन स्वस्थ व्यक्तियों की अपेक्षा एपिथिलियल ओवेरियन कैंसर मेंअलग तरह से दिखे।'

इस साझा के संबंध में आईआईटी मद्रास के एप्लाइड मैकेनिक्स विभाग के बायोमेडिकल इंजीनियरिंग के एसोसिएट प्रोफेसर डॉ वी वी राघवेन्द्र साई कहते हैं, 'यह साझेदारी हमें चिकित्सकों के साथ मिलकर काम करने और क्लीनिकल डायग्नोसिस में आने वाली बधाओं के निदान पर सक्रिय प्रणाली विकसित करने का एक बेहतरीन अवसर प्रदान करेगी। हमारा लक्ष्य एक अत्याधुनिक निदान प्रणाली को विकसित करना है ताकि कैंसर की जांच और उसके इलाज के तरीके में बेहतरी लाई जा सके।'

रिपब्लिक न्यूज़ इंडिया

कोविड के इलाज में अश्वगंधा की उपयोगिता पर भारत और ब्रिटेन का साझा अध्ययन

By **Rupesh Dharmik** - August 3, 2021

अश्वगंधा की जड़े और पाउडर फोटो)– क्रिएटिव कॉमन्स(

नई दिल्ली : भारतीय आयुर्वेदमें अश्वगंधा को तनाव कम करने वाली औषधि के रूप में जाना जाता है जो रोगप्र-तिरोधक क्षमता प्रणाली को मजबूत भी बनाता है। कोरोना महामारी के दौरानसभी का ध्यान भारतीय पारंपरिक चिकित्सा पद्धति आयुर्वेद की ओर आकर्षित हुआ है ताकि इस दिशा में नए शोधचिकित्सा के विरुद्ध औषधीय विकल्प तलाशे जा सकें। हाल ही में आयुष -अध्ययनों द्वारा कोरोना-

मंत्रालय ने कोरोना से उबरने में परंपरागत जड़ीकरने के लिए बूटी अश्वगंधा के लाभों का अध्ययन- के साथ एक सहमति (एलएसएचटीएम) ब्रिटेन के लंदन स्कूल ऑफ हाइजिन एंड ट्रॉपिकल मेडिसिन पत्र पर हस्ताक्षर किए हैं।

इस सहमति पत्र में आयुष मंत्रालय के अधीन स्वायत्त संस्था अखिल भारतीय आयुर्वेद संस्थान सिस्टरतथा एलएसएचटीएम ने ब्रिटेन के तीन शहरों ले (एआईआईए), बर्मिंघम और लंदन साउथ हॉल) में दो हजारलोगों पर अश्वगंधा का चिकित्सीय परीक्षण करने के लिए समझौता ज्ञापन पर (और वेंबले हस्ताक्षर किए हैं।

इस शोध अध्ययन में एलएसएचटीएम के डॉ संजय किनरा अध्ययन के अध्यक्ष होंगे तो वहीं, एआईआईए की निदेशक डॉ तनुजा मनोज नेसारी और इस परियोजना में अंतरराष्ट्रीय परियोजनाओं के समन्वयक डॉ राजगोपालन के साथ सहअन्वेषक की भूमिका में होंगे।-

डॉ तनुजा मनोज नेसारी ने कहा है कि तीन महीने तक एक हजार प्रतिभागियों के एक समूह को अश्वगंधा की गोलियां दी जाएंगी जबकि इतने ही लोगों के दूसरे समूह को इसी के समान दिखने वाली अन्य गोलियां दी जाएंगी। किसे कौन सी गोली दी गई है, इस बारे में मरीजों यहां तक कि चिकित्सकों को भी नहीं बताया जाएगा।

इस शोध अध्ययन में प्रतिभागियों को दिन में दो बार 500 मिलीग्राम की गोलियां लेनी होंगी औरइसके साथ ही एक मासिक रिपोर्ट तैयार की जाएगी जिसमें दैनिक जीवन की गतिविधियों, मानसिक एवं स्वास्थ्य लक्षणों के साथसाथ सभी पूरक और प्रतिकूल घटनाओं का भी एक रिकॉर्ड रखा जाएगा।-

डॉ नेसारी ने कहा कि एमओयू पर हस्ताक्षर करने के लिए राजनयिक और नियामक दोनों चैनलों के माध्यम से लगभग 16 महीनों में 100 से अधिक बैठके हुई हैं। उन्होंने कहा कि अध्ययन को मेडिसिन एंड हेल्थकेयर प्रोडक्ट्स रेगुलेटरी एजेंसी द्वारा अनुमोदित किया गया था और (एमएचआरए) जीएमपी द्वारा-डब्ल्यूएचओप्रमाणित किया गया था। उन्होंने कहा कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त जीसीपी दिशानिर्देशों के अनुसार इसका संचालन और निगरानी की जा (गुड क्लिनिकल प्रैक्टिस) रही थी।

यदि यह परीक्षण सफल रहता है तो भारत की परंपरागत औषधी प्रणाली को अंतरराष्ट्रीय वैज्ञानिक वैधता मिल सकती है। हालांकि अभी तक अनेक रोगों के प्रति अश्वगंधा की भूमिका को लेकर कई शोध और अध्ययन हो चुके है लेकिन ऐसा पहली बार होगा कि कोरोना संक्रमण के प्रति अश्वगंधा के प्रभाव की जांचने के लिए किसी विदेशी संस्थान के साथ इस प्रकार का कोई समन्वय हुआ है।)इंडिया साइंस वायर(

कोविड के इलाज में अश्वगंधा की उपयोगिता पर भारत और ब्रिटेन का साझा अध्ययन

By RD Times Hindi | August 3, 2021

अश्वगंधा की जड़े और पाउडर फोटो)– क्रिएटिव कॉमन्स(

नई दिल्ली : भारतीय आयुर्वेदमें अश्वगंधा को तनाव कम करने वाली औषधि के रूप में जाना जाता है जो रोग-प्रतिरोधक क्षमता प्रणाली को मजबूत भी बनाता है। कोरोना महामारी के दौरानसभी का ध्यान भारतीय -पारंपरिक चिकित्सा पद्धति आयुर्वेद की ओर आकर्षित हुआ है ताकि इस दिशा में नए शोधअध्ययनों द्वारा कोरोनाआयुष मंत्रालय ने कोरोना से उबरने चिकित्सा के विरुद्ध औषधीय विकल्प तलाशे जा सकें। हाल ही में-बूटी अश्वगंधा के लाभों का अध्ययन करने के लिए ब्रिटेन के लंदन स्कूल ऑफ हाइजिन एंड -में परंपरागत जड़ी के साथ एक सह (एलएसएचटीएम) ट्रॉपिकल मेडिसिनमति पत्र पर हस्ताक्षर किए हैं।

इस सहमति पत्र में आयुष मंत्रालय के अधीन स्वायत्त संस्था अखिल भारतीय आयुर्वेद संस्थान (एआईआईए) तथा एलएसएचटीएम ने ब्रिटेन के तीन शहरों लेसिस्टर, बर्मिंघम और लंदन में दो (साउथ हॉल और वेंबले) हजारलोगों पर अश्वगंधा का चिकित्सीय परीक्षण करने के लिए समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए हैं।

इस शोध अध्ययन में एलएसएचटीएम के डॉ संजय किनरा अध्ययन के अध्यक्ष होंगे तो वहीं, एआईआईए की निदेशक डॉ तनुजा मनोज नेसारी और इस परियोजना में अंतरराष्ट्रीय परियोजनाओं के समन्वयक डॉ राजगोपालन के साथ सहअन्वेषक- की भूमिका में होंगे।

डॉ तनुजा मनोज नेसारी ने कहा है कि तीन महीने तक एक हजार प्रतिभागियों के एक समूह को अश्वगंधा की गोलियां दी जाएंगी जबकि इतने ही लोगों के दूसरे समूह को इसी के समान दिखने वाली अन्य गोलियां दी जाएंगी। किसे कौन सी गोली दी गई है, इस बारे में मरीजों यहां तक कि चिकित्सकों को भी नहीं बताया जाएगा।

इस शोध अध्ययन में प्रतिभागियों को दिन में दो बार 500 मिलीग्राम की गोलियां लेनी होंगी औरइसके साथ ही एक मासिक रिपोर्ट तैयार की जाएगी जिसमें दैनिक जीवन की गतिविधियों, मानसिक एवं स्वास्थ्य लक्षणों के साथसाथ- सभी पूरक और प्रतिकूल घटनाओं का भी एक रिकॉर्ड रखा जाएगा।

डॉ नेसारी ने कहा कि एमओयू पर हस्ताक्षर करने के लिए राजनयिक और नियामक दोनों चैनलों के माध्यम से लगभग 16 महीनों में 100 से अधिक बैठके हुई हैं। उन्होंने कहा कि अध्ययन को मेडिसिन एंड हेल्थकेयर प्रोडक्ट्स रेगुलेटरी एजेंसी रा जीएमपी द्वा-द्वारा अनुमोदित किया गया था और डब्ल्यूएचओ (एमएचआरए) (गुड क्लिनिकल प्रैक्टिस) प्रमाणित किया गया था। उन्होंने कहा कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त जीसीपी दिशानिर्देशों के अनुसार इसका संचालन और निगरानी की जा रही थी।

यदि यह परीक्षण सफल रहता है तो भारत की परंपरागत औषधी प्रणाली को अंतरराष्ट्रीय वैज्ञानिक वैधता मिल सकती है। हालांकि अभी तक अनेक रोगों के प्रति अश्वगंधा की भूमिका को लेकर कई शोध और अध्ययन हो चुके है लेकिन ऐसा पहली बार होगा कि कोरोना संक्रमण के प्रति अश्वगंधा के प्रभाव की जांचने के लिए किसी विदेशी संस्थान के साथ इस प्रकार का कोई समन्वय हुआ है। (इंडिया साइंस वायर)

कोविड-19 के इलाज में अश्वगंधा की उपयोगिता पर भारत और ब्रिटेन का साझा अध्ययन

By Ram Bharose

अगस्त 3, 2021 अश्वगंधा

अश्वगंधा की जड़े और पाउडर (फोटो - क्रिएटिव कॉमन्स)

नई दिल्ली, 02 अगस्त 2021 : **भारतीय आयुर्वेद में अश्वगंधा** को तनाव कम करने वाली औषधि के रूप में जाना जाता है जो रोग प्रतिरोधक क्षमता प्रणाली को मजबूत भी बनाता है। कोरोना महामारी के दौरान सभी का-ध्यान **भारतीय पारंपरिक चिकित्सा पद्धति** आयुर्वेद की ओर आकर्षित हुआ है ताकि इस दिशा में नए शोध- चिकित्सा के विरुद्ध औषधीय विकल्प तलाशे जा सकें। हाल ही में-अध्ययनों द्वारा कोरोनाआयुष मंत्रालय ने कोरोना से उबरने में परंपरागत जड़ीन करने के लिए ब्रिटेन के लंदन स्कूल बूटी अश्वगंधा के लाभों का अध्यय-के साथ एक सहमति पत्र पर हस्ताक्षर किए हैं। (एलएसएचटीएम) ऑफ हाइजिन एंड ट्रॉपिकल मेडिसिन

इस सहमति पत्र में आयुष मंत्रालय के अधीन स्वायत्त संस्था अखिल भारतीय आयुर्वेद संस्थान (एआईआईए) लेसिस्टर तथा एलएसएचटीएम ने ब्रिटेन के तीन शहरों, बर्मिंघम और लंदन में दो (साउथ हॉल और वेंबले) हजार लोगों पर अश्वगंधा का चिकित्सीय परीक्षण करने के लिए समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए हैं।

इस शोध अध्ययन में एलएसएचटीएम के डॉ संजय किनरा अध्ययन के अध्यक्ष होंगे तो वहीं, एआईआईए की निदेशक डॉ तनुजा मनोज नेसारी और इस परियोजना में अंतरराष्ट्रीय परियोजनाओं के समन्वयक डॉ राजगोपालन के साथ सहअन्वेषक की भूमिका में होंगे।-

डॉ तनुजा मनोज नेसारी ने कहा है कि तीन महीने तक एक हजार प्रतिभागियों के एक समूह को अश्वगंधा की गोलियां दी जाएंगी जबकि इतने ही लोगों के दूसरे समूह को इसी के समान दिखने वाली अन्य गोलियां दी जाएंगी। किसे कौन सी गोली दी गई है, इस बारे में मरीजों यहां तक कि चिकित्सकों को भी नहीं बताया जाएगा।

इस शोध अध्ययन में प्रतिभागियों को दिन में दो बार 500 मिलीग्राम की गोलियां लेनी होंगी और इसके साथ ही एक मासिक रिपोर्ट तैयार की जाएगी जिसमें दैनिक जीवन की गतिविधियों, मानसिक एवं स्वास्थ्य लक्षणों के साथसाथ सभी पूरक और प्रतिकूल घटनाओं का भी एक रिकॉर्ड रखा जाएगा।-

डॉ नेसारी ने कहा कि एमओयू पर हस्ताक्षर करने के लिए राजनयिक और नियामक दोनों चैनलों के माध्यम से लगभग 16 महीनों में 100 से अधिक बैठके हुई हैं।

उन्होंने कहा कि अध्ययन को मेडिसिन एंड हेल्थकेयर प्रोडक्ट्स रेगुलेटरी एजेंसी द्वारा (एमएचआरए) जीएमपी द-अनुमोदित किया गया था और डब्ल्यूएचओ्वारा प्रमाणित किया गया था। उन्होंने कहा कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त जीसीपी दिशानिर्देशों के अनुसार इसका संचालन (गुड क्लिनिकल प्रैक्टिस) और निगरानी की जा रही थी।

यदि यह परीक्षण सफल रहता है तो भारत की परंपरागत औषधी प्रणाली को अंतरराष्ट्रीय वैज्ञानिक वैधता मिल सकती है। हालांकि अभी तक अनेक रोगों के प्रति अश्वगंधा की भूमिका को लेकर कई शोध और अध्ययन हो चुके है लेकिन ऐसा पहली बार होगा कि कोरोना संक्रमण के प्रति अश्वगंधा के प्रभाव की जांचने के लिए किसी विदेशी संस्थान के साथ इस प्रकार का कोई समन्वय हुआ है।

(इंडिया साइंस वायर(

हस्तक्षेप.com

उनकी खबरें जो खबर नहीं बनते

कोविड-19 के इलाज में अश्वगंधा की उपयोगिता पर भारत और ब्रिटेन का साझा अध्ययन

हाल ही में आयुष मंत्रालय ने कोरोना से उबरने में परंपरागत जड़ीबूटी अश्वगंधा के लाभों का -) अध्ययनStudy of benefits of traditional herb Ashwagandha in recovering from corona) करने के लिए ब्रिटेन के लंदन स्कूल ऑफ हाइजिन एंड ट्रॉपिकल मेडिसिन के साथ एक सहमति पत्र पर हस्ताक्षर किए हैं। (एलएसएचटीएम)

By Guest Writer | Mon, 2 Aug 2021

अश्वगंधा की जड़े और पाउडर (फोटो - क्रिएटिव कॉमन्स)

India and UK joint study on the usefulness of Ashwagandha in the treatment of COVID-19

नई दिल्ली, 02 अगस्त 2021 : भारतीय आयुर्वेद में **अश्वगंधा** को तनाव कम करने वाली औषधि के रूप में जाना जाता है जो **रोगप्रतिरोधक क्षमता प्रणाली- (immune system)** को मजबूत भी बनाता है। कोरोना महामारी के दौरान सभी का ध्यान **भारतीय पारंपरिक चिकित्सा पद्धति आयुर्वेद (Indian traditional medicine ayurveda)** की ओर आकर्षित हुआ है ताकि इस दिशा में नए शोधचिकित्सा के विरुद्ध -अध्ययनों द्वारा कोरोना-

औषधीय विकल्प तलाशे जा सकें। हाल ही में आयुष मंत्रालय ने **कोरोना से उबरने में परंपरागत जड़ीबूटी - अश्वगंधा के लाभों का अध्ययन (Study of benefits of traditional herb Ashwagandha in recovering from corona)** करने के लिए ब्रिटेन के लंदन स्कूल ऑफ हाइजिन एंड ट्रॉपिकल मेडिसिन के (एलएसएचटीएम) साथ एक सहमति पत्र पर हस्ताक्षर किए हैं।

इस सहमति पत्र में आयुष मंत्रालय के अधीन स्वायत्त संस्था **अखिल भारतीय आयुर्वेद संस्थान (All India Institute of Ayurveda एआईआईए(** तथा एलएसएचटीएम ने ब्रिटेन के तीन शहरों लेसिस्टर, बर्मिंघम और लंदन में दो हजार लोगों पर अश्वगंधा का चिकित्सीय परीक्षण करने के लिए समझौता (साउथ हॉल और वेंबले) ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए हैं।

इस शोध अध्ययन में एलएसएचटीएम के डॉ संजय किनरा अध्ययन के अध्यक्ष होंगे तो वहीं, एआईआईए की निदेशक डॉ तनुजा मनोज नेसारी और इस परियोजना में अंतरराष्ट्रीय परियोजनाओं के समन्वयक डॉ राजगोपालन के साथ सहअन्वेषक की भूमिका में होंगे।-

डॉ तनुजा मनोज नेसारी ने कहा है कि तीन महीने तक एक हजार प्रतिभागियों के एक समूह को **अश्वगंधा की गोलियां (ashwagandha pills)** दी जाएंगी जबकि इतने ही लोगों के दूसरे समूह को इसी के समान दिखने वाली अन्य गोलियां दी जाएंगी। किसे कौन सी गोली दी गई है, इस बारे में मरीजों यहां तक कि चिकित्सकों को भी नहीं बताया जाएगा।

इस शोध अध्ययन में प्रतिभागियों को दिन में दो बार 500 मिलीग्राम की गोलियां लेनी होंगी और इसके साथ ही एक मासिक रिपोर्ट तैयार की जाएगी जिसमें दैनिक जीवन की गतिविधियों, मानसिक एवं स्वास्थ्य लक्षणों के साथजाएगा। साथ सभी पूरक और प्रतिकूल घटनाओं का भी एक रिकॉर्ड रखा-

डॉ नेसारी ने कहा कि एमओयू पर हस्ताक्षर करने के लिए राजनयिक और नियामक दोनों चैनलों के माध्यम से लगभग 16 महीनों में 100 से अधिक बैठके हुई हैं।

उन्होंने कहा कि अध्ययन को **मेडिसिन एंड हेल्थकेयर प्रोडक्ट्स रेगुलेटरी एजेंसी (Medicines and Healthcare Products Regulatory Agency एमएचआरए(** द्वारा अनुमोदित किया गया था और डब्ल्यूएचओजीएमपी - द्वारा प्रमाणित किया गया था।

उन्होंने कहा कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त जीसीपी दिशानिर्देशों के अनुसार (गुड क्लिनिकल प्रैक्टिस) इसका संचालन और निगरानी की जा रही थी।

यदि यह परीक्षण सफल रहता है तो भारत की परंपरागत औषधि प्रणाली को अंतरराष्ट्रीय वैज्ञानिक वैधता मिल सकती है। हालांकि अभी तक अनेक रोगों के प्रति अश्वगंधा की भूमिका को लेकर कई शोध और अध्ययन हो चुके है लेकिन ऐसा पहली बार होगा कि कोरोना संक्रमण के प्रति अश्वगंधा के प्रभाव की जांचने के लिए किसी विदेशी संस्थान के साथ इस प्रकार का कोई समन्वय हुआ है।

(इंडिया साइंस वायर(

कोविड के इलाज में अश्वगंधा की उपयोगिता पर भारत और ब्रिटेन का साझा अध्ययन

03/08/2021

V3news India

(इंडिया साइंस वायर-भारतीय आयुर्वेद में अश्वगंधा को तनाव कम करने वाली औषधि के रूप में जाना जाता है जो रोग : (प्रतिरोधक क्षमता प्रणाली को मजबूत भी बनाता है। कोरोना महामारी के दौरान सभी का ध्यान भारतीय पारंपरिक चिकित्सा पद्धति आयुर्वेद की ओर आकर्षित हुआ है ताकि इस दिशा में नए शोधचिकित्सा के विरुद्ध -अध्ययनों द्वारा कोरोना-औषधीय विकल्प तलाशे जा सकें।

हाल ही में आयुष मंत्रालय ने कोरोना से उबरने में परंपरागत जड़ीबूटी अश्वगंधा के लाभों का अध्ययन करने के लिए ब्रिटेन के -के स (एलएसएचटीएम) कल मेडिसिनलंदन स्कूल ऑफ हाइजिन एंड ट्रॉपिाथ एक सहमति पत्र पर हस्ताक्षर किए हैं। इस

सहमति पत्र में आयुष मंत्रालय के अधीन स्वायत्त संस्था अखिल भारतीय आयुर्वेद संस्थान तथा एलएसएचटीएम (एआईआईए) ने ब्रिटेन के तीन शहरों लेसिस्टर, बर्मिंघम और लंदन जार लोगों पर अश्वगंधा का चिकमें दो ह (साउथ हॉल और वेंबले)ित्सीय परीक्षण करने के लिए समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए हैं।

इस शोध अध्ययन में एलएसएचटीएम के डॉ संजय किनरा अध्ययन के अध्यक्ष होंगे तो वहीं, एआईआईए की निदेशक डॉ तनुजा मनोज नेसारी और इस परियोजना में अंतरराष्ट्रीय परियोजनाओं के समन्वयक डॉ राजगोपालन के साथ सहअन्वेषक की - भूमिका में होंगे। डॉ तनुजा मनोज नेसारी ने कहा है कि तीन महीने तक एक हजार प्रतिभागियों के एक समूह को अश्वगंधा की गोलियां दी जाएंगी जबकि इतने ही लोगों के दूसरे समूह को इसी के समान दिखने वाली अन्य गोलियां दी जाएंगी।

किसे कौन सी गोली दी गई है, इस बारे में मरीजों यहां तक कि चिकित्सकों को भी नहीं बताया जाएगा। इस शोध अध्ययन में प्रतिभागियों को दिन में दो बार 500 मिलीग्राम की गोलियां लेनी होंगी और इसके साथ ही एक मासिक रिपोर्ट तैयार की जाएगी जिसमें दैनिक जीवन की गतिविधियों, मानसिक एवं स्वास्थ्य लक्षणों के साथसाथ सभी पूरक और प्रतिकूल घटनाओं - का भी एक रिकॉर्ड रखा जाएगा।

डॉ नेसारी ने कहा कि एमओयू पर हस्ताक्षर करने के लिए राजनयिक और नियामक दोनों चैनलों के माध्यम से लगभग 16 महीनों में 100 से अधिक बैठके हुई हैं। उन्होंने कहा कि अध्ययन को मेडिसिन एंड हेल्थकेयर प्रोडक्ट्स रेगुलेटरी एजेंसी जीएमपी द्वारा प्रमाणित किया गया था। उन्होंने कहा कि -द्वारा अनुमोदित किया गया था और डब्ल्यूएचओ (एमएचआरए) का संचालन और निगरानी दिशानिर्देशों के अनुसार इस (गुड क्लिनिकल प्रैक्टिस) अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त जीसीपी की जा रही थी।

यदि यह परीक्षण सफल रहता है तो भारत की परंपरागत औषधी प्रणाली को अंतरराष्ट्रीय वैज्ञानिक वैधता मिल सकती है। हालांकि अभी तक अनेक रोगों के प्रति अश्वगंधा की भूमिका को लेकर कई शोध और अध्ययन हो चुके है लेकिन ऐसा पहली बार होगा कि कोरोना संक्रमण के प्रति अश्वगंधा के प्रभाव की जांचने के लिए किसी विदेशी संस्थान के साथ इस प्रकार का कोई समन्वय हुआ है।

दी इंडियन बुलेटिन

कोविड के इलाज में अश्वगंधा की उपयोगिता पर भारत और ब्रिटेन का साझा अध्ययन

August 3, 2021

अश्वगंधा की जड़े और पाउडर फोटो)– क्रिएटिव कॉमन्स(

नई दिल्ली : भारतीय आयुर्वेदमें अश्वगंधा को तनाव कम करने वाली औषधि के रूप में जाना जाता है जो रोग-प्रतिरोधक क्षमता प्रणाली को मजबूत भी बनाता है। कोरोना महामारी के दौरानसभी का ध्यान भारतीय पारंपरिक अध-इस दिशा में नए शोध चिकित्सा पद्धति आयुर्वेद की ओर आकर्षित हुआ है ताकि्ययनों द्वारा कोरोनाचिकित्सा -

बूटी -के विरुद्ध औषधीय विकल्प तलाशे जा सकें। हाल ही में आयुष मंत्रालय ने कोरोना से उबरने में परंपरागत जड़ी अश्वगंधा के लाभों का अध्ययन करने के लिए ब्रिटेन के लंदन स्कूल ऑफ हाइजिन एंड ट्रॉपिकल मेडिसिन के साथ एक सहमत (सएचटीएमएलए)ि पत्र पर हस्ताक्षर किए हैं।
इस सहमति पत्र में आयुष मंत्रालय के अधीन स्वायत्त संस्था अखिल भारतीय आयुर्वेद संस्थान तथा (एआईआईए) एलएसएचटीएम ने ब्रिटेन के तीन शहरों लेसिस्टर, बर्मिंघम और लंदन में दो हजारलोगों (साउथ हॉल और वेंबले) गंधा का चिकित्सीयपर अश्वपरीक्षण करने के लिए समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए हैं।

इस शोध अध्ययन में एलएसएचटीएम के डॉ संजय किनरा अध्ययन के अध्यक्ष होंगे तो वहीं, एआईआईए की निदेशक डॉ तनुजा मनोज नेसारी और इस परियोजना में अंतरराष्ट्रीय परियोजनाओं के समन्वयक डॉ राजगोपालन के साथ सहअन्वे-षक की भूमिका में होंगे।

डॉ तनुजा मनोज नेसारी ने कहा है कि तीन महीने तक एक हजार प्रतिभागियों के एक समूह को अश्वगंधा की गोलियां दी जाएंगी जबकि इतने ही लोगों के दूसरे समूह को इसी के समान दिखने वाली अन्य गोलियां दी जाएंगी। किसे कौन सी गोली दी गई है, इस बारे में मरीजों यहां तक कि चिकित्सकों को भी नहीं बताया जाएगा।

इस शोध अध्ययन में प्रतिभागियों को दिन में दो बार 500 मिलीग्राम की गोलियां लेनी होंगी औरइसके साथ ही एक मासिक रिपोर्ट तैयार की जाएगी जिसमें दैनिक जीवन की गतिविधियों, मानसिक एवं स्वास्थ्य लक्षणों के साथ-स ाथ सभी पूरक और प्रतिकूल घटनाओं का भी एक रिकॉर्ड रखा जाएगा।

डॉ नेसारी ने कहा कि एमओयू पर हस्ताक्षर करने के लिए राजनयिक और नियामक दोनों चैनलों के माध्यम से लगभग 16 महीनों में 100 से अधिक बैठके हुई हैं। उन्होंने कहा कि अध्ययन को मेडिसिन एंड हेल्थकेयर प्रोडक्ट्स रेगुलेटरी एजेंसी जीएमपी द्वारा प्रमाणित किया -द्वारा अनुमोदित किया गया था और डब्ल्यूएचओ (एमएचआरए) दिशानिर्देशों के (गुड क्लिनिकल प्रैक्टिस) गया था। उन्होंने कहा कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त जीसीपी नी की जा रही थी।अनुसार इसका संचालन और निगरा

यदि यह परीक्षण सफल रहता है तो भारत की परंपरागत औषधी प्रणाली को अंतरराष्ट्रीय वैज्ञानिक वैधता मिल सकती है। हालांकि अभी तक अनेक रोगों के प्रति अश्वगंधा की भूमिका को लेकर कई शोध और अध्ययन हो चुके है लेकिन ऐसा पहली बार होगा कि कोरोना संक्रमण के प्रति अश्वगंधा के प्रभाव की जांचने के लिए किसी विदेशी संस्थान के साथ इस प्रकार का कोई समन्वय हुआ है। (इंडिया साइंस वायर)

कोविड के इलाज में कितना असरदार है अश्वगंधा? भारत और यूके मिलकर कर रहे स्टडी

यूके और इंडिया की इस स्टडी में यूके के तीन शहरों लेसिस्टर, बर्मिंघम और लंदन में दो हजार (साउथ हॉल और वेंबले) लोगों पर अश्वगंधा का चिकित्सीय परीक्षण किया ज०ाएगा।

India Science Wire 3 Aug 2021

अश्वगंधा की जड़े और पाउडर फोटो)– क्रिएटिव कॉमन्स(

भारतीय आयुर्वेद में अश्वगंधा को तनाव कम करने वाली औषधि के रूप में जाना जाता है जो रोगप्रतिरोधक क्षमता - प्रणाली को मजबूत भी बनाता है। कोरोना महामारी के दौरान सभी का ध्यान भारतीय पारंपरिक चिकित्सा पद्धति अध्ययनों द्वारा-आयुर्वेद की ओर आकर्षित हुआ है ताकि इस दिशा में नए शोध कोरोनाचिकित्सा के विरु-द्ध औषधीय विकल्प तलाशे जा सकें।

हाल ही में आयुष मंत्रालय ने कोरोना से उबरने में परंपरागत जड़ीबूटी अश्वगंधा के लाभों का अध्ययन करने के लिए - के साथ एक स (एलएसएचटीएम) ब्रिटेन के लंदन स्कूल ऑफ हाइजिन एंड ट्रॉपिकल मेडिसिनहमति पत्र पर हस्ताक्षर किए हैं।

इस सहमति पत्र में आयुष मंत्रालय के अधीन स्वायत्त संस्था अखिल भारतीय आयुर्वेद संस्थान और (एआईआईए) एलएसएचटीएम ने ब्रिटेन के तीन शहरों लेसिस्टर, बर्मिंघम और लंदन में दो हजार लोगों पर (साउथ हॉल और वेंबले) अश्वगंधा का चिकित्सीय परीक्षण करने के लिए समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए हैं।

इस शोध अध्ययन में एलएसएचटीएम के डॉ संजय किनरा अध्ययन के अध्यक्ष होंगे तो वहीं, एआईआईए की निदेशक डॉ तनुजा मनोज नेसारी और इस परियोजना में अंतरराष्ट्रीय परियोजनाओं के समन्वयक डॉ राजगोपालन के साथ सह-अन्वेषक की भूमिका में होंगे।

डॉ तनुजा मनोज नेसारी ने कहा है कि तीन महीने तक एक हजार प्रतिभागियों के एक समूह को अश्वगंधा की गोलियां दी जाएंगी जबकि इतने ही लोगों के दूसरे समूह को इसी के समान दिखने वाली अन्य गोलियां दी जाएंगी। किसे कौन सी गोली दी गई है, इस बारे में मरीजों यहां तक कि चिकित्सकों को भी नहीं बताया जाएगा।

इस शोध अध्ययन में प्रतिभागियों को दिन में दो बार 500 मिलीग्राम की गोलियां लेनी होंगी और इसके साथ ही एक मासिक रिपोर्ट तैयार की जाएगी जिसमें दैनिक जीवन की गतिविधियों, मानसिक एवं स्वास्थ्य लक्षणों के साथसाथ सभी - पूरक और प्रतिकूल घटनाओं का भी एक रिकॉर्ड रखा जाएगा।

डॉ नेसारी ने कहा कि एमओयू पर हस्ताक्षर करने के लिए राजनयिक और नियामक दोनों चैनलों के माध्यम से लगभग 16 महीनों में 100 से अधिक बैठके हुई हैं। उन्होंने कहा कि अध्ययन को मेडिसिन एंड हेल्थकेयर प्रोडक्ट्स रेगुलेटरी एजेंसी जीएमपी द्वारा प्रमाणित किया गया था। उन्होंने कहा -ब्ल्यूएचओद्वारा अनुमोदित किया गया था और ड (एमएचआरए)

दिशानिर्देशों के अनुसार इसका संचालन और (गुड क्लिनिकल प्रैक्टिस) कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर मान्यता प्राप्त जीसीपी निगरानी की जा रही थी।

यदि यह परीक्षण सफल रहता है तो भारत की परंपरागत औषधी प्रणाली को अंतरराष्ट्रीय वैज्ञानिक वैधता मिल सकती है। हालांकि अभी तक अनेक रोगों के प्रति अश्वगंधा की भूमिका को लेकर कई शोध और अध्ययन हो चुके है लेकिन ऐसा पहली बार होगा कि कोरोना संक्रमण के प्रति अश्वगंधा के प्रभाव की जांचने के लिए किसी विदेशी संस्थान के साथ इस प्रकार का कोई समन्वय हुआ है।

Republic NewsIndia

Celebrating Indian scientists' contributions to the independence movement

By **Rupesh Dharmik** - August 3, 2021

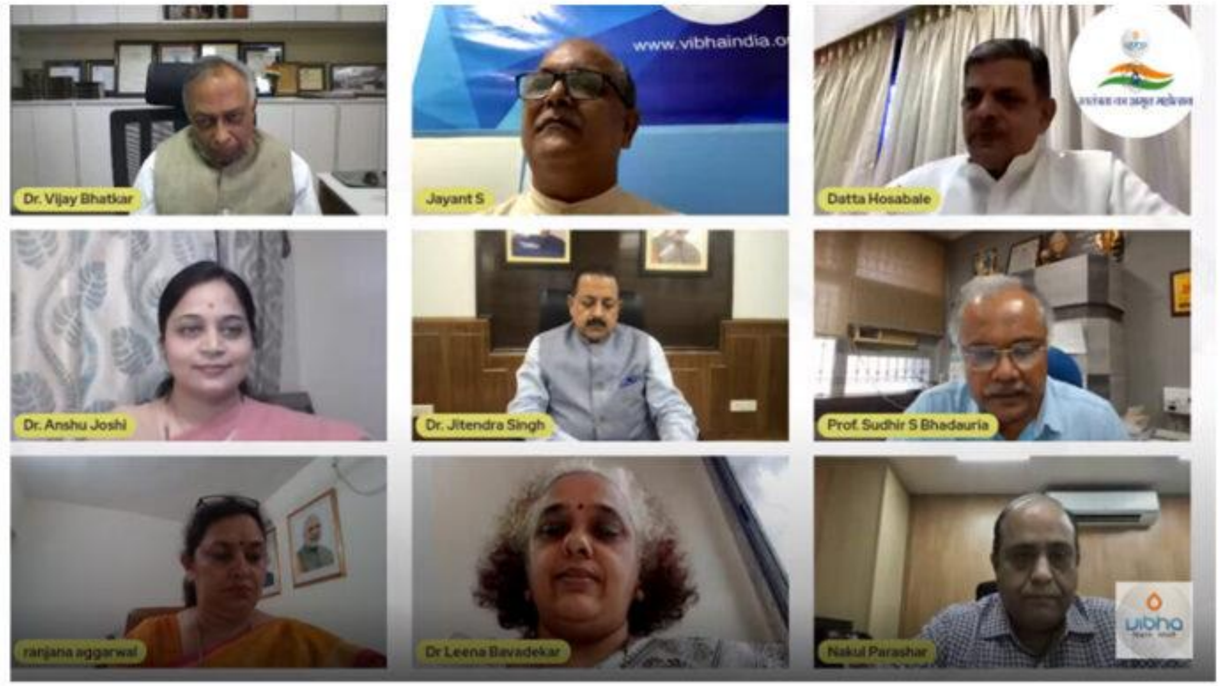

Dr. Vijay Bhatkar, Shri Jayant Sahasrabuddhe, Shri Dattatreya Hosabale (top L to R), Dr. Anshu Joshi, Dr. Jitendra Singh, Professor Sudhir Bhadauria (middle L to R), Prof. Ranjana Agarwal, Dr. Leena Bawdekar, and Dr. Nakul Parashar (bottom L to R)

New Delhi: VigyanPrasar, an autonomous institution under the Department of Science and Technology has drawn up an ambitious programme to celebrate the contributions of Indian scientists, science communicators, and teachers during India's independence movement to mark the 75th anniversary of India's Independence in collaboration with Council of Scientific and Industrial

Research’s National Institute of Science Communication and Policy Research (CSIR-NIScPR) and science NGO, VijnanaBharati (Vibha).

The celebration is part of the Government of India’s nationwide initiative titled `SwatantrataAmritMahotsav’ to highlight a major milestone in the history of independent India, is being implemented in two phases. The first phase is getting completed by August 15 ‘21, and the second will start after that and will go on till the next Independence Day.

In the first phase, a Science Quiz Competition for the school students from class VI to XI was launched on the web portal of VidyarthiVigyanManthan (www.vvm.org.in); and posters were prepared on Indian scientists who worked during the pre-independence period and their contribution in igniting the spirit of swadeshi and nationalism in people, among other things.

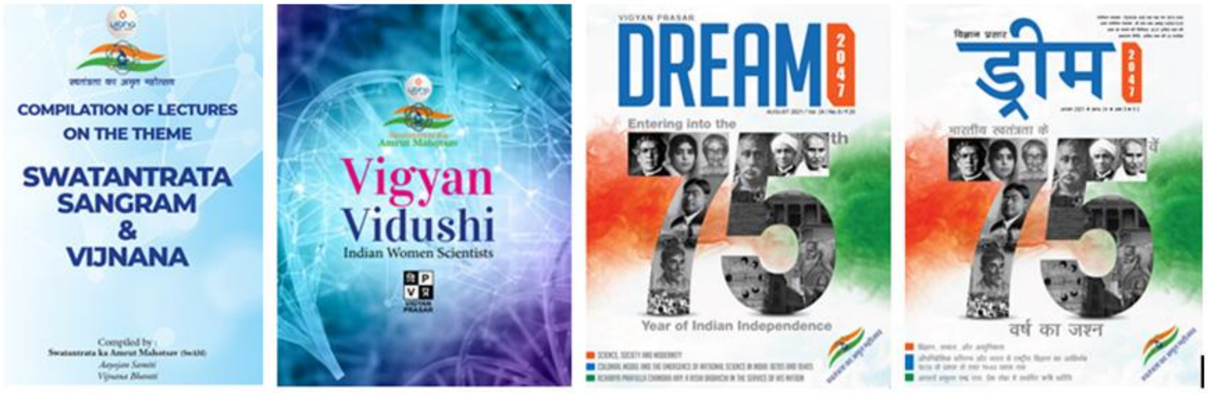

The book ‘Swatantrta Sangram & Vijnana’, a booklet on women scientists and entrepreneurs ‘VigyanVidushi’ and Hindi and English issues of Dream-2047 magazine

The second phase will include bringing out documentaries depicting the heritage of indigenous science and technology of the past and show Britishers’ influence through policies of suppression and ignorance and how Indian scientists responded to colonial science; and holding of a national conference for science communicators and another for academicians from school to higher education.

At a function organised online on Monday to mark the formal inauguration of the celebrations, General Secretary of RashtriyaSwayamsevakSangh, DattareyaHosabale, appreciated the efforts to showcase the contribution of Indian scientists to the independence movement. “Many scientists of the period when India was fighting for its freedom were not confined to their labs alone. They were acutely aware of what was going on outside in the country and the world. Not much is known about their contributions. It is good that they are being brought out”.

Mr. Hosabale, who was the chief guest, also emphasised that science should not be left to scientists alone since it is connected to every aspect of life and noted that spiritual stalwarts had also made immense contributions to Indian science. He recalled that Swami Vivekananda had played an important role in the setting up of the Indian Institute of Science in Bengaluru.

Union Minister for the Ministry of Science and Technology and Ministry of Earth Sciences, Dr.Jintendra Singh, who was the guest of honour, said, science not only contributed to Indian independence but also defined its various contours. “Mahatma Gandhi was a remarkable practitioner of scientific strategies. Satyagraha was nothing but a silent biological warfare against aggression.”

He emphasised the need to promote scientific temper in the country and noted that the Prime Minister, Mr. Narendra Modi, had a great scientific outlook. He recalled that at the inauguration of Shri Mata VaishnodeviKatra railway station in the Union Territory of Jammu and Kashmir, Mr. Modi had noticed that the area had a lot of sunshine and had suggested that steps be taken to try and tap it and today the station is powered by solar energy.

Special issues of newsletters published by VigyanPrasar, in Tamil, Kannada, Assamese, Maithili and Bangla

He stressed the importance of science and said India can become a Vishwaguru only through the medium of science. “We need to synergise all streams of science and take up subject-based research projects with the involvement of other stakeholders also”.

National Organising Secretary of Vibha, Jayant Sahasrabhute, National President of Vibha, Vijay Bhatkar, and Director of VigyanPrasar, Dr. Nakul Prasar, hoped that the yearlong celebrations would help India attain new heights through the motivation of the younger generation.

The function marked the release of a book called `VigyanVidushi" on women scientists and entrepreneurs from the time of Indian independence; a compilation of transcripts of talks given under a lecture series; a special edition of VigyanPrasar's Dream 2047 on science and 75th year of Indian independence and special issues of VigyanPrasar's newsletters in regional languages. Besides, a web portal 'swavigyan75.in' for providing details on all aspects of the yearlong celebrations was also launched.

The function also celebrated the 160th birth anniversary of Acharya Sir Prafulla Chandra Ray. Rich tributes were paid to the eminent chemist, educationist, historian, industrialist and philanthropist. He established the first modern Indian research school in chemistry and is regarded as the father of chemical science in India. (India Science Wire)

Indus Scrolls
Indian to the core

Celebrating Indian scientists' contributions to independence movement

By **India Science Wire** - August 3, 2021

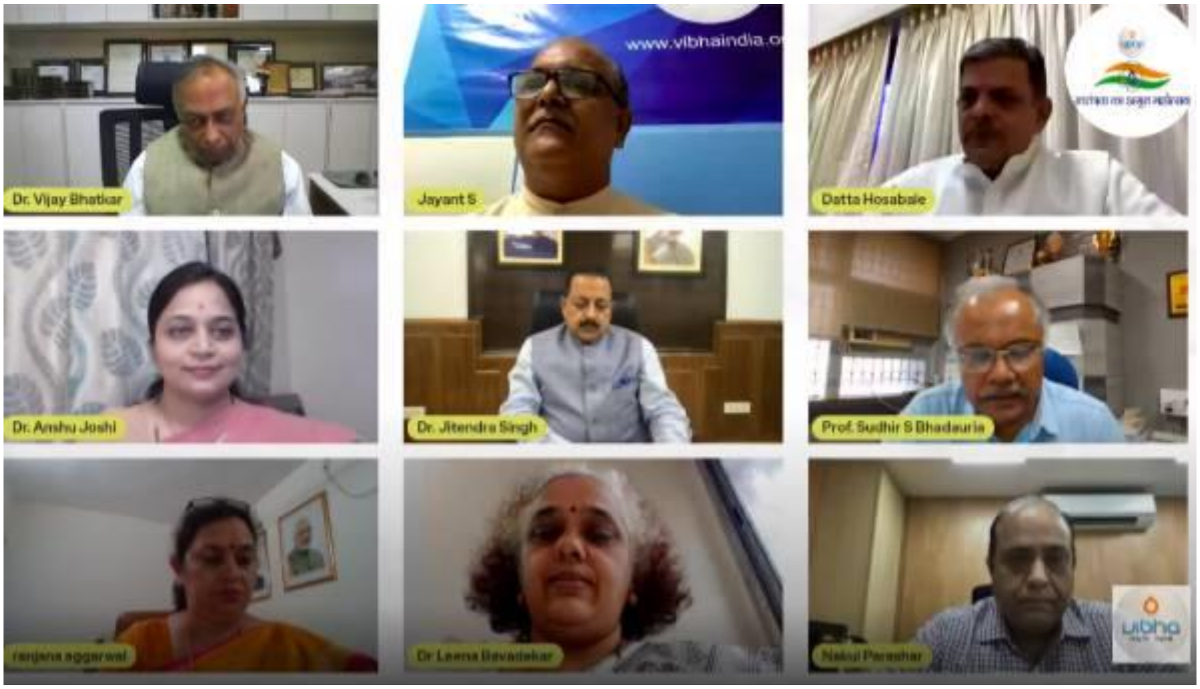

igyan Prasar, an autonomous institution under the Department of Science and Technology has drawn up an ambitious programme to celebrate the contributions of Indian scientists, science communicators, and teachers during India's independence movement to mark the 75th anniversary of India's Independence in collaboration with Council of Scientific and Industrial Research's National Institute of Science Communication and Policy Research (CSIR-NIScPR) and science NGO, Vijnana Bharati (Vibha).

The celebration is part of the Government of India's nationwide initiative titled `Swatantrata Amrit Mahotsav' to highlight a major milestone in the history of independent India, is being implemented in two phases. The first phase is getting completed by August 15 '21, and the second will start after that and will go on till the next Independence Day.

In the first phase, a Science Quiz Competition for the school students from class VI to XI was launched on the web portal of Vidyarthi Vigyan Manthan

(www.vvm.org.in); and posters were prepared on Indian scientists who worked during the pre-independence period and their contribution in igniting the spirit of swadeshi and nationalism in people, among other things.

The second phase will include bringing out documentaries depicting the heritage of indigenous science and technology of the past and show Britishers' influence through policies of suppression and ignorance and how Indian scientists responded to colonial science; and holding of a national conference for science communicators and another for academicians from school to higher education.

At a function organised online on Monday to mark the formal inauguration of the celebrations, General Secretary of Rashtriya Swayamsevak Sangh, Dattareya Hosabale, appreciated the efforts to showcase the contribution of Indian scientists to the independence movement. "Many scientists of the period when India was fighting for its freedom were not confined to their labs alone. They were acutely aware of what was going on outside in the country and the world. Not much is known about their contributions. It is good that they are being brought out".

Mr. Hosabale, who was the chief guest, also emphasised that science should not be left to scientists alone since it is connected to every aspect of life and noted that spiritual stalwarts had also made immense contributions to Indian science. He recalled that Swami Vivekananda had played an important role in the setting up of the Indian Institute of Science in Bengaluru.

Union Minister for the Ministry of Science and Technology and Ministry of Earth Sciences, Dr. Jintendra Singh, who was the guest of honour, said, science not only contributed to Indian independence but also defined its various contours. "Mahatma Gandhi was a remarkable practitioner of scientific strategies. Satyagraha was nothing but a silent biological warfare against aggression."

He emphasised the need to promote scientific temper in the country and noted that the Prime Minister, Mr. Narendra Modi, had a great scientific outlook. He recalled that at the inauguration of Shri Mata Vaishnodevi Katra railway station in the Union Territory of Jammu and Kashmir, Mr. Modi had noticed that the area had a lot of sunshine and had suggested that steps be taken to try and tap it and today the station is powered by solar energy.

He stressed the importance of science and said India can become a Vishwaguru only through the medium of science. "We need to synergise all streams of science and take up subject-based research projects with the involvement of other stakeholders also".

National Organising Secretary of Vibha, Jayant Sahasrabhute, National President of Vibha, Vijay Bhatkar, and Director of Vigyan Prasar, Dr. Nakul Prasar, hoped that the yearlong celebrations would help India attain new heights through the motivation of the younger generation.

The function marked the release of a book called `Vigyan Vidushi" on women scientists and entrepreneurs from the time of Indian independence; a compilation of transcripts of talks given under a lecture series; a special edition of Vigyan Prasar's Dream 2047 on science and 75th year of Indian independence and special issues of Vigyan Prasar's newsletters in regional languages. Besides, a web portal 'swavigyan75.in' for providing details on all aspects of the yearlong celebrations was also launched.

The function also celebrated the 160th birth anniversary of Acharya Sir Prafulla Chandra Ray. Rich tributes were paid to the eminent chemist, educationist, historian, industrialist and philanthropist. He established the first modern Indian research school in chemistry and is regarded as the father of chemical science in India.

Hindustan Saga

Celebrating Indian scientists' contributions to the independence movement

Hindustan Saga | August 3, 2021

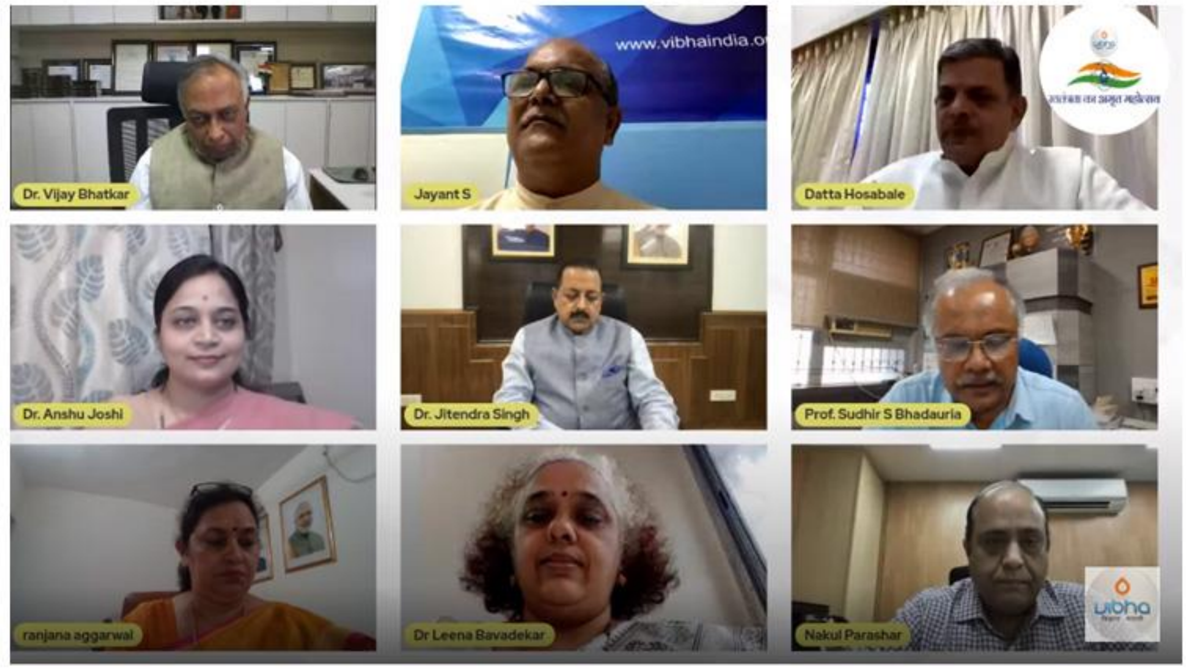

Dr. Vijay Bhatkar, Shri Jayant Sahasrabuddhe, Shri Dattatreya Hosabale (top L to R), Dr. Anshu Joshi, Dr. Jitendra Singh, Professor Sudhir Bhadauria (middle L to R), Prof. Ranjana Agarwal, Dr. Leena Bawdekar, and Dr. Nakul Parashar (bottom L to R)

New Delhi: VigyanPrasar, an autonomous institution under the Department of Science and Technology has drawn up an ambitious programme to celebrate the contributions of Indian scientists, science communicators, and teachers during India's independence movement to mark the 75th anniversary of India's Independence in collaboration with Council of Scientific and Industrial Research's National Institute of Science Communication and Policy Research (CSIR-NIScPR) and science NGO, VijnanaBharati (Vibha).

The celebration is part of the Government of India's nationwide initiative titled `SwatantrataAmritMahotsav' to highlight a major milestone in the history of independent India, is being implemented in two phases. The first phase is getting completed by August 15 '21, and the second will start after that and will go on till the next Independence Day.

In the first phase, a Science Quiz Competition for the school students from class VI to XI was launched on the web portal of VidyarthiVigyanManthan (www.vvm.org.in); and posters were prepared on Indian scientists who worked during the pre-independence period and their contribution in igniting the spirit of swadeshi and nationalism in people, among other things.

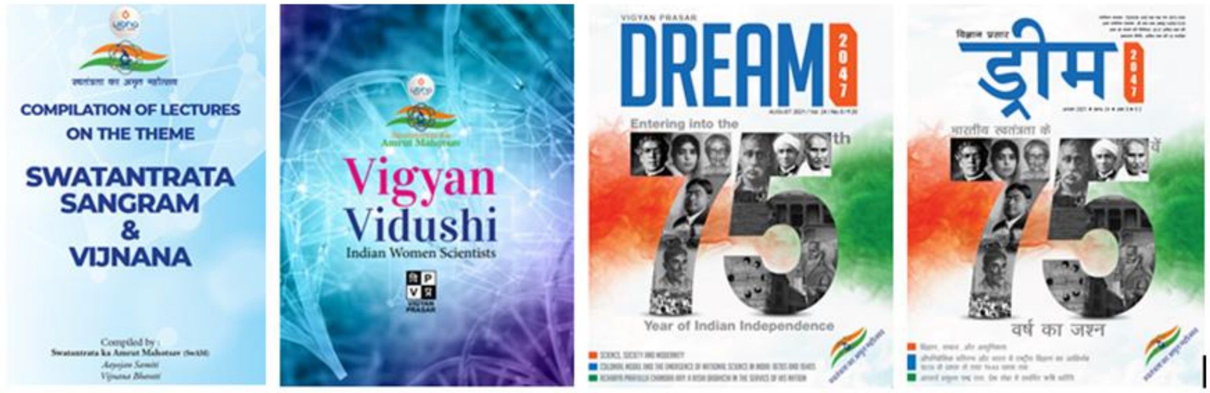

The book 'Swatantrta Sangram & Vijnana', a booklet on women scientists and entrepreneurs 'VigyanVidushi' and Hindi and English issues of Dream-2047 magazine

The second phase will include bringing out documentaries depicting the heritage of indigenous science and technology of the past and show Britishers' influence through policies of suppression and ignorance and how Indian scientists responded to colonial science; and holding of a national conference for science communicators and another for academicians from school to higher education.

At a function organised online on Monday to mark the formal inauguration of the celebrations, General Secretary of RashtriyaSwayamsevakSangh, DattareyaHosabale, appreciated the efforts to showcase the contribution of Indian scientists to the independence movement. "Many scientists of the period when India was fighting for its freedom were not confined to their labs alone. They were acutely aware of what was going

on outside in the country and the world. Not much is known about their contributions. It is good that they are being brought out".

Mr. Hosabale, who was the chief guest, also emphasised that science should not be left to scientists alone since it is connected to every aspect of life and noted that spiritual stalwarts had also made immense contributions to Indian science. He recalled that Swami Vivekananda had played an important role in the setting up of the Indian Institute of Science in Bengaluru.

Union Minister for the Ministry of Science and Technology and Ministry of Earth Sciences, Dr.Jintendra Singh, who was the guest of honour, said, science not only contributed to Indian independence but also defined its various contours. "Mahatma Gandhi was a remarkable practitioner of scientific strategies. Satyagraha was nothing but a silent biological warfare against aggression."

He emphasised the need to promote scientific temper in the country and noted that the Prime Minister, Mr. Narendra Modi, had a great scientific outlook. He recalled that at the inauguration of Shri Mata VaishnodeviKatra railway station in the Union Territory of Jammu and Kashmir, Mr. Modi had noticed that the area had a lot of sunshine and had suggested that steps be taken to try and tap it and today the station is powered by solar energy.

Special issues of newsletters published by VigyanPrasar, in Tamil, Kannada, Assamese, Maithili and Bangla

He stressed the importance of science and said India can become a Vishwaguru only through the medium of science. “We need to synergise all streams of science and take up subject-based research projects with the involvement of other stakeholders also”.

National Organising Secretary of Vibha, Jayant Sahasrabhute, National President of Vibha, Vijay Bhatkar, and Director of VigyanPrasar, Dr. Nakul Prasar, hoped that the yearlong celebrations would help India attain new heights through the motivation of the younger generation.

The function marked the release of a book called `VigyanVidushi" on women scientists and entrepreneurs from the time of Indian independence; a compilation of transcripts of talks given under a lecture series; a special edition of VigyanPrasar's Dream 2047 on science and 75th year of Indian independence and special issues of VigyanPrasar's newsletters in regional languages. Besides, a web portal 'swavigyan75.in' for providing details on all aspects of the yearlong celebrations was also launched.

The function also celebrated the 160th birth anniversary of Acharya Sir Prafulla Chandra Ray. Rich tributes were paid to the eminent chemist, educationist, historian, industrialist and philanthropist. He established the first modern Indian research school in chemistry and is regarded as the father of chemical science in India. (India Science Wire)

RKDLive

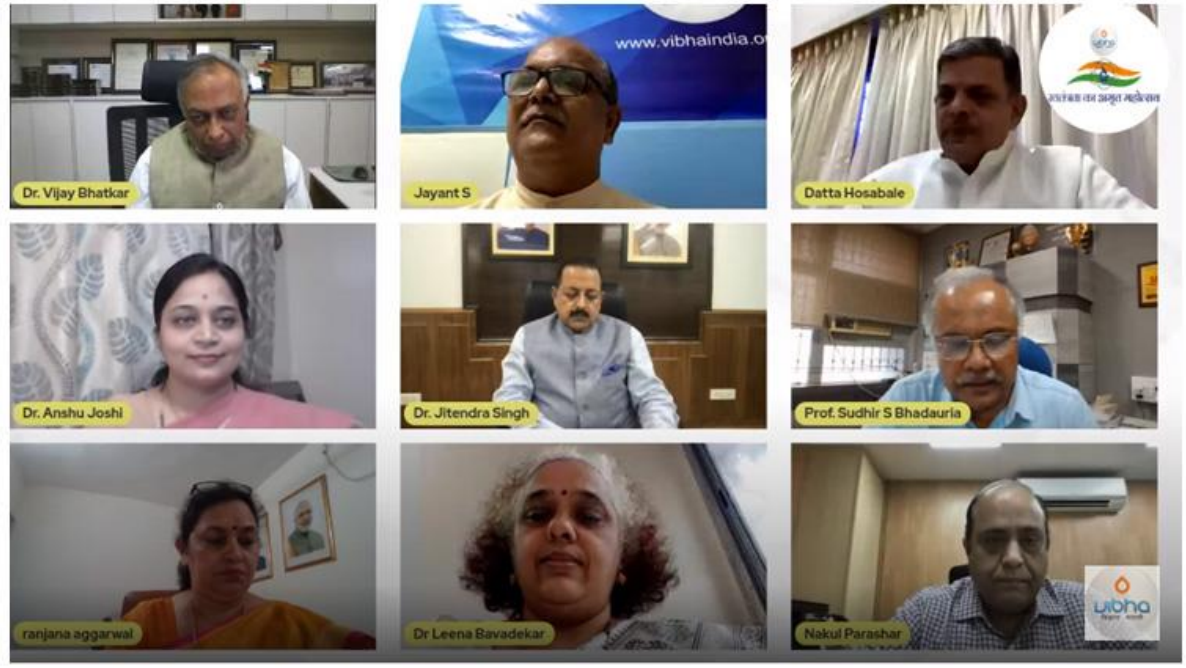

Dr. Vijay Bhatkar, Shri Jayant Sahasrabuddhe, Shri Dattatreya Hosabale (top L to R), Dr. Anshu Joshi, Dr. Jitendra Singh, Professor Sudhir Bhadauria (middle L to R), Prof. Ranjana Agarwal, Dr. Leena Bawdekar, and Dr. Nakul Parashar (bottom L to R)

Celebrating Indian scientists' contributions to the independence movement

RKD Live | August 3, 2021

New Delhi: VigyanPrasar, an autonomous institution under the Department of Science and Technology has drawn up an ambitious programme to celebrate the contributions of Indian scientists, science communicators, and teachers during India's independence movement to mark the 75th anniversary of India's Independence in collaboration with Council of Scientific and Industrial Research's National Institute of Science Communication and Policy Research (CSIR-NIScPR) and science NGO, VijnanaBharati (Vibha).

The celebration is part of the Government of India's nationwide initiative titled `SwatantrataAmritMahotsav' to highlight a major milestone in the history of independent India, is being implemented in two phases. The first phase is getting completed by August 15 '21, and the second will start after that and will go on till the next Independence Day.

In the first phase, a Science Quiz Competition for the school students from class VI to XI was launched on the web portal of VidyarthiVigyanManthan (www.vvm.org.in); and posters were prepared on Indian scientists who worked during the pre-independence period and their contribution in igniting the spirit of swadeshi and nationalism in people, among other things.

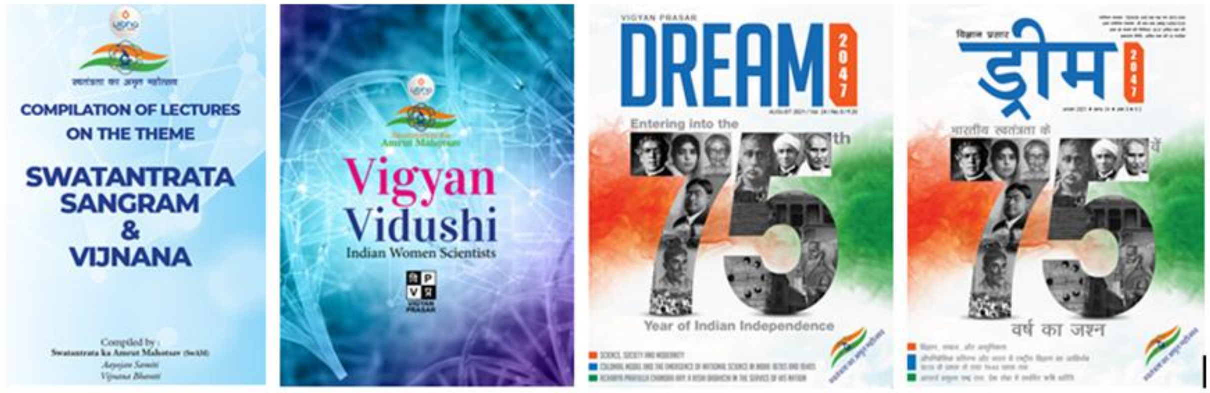

The book 'Swatantrta Sangram & Vijnana', a booklet on women scientists and entrepreneurs 'VigyanVidushi' and Hindi and English issues of Dream-2047 magazine

The second phase will include bringing out documentaries depicting the heritage of indigenous science and technology of the past and show Britishers' influence through policies of suppression and ignorance and how Indian scientists responded to colonial science; and holding of a national conference for science communicators and another for academicians from school to higher education.

At a function organised online on Monday to mark the formal inauguration of the celebrations, General Secretary of RashtriyaSwayamsevakSangh, DattareyaHosabale, appreciated the efforts to showcase the contribution of Indian scientists to the independence movement. "Many scientists of the period when India was fighting for its freedom were not confined to their labs alone. They were acutely aware of what was going

on outside in the country and the world. Not much is known about their contributions. It is good that they are being brought out".

Mr. Hosabale, who was the chief guest, also emphasised that science should not be left to scientists alone since it is connected to every aspect of life and noted that spiritual stalwarts had also made immense contributions to Indian science. He recalled that Swami Vivekananda had played an important role in the setting up of the Indian Institute of Science in Bengaluru.

Union Minister for the Ministry of Science and Technology and Ministry of Earth Sciences, Dr.Jintendra Singh, who was the guest of honour, said, science not only contributed to Indian independence but also defined its various contours. "Mahatma Gandhi was a remarkable practitioner of scientific strategies. Satyagraha was nothing but a silent biological warfare against aggression."

He emphasised the need to promote scientific temper in the country and noted that the Prime Minister, Mr. Narendra Modi, had a great scientific outlook. He recalled that at the inauguration of Shri Mata VaishnodeviKatra railway station in the Union Territory of Jammu and Kashmir, Mr. Modi had noticed that the area had a lot of sunshine and had suggested that steps be taken to try and tap it and today the station is powered by solar energy.

Special issues of newsletters published by VigyanPrasar, in Tamil, Kannada, Assamese, Maithili and Bangla

He stressed the importance of science and said India can become a Vishwaguru only through the medium of science. “We need to synergise all streams of science and take up subject-based research projects with the involvement of other stakeholders also”.

National Organising Secretary of Vibha, Jayant Sahasrabhute, National President of Vibha, Vijay Bhatkar, and Director of VigyanPrasar, Dr. Nakul Prasar, hoped that the yearlong celebrations would help India attain new heights through the motivation of the younger generation.

The function marked the release of a book called `VigyanVidushi" on women scientists and entrepreneurs from the time of Indian independence; a compilation of transcripts of talks given under a lecture series; a special edition of VigyanPrasar's Dream 2047 on science and 75th year of Indian independence and special issues of VigyanPrasar's newsletters in regional languages. Besides, a web portal 'swavigyan75.in' for providing details on all aspects of the yearlong celebrations was also launched.

The function also celebrated the 160th birth anniversary of Acharya Sir Prafulla Chandra Ray. Rich tributes were paid to the eminent chemist, educationist, historian, industrialist and philanthropist. He established the first modern Indian research school in chemistry and is regarded as the father of chemical science in India. (India Science Wire)

NATIONAL AGE

Celebrating Indian scientists' contributions to the independence movement

National Age August 3, 2021

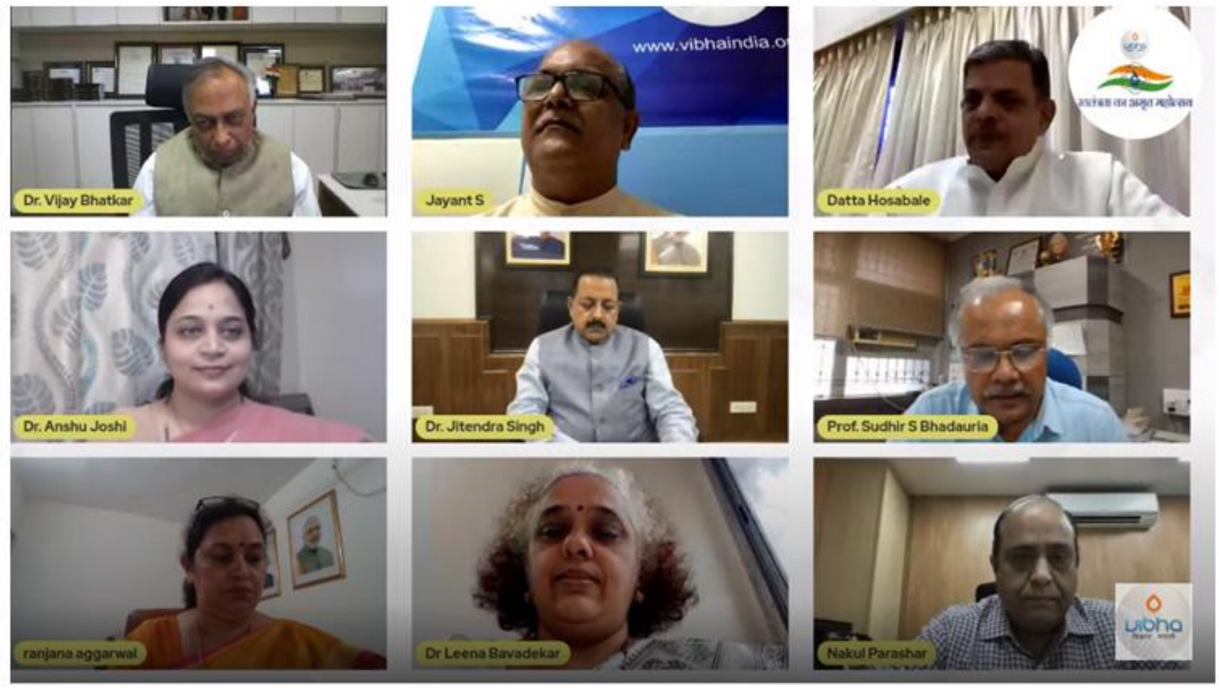

Dr. Vijay Bhatkar, Shri Jayant Sahasrabuddhe, Shri Dattatreya Hosabale (top L to R), Dr. Anshu Joshi, Dr. Jitendra Singh, Professor Sudhir Bhadauria (middle L to R), Prof. Ranjana Agarwal, Dr. Leena Bawdekar, and Dr. Nakul Parashar (bottom L to R)

New Delhi: VigyanPrasar, an autonomous institution under the Department of Science and Technology has drawn up an ambitious programme to celebrate the contributions of Indian scientists, science communicators, and teachers during India's independence movement to mark the 75th anniversary of India's Independence in collaboration with Council of Scientific and Industrial Research's National Institute of Science Communication and Policy Research (CSIR-NIScPR) and science NGO, VijnanaBharati (Vibha).

The celebration is part of the Government of India's nationwide initiative titled `SwatantrataAmritMahotsav' to highlight a major milestone in the history of independent India,

is being implemented in two phases. The first phase is getting completed by August 15 ‘21, and the second will start after that and will go on till the next Independence Day.

In the first phase, a Science Quiz Competition for the school students from class VI to XI was launched on the web portal of VidyarthiVigyanManthan (www.vvm.org.in); and posters were prepared on Indian scientists who worked during the pre-independence period and their contribution in igniting the spirit of swadeshi and nationalism in people, among other things.

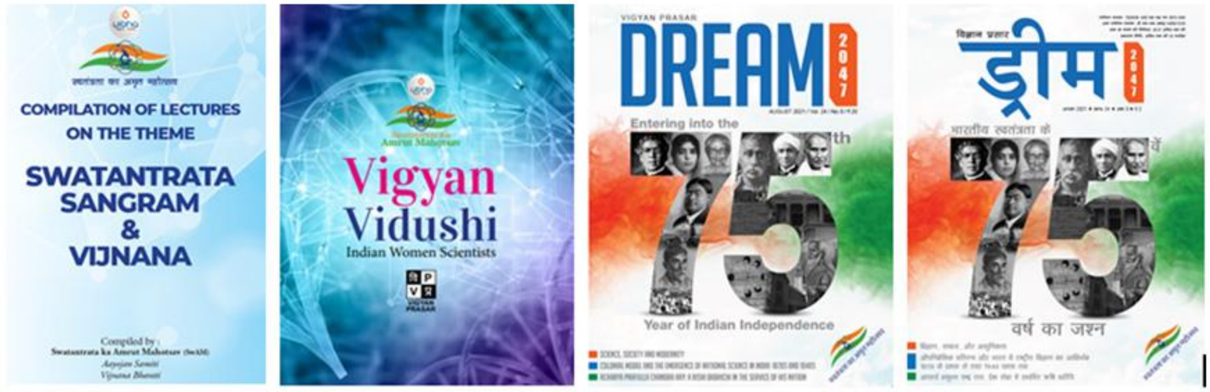

The book ‘Swatantrta Sangram & Vijnana’, a booklet on women scientists and entrepreneurs ‘VigyanVidushi’ and Hindi and English issues of Dream-2047 magazine

The second phase will include bringing out documentaries depicting the heritage of indigenous science and technology of the past and show Britishers’ influence through policies of suppression and ignorance and how Indian scientists responded to colonial science; and holding of a national conference for science communicators and another for academicians from school to higher education.

At a function organised online on Monday to mark the formal inauguration of the celebrations, General Secretary of RashtriyaSwayamsevakSangh, DattareyaHosabale, appreciated the efforts to showcase the contribution of Indian scientists to the independence movement. “Many scientists of the period when India was fighting for its freedom were not confined to their labs alone. They were acutely aware of what was going on outside in the country and the world. Not much is known about their contributions. It is good that they are being brought out”.

Mr. Hosabale, who was the chief guest, also emphasised that science should not be left to scientists alone since it is connected to every aspect of life and noted that spiritual stalwarts had also made immense contributions to Indian science. He recalled that Swami Vivekananda had played an important role in the setting up of the Indian Institute of Science in Bengaluru.

Union Minister for the Ministry of Science and Technology and Ministry of Earth Sciences, Dr.Jintendra Singh, who was the guest of honour, said, science not only contributed to Indian independence but also defined its various contours. “Mahatma Gandhi was a remarkable practitioner of scientific strategies. Satyagraha was nothing but a silent biological warfare against aggression.”

He emphasised the need to promote scientific temper in the country and noted that the Prime Minister, Mr. Narendra Modi, had a great scientific outlook. He recalled that at the inauguration of Shri Mata VaishnodeviKatra railway station in the Union Territory of Jammu and Kashmir, Mr. Modi had noticed that the area had a lot of sunshine and had suggested that steps be taken to try and tap it and today the station is powered by solar energy.

Special issues of newsletters published by VigyanPrasar, in Tamil, Kannada, Assamese, Maithili and Bangla

He stressed the importance of science and said India can become a Vishwaguru only through the medium of science. “We need to synergise all streams of science and take up subject-based research projects with the involvement of other stakeholders also”.

National Organising Secretary of Vibha, Jayant Sahasrabhute, National President of Vibha, Vijay Bhatkar, and Director of VigyanPrasar, Dr. Nakul Prasar, hoped that the yearlong celebrations would help India attain new heights through the motivation of the younger generation.

The function marked the release of a book called `VigyanVidushi” on women scientists and entrepreneurs from the time of Indian independence; a compilation of transcripts of talks given under a lecture series; a special edition of VigyanPrasar’s Dream 2047 on science and 75th year of Indian independence and special issues of VigyanPrasar’s newsletters in regional languages. Besides, a web portal ‘swavigyan75.in’ for providing details on all aspects of the yearlong celebrations was also launched.

The function also celebrated the 160th birth anniversary of Acharya Sir Prafulla Chandra Ray. Rich tributes were paid to the eminent chemist, educationist, historian, industrialist and philanthropist. He established the first modern Indian research school in chemistry and is regarded as the father of chemical science in India. (India Science Wire)

BharatHerald

Celebrating Indian scientists' contributions to the independence movement

Bharat Herald August 3, 2021

Dr. Vijay Bhatkar, Shri Jayant Sahasrabuddhe, Shri Dattatreya Hosabale (top L to R), Dr. Anshu Joshi, Dr. Jitendra Singh, Professor Sudhir Bhadauria (middle L to R), Prof. Ranjana Agarwal, Dr. Leena Bawdekar, and Dr. Nakul Parashar (bottom L to R)

New Delhi: VigyanPrasar, an autonomous institution under the Department of Science and Technology has drawn up an ambitious programme to celebrate the contributions of Indian scientists, science communicators, and teachers during India's independence movement to mark the 75th anniversary of India's Independence in collaboration with Council of Scientific and Industrial Research's National Institute of Science Communication and Policy Research (CSIR-NIScPR) and science NGO, VijnanaBharati (Vibha).

The celebration is part of the Government of India's nationwide initiative titled `SwatantrataAmritMahotsav' to highlight a major milestone in the history of independent India,

is being implemented in two phases. The first phase is getting completed by August 15 ‘21, and the second will start after that and will go on till the next Independence Day.

In the first phase, a Science Quiz Competition for the school students from class VI to XI was launched on the web portal of VidyarthiVigyanManthan (www.vvm.org.in); and posters were prepared on Indian scientists who worked during the pre-independence period and their contribution in igniting the spirit of swadeshi and nationalism in people, among other things.

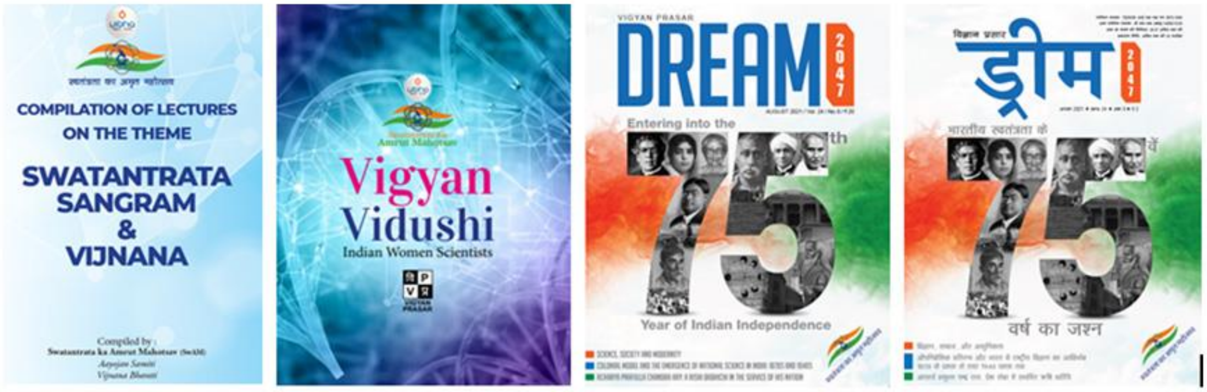

The book ‘Swatantrta Sangram & Vijnana’, a booklet on women scientists and entrepreneurs ‘VigyanVidushi’ and Hindi and English issues of Dream-2047 magazine

The second phase will include bringing out documentaries depicting the heritage of indigenous science and technology of the past and show Britishers’ influence through policies of suppression and ignorance and how Indian scientists responded to colonial science; and holding of a national conference for science communicators and another for academicians from school to higher education.

At a function organised online on Monday to mark the formal inauguration of the celebrations, General Secretary of RashtriyaSwayamsevakSangh, DattareyaHosabale, appreciated the efforts to showcase the contribution of Indian scientists to the independence movement. “Many scientists of the period when India was fighting for its freedom were not confined to their labs alone. They were acutely aware of what was going on outside in the country and the world. Not much is known about their contributions. It is good that they are being brought out”.

Mr. Hosabale, who was the chief guest, also emphasised that science should not be left to scientists alone since it is connected to every aspect of life and noted that spiritual stalwarts had also made immense contributions to Indian science. He recalled that Swami Vivekananda had played an important role in the setting up of the Indian Institute of Science in Bengaluru.

Union Minister for the Ministry of Science and Technology and Ministry of Earth Sciences, Dr.Jintendra Singh, who was the guest of honour, said, science not only contributed to Indian independence but also defined its various contours. “Mahatma Gandhi was a remarkable practitioner of scientific strategies. Satyagraha was nothing but a silent biological warfare against aggression.”

He emphasised the need to promote scientific temper in the country and noted that the Prime Minister, Mr. Narendra Modi, had a great scientific outlook. He recalled that at the inauguration of Shri Mata VaishnodeviKatra railway station in the Union Territory of Jammu and Kashmir, Mr. Modi had noticed that the area had a lot of sunshine and had suggested that steps be taken to try and tap it and today the station is powered by solar energy.

Special issues of newsletters published by VigyanPrasar, in Tamil, Kannada, Assamese, Maithili and Bangla

He stressed the importance of science and said India can become a Vishwaguru only through the medium of science. “We need to synergise all streams of science and take up subject-based research projects with the involvement of other stakeholders also”.

National Organising Secretary of Vibha, Jayant Sahasrabhute, National President of Vibha, Vijay Bhatkar, and Director of VigyanPrasar, Dr. Nakul Prasar, hoped that the yearlong celebrations would help India attain new heights through the motivation of the younger generation.

The function marked the release of a book called `VigyanVidushi” on women scientists and entrepreneurs from the time of Indian independence; a compilation of transcripts of talks given

under a lecture series; a special edition of VigyanPrasar's Dream 2047 on science and 75th year of Indian independence and special issues of VigyanPrasar's newsletters in regional languages. Besides, a web portal 'swavigyan75.in' for providing details on all aspects of the yearlong celebrations was also launched.

The function also celebrated the 160th birth anniversary of Acharya Sir Prafulla Chandra Ray. Rich tributes were paid to the eminent chemist, educationist, historian, industrialist and philanthropist. He established the first modern Indian research school in chemistry and is regarded as the father of chemical science in India. (India Science Wire)

Let INDIA SHINE

Celebrating Indian scientists' contributions to the independence movement

By **Let India Shine** - August 3, 2021

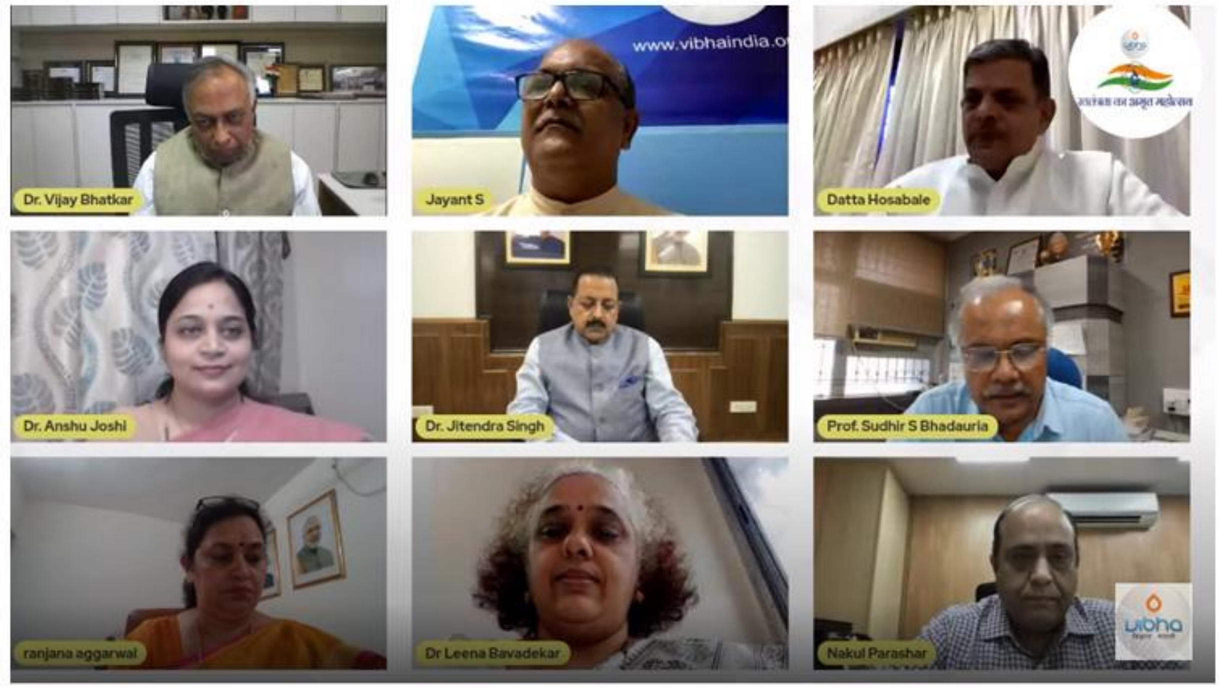

Dr. Vijay Bhatkar, Shri Jayant Sahasrabuddhe, Shri Dattatreya Hosabale (top L to R), Dr. Anshu Joshi, Dr. Jitendra Singh, Professor Sudhir Bhadauria (middle L to R), Prof. Ranjana Agarwal, Dr. Leena Bawdekar, and Dr. Nakul Parashar (bottom L to R)

New Delhi: VigyanPrasar, an autonomous institution under the Department of Science and Technology has drawn up an ambitious programme to celebrate the contributions of Indian scientists, science communicators, and teachers during India's independence movement to mark the 75th anniversary of India's Independence in collaboration with Council of Scientific and Industrial Research's National Institute of Science Communication and Policy Research (CSIR-NIScPR) and science NGO, VijnanaBharati (Vibha).

The celebration is part of the Government of India’s nationwide initiative titled `SwatantrataAmritMahotsav’ to highlight a major milestone in the history of independent India, is being implemented in two phases. The first phase is getting completed by August 15 ‘21, and the second will start after that and will go on till the next Independence Day.

In the first phase, a Science Quiz Competition for the school students from class VI to XI was launched on the web portal of VidyarthiVigyanManthan (www.vvm.org.in); and posters were prepared on Indian scientists who worked during the pre-independence period and their contribution in igniting the spirit of swadeshi and nationalism in people, among other things.

The book ‘Swatantrta Sangram & Vijnana’, a booklet on women scientists and entrepreneurs ‘VigyanVidushi’ and Hindi and English issues of Dream-2047 magazine

The second phase will include bringing out documentaries depicting the heritage of indigenous science and technology of the past and show Britishers’ influence through policies of suppression and ignorance and how Indian scientists responded to colonial science; and holding of a national conference for science communicators and another for academicians from school to higher education.

At a function organised online on Monday to mark the formal inauguration of the celebrations, General Secretary of RashtriyaSwayamsevakSangh, DattareyaHosabale, appreciated the efforts to showcase the contribution of Indian scientists to the independence movement. “Many scientists of the period when India was fighting for its freedom were not confined to their labs alone. They were acutely aware of what was going on outside in the country and the world. Not much is known about their contributions. It is good that they are being brought out”.

Mr. Hosabale, who was the chief guest, also emphasised that science should not be left to scientists alone since it is connected to every aspect of life and noted that spiritual stalwarts had also made immense contributions to Indian science.

He recalled that Swami Vivekananda had played an important role in the setting up of the Indian Institute of Science in Bengaluru.

Union Minister for the Ministry of Science and Technology and Ministry of Earth Sciences, Dr.Jintendra Singh, who was the guest of honour, said, science not only contributed to Indian independence but also defined its various contours. "Mahatma Gandhi was a remarkable practitioner of scientific strategies. Satyagraha was nothing but a silent biological warfare against aggression."

He emphasised the need to promote scientific temper in the country and noted that the Prime Minister, Mr. Narendra Modi, had a great scientific outlook. He recalled that at the inauguration of Shri Mata VaishnodeviKatra railway station in the Union Territory of Jammu and Kashmir, Mr. Modi had noticed that the area had a lot of sunshine and had suggested that steps be taken to try and tap it and today the station is powered by solar energy.

Special issues of newsletters published by VigyanPrasar, in Tamil, Kannada, Assamese, Maithili and Bangla

He stressed the importance of science and said India can become a Vishwaguru only through the medium of science. “We need to synergise all streams of science and take up subject-based research projects with the involvement of other stakeholders also”.

National Organising Secretary of Vibha, Jayant Sahasrabhute, National President of Vibha, Vijay Bhatkar, and Director of VigyanPrasar, Dr. Nakul Prasar, hoped that the yearlong celebrations would help India attain new heights through the motivation of the younger generation.

The function marked the release of a book called `VigyanVidushi” on women scientists and entrepreneurs from the time of Indian independence; a compilation of transcripts of talks given under a lecture series; a special edition of VigyanPrasar’s Dream 2047 on science and 75th year of Indian independence and special issues of VigyanPrasar’s newsletters in regional languages. Besides, a web portal ‘swavigyan75.in’ for providing details on all aspects of the yearlong celebrations was also launched.

The function also celebrated the 160th birth anniversary of Acharya Sir Prafulla Chandra Ray. Rich tributes were paid to the eminent chemist, educationist, historian, industrialist and philanthropist. He established the first modern Indian research school in chemistry and is regarded as the father of chemical science in India. (India Science Wire)

स्वाधीनता आंदोलन में भारतीय वैज्ञानिकों के योगदान का उत्सव

03/08/2021

V3news India

नई दिल्ली, 03 अगस्त भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन में राजनीतिक आंदोलनकारियों :(इंडिया साइंस वायर), क्रांतिकारियों और सामाजिक कार्यकर्ताओं के योगदान की चर्चा खूब होती है। लेकिन, स्वाधीनता की चेतना जगाने और स्वतंत्र देश के भविष्यनिर्माण की आधारशिला रखने वाले वैज्ञानिकों के महत्वपूर्ण योगदान की चर्चा कम ही होती है। एक नयी पहल के - अंतर्गत स्वतंत्रता आंदोलन में भारतीय वैज्ञानिकों के योगदान का राष्ट्रव्यापी उत्सव मनाने के लिए एक विस्तृत कार्यक्रम तैयार किया गया है।

भारत के महान रसायनज्ञ, उद्यमी तथा महान शिक्षक डॉ प्रफुल्लचन्द्र राय)02 अगस्त 1861 – 16 जून 1944) की 160वीं जयंती के अवसर पर, साल भर चलने वाले इन कार्यक्रमों की श्रृंखला की औपचारिक शुरुआत केंद्रीय मंत्री डॉ जितेंद्र सिंह की मौजूदगी में सोमवार को की गई है।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग की स्वायत्त संस्था विज्ञान प्रसार, वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद -सीएसआईआर) से संबंद्ध संस्थान नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस कम्युनिकेशन ऐंड पॉलिसी रिसर्च (सीएसआईआर) सरका-और गैर (एनआईएससीपीआरारी संगठन विज्ञान भारती ने मिलकर स्वतंत्रता की (विभा)75वीं वर्षगांठ के उपलक्ष्य में यह महत्वाकांक्षी कार्यक्रम तैयार किया है।

केंद्रीय विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी राज्य मंत्री (स्वतंत्र प्रभार), डॉ जितेंद्र सिंह ने इस अवसर पर कहा कि "वैज्ञानिक योग्यता की तुलना में वैज्ञानिक दृष्टिकोण अधिक महत्वपूर्ण होता है।" उन्होंने यह भी कहा कि गाँधी जी की 'अहिंसा' और 'सत्याग्रह' और कुछ नहीं, बल्कि आक्रामकता के खिलाफ एक 'मूक जैविक युद्ध' था। "केंद्रीय मंत्री ने कहा कि विज्ञान से जुड़े विषयों का बेहतर उपयोग करने के लिए जरूरी नहीं कि कोई छात्र या विज्ञान का विद्वान ही ऐसा कर सकता है।

बल्कि, ऐसा करने के लिए व्यक्ति में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का होना अधिक महत्वपूर्ण है। डॉ जितेंद्र सिंह ने विज्ञान के महत्व पर जोर देते हुए कहा कि विज्ञान के माध्यम से ही भारत विश्वगुरु बन सकता है। "हमें विज्ञान की सभी धाराओं में तालमेल बिठाने और अन्य हितधारकों की भागीदारी के साथ विषय आधारित अनुसंधान परियोजनाओं को शुरू करने की आवश्यकता है।"

उन्होंने कहा, "समकालीन समय में वैज्ञानिक दृष्टिकोण की बात करें, तो मेरे हिसाब से आज हमारे आसपास वैज्ञानिक सोच का सबसे उल्लेखनीय उदाहरण कोई और नहीं, बल्कि खुद प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी हैं।" सिंह ने एक घटनाक्रम का हवाला दिया, जिसमें प्रधानमंत्री मोदी ने जम्मूकश्मीर के कटरा रेलवे स्टेशन उद्घाटन के मौके पर खिली हुई धूप को देखकर वहाँ सौर संयंत्र - की स्थापना का मार्ग प्रशस्त किया।

डॉ सिंह ने कहा कि यह प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के वैज्ञानिक दृष्टिकोण को दर्शाता है। 'भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन और विज्ञान' शीर्षक वाला यह उत्सव स्वतंत्रता की 75वीं वर्षगांठ पर भारत सरकार द्वारा आयोजित 'आजादी का अमृत महोत्सव' का हिस्सा है। उत्सव को दो चरणों में मनाया जा रहा है। पहला चरण 15 अगस्त 2021 तक पूरा हो रहा है। जबकि, उत्सव का दूसरा चरण उसके बाद शुरू होगा, और अगले स्वतंत्रता दिवस तक चलेगा।

'भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन और विज्ञान' पर केंद्रित इस उत्सव के प्रथम चरण में कक्षा VI से XI तक के स्कूली छात्रों के लिए विद्यार्थी विज्ञान मंथन के वेब पोर्टल)www.vvm.org.in) पर विज्ञान प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता का शुभारंभ किया गया; और स्वतंत्रतापूर्व अवधि के दौरान काम करने वाले भारतीय वैज्ञानिकों द्वारा लोगों में स्वदेशी और राष्ट्रवाद की भावना जागृत - करने मेें उनके योगदान पर पोस्टर तैयार किए गए।

उत्सव के दूसरे चरण में, अतीत के स्वदेशी विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी की विरासत का चित्रण करने वाली फिल्मों एवं वृत्तचित्रों पर आधारित 'स्वतंत्रता का विज्ञान फिल्मोत्सव' कार्यक्रम आयोजित किया जाएगा। इसके अंतर्गत भारतीय वैज्ञानिकों के प्रति अंग्रेजों के दमन एवं उपेक्षात्मक नीतियों को फिल्मों के माध्यम से प्रदर्शित करने की कोशिश है।
फिल्मों के माध्यम से यह रेखांकित करने का प्रयास रहेगा कि भारतीय वैज्ञानिकों ने औपनिवेशिक विज्ञान के प्रति कैसे अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की।

दूसरे चरण के कार्यक्रमों में विज्ञान संचारकों के लिए राष्ट्रीय सम्मेलन और स्कूली तथा उच्च शिक्षा से जुड़े शिक्षकों एवं शिक्षाविदों के लिए राष्ट्रीय सम्मेलन का आयोजन शामिल है। पूरे साल चलने वाले इस उत्सव के औपचारिक ऑनलाइन उद्घाटन समारोह में, राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के सरकार्यवाह श्री दत्तात्रेय होसबले ने स्वतंत्रता आंदोलन में भारतीय वैज्ञानिकों के

योगदान को प्रदर्शित करने के प्रयासों की सराहना की। उन्होंने कहा, "भारत जब अपनी आजादी के लिए
लड़ रहा था, तो उस दौर के कई वैज्ञानिक सिर्फ प्रयोगशालाओं तक ही सीमित नहीं थे।

देश और दुनिया में बाहर क्या हो रहा है, इस बात से वे भलीभांति वाकिफ थे। उनके योगदान के बारे में ज्यादा जानकारी नहीं - है। यह अच्छा है कि उनके योगदान को उजागर किया जा रहा है।"श्री होसबले, जो कार्यक्रम के मुख्य अतिथि थे, ने इस बात पर भी जोर दिया कि विज्ञान को केवल वैज्ञानिकों पर नहीं छोड़ा जाना चाहिए, क्योंकि यह जीवन के हर पहलू से जुड़ा है। उन्होंने कहा कि आध्यात्मिक दिग्गजों ने भी भारतीय विज्ञान में बहुत बड़ा योगदान दिया है।

उन्होंने स्मरण दिलाया कि स्वामी विवेकानंद ने बेंगलुरु में भारतीय विज्ञान संस्थान की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी थी। विभा के राष्ट्रीय संगठन मंत्री श्री जयंत सहस्रबुद्धे, विभा के राष्ट्रीय अध्यक्ष डॉविजय भटकर और विज्ञान प्रसार के निदेशक . नकुल पाराशर ने आशा व्यक्त की कि वर्ष भर चलने वाले समारोह युवा पीढ़ी को नयी प्रेरणा देंगे .डॉऔर भारत को नयी ऊंचाइयों को प्राप्त करने में मदद करेंगे।

सीएसआईआरएनआईएससीपीआर की निदेशक और इस कार्यक्रम की संयोजक प्रोफेसर रंजना अग्रवाल ने समारोह में शामिल - कार्यक्रमों की विस्तृत जानकारी प्रदान की। कार्यक्रम में, भारतीय स्वतंत्रता के समय और उसके बाद सक्रिय महिला वैज्ञानिकों एवं उद्यमियों पर केंद्रित पुस्तिका `विज्ञान विदुषी' का विमोचन किया गया। स्वतंत्रता आंदोलन में वैज्ञानिकों के योगदान पर केंद्रित व्याख्यान श्रृंखला के वक्तव्यों को आलेख के रूप में संकलित कर पुस्तक का रूप
दिया गया है।

'स्वतंत्रता संग्राम ऐंड विज्ञान' नामक इस पुस्तक का विमोचन भी इस मौके पर किया गया। विज्ञान प्रसार द्वारा प्रकाशित की जाने वाली पत्रिका ड्रीम-2047 के भारतीय स्वतंत्रता के 75वें वर्ष पर केंद्रित विशेष संस्करण के साथसाथ इस संस्थान द्वारा - प्रकाशित छह भारतीय भाषाओं में न्यूजलेटर्स के विशेषांकों का विमोचन भी किया गया है।

इसके अलावा, साल भर चलने वाले समारोहों के सभी पहलुओं पर विवरण प्रदान करने के लिए www.swavigyan75.in नामक एक वेब पोर्टल लॉन्च किया गया है। इस ऑनलाइन समारोह में, आचार्य सर प्रफुल्ल चंद्र राय की 160वीं जयंती मनायी गई और उनके योगदान को भी याद किया गया।

प्रभासाक्षी

इलेक्ट्रिक वाहनों में प्रयुक्त होने वाले मैग्नेट के निर्माण की नई तकनीक

इंडिया साइंस वायर | Aug 16, 2021 | 16:48

भारत सरकार द्वारा संचालित इंटरनेशनल एडवांस्ड रिसर्च सेंटर फॉर पाउडर मेटालर्जी एंड न्यू मैटीरियल्स नए मैग्नेट विकसित करने के अभियान में जुटा है। ऐसे मैग्नेट न केवल भारत को आत्मनिर्भर बनाएंगे, अपितु वैश्विक आपूर्ति करने में भी सहायक होंगे।

इसमें कोई संदेह नहीं कि भविष्य का यातायात इलेक्ट्रिक वाहनों पर निर्भर होगा। जीवाश्म ईंधनों के (ईवी) अंधाधुंध उपयोग ने ग्लोबल वार्मिंग से लेकर प्रदूषण की समस्या को कई गुना बढ़ा दिया है। जीवाश्म ईंधनों की सीमित उपलब्धता और एक समय के बाद उनकी अपेक्षित प्राप्ति संभव नहीं हो पाने की स्थिति में इलेक्ट्रिक वाहनों का एक पसंदीदा विकल्प के रूप में उभरना स्वाभाविक है। हालांकि, ऐसे वाहनों की राह में बाधाएं भी कम नहीं हैं। सबसे बड़ी बाधा ऐसे वाहनों के लिए सक्षम मैग्नेट यानी चुंबक की उपलब्धता का है। ऐसा मैग्नेट मुख्य रूप से चीन में पाया जाता है, जहान से उसकी आपूर्ति को लेकर निश्चिंत नहीं हुआ जा सकता।

दरअसल इलेक्ट्रिक वाहनों के लिए उम्दा किस्म की मोटर चाहिए और ऐसी मोटर का निर्माण उत्तम गुणवत्ता वाले मैग्नेट से ही संभव है। फिलहाल ऐसा मैग्नेट पृथ्वी की उन 17 दुर्लभ धातुओं से बनता है, जिनका उत्खनन एक कठिन कार्य है। इस धातु के उत्पादन में इस समय चीन का ही वर्चस्व है और वही विश्व भर में उसका सबसे बड़ा आपूर्तिकर्ता है। इलेक्ट्रिक वाहनों के लिए चीनी मैग्नेट पर निर्भरता दूसरे देशों पर भारी पड़ती है।

भारत सरकार द्वारा संचालित इंटरनेशनल एडवांस्ड रिसर्च सेंटर फॉर पाउडर मेटालर्जी एंड न्यू मैटीरियल्स नए मैग्नेट विकसित करने के अभियान में जुटा है। ऐसे मैग्नेट न केवल भारत को आत्मनिर्भर (एआरसीआई) बनाएंगे, अपितु वैश्विक आपूर्ति करने में भी सहायक होंगे। इससे मैग्नेट की वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला पर से चीन का दबदबा भी घटेगा। इस अभियान की कमान मैग्नेट्स के विशेषज्ञ वैज्ञानिक आर गोपालन संभाल रहे हैं।

गोपालन ने नियोडिमियममैग्नेट्स निर्माण के लिए एक नई प्रक्रिया खोज निकाली (एनआईबी) बोरोन-आयरन- है। इसे'चैंपियन ऑफ मैग्नेट' की उपाधि दी जा रही है। मैग्नेट निर्माण के लिए एनआईबी एक शानदार एलॉय है, लेकिन गर्म होने पर यह अपने चुंबकीय गुण खोने लगता है। उल्लेखनीय है कि मोटर विशेषकर इलेक्ट्रिक वाहनों की मोटर व्यापक स्तर पर ऊष्मा उत्पन्न करती है। ऐसे में इस समस्या से मुक्ति पाने के लिए एनआईबी मैग्नेट को एक अन्य दुर्लभ धातु डाइस्प्रोजियम में डुबोया जाता है। फिलहाल डाइस्प्रोजियम आपूर्ति पर चीन का ही एक तरह से नियंत्रण है। वर्तमान में विनिर्मित एनआईबी मैग्नेट्स में 15 से 20 प्रतिशत डाइस्प्रोजियम होता है, लेकिन गोपालन ने एक ऐसा तरीका खोज निकाला है जो मात्र एक प्रतिशत से कम डाइस्प्रोजियम से भी कम में उच्च गुणवत्ता वाले मैग्नेट का निर्माण करने में सक्षम है। अपनी इस खोज पर उत्साहित गोपालन कहते हैं कि दुनिया इस तकनीक की ओर बड़ी उम्मीद से देख रही है।

इस तकनीक के उपयोग से इलेक्ट्रिक वाहनों के क्षेत्र में नई क्रांति आ सकती है। न केवल लोगों की आवाजाही सुगम हो सकेगी, बल्कि जीवाश्म ईंधनों पर आने वाला बेतहाशा खर्च भी बचेगा और पयार्वरण को हो रही क्षति पर भी अंकुश लग सकेगा।

(इंडिया साइंस वायर(

WEBDUNIA
हिंदी

इलेक्ट्रिक वाहनों में प्रयुक्त होने वाले मैग्नेट के निर्माण की नई तकनीक

Last Updated: गुरुवार, 5 अगस्त 2021 (17:55 IST)

नई दिल्ली, इसमें कोई संदेह नहीं कि भविष्य का यातायात इलेक्ट्रिक वाहनों पर निर्भर (ईवी) होगा। जीवाश्म ईंधनों के अंधाधुंध उपयोग ने ग्लोबल वार्मिंग से लेकर प्रदूषण की समस्या को कई गुना बढ़ा दिया है।

जीवाश्म ईंधनों की सीमित उपलब्धता और एक समय के बाद उनकी अपेक्षित प्राप्ति संभव नहीं हो पाने की स्थिति में इलेक्ट्रिक वाहनों का एक पसंदीदा विकल्प के रूप में उभरना स्वाभाविक है।

हालांकि, ऐसे वाहनों की राह में बाधाएं भी कम नहीं हैं। सबसे बड़ी बाधा ऐसे वाहनों के लिए सक्षम मैग्नेट यानी चुंबक की उपलब्धता का है। ऐसा मैग्नेट मुख्य रूप से चीन में पाया जाता है, जहान से उसकी आपूर्ति को लेकर निश्चिंत नहीं हुआ जा सकता।

दरअसल इलेक्ट्रिक वाहनों के लिए उम्दा किस्म की मोटर चाहिए और ऐसी मोटर का निर्माण उत्तम गुणवत्ता वाले मैग्नेट से ही संभव है। फिलहाल ऐसा मैग्नेट पृथ्वी की उन 17 दुर्लभ धातुओं से बनता है, जिनका उत्खनन एक कठिन कार्य है। इस धातु के उत्पादन में इस समय चीन का ही वर्चस्व है और वही विश्व भर में उसका सबसे बड़ा आपूर्तिकर्ता है। इलेक्ट्रिक वाहनों के लिए चीनी मैग्नेट पर निर्भरता दूसरे देशों पर भारी पड़ती है।

भारत सरकार द्वारा संचालित इंटरनेशनल एडवांस्ड रिसर्च सेंटर फॉर पाउडर मेटालर्जी एंड न्यू मैटीरियल्स नए मैग्नेट विकसित करने के अभियान में जुटा है। ऐसे मैग्नेट न केवल (एआरसीआई) भारत को आत्मनिर्भर बनाएंगे, अपितु वैश्विक आपूर्ति करने में भी सहायक होंगे।

इससे मैग्नेट की वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला पर से चीन का दबदबा भी घटेगा। इस अभियान की कमान मैग्नेट्स के विशेषज्ञ वैज्ञानिक आर गोपालन संभाल रहे हैं।

गोपालन ने नियोडिमियममैग्नेट्स निर्माण के लिए एक नई प्रक्रिया (एनआईबी) बोरोन-आयरन-ख ोज निकाली है। इसे 'चैंपियन ऑफ मैग्नेट' की उपाधि दी जा रही है। मैग्नेट निर्माण के लिए एनआईबी एक शानदार एलॉय है, लेकिन गर्म होने पर यह अपने चुंबकीय गुण खोने लगता है।

उल्लेखनीय है कि मोटर विशेषकर इलेक्ट्रिक वाहनों की मोटर व्यापक स्तर पर ऊष्मा उत्पन्न करती है। ऐसे में इस समस्या से मुक्ति पाने के लिए एनआईबी मैग्नेट को एक अन्य दुर्लभ धातु डाइस्प्रोजियम में डुबोया जाता है। फिलहाल डाइस्प्रोजियम आपूर्ति पर चीन का ही एक तरह से नियंत्रण है। वर्तमान में विनिर्मित एनआईबी मैग्नेट्स में 15 से 20 प्रतिशत डाइस्प्रोजियम होता है, लेकिन गोपालन ने एक ऐसा तरीका खोज निकाला है जो मात्र एक प्रतिशत से कम डाइस्प्रोजियम से भी कम में उच्च गुणवत्ता वाले मैग्नेट का निर्माण करने में सक्षम है। अपनी इस खोज पर उत्साहित गोपालन कहते हैं कि दुनिया इस तकनीक की ओर बड़ी उम्मीद से देख रही है।

इस तकनीक के उपयोग से इलेक्ट्रिक वाहनों के क्षेत्र में नई क्रांति आ सकती है। न केवल लोगों की आवाजाही सुगम हो सकेगी, बल्कि जीवाश्म ईंधनों पर आने वाला बेतहाशा खर्च भी बचेगा और पयार्वरण को हो रही क्षति पर भी अंकुश लग सकेगा। ***(इंडिया साइंस वायर(***

RD TIMES.in हिंदी

इलेक्ट्रिक वाहनों में प्रयुक्त होने वाले मैग्नेट के निर्माण की नई तकनीक

By RD Times Hindi | August 4, 2021

प्रतीकात्मक तस्वीर :Pexels

नई दिल्ली: इसमें कोई संदेह नहीं कि भविष्य का यातायात इलेक्ट्रिक वाहनों पर निर्भर होगा। जीवाश्म(ईवी) ईंधनों के अंधाधुंध उपयोग ने ग्लोबल वार्मिंग से लेकर प्रदूषण की समस्या को कई गुना बढ़ा दिया है। जीवाश्म ईंधनों की सीमित उपलब्धता और एक समय के बाद उनकी अपेक्षित प्राप्ति संभव नहीं हो पाने की स्थिति में इलेक्ट्रिक वाहनों का एक पसंदीदा विकल्प के रूप में उभरना स्वाभाविक है। हालांकि, ऐसे वाहनों की राह में बाधाएं भी कम नहीं हैं। सबसे बड़ी बाधा ऐसे वाहनों के लिए सक्षम मैग्नेट यानी चुंबक की उपलब्धता का है। ऐसा मैग्नेट मुख्य रूप से चीन में पाया जाता है, जहान से उसकी आपूर्ति को लेकर निश्चिंत नहीं हुआ जा सकता।

दरअसल इलेक्ट्रिक वाहनों के लिए उम्दा किस्म की मोटर चाहिए और ऐसी मोटर का निर्माण उत्तम गुणवत्ता वाले मैग्नेट से ही संभव है। फिलहाल ऐसा मैग्नेट पृथ्वी की उन 17 दुर्लभ धातुओं से बनता है, जिनका उत्खनन एक कठिन कार्य है। इस धातु के उत्पादन में इस समय चीन का ही वर्चस्व है और वही विश्व भर में उसका सबसे बड़ा आपूर्तिकर्ता है। इलेक्ट्रिक वाहनों के लिए चीनी मैग्नेट पर निर्भरता दूसरे देशों पर भारी पड़ती है।

भारत सरकार द्वारा संचालित इंटरनेशनल एडवांस्ड रिसर्च सेंटर फॉर पाउडर मेटालर्जी एंड न्यू मैटीरियल्स सित करने के अभियान में जुटा है। ऐसे मैग्नेट न केवल भारत को आत्मनिर्भर नए मैग्नेट विक (एआरसीआई) बनाएंगे, अपितु वैश्विक आपूर्ति करने में भी सहायक होंगे। इससे मैग्नेट की वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला पर से चीन का दबदबा भी घटेगा। इस अभियान की कमान मैग्नेट्स के विशेषज्ञ वैज्ञानिक आर गोपालनसंभाल रहे हैं।

गोपालन ने नियोडिमियममैग्नेट्स निर्माण के लिए एक नई प्रक्रिया खोज निकाली (एनआईबी) बोरोन-आयरन- है। इसे‘चैंपियन ऑफ मैग्नेट’ की उपाधि दी जा रही है। मैग्नेट निर्माण के लिए एनआईबी एक शानदार एलॉय है, लेकिन गर्म होने पर यह अपने चुंबकीय गुण खोने लगता है। उल्लेखनीय है कि मोटर विशेषकर इलेक्ट्रिक वाहनों की मोटर व्यापक स्तर पर ऊष्मा उत्पन्न करती है। ऐसे में इस समस्या से मुक्ति पाने के लिए एनआईबी मैग्नेट को एक अन्य दुर्लभ धातु डाइस्प्रोजियम में डुबोया जाता है। फिलहाल डाइस्प्रोजियम आपूर्ति पर चीन का ही एक तरह से नियंत्रण है। वर्तमान में विनिर्मित एनआईबी मैग्नेट्स में 15 से 20 प्रतिशत डाइस्प्रोजियम होता है, लेकिन गोपालन ने एक ऐसा तरीका खोज निकाला है जो मात्र एक प्रतिशत से कम डाइस्प्रोजियम से भी कम में उच्च गुणवत्ता वाले मैग्नेट का निर्माण करने में सक्षम है। अपनी इस खोज पर उत्साहित गोपालन कहते हैं कि दुनिया इस तकनीक की ओर बड़ी उम्मीद से देख रही है।

इस तकनीक के उपयोग से इलेक्ट्रिक वाहनों के क्षेत्र में नई क्रांति आ सकती है। न केवल लोगों की आवाजाही सुगम हो सकेगी, बल्कि जीवाश्म ईंधनों पर आने वाला बेतहाशा खर्च भी बचेगा औऱ पयार्वरण को हो रही क्षति पर भी अंकुश लग सकेगा। (इंडिया साइंस वायर)

इलेक्ट्रिक वाहनों में प्रयुक्त होने वाले मैग्नेट के निर्माण की नई तकनीक

August 5, 2021 admin

नई दिल्ली, (इंडिया साइंस वायरइस :(में कोई संदेह नहीं कि भविष्य का यातायात इलेक्ट्रिक वाहनों पर (ईवी) धुंध उपयोग ने ग्लोबल वार्मिंग से लेकर प्रदूषण की समस्या को कई गुना बढ़ा निर्भर होगा। जीवाश्म ईंधनों के अंधा दिया है। जीवाश्म ईंधनों की सीमितउपलब्धता और एक समय के बाद उनकी अपेक्षित प्राप्ति संभव नहीं हो पाने की स्थिति में इलेक्ट्रिक वाहनों का एक पसंदीदा विकल्प के रूप में उभरना स्वाभाविक है। हालांकि, ऐसे वाहनों की राह में बाधाएं भी कम नहीं हैं। सबसे बड़ी बाधा ऐसे वाहनों के लिए सक्षम मैग्नेट यानी चुंबक की उपलब्धता का है। ऐसा मैग्नेट मुख्य रूप से चीन में पाया जाता है, जहान से उसकी आपूर्ति को लेकर निश्चिंत नहीं हुआ जा सकता।

दरअसल इलेक्ट्रिक वाहनों के लिए उम्दा किस्म की मोटर चाहिए और ऐसी मोटर का निर्माण उत्तम गुणवत्ता वाले मैग्नेट से ही संभव है। फिलहाल ऐसा मैग्नेट पृथ्वी की उन 17 दुर्लभ धातुओं से बनता है, जिनका उत्खनन एक कठिन कार्य है। इस धातु के उत्पादन में इस समय चीन का ही वर्चस्व है और वही विश्व भर में उसका सबसे बड़ा आपूर्तिकर्ता है। इलेक्ट्रिक वाहनों के लिए चीनी मैग्नेट पर निर्भरता दूसरे देशों पर भारी पड़ती है।

भारत सरकार द्वारा संचालित इंटरनेशनल एडवांस्ड रिसर्च सेंटर फॉर पाउडर मेटालर्जी एंड न्यू मैटीरियल्स अभियान में जुटा है। ऐसे मैग्नेट न केवल भारत को आत्मनिर्भर बनाएंगे नए मैग्नेट विकसित करने के (एआरसीआई), अपितु वैश्विक आपूर्ति करने में भी सहायक होंगे। इससे मैग्नेट की वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला पर से चीन का दबदबा भी घटेगा। इस अभियान की कमान मैग्नेट्स के विशेषज्ञ वैज्ञानिक आर गोपालन संभाल रहे हैं।

गोपालन ने नियोडिमियममैग्नेट्स निर्माण के लिए एक नई प्रक्रिया खोज निकाली है। (एनआईबी) बोरोन-आयरन- इसे'चैंपियन ऑफ मैग्नेट' की उपाधि दी जा रही है। मैग्नेट निर्माण के लिए एनआईबी एक शानदार एलॉय है, लेकिन गर्म होने पर यह अपने चुंबकीय गुण खोने लगता है। उल्लेखनीय है कि मोटर विशेषकर इलेक्ट्रिक वाहनों की मोटर व्यापक स्तर पर ऊष्मा उत्पन्न करती है। ऐसे में इस समस्या से मुक्ति पाने के लिए एनआईबी मैग्नेट को एक अन्य दुर्लभ धातु डाइस्प्रोजियम में डुबोया जाता है। फिलहाल डाइस्प्रोजियम आपूर्ति पर चीन का ही एक तरह से नियंत्रण है। वर्तमान में विनिर्मित एनआईबी मैग्नेट्स में 15 से 20 प्रतिशत डाइस्प्रोजियम होता है, लेकिन गोपालन ने एक ऐसा तरीका खोज निकाला है जो मात्र एक प्रतिशत से कम डाइस्प्रोजियम से भी कम में उच्च गुणवत्ता वाले मैग्नेट का निर्माण करने में सक्षम है। अपनी इस खोज पर उत्साहित गोपालन कहते हैं कि दुनिया इस तकनीक की ओर बड़ी उम्मीद से देख रही है।

इस तकनीक के उपयोग से इलेक्ट्रिक वाहनों के क्षेत्र में नई क्रांति आ सकती है। न केवल लोगों की आवाजाही सुगम हो सकेगी, बल्कि जीवाश्म ईंधनों पर आने वाला बेतहाशा खर्च भी बचेगा और पयार्वरण को हो रही क्षति पर भी अंकुश लग सकेगा।

भारत हेराल्ड

इलेक्ट्रिक वाहनों में प्रयुक्त होने वाले मैग्नेट के निर्माण की नई तकनीक

August 4, 2021

प्रतीकात्मक तस्वीर :Pexels

नई दिल्ली: इसमें कोई संदेह नहीं कि भविष्य का यातायात इलेक्ट्रिक वाहनों वाश्म ईंधनों पर निर्भर होगा। जी(ईवी) के अंधाधुंध उपयोग ने ग्लोबल वार्मिंग से लेकर प्रदूषण की समस्या को कई गुना बढ़ा दिया है। जीवाश्म ईंधनों की सीमित उपलब्धताऔर एक समय के बाद उनकी अपेक्षित प्राप्ति संभव नहीं हो पाने की स्थिति में इलेक्ट्रिक वाहनों का एक पसंदीदा विकल्प के रूप में उभरना स्वाभाविक है। हालांकि, ऐसे वाहनों की राह में बाधाएं भी कम नहीं हैं। सबसे बड़ी बाधा ऐसे वाहनों के लिए सक्षम मैग्नेट यानी चुंबक की उपलब्धता का है। ऐसा मैग्नेट मुख्य रूप से चीन में पाया जाता है, जहान से उसकी आपूर्ति को लेकर निश्चिंत नहीं हुआ जा सकता।

दरअसल इलेक्ट्रिक वाहनों के लिए उम्दा किस्म की मोटर चाहिए और ऐसी मोटर का निर्माण उत्तम गुणवत्ता वाले मैग्नेट से ही संभव है। फिलहाल ऐसा मैग्नेट पृथ्वी की उन 17 दुर्लभ धातुओं से बनता है, जिनका उत्खनन एक कठिन कार्य है। इस धातु के उत्पादन में इस समय चीन का ही वर्चस्व है और वही विश्व भर में उसका सबसे बड़ा आपूर्तिकर्ता है। इलेक्ट्रिक वाहनों के लिए चीनी मैग्नेट पर निर्भरता दूसरे देशों पर भारी पड़ती है।

भारत सरकार द्वारा संचालित इंटरनेशनल एडवांस्ड रिसर्च सेंटर फॉर पाउडर मेटालर्जी एंड न्यू मैटीरियल्स ट विकसित करने के अभियान में जुटा है। ऐसे मैग्नेट न केवल भारत को आत्मनिर्भर बनाएंगेनए मैग्ने (एआरसीआई), अपितु वैश्विक आपूर्ति करने में भी सहायक होंगे। इससे मैग्नेट की वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला पर से चीन का दबदबा भी घटेगा। इस अभियान की कमान मैग्नेट्स के विशेषज्ञ वैज्ञानिक आर गोपालनसंभाल रहे हैं।

गोपालन ने नियोडिमियममैग्नेट्स निर्माण के लिए एक नई प्रक्रिया खोज निकाली है। (एनआईबी) बोरोन-आयरन- इसे'चैंपियन ऑफ मैग्नेट' की उपाधि दी जा रही है। मैग्नेट निर्माण के लिए एनआईबी एक शानदार एलॉय है, लेकिन गर्म होने पर यह अपने चुंबकीय गुण खोने लगता है। उल्लेखनीय है कि मोटर विशेषकर इलेक्ट्रिक वाहनों की मोटर व्यापक स्तर पर ऊष्मा उत्पन्न करती है। ऐसे में इस समस्या से मुक्ति पाने के लिए एनआईबी मैग्नेट को एक अन्य दुर्लभ धातु डाइस्प्रोजियम में डुबोया जाता है। फिलहाल डाइस्प्रोजियम आपूर्ति पर चीन का ही एक तरह से नियंत्रण है। वर्तमान में विनिर्मित एनआईबी मैग्नेट्स में 15 से 20 प्रतिशत डाइस्प्रोजियम होता है, लेकिन गोपालन ने एक ऐसा तरीका खोज निकाला है जो मात्र एक प्रतिशत से कम डाइस्प्रोजियम से भी कम में उच्च गुणवत्ता वाले मैग्नेट का निर्माण करने में सक्षम है। अपनी इस खोज पर उत्साहित गोपालन कहते हैं कि दुनिया इस तकनीक की ओर बड़ी उम्मीद से देख रही है।

इस तकनीक के उपयोग से इलेक्ट्रिक वाहनों के क्षेत्र में नई क्रांति आ सकती है। न केवल लोगों की आवाजाही सुगम हो सकेगी, बल्कि जीवाश्म ईंधनों पर आने वाला बेतहाशा खर्च भी बचेगा और पयार्वरण को हो रही क्षति पर भी अंकुश लग सकेगा। (इंडिया साइंस वायर)

इलेक्ट्रिक वाहनों में प्रयुक्त होने वाले मैग्नेट के निर्माण की नई तकनीक

04/08/2021

V3news India

नई दिल्ली, 04 अगस्त पर (ईवी) इसमें कोई संदेह नहीं कि भविष्य का यातायात इलेक्ट्रिक वाहनों :(इंडिया साइंस वायर) निर्भर होगा। जीवाश्म ईंधनों के अंधाधुंध उपयोग ने ग्लोबल वार्मिंग से लेकर प्रदूषण की समस्या को कई गुना बढ़ा दिया है। जीवाश्म ईंधनों की सीमित उपलब्धता और एक समय के बाद उनकी अपेक्षित प्राप्ति संभव नहीं हो पाने की स्थिति में इलेक्ट्रिक वाहनों का एक पसंदीदा विकल्प के रूप में उभरना स्वाभाविक है।

हालांकि, ऐसे वाहनों की राह में बाधाएं भी कम नहीं हैं। सबसे बड़ी बाधा ऐसे वाहनों के लिए सक्षम मैग्नेट यानी चुंबक की उपलब्धता का है। ऐसा मैग्नेट मुख्य रूप से चीन में पाया जाता है, जहान से उसकी आपूर्ति को लेकर निश्चिंत नहीं हुआ जा सकता। दरअसल इलेक्ट्रिक वाहनों के लिए उम्दा किस्म की मोटर चाहिए और ऐसी मोटर का निर्माण उत्तम गुणवत्ता वाले मैग्नेट से ही संभव है।

फिलहाल ऐसा मैग्नेट पृथ्वी की उन 17 दुर्लभ धातुओं से बनता है, जिनका उत्खनन एक कठिन कार्य है। इस धातु के उत्पादन में इस समय चीन का ही वर्चस्व है और वही विश्व भर में उसका सबसे बड़ा आपूर्तिकर्ता है। इलेक्ट्रिक वाहनों के लिए चीनी मैग्नेट

पर निर्भरता दूसरे देशों पर भारी पड़ती है। भारत सरकार द्वारा संचालित इंटरनेशनल एडवांस्ड रिसर्च सेंटर फॉर पाउडर मेटालर्जी एंड न्यू मैटीरियल्स नए मैग्नेट विकसित करने के अभियान (एआरसीआई) में जुटा है। ऐसे मैग्नेट न केवल भारत को आत्मनिर्भर बनाएंगे, अपितु वैश्विक आपूर्ति करने में भी सहायक होंगे।

इससे मैग्नेट की वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला पर से चीन का दबदबा भी घटेगा। इस अभियान की कमान मैग्नेट्स के विशेषज्ञ वैज्ञानिक आर गोपालन संभाल रहे हैं। गोपालन ने नियोडिमियममैग्नेट्स निर्माण के लिए एक नई प्रक्रिया (एनआईबी) बोरोन-आयरन- खोज निकाली है। इसे'चैंपियन ऑफ मैग्नेट' की उपाधि दी जा रही है। मैग्नेट निर्माण के लिए एनआईबी एक शानदार एलॉय है, लेकिन गर्म होने पर यह अपने चुंबकीय गुण खोने लगता है।

उल्लेखनीय है कि मोटर विशेषकर इलेक्ट्रिक वाहनों की मोटर व्यापक स्तर पर ऊष्मा उत्पन्न करती है। ऐसे में इस समस्या से मुक्ति पाने के लिए एनआईबी मैग्नेट को एक अन्य दुर्लभ धातु डाइस्प्रोजियम में डुबोया जाता है। फिलहाल डाइस्प्रोजियम आपूर्ति पर चीन का ही एक तरह से नियंत्रण है। वर्तमान में विनिर्मित एनआईबी मैग्नेट्स में 15 से 20 प्रतिशत डाइस्प्रोजियम होता है, लेकिन गोपालन ने एक ऐसा तरीका खोज निकाला है जो मात्र एक प्रतिशत से कम डाइस्प्रोजियम से भी कम में उच्च गुणवत्ता वाले मैग्नेट का निर्माण करने में सक्षम है।

अपनी इस खोज पर उत्साहित गोपालन कहते हैं कि दुनिया इस तकनीक की ओर बड़ी उम्मीद से देख रही है। इस तकनीक के उपयोग से इलेक्ट्रिक वाहनों के क्षेत्र में नई क्रांति आ सकती है। न केवल लोगों की आवाजाही सुगम हो सकेगी, बल्कि जीवाश्म ईंधनों पर आने वाला बेतहाशा खर्च भी बचेगा और पयार्वरण को हो रही क्षति पर भी अंकुश लग सकेगा।

दी इंडियन बुलेटिन

इलेक्ट्रिक वाहनों में प्रयुक्त होने वाले मैग्नेट के निर्माण की नई तकनीक

August 4, 2021

प्रतीकात्मक तस्वीर :Pexels

नई दिल्ली: इसमें कोई संदेह नहीं कि भविष्य का यातायात इलेक्ट्रिक वाहनों पर निर्भर होगा।(ईवी)जीवाश्म ईंधनों के अंधाधुंध उपयोग ने ग्लोबल वार्मिंग से लेकर प्रदूषण की समस्या को कई गुना बढ़ा दिया है। जीवाश्म ईंधनों की सीमित उपलब्धता और एक समय के बाद उनकी अपेक्षित प्राप्ति संभव नहीं हो पाने की स्थिति में इलेक्ट्रिक वाहनों का एक पसंदीदा विकल्प के रूप में उभरना स्वाभाविक है। हालांकि, ऐसे वाहनों की राह में बाधाएं भी कम नहीं हैं। सबसे बड़ी बाधा ऐसे वाहनों के लिए सक्षम मैग्नेट यानी चुंबक की उपलब्धता का है। ऐसा मैग्नेट मुख्य रूप से चीन में पाया जाता है, जहान से उसकी आपूर्ति को लेकर निश्चिंत नहीं हुआ जा सकता।

दरअसल इलेक्ट्रिक वाहनों के लिए उम्दा किस्म की मोटर चाहिए और ऐसी मोटर का निर्माण उत्तम गुणवत्ता वाले मैग्नेट से ही संभव है। फिलहाल ऐसा मैग्नेट पृथ्वी की उन 17 दुर्लभ धातुओं से बनता है, जिनका उत्खनन एक कठिन कार्य है। इस धातु के उत्पादन में इस समय चीन का ही वर्चस्व है और वही विश्व भर में उसका सबसे बड़ा आपूर्तिकर्ता है। इलेक्ट्रिक वाहनों के लिए चीनी मैग्नेट पर निर्भरता दूसरे देशों पर भारी पड़ती है।

भारत सरकार द्वारा संचालित इंटरनेशनल एडवांस्ड रिसर्च सेंटर फॉर पाउडर मेटालर्जी एंड न्यू मैटीरियल्स नए मैग (एआरसीआई)्नेट विकसित करने के अभियान में जुटा है। ऐसे मैग्नेट न केवल भारत को आत्मनिर्भर बनाएंगे, अपितु वैश्विक आपूर्ति करने में भी सहायक होंगे। इससे मैग्नेट की वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला पर से चीन का दबदबा भी घटेगा। इस अभियान की कमान मैग्नेट्स के विशेषज्ञ वैज्ञानिक आर गोपालनसंभाल रहे हैं।

गोपालन ने नियोडिमियममैग्नेट्स निर्माण के लिए एक नई प्रक्रिया खोज निकाली है। (एनआईबी) बोरोन-आयरन- इसे'चैंपियन ऑफ मैग्नेट' की उपाधि दी जा रही है। मैग्नेट निर्माण के लिए एनआईबी एक शानदार एलॉय है, लेकिन गर्म होने पर यह अपने चुंबकीय गुण खोने लगता है। उल्लेखनीय है कि मोटर विशेषकर इलेक्ट्रिक वाहनों की मोटर व्यापक स्तर पर ऊष्मा उत्पन्न करती है। ऐसे में इस समस्या से मुक्ति पाने के लिए एनआईबी मैग्नेट को एक अन्य दुर्लभ धातु डाइस्प्रोजियम में डुबोया जाता है। फिलहाल डाइस्प्रोजियम आपूर्ति पर चीन का ही एक तरह से नियंत्रण है। वर्तमान में विनिर्मित एनआईबी मैग्नेट्स में 15 से 20 प्रतिशत डाइस्प्रोजियम होता है, लेकिन गोपालन ने एक ऐसा तरीका खोज निकाला है जो मात्र एक प्रतिशत से कम डाइस्प्रोजियम से भी कम में उच्च गुणवत्ता वाले मैग्नेट का निर्माण करने में सक्षम है। अपनी इस खोज पर उत्साहित गोपालन कहते हैं कि दुनिया इस तकनीक की ओर बड़ी उम्मीद से देख रही है।

इस तकनीक के उपयोग से इलेक्ट्रिक वाहनों के क्षेत्र में नई क्रांति आ सकती है। न केवल लोगों की आवाजाही सुगम हो सकेगी, बल्कि जीवाश्म ईंधनों पर आने वाला बेतहाशा खर्च भी बचेगा औऱ पयार्वरण को हो रही क्षति पर भी अंकुश लग सकेगा। (इंडिया साइंस वायर)

रिपब्लिक न्यूज़इंडिया

इलेक्ट्रिक वाहनों में प्रयुक्त होने वाले मैग्नेट के निर्माण की नई तकनीक

By **Rupesh Dharmik** - August 4, 2021

प्रतीकात्मक तस्वीर :Pexels

नई दिल्ली: इसमें कोई संदेह नहीं कि भविष्य का यातायात इलेक्ट्रिक वाहनों होगा। पर निर्भर(ईवी) जीवाश्म ईंधनों के अंधाधुंध उपयोग ने ग्लोबल वार्मिंग से लेकर प्रदूषण की समस्या को कई गुना बढ़ा दिया है। जीवाश्म ईंधनों कीसीमित उपलब्धता और एक समय के बाद उनकी अपेक्षित प्राप्ति संभव नहीं हो पाने की स्थिति में इलेक्ट्रिक वाहनों का एक पसंदीदा विकल्प के रूप में उभरना स्वाभाविक है। हालांकि, ऐसे वाहनों की राह में बाधाएं भी कम नहीं हैं। सबसे बड़ी बाधा ऐसे वाहनों के लिए सक्षम मैग्नेट यानी चुंबक की उपलब्धता का है। ऐसा मैग्नेट मुख्य रूप से चीन में पाया जाता है, जहान से उसकी आपूर्ति को लेकर निश्चिंत नहीं हुआ जा सकता।

दरअसल इलेक्ट्रिक वाहनों के लिए उम्दा किस्म की मोटर चाहिए और ऐसी मोटर का निर्माण उत्तम गुणवत्ता वाले मैग्नेट से ही संभव है। फिलहाल ऐसा मैग्नेट पृथ्वी की उन 17 दुर्लभ धातुओं से बनता है, जिनका उत्खनन एक कठिन कार्य है। इस धातु के उत्पादन में इस समय चीन का ही वर्चस्व है और वही विश्व भर में उसका सबसे बड़ा आपूर्तिकर्ता है। इलेक्ट्रिक वाहनों के लिए चीनी मैग्नेट पर निर्भरता दूसरे देशों पर भारी पड़ती है।

भारत सरकार द्वारा संचालित इंटरनेशनल एडवांस्ड रिसर्च सेंटर फॉर पाउडर मेटालर्जी एंड न्यू मैटीरियल्स नए मैग्नेट विकसित करने के अभियान में जुटा है। ऐसे मैग्नेट न केवल भारत (एआरसीआई) को आत्मनिर्भर बनाएंगे, अपितु वैश्विक आपूर्ति करने में भी सहायक होंगे। इससे मैग्नेट की वैश्विक आपूर्ति श्रृंखला पर से चीन का दबदबा भी घटेगा। इस अभियान की कमान मैग्नेट्स के विशेषज्ञ वैज्ञानिक आर गोपालनसंभाल रहे हैं।

गोपालन ने नियोडिमियममैग्नेट्स निर्माण के लिए एक नई प्रक्रिया खोज (एनआईबी) बोरोन-आयरन-निकाली है। इस े 'चैंपियन ऑफ मैग्नेट' की उपाधि दी जा रही है। मैग्नेट निर्माण के लिए एनआईबी एक शानदार एलॉय है, लेकिन गर्म होने पर यह अपने चुंबकीय गुण खोने लगता है। उल्लेखनीय है कि मोटर विशेषकर इलेक्ट्रिक वाहनों की मोटर व्यापक स्तर पर ऊष्मा उत्पन्न करती है। ऐसे में इस समस्या से मुक्ति पाने के लिए एनआईबी मैग्नेट को एक अन्य दुर्लभ धातु डाइस्प्रोजियम में डुबोया जाता है। फिलहाल डाइस्प्रोजियम आपूर्ति पर चीन का ही एक तरह से नियंत्रण है। वर्तमान में विनिर्मित एनआईबी मैग्नेट्स में 15 से 20 प्रतिशत डाइस्प्रोजियम होता है, लेकिन गोपालन ने एक ऐसा तरीका खोज निकाला है जो मात्र एक प्रतिशत से कम डाइस्प्रोजियम से भी कम में उच्च गुणवत्ता वाले मैग्नेट का निर्माण करने में सक्षम है। अपनी इस खोज पर उत्साहित गोपालन कहते हैं कि दुनिया इस तकनीक की ओर बड़ी उम्मीद से देख रही है।

इस तकनीक के उपयोग से इलेक्ट्रिक वाहनों के क्षेत्र में नई क्रांति आ सकती है। न केवल लोगों की आवाजाही सुगम हो सकेगी, बल्कि जीवाश्म ईंधनों पर आने वाला बेतहाशा खर्च भी बचेगा औऱ पयार्वरण को हो रही क्षति पर भी अंकुश लग सकेगा। (इंडिया साइंस वायर)

भारत की 35 तितली प्रजातियों पर अस्तित्व का संकट

Last Updated: गुरुवार, 5 अगस्त 2021 (16:09 IST)

नई दिल्ली, तितलियों की आबादी को बेहतर पर्यावरणीय दशाओं के संकेतक के तौर पर जाना जाता है। परागण, खाद्य श्रृंखला और पारिस्थितिक तंत्र में भी तितलियों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। लेकिन, प्रदूषण, कीटनाशकों के उपयोग, जंगलों की कटाई और जलवायु परिवर्तन की मार पड़ने से तितलियों की आबादी पर संकट मंडराने लगा है।

भारतीय प्राणी विज्ञान सर्वेक्षण के अनुसार भारत में तितलियों की 1,318 प्रजातियां दर्ज की गई हैं। अंतरराष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ आईस)ीयूएन के अनुसार भारत में तितलियों की (35 प्रजातियां अपने अस्तित्व के लिहाज से गंभीर रूप से संकटग्रस्त हैं। आईसीयूएन ने भारत की तितलियों की 43 प्रजातियों को संकटग्रस्त और तीन तितली प्रजातियों को न्यूनतम रूप से

विचारणीय संकटग्रस्त श्रेणियों में रखा है। संसद में एक प्रश्न के उत्तर में पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्री अश्विनी चौबे ने यह जानकारी प्रदान की है।

अगर तितलियां पृथ्वी से खत्म हो जाएं तो सेब से लेकर कॉफी तक कई खाद्य फसलों के स्वाद से हम वंचित हो जाएंगे। तितलियां जब फूलों का रस पीकर परागण करती हैं तो फूलों का रूपांतरण फल में संभव हो पाता है। संयुक्त राष्ट्र की संस्था फूड एंड एग्रीकल्चर ऑर्गेनाइजेशन के अनुसार दुनिया की 75 फीसदी खेती परागण पर निर्भर करती है। पर्यावरणविदों का मानना है कि तितलियों के खत्म होने का असर दूसरे जीवों पर भी पड़ सकता है क्योंकि उनके अंडे से बने लार्वा और प्यूपा कई दूसरे जीवों का भोजन होते हैं।

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन राज्य मंत्री ने लोकसभा में बताया है कि तितलियों की संख्या में सुधार के लिए राज्य सरकारों को तितली पार्कों की स्थापना के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जा रही है। कर्नाटक, हिमाचल प्रदेश, महाराष्ट्र के बाद मध्यप्रदेश के इंदौर और भोपाल जैसे शहरों में ऐसे पार्क बनाये गए हैं।

भोपाल स्थित तितली पार्क में पहले ही साल तकरीबन तीन दर्जन तितलियों की प्रजातियां देखी गई हैं। इनमें कॉमन जेजवेल, ग्राम ब्लू, कॉमन बेंडेड ऑल, कॉमन इवनिंग ब्राउन, ब्लू टाइगर, प्लेन टाइगर, स्ट्रिप्ड टाइगर, कॉमन इंडियन क्रो और कॉमन ग्रास येलो जैसी प्रजातियाँ शामिल हैं।

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन राज्य मंत्री ने बताया है कि भारत में दुर्लभ और संकटग्रस्त तितलियों की प्रजातियों के संरक्षण के लिए विभिन्न राज्यों में राष्ट्रीय उद्यानों, वन्यजीव अभ्यारण्य और जैवमंडल रिजर्व स्थापित किए गए हैं। इसके साथ ही, भारत सरकार के वन्यजीव (संरक्षण) अधिनियम, 1972 की अनुसूची-1 में तितलियों की 126 प्रजातियां, अनुसूची-2 के तहत 299 प्रजातियाँ और अनुसूची-4 के अंतर्गत 18 प्रजातियां शामिल हैं।

भारतीय प्राणी विज्ञान सर्वेक्षण ने दुर्लभ और संकटग्रस्त तितलियों की प्रजातियों के संरक्षण हेतु राष्ट्रीय हिमालयी अध्ययन मिशन के तहत हिमालयी क्षेत्र में सक्रिय परागणकों के रूप में तितलियों पर अध्ययन किया है। हालांकि, तितिलयों के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए शोध किए जाने की आवश्यकता है।

भारत सरकार ने देश में दुर्लभ और संकटग्रस्त प्रजातियों के संरक्षण और सुरक्षा के लिए विभिन्न वन्यजीव संरक्षण अधिनियम तैयार किए हैं। दुर्लभ प्रजातियों के जंतुओं के अनुकूल वातावरण बनाने के लिए भारत सरकार द्वारा रामसर स्थलों के रूप में नामित अंतरराष्ट्रीय महत्व की आर्द्र भूमियां और प्राकृतिक विरासत स्थल चिह्नित किए गए हैं। ***(इंडिया साइंस वायर(***

हस्तक्षेप.com

भारत की 35 तितली प्रजातियों पर अस्तित्व का संकट

अगर तितलियां पृथ्वी से खत्म हो जाएं तो सेब से लेकर कॉफी तक कई खाद्य फसलों के स्वाद से हम वंचित हो जाएंगे। तितलियाँ जब फूलों का रस पीकर परागण करती हैं तो फूलों का रूपांतरण फल में संभव हो पाता है। संयुक्त राष्ट्र की संस्था फूड एंड एग्रीकल्चर ऑर्गेनाइजेशन के अनुसार दुनिया की 75 फीसदी खेती परागण पर निर्भर करती है।

By Guest Writer | Wed, 4 Aug 2021

India's 35 butterfly species are in danger of existence

Butterfly populations are known as indicators of better environmental conditions.

नई दिल्ली, 04 अगस्त 2021: तितलियों की आबादी को बेहतर पर्यावरणीय दशाओं के संकेतक के तौर पर जाना जाता है। परागण, खाद्य श्रृंखला और पारिस्थितिक तंत्र में भी तितलियों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है।

लेकिन, प्रदूषण, कीटनाशकों के उपयोग, जंगलों की कटाई और **जलवायु परिवर्तन की मार** पड़ने से **तितलियों की आबादी पर संकट)Butterfly population crisis)** मंडराने लगा है।

भारतीय प्राणी विज्ञान सर्वेक्षण के अनुसार भारत में तितलियों की 1,318 प्रजातियां दर्ज की गई हैं। अंतरराष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ के अनुसार भारत में तितलियों की (आईसीयूएन)35 प्रजातियाँ अपने अस्तित्व के लिहाज से गंभीर रूप से संकटग्रस्त हैं। आईसीयूएन ने भारत की तितलियों की 43 प्रजातियों को संकटग्रस्त और तीन तितली प्रजातियों को न्यूनतम रूप से विचारणीय संकटग्रस्त श्रेणियों में रखा है।

संसद में प्रश्न उत्तर | question and answer in parliament

संसद में एक प्रश्न के उत्तर में पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्री अश्विनी चौबे ने यह जानकारी प्रदान की है।

अगर तितलियां पृथ्वी से खत्म हो जाएं तो सेब से लेकर कॉफी तक कई खाद्य फसलों के स्वाद से हम वंचित हो जाएंगे। तितलियाँ जब फूलों का रस पीकर परागण करती हैं तो फूलों का रूपांतरण फल में संभव हो पाता है। संयुक्त राष्ट्र की संस्था फूड एंड एग्रीकल्चर ऑर्गेनाइजेशन के अनुसार दुनिया की 75 फीसदी खेती परागण पर निर्भर करती है।

Butterfly in Hindi

पर्यावरणविदों का मानना है कि तितलियों के खत्म होने का असर दूसरे जीवों पर भी पड़ सकता है क्योंकि उनके अंडे से बने लार्वा और प्यूपा कई दूसरे जीवों का भोजन होते हैं।

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन राज्य मंत्री ने लोकसभा में बताया है कि **तितलियों की संख्या में सुधार के लिए राज्य सरकारों को तितली पार्कों की स्थापना के लिए वित्तीय सहायता (Financial assistance for setting up butterfly parks) प्रदान की जा रही है।** कर्नाटक, हिमाचल प्रदेश, महाराष्ट्र के बाद मध्यप्रदेश के इंदौर और भोपाल जैसे शहरों में ऐसे पार्क बनाये गए हैं।

भोपाल स्थित तितली पार्क में पहले ही साल तकरीबन तीन दर्जन तितलियों की प्रजातियाँ देखी गई हैं। इनमें कॉमन जेजवेल, ग्राम ब्लू, कॉमन बेंडेड ऑल, कॉमन इवनिंग ब्राउन, ब्लू टाइगर, प्लेन टाइगर, स्ट्रिप्ड टाइगर, कॉमन इंडियन क्रो और कॉमन ग्रास येलो जैसी प्रजातियाँ शामिल हैं।

Conservation of rare and endangered species of butterflies in India

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन राज्य मंत्री ने बताया है कि **भारत में दुर्लभ और संकटग्रस्त तितलियों की प्रजातियों के संरक्षण** के लिए विभिन्न राज्यों में राष्ट्रीय उद्यानों, वन्यजीव अभ्यारण्य और जैवमंडल रिजर्व स्थापित किए गए हैं। इसके साथ ही, भारत सरकार के वन्यजीव अधिनियम (संरक्षण), 1972 की अनुसूची-1 में तितलियों की 126 प्रजातियाँ, अनुसूची-2 के तहत 299 प्रजातियाँ और अनुसूची-4 के अंतर्गत 18 प्रजातियाँ शामिल हैं।

भारतीय प्राणी विज्ञान सर्वेक्षण ने दुर्लभ और संकटग्रस्त तितलियों की प्रजातियों के संरक्षण हेतु राष्ट्रीय हिमालयी अध्ययन मिशन के तहत हिमालयी क्षेत्र में सक्रिय परागणकों के रूप में तितलियों पर अध्ययन किया है। हालांकि, तितिलयों के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए शोध किए जाने की आवश्यकता है। भारत सरकार ने देश में दुर्लभ और संकटग्रस्त प्रजातियों के संरक्षण और सुरक्षा के लिए विभिन्न वन्यजीव संरक्षण अधिनियम तैयार किए हैं। दुर्लभ प्रजातियों के जंतुओं के अनुकूल वातावरण बनाने के लिए भारत सरकार द्वारा रामसर स्थलों के रूप में नामित अंतरराष्ट्रीय महत्व की आर्द्र भूमियां और प्राकृतिक विरासत स्थल चिह्नित किए गए हैं।

(इंडिया साइंस वायर(

dailyhunt

भारत की 35 तितली प्रजातियों के अस्तित्व पर संकट

तितलियों की आबादी बेहतर पर्यावरणीय परिस्थितियों के संकेतक के रूप में जानी जाती है। परागण, खाद्य श्रृंखला और पारिस्थितिकी तंत्र में भी तितलियाँ महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। लेकिन, प्रदूषण, कीटनाशकों के उपयोग, वनों की कटाई और जलवायु परिवर्तन के कारण तितलियों को संकट का सामना करना पड़ रहा है।

जूलॉजिकल सर्वे ऑफ इंडिया के अनुसार, भारत में तितलियों की 1,318 प्रजातियां दर्ज की गई हैं। इंटरनेशनल यूनियन फॉर कंजर्वेशन ऑफ नेचर (ICUN) के अनुसार, भारत में तितलियों की 35 प्रजातियां अपने अस्तित्व के लिए गंभीर रूप से संकटग्रस्त हैं। आईसीयूएन ने भारत में तितलियों की 43 प्रजातियों को लुप्तप्राय और तीन तितली प्रजातियों को कम से कम खतरे वाली श्रेणियों में रखा है। यह जानकारी पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्री अश्विनी चौबे ने संसद में एक सवाल के जवाब में दी है।

अगर धरती से तितलियां गायब हो जाती हैं तो हम सेब से लेकर कॉफी तक कई खाद्य फसलों के स्वाद से वंचित रह जाएंगे। जब तितलियाँ फूलों का रस पीकर परागण करती हैं, तो फूलों का फलों में परिवर्तन संभव हो जाता है। संयुक्त राष्ट्र के खाद्य और कृषि संगठन के अनुसार, दुनिया की 75 प्रतिशत कृषि परागण पर निर्भर करती है। पर्यावरणविदों का मानना है कि तितलियों के विलुप्त होने से अन्य जीवों पर भी असर पड़ सकता है क्योंकि उनके अंडों के लार्वा और प्यूपा कई अन्य जीवों के लिए भोजन हैं।

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन राज्य मंत्री ने लोकसभा को सूचित किया है कि तितलियों की संख्या में सुधार के लिए राज्य सरकारों को तितली पार्कों की स्थापना के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जा रही है। कर्नाटक, हिमाचल प्रदेश, महाराष्ट्र के बाद मध्य प्रदेश में इंदौर और भोपाल जैसे शहरों में ऐसे पार्क स्थापित किए गए हैं। भोपाल स्थित बटरफ्लाई पार्क में पहले साल तितलियों की करीब तीन दर्जन प्रजातियां देखी गई हैं। इनमें कॉमन जैजवेल, विलेज ब्लू, कॉमन बैंडेड ऑल, कॉमन इवनिंग ब्राउन, ब्लू टाइगर, प्लेन टाइगर, स्ट्राइप्ड टाइगर, कॉमन इंडियन क्रो और कॉमन ग्रास येलो जैसी प्रजातियां शामिल हैं।

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन राज्य मंत्री ने जानकारी दी है कि भारत में तितलियों की दुर्लभ और लुप्तप्राय प्रजातियों के संरक्षण के लिए विभिन्न राज्यों में राष्ट्रीय उद्यान, वन्यजीव अभयारण्य और बायोस्फीयर रिजर्व स्थापित किए गए हैं। इसके साथ ही भारत सरकार के वन्यजीव (संरक्षण) अधिनियम, 1972 की अनुसूची-I में तितलियों की 126 प्रजातियों, अनुसूची-II के तहत 299 प्रजातियों और अनुसूची-IV के तहत 18 प्रजातियों को शामिल किया गया है।

भारतीय प्राणी सर्वेक्षण ने राष्ट्रीय हिमालयी अध्ययन मिशन के तहत तितलियों की दुर्लभ और संकटग्रस्त प्रजातियों के संरक्षण के लिए हिमालयी क्षेत्र में सक्रिय परागणकों के रूप में तितलियों पर अध्ययन किया है। हालांकि, तितलियों के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए शोध किए जाने की आवश्यकता है।

भारत सरकार ने देश में दुर्लभ और संकटग्रस्त प्रजातियों के संरक्षण और संरक्षण के लिए विभिन्न वन्यजीव संरक्षण अधिनियम तैयार किए हैं। भारत सरकार द्वारा रामसर स्थलों के रूप में नामित अंतरराष्ट्रीय महत्व के आर्द्रभूमि और प्राकृतिक विरासत स्थलों की पहचान दुर्लभ प्रजातियों के जानवरों के लिए अनुकूल वातावरण बनाने के लिए की गई है।

(इंडिया साइंस वायर)

भारत की 35 तितली प्रजातियों पर अस्तित्व का संकट

News अगस्त 04, 2021

भारत की संकट का अस्तित्व पर प्रजातियों तलीति 35

नई दिल्ली : तितलियों की आबादी को बेहतर पर्यावरणीय दशाओं के संकेतक के तौर पर जाना जाता है। परागण, खाद्य श्रृंखला और पारिस्थितिक तंत्र मेंभीतितलियों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। लेकिन, प्रदूषण, कीटनाशकों के उपयोग, जंगलों की कटाई और जलवायु परिवर्तन कीमारपड़ने से तितलियों की आबादी पर संकट मंडराने लगा है।

भारतीय प्राणी विज्ञान सर्वेक्षण के अनुसार भारत में तितलियों की 1,318 प्रजातियां दर्ज की गई हैं। अंतरराष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ 35 की तितलियों में भारत अनुसार के (आईसीयूएन) की भारत ने आईसीयूएन हैं। संकटग्रस्त से रूप गंभीर से लिहाज के अस्तित्व प्रजातियाँअपने प्रजातियों तितली तीन और संकटग्रस्त को प्रजातियों 43 की तितलियोंको न्यूनतम रूप से विचारणीय संकटग्रस्त श्रेणियों में रखा है। संसद में एक प्रश्न के उत्तर में पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्री अश्विनी चौबे ने यह जानकारी प्रदान की है।

अगर तितलियां पृथ्वी से खत्म हो जाएं तो सेब से लेकर कॉफी तककई खाद्य फसलों के स्वाद से हम वंचित हो जाएंगे। तितलियाँ जब फूलों का रस पीकर परागण करती हैं तो फूलों का रूपांतरण फल में संभव हो पाता है। संयुक्त राष्ट्र की संस्था फूड एंड एग्रीकल्चर ऑर्गेनाइजेशन के अनुसार दुनिया की है मानना का पर्यावरणविदों है। करती निर्भर पर परागण खेती फीसदी 75 कितितलियों के खत्म होने का असर दूसरे जीवों पर भी पड़ सकता है क्योंकि उनके अंडे से बने लार्वा और प्यूपा कई दूसरे जीवों का भोजन होते हैं।

तितलियाँ परागण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं और खाद्य श्रृंखला का अहम हिस्सा मानी जाती हैं

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन राज्य मंत्री ने लोकसभा में बताया है कि तितलियों की संख्या में सुधार के लिए राज्य सरकारों को तितली पार्कों की स्थापना के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जा रही है। **कर्नाटक, हिमाचल प्रदेश, महाराष्ट्र के बाद मध्यप्रदेश के इंदौर और भोपाल जैसे शहरों में ऐसे पार्क बनाये गए हैं। भोपाल स्थित तितली पार्क में पहले ही साल तकरीबन तीन दर्जन तितलियों की प्रजातियाँ देखी गई हैं। इनमें कॉमन जेजवेल, ग्राम ब्लू, कॉमन बेंडेड ऑल, कॉमन इवनिंग ब्राउन, ब्लू टाइगर, प्लेन टाइगर, स्ट्रिप्ड टाइगर, कॉमन इंडियन क्रो औरकॉमन ग्रास येलोजैसी प्रजातियाँ शामिल हैं।**

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन राज्य मंत्री ने बताया है कि भारत में दुर्लभ और संकटग्रस्त तितलियों की प्रजातियों के संरक्षण के लिए विभिन्न राज्यों में राष्ट्रीय उद्यानों, वन्यजीव अभ्यारण्य और जैवमंडल रिजर्व स्थापित किए गए हैं। इसके साथ ही,भारत सरकार के वन्यजीव अधिनियम (संरक्षण), 1-अनुसूची की 1972में तितलियों की प्रजातियाँ 126, अनुसूची 2-के तहत 4-अनुसूची और प्रजातियाँ 299के अंतर्गत हैं। शामिल प्रजातियाँ 18

भारतीय प्राणी विज्ञान सर्वेक्षण ने दुर्लभ और संकटग्रस्त तितलियों की प्रजातियों के संरक्षण हेतु राष्ट्रीय हिमालयी अध्ययन मिशन के तहत हिमालयी क्षेत्र में सक्रिय परागणकों के रूप में तितलियों पर अध्ययन किया है। हालांकि, तितिलयों के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए शोध किए जाने की आवश्यकता है।

भारत सरकार ने देश में दुर्लभ और संकटग्रस्त प्रजातियों के संरक्षण और सुरक्षा के लिए विभिन्न वन्यजीव संरक्षण अधिनियम तैयार किए हैं। दुर्लभ प्रजातियों के जंतुओं के अनुकूल वातावरण बनाने के लिए भारत सरकार द्वारा रामसर स्थलों के रूप में नामित अंतरराष्ट्रीय महत्व की आर्द्र भूमियां और प्राकृतिक विरासत स्थलचिह्नित किए गए हैं।

प्रभासाक्षी

भारत की 35 तितली प्रजातियों पर अस्तित्व का संकट

इंडिया साइंस वायर | Aug 07, 2021 | 17:52

> *भारतीय प्राणी विज्ञान सर्वेक्षण के अनुसार भारत में तितलियों की 1,318 प्रजातियां दर्ज की गई हैं। अंतरराष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ के अनुसार भारत में तितलियों की (आईसीयूएन)35 प्रजातियाँ अपने अस्तित्व के लिहाज से गंभीर रूप से संकटग्रस्त हैं।*

तितलियों की आबादी को बेहतर पर्यावरणीय दशाओं के संकेतक के तौर पर जाना जाता है। परागण, खाद्य श्रृंखला और पारिस्थितिक तंत्र में भी तितलियों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। लेकिन, प्रदूषण, कीटनाशकों के उपयोग, जंगलों की कटाई और जलवायु परिवर्तन की मार पड़ने से तितलियों की आबादी पर संकट मंडराने लगा है।

भारतीय प्राणी विज्ञान सर्वेक्षण के अनुसार भारत में तितलियों की 1,318 प्रजातियां दर्ज की गई हैं। अंतरराष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ त में तितलियों कीके अनुसार भार (आईसीयूएन)35 प्रजातियाँ अपने अस्तित्व के लिहाज से गंभीर रूप से संकटग्रस्त हैं। आईसीयूएन ने भारत की तितलियों की 43 प्रजातियों को संकटग्रस्त

और तीन तितली प्रजातियों को न्यूनतम रूप से विचारणीय संकटग्रस्त श्रेणियों में रखा है। संसद में एक प्रश्न के उत्तर में पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्री अश्विनी चौबे ने यह जानकारी प्रदान की है।

अगर तितलियां पृथ्वी से खत्म हो जाएं तो सेब से लेकर कॉफी तक कई खाद्य फसलों के स्वाद से हम वंचित हो जाएंगे। तितलियाँ जब फूलों का रस पीकर परागण करती हैं तो फूलों का रूपांतरण फल में संभव हो पाता है। संयुक्त राष्ट्र की संस्था फूड एंड एग्रीकल्चर ऑर्गेनाइजेशन के अनुसार दुनिया की 75 फीसदी खेती परागण पर निर्भर करती है। पर्यावरणविदों का मानना है कि तितलियों के खत्म होने का असर दूसरे जीवों पर भी पड़ सकता है क्योंकि उनके अंडे से बने लार्वा और प्यूपा कई दूसरे जीवों का भोजन होते हैं।

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन राज्य मंत्री ने लोकसभा में बताया है कि तितलियों की संख्या में सुधार के लिए राज्य सरकारों को तितली पार्कों की स्थापना के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जा रही है। कर्नाटक, हिमाचल प्रदेश, महाराष्ट्र के बाद मध्यप्रदेश के इंदौर और भोपाल जैसे शहरों में ऐसे पार्क बनाये गए हैं। भोपाल स्थित तितली पार्क में पहले ही साल तकरीबन तीन दर्जन तितलियों की प्रजातियाँ देखी गई हैं। इनमें कॉमन जेजवेल, ग्राम ब्लू, कॉमन बेंडेड ऑल, कॉमन इवनिंग ब्राउन, ब्लू टाइगर, प्लेन टाइगर, स्ट्रिप्ड टाइगर, कॉमन इंडियन क्रो और कॉमन ग्रास येलो जैसी प्रजातियाँ शामिल हैं।

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन राज्य मंत्री ने बताया है कि भारत में दुर्लभ और संकटग्रस्त तितलियों की प्रजातियों के संरक्षण के लिए विभिन्न राज्यों में राष्ट्रीय उद्यानों, वन्यजीव अभ्यारण्य और जैवमंडल रिजर्व स्थापित किए गए हैं। इसके साथ ही, भारत सरकार के वन्यजीव अधिनियम (संरक्षण), 1972 की अनुसूची-1 में तितलियों की 126 प्रजातियाँ, अनुसूची-2 के तहत 299 प्रजातियाँ और अनुसूची-4 के अंतर्गत 18 प्रजातियाँ शामिल हैं।

भारतीय प्राणी विज्ञान सर्वेक्षण ने दुर्लभ और संकटग्रस्त तितलियों की प्रजातियों के संरक्षण हेतु राष्ट्रीय हिमालयी अध्ययन मिशन के तहत हिमालयी क्षेत्र में सक्रिय परागणकों के रूप में तितलियों पर अध्ययन किया है। हालांकि, तितिलयों के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए शोध किए जाने की आवश्यकता है।

भारत सरकार ने देश में दुर्लभ और संकटग्रस्त प्रजातियों के संरक्षण और सुरक्षा के लिए विभिन्न वन्यजीव संरक्षण अधिनियम तैयार किए हैं। दुर्लभ प्रजातियों के जंतुओं के अनुकूल वातावरण बनाने के लिए भारत सरकार द्वारा रामसर स्थलों के रूप में नामित अंतरराष्ट्रीय महत्व की आर्द्र भूमियां और प्राकृतिक विरासत स्थल चिह्नित किए गए हैं।

(इंडिया साइंस वायर(

गाँव कनेक्शन

भारत की 35 तितली प्रजातियों पर अस्तित्व का संकट

अगर तितलियां पृथ्वी से खत्म हो जाएं तो सेब से लेकर कॉफी तक कई फसलों के उत्पादन पर संकट आ जाएगा और जब तक फसलें ही नहीं होंगी तो हम तक भी कुछ भी नहीं पहुंचेगा। तितलियों के परागण के बाद ही तो फूलों से बनते हैं।

Umashankar Mishra   4 Aug 2021

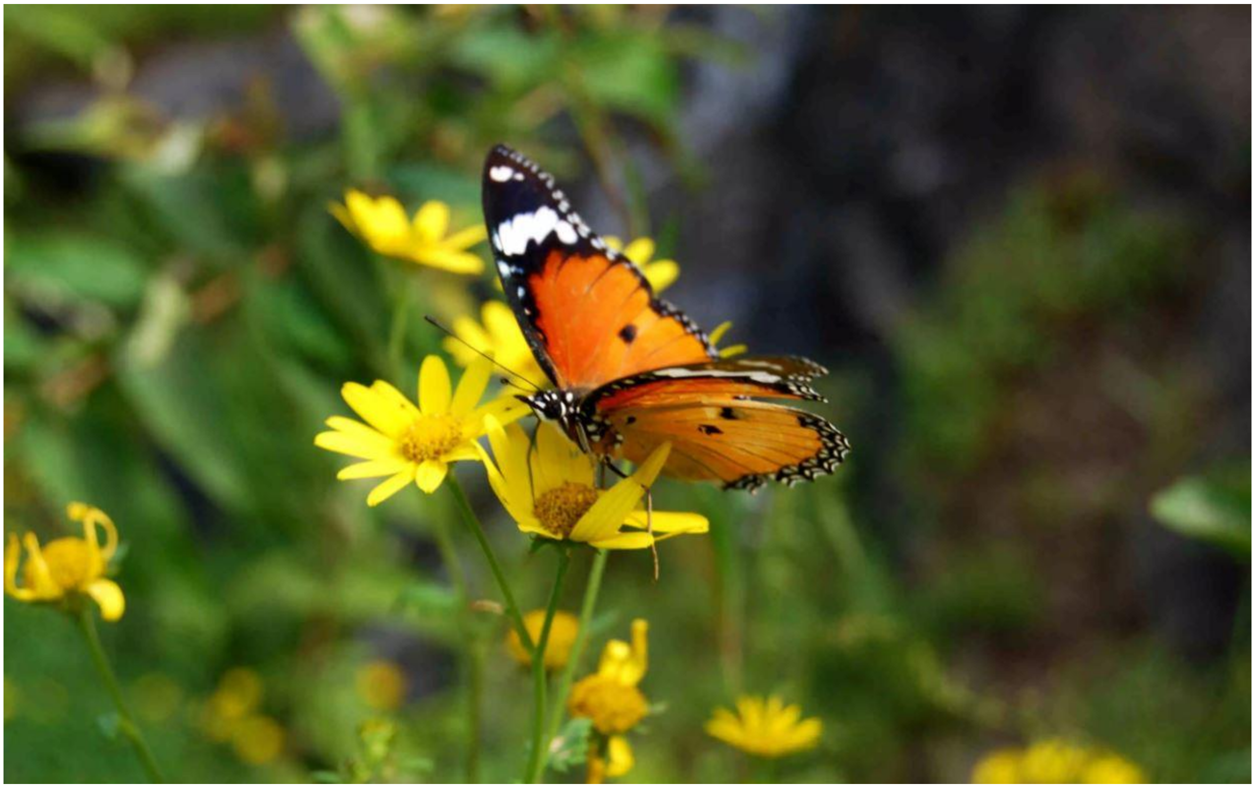

अंतरराष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ के अनुसार भारत में तितलियों की (आईसीयूएन)35 प्रजातियां अपने अस्तित्व के लिहाज से गंभीर रूप से संकटग्रस्त हैं। स्ट्रिप्ड टाइगर तितली (विकिपीडिया :फोटो)

बचपन में तितलियों के पीछे आप भी खुद दौड़े होंगे, कल्पना कीजिए अगर तितलियां ही न रहीं तो क्या होगा। तितलियों की आबादी को बेहतर पर्यावरणीय दशाओं के संकेतक के तौर पर जाना जाता है। परागण, खाद्य श्रृंखला और पारिस्थितिक तंत्र में भी तितलियों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। लेकिन, प्रदूषण, कीटनाशकों के उपयोग, जंगलों की कटाई और जलवायु परिवर्तन की मार पड़ने से तितलियों की आबादी पर संकट मंडराने लगा है

भारतीय प्राणी विज्ञान सर्वेक्षण के अनुसार भारत में तितलियों की 1,318 प्रजातियां दर्ज की गई हैं। अंतरराष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ के अनुसार भारत में तितलिय (एनआईसीयू)ोे ं की 35 प्रजातियां अपने अस्तित्व के लिहाज से गंभीर रूप से संकटग्रस्त हैं। आईसीयूएन ने भारत की तितलियों की 43 प्रजातियों को संकटग्रस्त और तीन तितली प्रजातियों को न्यूनतम रूप से विचारणीय संकटग्रस्त श्रेणियों में रखा है। संसद में एक प्रश्न के उत्तर में पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्री अश्विनी चौबे ने यह जानकारी प्रदान की है।

अगर तितलियां पृथ्वी से खत्म हो जाएं तो सेब से लेकर कॉफी तक कई खाद्य फसलों के स्वाद से हम वंचित हो जाएंगे। तितलियां जब फूलों का रस पीकर परागण करती हैं तो फूलों का रूपांतरण फल में संभव हो पाता है। संयुक्त राष्ट्र की संस्था फूड एंड एग्रीकल्चर ऑर्गेनाइजेशन के अनुसार दुनिया की 75 फीसदी खेती परागण पर निर्भर करती है। पर्यावरणविदों का मानना है कि तितलियों के खत्म होने का असर दूसरे जीवों पर भी पड़ सकता है क्योंकि उनके अंडे से बने लार्वा और प्यूपा कई दूसरे जीवों का भोजन होते हैं।

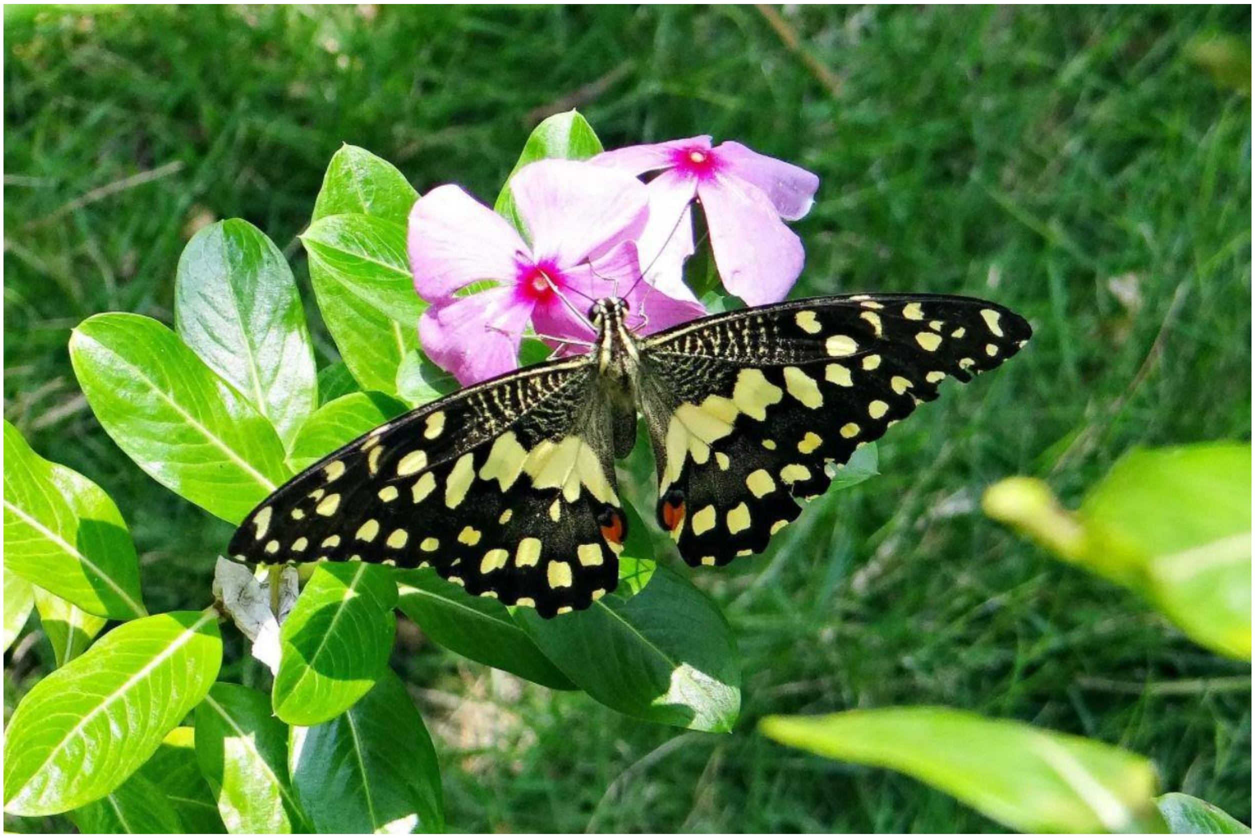

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन राज्य मंत्री ने लोकसभा में बताया है कि तितलियों की संख्या में सुधार के लिए राज्य सरकारों को तितली पार्कों की स्थापना के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जा रही है। कर्नाटक, हिमाचल प्रदेश, महाराष्ट्र के बाद मध्यप्रदेश के इंदौर और भोपाल जैसे शहरों में ऐसे पार्क बनाये गए हैं। भोपाल स्थित तितली पार्क में पहले ही साल तकरीबन तीन दर्जन तितलियों की प्रजातियां देखी गई हैं। इनमें कॉमन जेजवेल, ग्राम ब्लू, कॉमन बेंडेड ऑल, कॉमन इवनिंग ब्राउन, ब्लू टाइगर, प्लेन टाइगर, स्ट्रिप्ड टाइगर, कॉमन इंडियन क्रो और कॉमन ग्रास येलो जैसी प्रजातियाँ शामिल हैं।

कॉमन ग्रास येलो तितली

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन राज्य मंत्री ने बताया है कि भारत में दुर्लभ और संकटग्रस्त तितलियों की प्रजातियों के संरक्षण के लिए विभिन्न राज्यों में राष्ट्रीय उद्यानों, वन्यजीव अभ्यारण्य और जैवमंडल रिजर्व स्थापित किए गए हैं। इसके साथ ही, भारत सरकार के वन्यजीव अधिनियम (संरक्षण), 1972 की अनुसूची-1 में तितलियों की 126 प्रजातियाँ, अनुसूची-2 के तहत 299 प्रजातियाँ और अनुसूची-4 के अंतर्गत 18 प्रजातियाँ शामिल हैं।

भारतीय प्राणी विज्ञान सर्वेक्षण ने दुर्लभ और संकटग्रस्त तितलियों की प्रजातियों के संरक्षण हेतु राष्ट्रीय हिमालयी अध्ययन मिशन के तहत हिमालयी क्षेत्र में सक्रिय परागणकों के रूप में तितलियों पर अध्ययन किया है। हालांकि, तितिलयों के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए शोध किए जाने की आवश्यकता है।

भारत सरकार ने देश में दुर्लभ और संकटग्रस्त प्रजातियों के संरक्षण और सुरक्षा के लिए विभिन्न वन्यजीव संरक्षण अधिनियम तैयार किए हैं। दुर्लभ प्रजातियों के जंतुओं के अनुकूल वातावरण बनाने के लिए भारत सरकार द्वारा रामसर स्थलों के रूप में नामित अंतरराष्ट्रीय महत्व की आर्द्र भूमियां और प्राकृतिक विरासत स्थल चिह्नित किए गए हैं।

उमाशंकर मिश्रा), विज्ञान प्रसार में पत्रकार हैं, यह आर्टिकल इंडिया साइंस वायर के सहयोग से प्रकाशित हुआ है(

GS Times

भारत की 35 तितली प्रजातियों पर अस्तित्व का संकट

August 5, 2021

इंडिया साइंस वायर

तितलियों)butterflies) की आबादी को बेहतर पर्यावरणीय दशाओं के संकेतक के तौर पर जाना जाता है। परागण, खाद्य श्रृंखला और पारिस्थितिक तंत्र मेंभीतितलियों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। लेकिन, प्रदूषण, कीटनाशकों के उपयोग, जंगलों की कटाई और जलवायु परिवर्तन कीमारपड़ने से तितलियों की आबादी पर संकट मंडराने लगा है।

भारतीय प्राणी विज्ञान सर्वेक्षण के अनुसार भारत में तितलियों की 1,318 प्रजातियां दर्ज की गई हैं। अंतरराष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ के अनुसार भारत में तितलियों की (आईसीयूएन)35 प्रजातियाँअपने अस्तित्व के लिहाज से गंभीर रूप से संकटग्रस्त हैं। आईसीयूएन ने भारत की तितलियों की 43 प्रजातियों को संकटग्रस्त और तीन तितली प्रजातियों को न्यूनतम रूप से विचारणीय संकटग्रस्त श्रेणियों में रखा है। संसद में एक प्रश्न के उत्तर में पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्री अश्विनी चौबे ने यह जानकारी प्रदान की है।

तितलियाँ परागण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं और खाद्य श्रृंखला का अहम हिस्सा मानी जाती हैं फोटोः) पिक्स ह्येयर डॉट कॉम)

अगर तितलियां पृथ्वी से खत्म हो जाएं तो सेब से लेकर कॉफी तककई खाद्य फसलों के स्वाद से हम वंचित हो जाएंगे। तितलियाँ जब फूलों का रस पीकर परागण करती हैं तो फूलों का रूपांतरण फल में संभव हो पाता है। संयुक्त राष्ट्र की संस्था फूड एंड एग्रीकल्चर ऑर्गेनाइजेशन के अनुसार दुनिया की 75 फीसदी खेती परागण पर निर्भर करती है। पर्यावरणविदों का मानना है कि तितलियों के खत्म होने का असर दूसरे जीवों पर भी पड़ सकता है क्योंकि उनके अंडे से बने लार्वा और प्यूपा कई दूसरे जीवों का भोजन होते हैं।

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन राज्य मंत्री ने लोकसभा में बताया है कि तितलियों की संख्या में सुधार के लिए राज्य सरकारों को तितली पार्कों की स्थापना के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जा रही है। कर्नाटक, हिमाचल प्रदेश, महाराष्ट्र के बाद मध्यप्रदेश के इंदौर और भोपाल जैसे शहरों में ऐसे पार्क बनाये गए हैं। भोपाल स्थित तितली पार्क में पहले ही साल तकरीबन तीन दर्जन तितलियों की प्रजातियाँ देखी गई हैं। इनमें कॉमन जेजवेल, ग्राम ब्लू, कॉमन बेंडेड ऑल, कॉमन इवनिंग ब्राउन, ब्लू टाइगर, प्लेन टाइगर, स्ट्रिप्ड टाइगर, कॉमन इंडियन क्रो औरकॉमन ग्रास येलोजैसी प्रजातियाँ शामिल हैं।

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन राज्य मंत्री ने बताया है कि भारत में दुर्लभ और संकटग्रस्त तितलियों की प्रजातियों के संरक्षण के लिए विभिन्न राज्यों में राष्ट्रीय उद्यानों, वन्यजीव अभ्यारण्य और जैवमंडल रिजर्व स्थापित किए गए हैं। इसके साथ ही,भारत सरकार के वन्यजीव अधिनियम (संरक्षण), 1972 की अनुसूची-1 में तितलियों की 126 प्रजातियाँ, अनुसूची-2 के तहत 299 प्रजातियाँ और अनुसूची-4 के अंतर्गत 18 प्रजातियाँ शामिल हैं।

भारतीय प्राणी विज्ञान सर्वेक्षण ने दुर्लभ और संकटग्रस्त तितलियों की प्रजातियों के संरक्षण हेतु राष्ट्रीय हिमालयी अध्ययन मिशन के तहत हिमालयी क्षेत्र में सक्रिय परागणकों के रूप में तितलियों पर अध्ययन किया है। हालांकि, तितिलयों के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए शोध किए जाने की आवश्यकता है।

भारत सरकार ने देश में दुर्लभ और संकटग्रस्त प्रजातियों के संरक्षण और सुरक्षा के लिए विभिन्न वन्यजीव संरक्षण अधिनियम तैयार किए हैं। दुर्लभ प्रजातियों के जंतुओं के अनुकूल वातावरण बनाने के लिए भारत सरकार द्वारा रामसर स्थलों के रूप में नामित अंतरराष्ट्रीय महत्व की आर्द्र भूमियां और प्राकृतिक विरासत स्थलचिह्नित किए गए हैं। (इंडिया साइंस वायर)

राष्ट्रीय रक्षक

भारत की 35 तितली प्रजातियों पर अस्तित्व का संकट

लेखक: Snigdha Verma - अगस्त 05, 2021

तितलियाँ परागण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं और खाद्य श्रृंखला का अहम हिस्सा मानी जाती हैं (फोटो: [illegible])

नई दिल्ली तितलियों की आबादी को बेहतर पर्यावरणीय दशाओं के संकेतक के तौर पर :(इंडिया साइंस वायर) जाना जाता है। परागण, खाद्य श्रृंखला और पारिस्थितिक तंत्र में भी तितलियों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। लेकिन, प्रदूषण, कीटनाशकों के उपयोग, जंगलों की कटाई और जलवायु परिवर्तन की मार पड़ने से तितलियों की आबादी पर संकट मंडराने लगा है।

भारतीय प्राणी विज्ञान सर्वेक्षण के अनुसार भारत में तितलियों की 1,318 प्रजातियां दर्ज की गई हैं। अंतरराष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ के अनुसार भारत में तितलियों की (आईसीयूएन)35 प्रजातियाँ अपने अस्तित्व के लिहाज से गंभीर रूप से संकटग्रस्त हैं। आईसीयूएन ने भारत की तितलियों की 43 प्रजातियों को संकटग्रस्त और तीन तितली प्रजातियों को न्यूनतम रूप से विचारणीय संकटग्रस्त श्रेणियों में रखा है। संसद में एक प्रश्न के उत्तर में पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्री अश्विनी चौबे ने यह जानकारी प्रदान की है।

अगर तितलियां पृथ्वी से खत्म हो जाएं तो सेब से लेकर कॉफी तक कई खाद्य फसलों के स्वाद से हम वंचित हो जाएंगे। तितलियाँ जब फूलों का रस पीकर परागण करती हैं तो फूलों का रूपांतरण फल में संभव हो पाता है। संयुक्त राष्ट्र की संस्था फूड एंड एग्रीकल्चर ऑर्गेनाइजेशन के अनुसार दुनिया की 75 फीसदी खेती परागण पर निर्भर करती है। पर्यावरणविदों का मानना है कि तितलियों के खत्म होने का असर दूसरे जीवों पर भी पड़ सकता है क्योंकि उनके अंडे से बने लार्वा और प्यूपा कई दूसरे जीवों का भोजन होते हैं।

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन राज्य मंत्री ने लोकसभा में बताया है कि तितलियों की संख्या में सुधार के लिए राज्य सरकारों को तितली पार्कों की स्थापना के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जा रही है। कर्नाटक, हिमाचल प्रदेश, महाराष्ट्र के बाद मध्यप्रदेश के इंदौर और भोपाल जैसे शहरों में ऐसे पार्क बनाये गए हैं। भोपाल स्थित तितली पार्क में पहले ही साल तकरीबन तीन दर्जन तितलियों की प्रजातियाँ देखी गई हैं। इनमें कॉमन जेजवेल, ग्राम ब्लू, कॉमन बेंडेड ऑल, कॉमन इवनिंग ब्राउन, ब्लू टाइगर, प्लेन टाइगर, स्ट्रिप्ड टाइगर, कॉमन इंडियन क्रो और कॉमन ग्रास येलो जैसी प्रजातियाँ शामिल हैं।

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन राज्य मंत्री ने बताया है कि भारत में दुर्लभ और संकटग्रस्त तितलियों की प्रजातियों के संरक्षण के लिए विभिन्न राज्यों में राष्ट्रीय उद्यानों, वन्यजीव अभ्यारण्य और जैवमंडल रिजर्व स्थापित किए गए हैं। इसके साथ ही, भारत सरकार के वन्यजीव अधिनियम (संरक्षण), 1972 की अनुसूची-1 में तितलियों की 126 प्रजातियाँ, अनुसूची-2 के तहत 299 प्रजातियाँ और अनुसूची-4 के अंतर्गत 18 प्रजातियाँ शामिल हैं।

भारतीय प्राणी विज्ञान सर्वेक्षण ने दुर्लभ और संकटग्रस्त तितलियों की प्रजातियों के संरक्षण हेतु राष्ट्रीय हिमालयी अध्ययन मिशन के तहत हिमालयी क्षेत्र में सक्रिय परागणकों के रूप में तितलियों पर अध्ययन किया है। हालांकि, तितिलयों के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए शोध किए जाने की आवश्यकता है।

भारत सरकार ने देश में दुर्लभ और संकटग्रस्त प्रजातियों के संरक्षण और सुरक्षा के लिए विभिन्न वन्यजीव संरक्षण अधिनियम तैयार किए हैं। दुर्लभ प्रजातियों के जंतुओं के अनुकूल वातावरण बनाने के लिए भारत सरकार द्वारा रामसर स्थलों के रूप में नामित अंतरराष्ट्रीय महत्व की आर्द्र भूमियां और प्राकृतिक विरासत स्थल चिह्नित किए गए हैं। (इंडिया साइंस वायर)

भारत की 35 तितली प्रजातियों पर अस्तित्व का संकट

04/08/2021

V3news India

नई दिल्ली, 04 जुलाई तितलियों की आबादी को बेहतर पर्यावरणीय दशाओं के संकेतक के तौर पर :(इंडिया साइंस वायर) जाना जाता है। परागण, खाद्य श्रृंखला और पारिस्थितिक तंत्र में भी तितलियों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। लेकिन, प्रदूषण, कीटनाशकों के उपयोग, जंगलों की कटाई और जलवायु परिवर्तन की मार पड़ने से तितलियों की आबादी पर संकट मंडराने लगा है।

भारतीय प्राणी विज्ञान सर्वेक्षण के अनुसार भारत में तितलियों की 1,318 प्रजातियां दर्ज की गई हैं। अंतरराष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ के अनुसार भारत में तितलियों की (आईसीयूएन)35 प्रजातियाँ अपने अस्तित्व के लिहाज से गंभीर रूप से संकटग्रस्त हैं। आईसीयूएन ने भारत की तितलियों की 43 प्रजातियों को संकटग्रस्त और तीन तितली प्रजातियों को न्यूनतम रूप से विचारणीय संकटग्रस्त श्रेणियों में रखा है।

संसद में एक प्रश्न के उत्तर में पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्री अश्विनी चौबे ने यह जानकारी प्रदान की है। अगर तितलियां पृथ्वी से खत्म हो जाएं तो सेब से लेकर कॉफी तक कई खाद्य फसलों के स्वाद से हम वंचित हो जाएंगे। तितलियाँ जब फूलों का रस पीकर परागण करती हैं तो फूलों का रूपांतरण फल में संभव हो पाता है। संयुक्त राष्ट्र की संस्था फूड एंड एग्रीकल्चर ऑर्गेनाइजेशन के अनुसार दुनिया की 75 फीसदी खेती परागण पर निर्भर करती है।

पर्यावरणविदों का मानना है कि तितलियों के खत्म होने का असर दूसरे जीवों पर भी पड़ सकता है क्योंकि उनके अंडे से बने लार्वा और प्यूपा कई दूसरे जीवों का भोजन होते हैं। पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन राज्य मंत्री ने लोकसभा में बताया है कि तितलियों की संख्या में सुधार के लिए राज्य सरकारों को तितली पार्कों की स्थापना के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जा रही है। कर्नाटक, हिमाचल प्रदेश, महाराष्ट्र के बाद मध्यप्रदेश के इंदौर और भोपाल जैसे शहरों में ऐसे पार्क बनाये गए हैं।

भोपाल स्थित तितली पार्क में पहले ही साल तकरीबन तीन दर्जन तितलियों की प्रजातियाँ देखी गई हैं। इनमें कॉमन जेजवेल, ग्राम ब्लू, कॉमन बेंडेड ऑल, कॉमन इवनिंग ब्राउन, ब्लू टाइगर, प्लेन टाइगर, स्ट्रिप्ड टाइगर, कॉमन इंडियन क्रो और कॉमन ग्रास येलो जैसी प्रजातियाँ शामिल हैं। पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन राज्य मंत्री ने बताया है कि भारत में दुर्लभ और संकटग्रस्त तितलियों की प्रजातियों के संरक्षण के लिए विभिन्न राज्यों में राष्ट्रीय उद्यानों, वन्यजीव अभ्यारण्य और जैवमंडल रिजर्व स्थापित किए गए हैं।

इसके साथ ही, भारत सरकार के वन्यजीव अधिनियम (संरक्षण), 1972 की अनुसूची-1 में तितलियों की 126 प्रजातियाँ, अनुसूची-2 के तहत 299 प्रजातियाँ और अनुसूची-4 के अंतर्गत 18 प्रजातियाँ शामिल हैं। भारतीय प्राणी विज्ञान सर्वेक्षण ने दुर्लभ और संकटग्रस्त तितलियों की प्रजातियों के संरक्षण हेतु राष्ट्रीय हिमालयी अध्ययन मिशन के तहत हिमालयी क्षेत्र में सक्रिय परागणकों के रूप में तितलियों पर अध्ययन किया है। हालांकि, तितिलयों के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए शोध किए जाने की आवश्यकता है।

भारत सरकार ने देश में दुर्लभ और संकटग्रस्त प्रजातियों के संरक्षण और सुरक्षा के लिए विभिन्न वन्यजीव संरक्षण अधिनियम तैयार किए हैं। दुर्लभ प्रजातियों के जंतुओं के अनुकूल वातावरण बनाने के लिए भारत सरकार द्वारा रामसर स्थलों के रूप में नामित अंतरराष्ट्रीय महत्व की आर्द्र भूमियां और प्राकृतिक विरासत स्थल चिह्नित किए गए हैं।

दी इंडियन बुलेटिन

भारतकी 35 तितली प्रजातियों पर अस्तित्व का संकट

August 4, 2021

तितलियाँ परागण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं और खाद्य श्रृंखला का अहम हिस्सा मानी जाती हैं (फोटोः पिक्स हेयर डॉट कॉम)

नई दिल्ली: तितलियों की आबादी को बेहतर पर्यावरणीय दशाओं के संकेतक के तौर पर जाना जाता है। परागण, खाद्य श्रृंखला और पारिस्थितिक तंत्र मेंभीतितलियों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। लेकिन, प्रदूषण, कीटनाशकों के उपयोग, जंगलों की कटाई और जलवायु परिवर्तन कीमारपड़ने से तितलियों की आबादी पर संकट मंडराने लगा है। भारतीय प्राणी विज्ञान सर्वेक्षण के अनुसार भारत में तितलियों की 1,318 प्रजातियां दर्ज की गई हैं। अंतरराष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ के अनुसार भारत में तितलियों की (एनआईसीयू)35 प्रजातियाँअपने अस्तित्व के लिहाज से गंभीर रूप से संकटग्रस्त हैं। आईसीयूएन ने भारत की तितलियों की 43 प्रजातियों को संकटग्रस्त और तीन तितली

प्रजातियों को न्यूनतम रूप से विचारणीय संकटग्रस्त श्रेणियों में रखा है। संसद में एक प्रश्न के उत्तर में पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्री अश्विनी चौबे ने यह जानकारी प्रदान की है।

अगर तितलियां पृथ्वी से खत्म हो जाएं तो सेब से लेकर कॉफी तककई खाद्य फसलों के स्वाद से हम वंचित हो जाएंगे। तितलियाँ जब फूलों का रस पीकर परागण करती हैं तो फूलों का रूपांतरण फल में संभव हो पाता है। संयुक्त राष्ट्र की संस्था फूड एंड एग्रीकल्चर ऑर्गेनाइजेशन के अनुसार दुनिया की 75 फीसदी खेती परागण पर निर्भर करती है। पर्यावरणविदों का मानना है कि तितलियों के खत्म होने का असर दूसरे जीवों पर भी पड़ सकता है क्योंकि उनके अंडे से बने लार्वा और प्यूपा कई दूसरे जीवों का भोजन होते हैं।

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन राज्य मंत्री ने लोकसभा में बताया है कि तितलियों की संख्या में सुधार के लिए राज्य सरकारों को तितली पार्कों की स्थापना के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जा रही है। कर्नाटक, हिमाचल प्रदेश, महाराष्ट्र के बाद मध्यप्रदेश के इंदौर और भोपाल जैसे शहरों में ऐसे पार्क बनाये गए हैं। भोपाल स्थित तितली पार्क में पहले ही साल तकरीबन तीन दर्जन तितलियों की प्रजातियाँ देखी गई हैं। इनमें कॉमन जेजवेल, ग्राम ब्लू, कॉमन बेंडेड ऑल, कॉमन इवनिंग ब्राउन, ब्लू टाइगर, प्लेन टाइगर, स्ट्रिप्ड टाइगर, कॉमन इंडियन क्रो औरकॉमन ग्रास येलोजैसी प्रजातियाँ शामिल हैं।

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन राज्य मंत्री ने बताया है कि भारत में दुर्लभ और संकटग्रस्त तितलियों की प्रजातियों के संरक्षण के लिए विभिन्न राज्यों में राष्ट्रीय उद्यानों, वन्यजीव अभ्यारण्य और जैवमंडल रिजर्व स्थापित किए गए हैं। इसके साथ ही,भारत सरकार के वन्यजीव अधिनियम (संरक्षण), 1972 की अनुसूची-1 में तितलियों की 126 प्रजातियाँ, अनुसूची-2 के तहत 299 प्रजातियाँ और अनुसूची-4 के अंतर्गत 18 प्रजातियाँ शामिल हैं।

भारतीय प्राणी विज्ञान सर्वेक्षण ने दुर्लभ और संकटग्रस्त तितलियों की प्रजातियों के संरक्षण हेतु राष्ट्रीय हिमालयी अध्ययन मिशन के तहत हिमालयी क्षेत्र में सक्रिय परागणकों के रूप में तितलियों पर अध्ययन किया है। हालांकि, तितिलयों के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए शोध किए जाने की आवश्यकता है।

भारत सरकार ने देश में दुर्लभ और संकटग्रस्त प्रजातियों के संरक्षण और सुरक्षा के लिए विभिन्न वन्यजीव संरक्षण अधिनियम तैयार किए हैं। दुर्लभ प्रजातियों के जंतुओं के अनुकूल वातावरण बनाने के लिए भारत सरकार द्वारा रामसर स्थलों के रूप में नामित अंतरराष्ट्रीय महत्व की आर्द्र भूमियां और प्राकृतिक विरासत स्थलचिह्नित किए गए हैं। (इंडिया साइंस वायर)

भारत हेराल्ड

भारतकी 35 तितली प्रजातियों पर अस्तित्व का संकट

August 4, 2021

तितलियाँ परागण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं और खाद्य श्रृंखला का अहम हिस्सा मानी जाती हैं (फोटोः पिक्स हेयर डॉट कॉम)

नई दिल्ली: तितलियों की आबादी को बेहतर पर्यावरणीय दशाओं के संकेतक के तौर पर जाना जाता है। परागण, खाद्य श्रृंखला और पारिस्थितिक तंत्र मेंभीतितलियों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। लेकिन, प्रदूषण, कीटनाशकों के उपयोग, जंगलों की कटाई और जलवायु परिवर्तन कीमारपड़ने से तितलियों की आबादी पर संकट मंडराने लगा है। भारतीय प्राणी विज्ञान सर्वेक्षण के अनुसार भारत में तितलियों की 1,318 प्रजातियां दर्ज की गई हैं। अंतरराष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ के अनुसार भारत में तितलियों की (ईसीयूएनआ)35 प्रजातियाँअपने अस्तित्व के लिहाज से गंभीर रूप से संकटग्रस्त हैं। आईसीयूएन ने भारत की तितलियों की 43 प्रजातियों को संकटग्रस्त और तीन तितली

प्रजातियों को न्यूनतम रूप से विचारणीय संकटग्रस्त श्रेणियों में रखा है। संसद में एक प्रश्न के उत्तर में पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्री अश्विनी चौबे ने यह जानकारी प्रदान की है।

अगर तितलियां पृथ्वी से खत्म हो जाएं तो सेब से लेकर कॉफी तककई खाद्य फसलों के स्वाद से हम वंचित हो जाएंगे। तितलियाँ जब फूलों का रस पीकर परागण करती हैं तो फूलों का रूपांतरण फल में संभव हो पाता है। संयुक्त राष्ट्र की संस्था फूड एंड एग्रीकल्चर ऑर्गेनाइजेशन के अनुसार दुनिया की 75 फीसदी खेती परागण पर निर्भर करती है। पर्यावरणविदों का मानना है कि तितलियों के खत्म होने का असर दूसरे जीवों पर भी पड़ सकता है क्योंकि उनके अंडे से बने लार्वा और प्यूपा कई दूसरे जीवों का भोजन होते हैं।

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन राज्य मंत्री ने लोकसभा में बताया है कि तितलियों की संख्या में सुधार के लिए राज्य सरकारों को तितली पार्कों की स्थापना के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जा रही है। कर्नाटक, हिमाचल प्रदेश, महाराष्ट्र के बाद मध्यप्रदेश के इंदौर और भोपाल जैसे शहरों में ऐसे पार्क बनाये गए हैं। भोपाल स्थित तितली पार्क में पहले ही साल तकरीबन तीन दर्जन तितलियों की प्रजातियाँ देखी गई हैं। इनमें कॉमन जेजवेल, ग्राम ब्लू, कॉमन बेंडेड ऑल, कॉमन इवनिंग ब्राउन, ब्लू टाइगर, प्लेन टाइगर, स्ट्रिप्ड टाइगर, कॉमन इंडियन क्रो औरकॉमन ग्रास येलोजैसी प्रजातियाँ शामिल हैं।

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन राज्य मंत्री ने बताया है कि भारत में दुर्लभ और संकटग्रस्त तितलियों की प्रजातियों के संरक्षण के लिए विभिन्न राज्यों में राष्ट्रीय उद्यानों, वन्यजीव अभ्यारण्य और जैवमंडल रिजर्व स्थापित किए गए हैं। इसके साथ ही,भारत सरकार के वन्यजीव अधिनियम (संरक्षण), 1972 की अनुसूची-1 में तितलियों की 126 प्रजातियाँ, अनुसूची-2 के तहत 299 प्रजातियाँ और अनुसूची-4 के अंतर्गत 18 प्रजातियाँ शामिल हैं।

भारतीय प्राणी विज्ञान सर्वेक्षण ने दुर्लभ और संकटग्रस्त तितलियों की प्रजातियों के संरक्षण हेतु राष्ट्रीय हिमालयी अध्ययन मिशन के तहत हिमालयी क्षेत्र में सक्रिय परागणकों के रूप में तितलियों पर अध्ययन किया है। हालांकि, तितिलयों के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए शोध किए जाने की आवश्यकता है।

भारत सरकार ने देश में दुर्लभ और संकटग्रस्त प्रजातियों के संरक्षण और सुरक्षा के लिए विभिन्न वन्यजीव संरक्षण अधिनियम तैयार किए हैं। दुर्लभ प्रजातियों के जंतुओं के अनुकूल वातावरण बनाने के लिए भारत सरकार द्वारा रामसर स्थलों के रूप में नामित अंतरराष्ट्रीय महत्व की आर्द्र भूमियां और प्राकृतिक विरासत स्थलचिह्नित किए गए हैं। (इंडिया साइंस वायर)

senani.in

फलों और फूलों के स्वादसुगंध पर खतरा-, जानिए कैसे

August 6, 2021 | Senani.in | अंतरराष्ट्रीय, खेतीबाड़ी/, राष्ट्रीय, शोध अनुसंधान /, होम

खतरे में है देश में तितली की 35 प्रजातियों का अस्तित्व, तितलियों के परागण से ही फूलों का रूपांतरण फल में हो पाता है संभव

senani.in
इंडिया साइंस वायर || नई दिल्ली

फलों और फूलों के स्वाद तथा सुगंध पर संकट मंडरा रहा है। ऐसा इसलिए क्योंकि फूलों के फल में रूपांतरण के लिए जरूरी तितलियों का अस्तित्व संकट में है। स्वयं केंद्र सरकार ने संसद में बताया है कि देश में तितलियों की 35 प्रजातियों के अस्तित्व पर गंभीर खतरा मंडरा रहा है।

तितलियों की आबादी को बेहतर पर्यावरणीय दशाओं के संकेतक के तौर पर जाना जाता है। परागण, खाद्य श्रृंखला और पारिस्थितिक तंत्र में भी तितलियों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। लेकिन, प्रदूषण, कीटनाशकों के उपयोग, जंगलों की कटाई और जलवायु परिवर्तन की मार पड़ने से तितलियों की आबादी पर संकट मंडराने लगा है।

भारत में तितलियों की 1,318 प्रजातियां

भारतीय प्राणी विज्ञान के सर्वेक्षण के अनुसार भारत में तितलियों की 1,318 प्रजातियां दर्ज की गई हैं। अंतरराष्ट्रीय प्रकृति संरक्षण संघ के अनुसार भारत में तितलियों क (आईसीयूएन)ी 35 प्रजातियां अपने अस्तित्व के लिहाज से गंभीर रूप से संकटग्रस्त हैं। आईसीयूएन ने भारत की तितलियों की 43 प्रजातियों को संकटग्रस्त और तीन तितली प्रजातियों को न्यूनतम रूप से विचारणीय संकटग्रस्त श्रेणियों में रखा है।

तितलियों का फल से कनेक्शन

संसद में एक प्रश्न के उत्तर में पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्री अश्विनी चौबे ने यह जानकारी प्रदान की है। अगर तितलियां पृथ्वी से खत्म हो जाएं तो सेब से लेकर कॉफी तक कई खाद्य फसलों के स्वाद से हम वंचित हो जाएंगे। तितलियां जब फूलों का रस पीकर परागण करती हैं तो फूलों का रूपांतरण फल में संभव हो पाता है।

...तो दूसरे जीवों का अस्तित्व भी पड़ जाएगा खतरे में

संयुक्त राष्ट्र की संस्था फूड एंड एग्रीकल्चर ऑर्गेनाइजेशन के अनुसार दुनिया की 75 फीसदी खेती परागण पर निर्भर करती है। पर्यावरणविदों का मानना है कि तितलियों के खत्म होने का असर दूसरे जीवों पर भी पड़ सकता है क्योंकि उनके अंडे से बने लार्वा और प्यूपा कई दूसरे जीवों का भोजन होते हैं।

तितली पार्क बनाने के लिए प्रोत्साहन

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन राज्य मंत्री ने लोकसभा में बताया कि तितलियों की संख्या में सुधार के लिए राज्य सरकारों को तितली पार्कों की स्थापना के लिए वित्तीय सहायता प्रदान की जा रही है। कर्नाटक, हिमाचल प्रदेश, महाराष्ट्र के बाद मध्यप्रदेश के इंदौर और भोपाल जैसे शहरों में ऐसे पार्क बनाये गए हैं। भोपाल स्थित तितली पार्क में पहले ही साल तकरीबन तीन दर्जन तितलियों की प्रजातियां देखी गई हैं। इनमें कॉमन जेजवेल, ग्राम ब्लू, कॉमन बेंडेड ऑल, कॉमन इवनिंग ब्राउन, ब्लू टाइगर, प्लेन टाइगर, स्ट्रिप्ड टाइगर, कॉमन इंडियन क्रो और कॉमन ग्रास येलो जैसी प्रजातियां शामिल हैं।

ये भी जानें

पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन राज्य मंत्री ने बताया है कि भारत में दुर्लभ और संकटग्रस्त तितलियों की प्रजातियों के संरक्षण के लिए विभिन्न राज्यों में राष्ट्रीय उद्यानों, वन्यजीव अभ्यारण्य और जैवमंडल रिजर्व स्थापित किए गए हैं। इसके साथ ही, भारत सरकार के वन्यजीव अधिनियम (संरक्षण), 1972 की अनुसूची-1 में

तितलियों की 126 प्रजातियां, अनुसूची-2 के तहत 299 प्रजातियां और अनुसूची-4 के अंतर्गत 18 प्रजातियां शामिल हैं।

और अध्ययन की जरूरत

भारतीय प्राणी विज्ञान सर्वेक्षण ने दुर्लभ और संकटग्रस्त तितलियों की प्रजातियों के संरक्षण हेतु राष्ट्रीय हिमालयी अध्ययन मिशन के तहत हिमालयी क्षेत्र में सक्रिय परागणकों के रूप में तितलियों पर अध्ययन किया है। हालांकि, तितिलयों के बारे में अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए शोध किए जाने की आवश्यकता है।

वन्यजीव संरक्षण अधिनियम से मिल रही मदद

केंद्र सरकार ने देश में दुर्लभ और संकटग्रस्त प्रजातियों के संरक्षण और सुरक्षा के लिए विभिन्न वन्यजीव संरक्षण अधिनियम तैयार किए हैं। दुर्लभ प्रजातियों के जंतुओं के अनुकूल वातावरण बनाने के लिए भारत सरकार द्वारा रामसर स्थलों के रूप में नामित अंतरराष्ट्रीय महत्व की आर्द्र भूमियां और प्राकृतिक विरासत स्थल चिह्नित किए गए हैं।

लॉन्च हुआ भूकम्प की पूर्व चेतावनी देने वाला पहला मोबाइल ऐप

Author: इंडिया साइंस वायर
Source: इंडिया साइंस वायर

Submitted by Shivendra on Wed, 08/04/2021 - 17:39

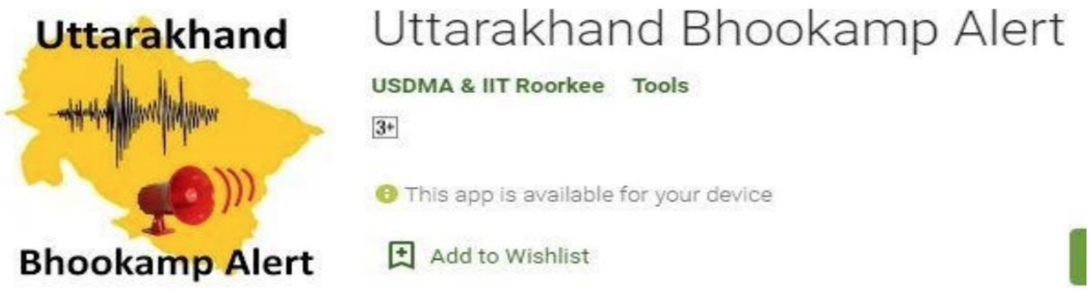

गूगल प्ले स्टोर पर मौजूद-‘उत्तराखंड भूकम्प अलर्ट’ ऐप (फोटोःइंडिया साइंस वायर (

नई दिल्ली, 04 अगस्त उत्तराखंड विशेष रूप से संवेदनशील क्षेत्र माना भूकम्प को लेकर :(इंडिया साइंस वायर) जाता है जहां भूकम्प का अंदेशा हमेशा बना रहताहै। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान रुड़की ने भूकंप (आईआईटी) लॉन्च किया है। भूकम्प की पूर्व (उत्तराखंड भूकम्प अलर्ट) की पूर्व चेतावनी देने वाला एक मोबाइल ऐप वाला यह देश का पहला ऐप है। यह मोबाइल एप्लिकेशन एंड्रॉयड और आईओएस दोनों प्लेटफॉर्म चेतावनी देने के लिए उपलब्ध हैं।

भूकम्प पूर्व चेतावनी प्राप्त करने के लिए यूजर को केवल यह ऐप इंस्टॉल करना है और इंस्टॉलेशन के दौरान कुछ जरूरी जानकारियां दर्ज करनी है। ऐप में ज्ञानवर्धक वीडियो हैं जो भूकम्प के दौरान जीवन रक्षा की सिलसिलेवार जानकारी देते हैं। यह ऐप उत्तराखंड में 5 से अधिक तीव्रता के विनाशकारी भूकम्पों की ही पूर्व चेतावनी देता है। ऐप पर चेतावनी के संकेत इंटरनेट के माध्यम से पहुंचते हैं। इसलिए यूजर को इंटरनेट से जुड़े रहना होगा। हालांकि ऐप डेटा का इस्तेमाल केवल भूकम्प की सूचना देने के दौरान करता है।

यह ऐप भूकम्प की रियल टाइम चेतावनी देता है। इसकी मदद से भूकम्प के झटको का आरंभ में ही पता लग सकता है और जोर के झटके आने से पहले ही सार्वजनिक चेतावनी द्वारा लोगों को आगह किया जा सकता है। इस भूकम्प पूर्व चेतावनी तंत्र का भौतिक आधार भूकम्प की तरंगों की गति है जो फॉल्ट लाइन में गति से स्ट्रेस रिलीज पर फैलती है। धरती का जोर से हिलना तरंगों के कारण होता है जिसकी गति शुरुआती तरंगों की आधी होती है और जो विद्युत चुम्बकीय संकेतों से बहुत धीमी गति से बढ़ती है। यह सिस्टम इसी का लाभ लेता है।

ऐसे काम करता है ऐप

भूकंप आने के कुछ सेकंड बाद ही मोबाइल पर यह ऐप सायरन वॉइस मैसेज के माध्यम से सतर्क करेगा इस ऐप पर दो निशान बने हैं । ' मुझे मदद चाहिए ' दर्शाने वाला यह लाल निशान ट्रैक करने के तुरंत मुसीबत में फंसे

लोगों की लोकेशन बताएगा 'हरा निशान'मैं सुरक्षित हूं का संकेत देगा।। कोई वर्तमान में भूकंप से सतर्क के लिए राज्य के कई संवेदनशील इलाकों में लगाएगा सेंसर के जरिये डाटा आईआईटी रुड़की के अर्ली मॉर्निंग सिस्टम कंट्रोल रूम में पहुंचेगा यह ऐप इसी कंट्रोल रूम के सर्वर से जोड़ा गया है

एक से डेढ़ करोड़ का खर्च

राज्य के आपदा प्रबंधन प्राधिकरण ने वित्तीय सहयोग दिया है आप के संचालन में सालाना एक से डेढ़ करोड़ खर्च आएगा जिसका वहन प्राधिकरण करेगा।

किसकी मदद से काम करता है ऐप

राज्य के विभिन्न जगहों पर लगे सेंसर से डेटा संस्था की प्रयोगशाला के सेंटर सर्वर में आता है डाटा स्ट्रीम की गति को दूर संचार का इस्तेमाल किया जाता है। सर्वर उन क्षेत्रों में 5.5 अधिक भूकंप पर सावर्जनिक अलर्ट करता है जहाँ सेंसर लगे हुए हो।

जल्दी ही सूचना देने पर शोध

वैज्ञानिक भूकंप आने पर लोगों को जल्दी सूचना देने के लिए शोध कर रहे है। ताकि लोग समय रहते किसी सुरक्षित स्थान में जा सके।

एक मिनट में दिल्ली को मिलेगी चेतावनी

उत्तराखंड के जिन जगहों में ये सेंसर लगे है यदि उन जगहों में भूकंप आता है तो राजधानी देहरादून में 15 सेकंड ,रुड़की 20 सेकंड और दिल्ली में 1 मिनट में अलर्ट आ जायेगा। वही देहरादून व हल्द्वानी के हॉस्पिटलों,स्कूलों और सरकारी भवनों में 40 से अधिक सायरन भी लगाया गया है।

आप ऐसे होंगे अलर्ट

उत्तराखंड के किसी क्षेत्र में भूकंप आने की समय ऐप अलर्ट करेगा करीब 304 बार अलार्म के बाद वॉइस मैसेज से लोगों को अलर्ट करेगा ।

2014 से चल रहा है प्रोजेक्ट

आईआईटी रुड़की के वैज्ञानिक पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय के अर्थक्वेक अर्ली वार्निंग सिस्टम फॉर नॉर्दन इंडिया प्रोजेक्ट पर साल 2014 से काम कर रहे थे वह विज्ञान विभाग के प्रोफेसर और प्रोजेक्ट के प्रिंसिपल इन्वेस्टिगेटर प्रोफेसर कमल के मुताबिक भूकंप आने के तुरंत बाद यह अलर्ट कर देगा जिसके लिए गढ़वाल और कुमाऊं में 165 सेंसर भी लगाए गए है। वही चमोली गढ़वाल से उत्तरकाशी तक करीब 82 सेंसर और पिथौरागढ़ से धारचूला तक 83 सेंसर लगाए गए हैं फिर इसके बाद मोबाइल ऐप में काम शुरू किया गया था

आईआईटी रुड़की के निदेशक प्रोफेसर अजीत के चतुर्वेदी कहते हैं -"मुझे यह बताते हुए बहुत गर्व हो रहा है कि आईआईटीआर ने भूकंप की पूर्व चेतावनी देने वाला मोबाइल ऐप तैयार किया है, जो किसी भी तरह के जानमाल के नुकसान को रोकने के लिए भूकंप की घटना और उसके आने के अपेक्षित समय और तीव्रता की तत्काल सूचना देता है। यह परियोजना विशेष रूप से उत्तराखंड सरकार के साथ सहयोगात्मक रूप से शुरू की गई थी क्योंकि यह क्षेत्र भूकंपीय गतिविधियों से ग्रस्त है"

इस परियोजना के तहत उत्तराखंड राज्य के गढ़वाल और कुमाऊं क्षेत्र के ऊंचे इलाकों में सेंसर लगाए गए हैं। भूकम्प के डेटा आईआईटी रुड़की के ईईडब्ल्यू सिस्टम प्रयोगशाला, सीओईडीएमएम स्थित सेंट्रल सर्वर में आते

हैं। डेटा स्ट्रीम करने के लिए तीव्र गति दूरसंचार का उपयोग किया जाता है जबकि उच्च प्रदर्शन वाले कम्प्युटर गणना कार्य करते हैं। यह सर्वर सेंसर वाले क्षेत्रों में 5 से अधिक तीव्रता के भूकम्प का पता चलते ही सार्वजनिक चेतावनी देता है। भूकम्प के केंद्र से दूरी बढ़ने के साथ चेतावनी का समय बदलता है।

मोबाइल ऐप की विशिष्टता बताते हुए प्रोजेक्ट के प्रधान परीक्षक प्रोफेसर कमल के अनुसार यह ऐप भूकम्प के दौरान दुर्भाग्यवश फंस गए लोगों के स्थान का रिकॉर्ड भी रखता है और आपदा सहायता बल को इसकी सूचना देता है।

शुरुआती समय में आईआईटी रुड़की ने राज्य के भूकंप की पूर्व चेतावानी देने के लिए दो प्रमुख शहरों देहरादून) जनिक सायरन लगाने में उत्तराखंड सरकार की मदद की लेकिन पूरेमें सार्व (और हल्द्वानीराज्य को यह चेतावनी देने के लिए समय और संसाधन की कमी देखते हुए संस्थान ने स्मार्टफोन एप्लिकेशन को एक बेहतर विकल्प के तौर पर चुना क्योंकि आज अधिक से अधिक लोगों के पास स्मार्टफोन है और इसके माध्यम से चेतावनी जनता तक तुरंत पहुंचाई जा सकती है।

'उत्तराखंड भूकम्प अलर्ट' मोबाइल ऐप का प्रोजेक्ट उत्तराखंड राज्य आपदा प्रबंधन प्राधिकरण (यूएसडीएमए) ने स्पांसर किया है।

लॉन्च हुआ भूकम्प की पूर्व चेतावनी देने वाला पहला मोबाइल ऐप

August 5, 2021 admin disaster, earthquake, IIT, Innovation, management, Research, Technology

नई दिल्ली, (इंडिया साइंस वायरभूकम्प को लेकर उत्तराखंड विशेष रूप से संवेदनशील क्षेत्र माना जा :(ता है जहां भूकम्प का अंदेशा हमेशा बना रहता है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान रुड़की ने भूकंप की पूर्व चेतावनी (आईआईटी) लॉन्च किया है। भूकम्प की पूर्व चेतावनी देने वाला यह देश (उत्तराखंड भूकम्प अलर्ट) देने वाला एक मोबाइल ऐप का पहला ऐप है। यह मोबाइल एप्लिकेशन एंड्रॉयड और आईओएस दोनों प्लेटफॉर्म के लिए उपलब्ध हैं।

भूकम्प पूर्व चेतावनी प्राप्त करने के लिए यूजर को केवल यह ऐप इंस्टॉल करना है और इंस्टॉलेशन के दौरान कुछ जरूरी जानकारियां दर्ज करनी है। ऐप में ज्ञानवर्धक वीडियो हैं जो भूकम्प के दौरान जीवन रक्षा की सिलसिलेवार जानकारी देते हैं। यह ऐप उत्तराखंड में 5 से अधिक तीव्रता के विनाशकारी भूकम्पों की ही पूर्व चेतावनी देता है। ऐप पर चेतावनी के संकेत इंटरनेट के माध्यम से पहुंचते हैं। इसलिए यूजर को इंटरनेट से जुड़े रहना होगा। हालांकि ऐप डेटा का इस्तेमाल केवल भूकम्प की सूचना देने के दौरान करता है।

यह ऐप भूकम्प की रियल टाइम चेतावनी देता है। इसकी मदद से भूकम्प के झटको का आरंभ में ही पता लग सकता है और जोर के झटके आने से पहले ही सार्वजनिक चेतावनी द्वारा लोगों को आगह किया जा सकता है। इस भूकम्प पूर्व चेतावनी तंत्र का भौतिक आधार भूकम्प की तरंगों की गति है जो फॉल्ट लाइन में गति से स्ट्रेस रिलीज पर

फैलती है। धरती का जोर से हिलना तरंगों के कारण होता है जिसकी गति शुरुआती तरंगों की आधी होती है और जो विद्युत चुम्बकीय संकेतों से बहुत धीमी गति से बढ़ती है। यह सिस्टम इसी का लाभ लेता है।

आईआईटी रुड़की के निदेशक प्रोफेसर अजीत के चतुर्वेदी कहते हैं -“मुझे यह बताते हुए बहुत गर्व हो रहा है कि आईआईटीआर ने भूकंप की पूर्व चेतावनी देने वाला मोबाइल ऐप तैयार किया है, जो किसी भी तरह के जानमाल के नुकसान को रोकने के लिए भूकंप की घटना और उसके आने के अपेक्षित समय और तीव्रता की तत्काल सूचना देता है। यह परियोजना विशेष रूप से उत्तराखंड सरकार के साथ सहयोगात्मक रूप से शुरू की गई थी क्योंकि यह क्षेत्र भूकंपीय गतिविधियों से ग्रस्त है”

इस परियोजना के तहत उत्तराखंड राज्य के गढ़वाल और कुमाऊं क्षेत्र के ऊंचे इलाकों में सेंसर लगाए गए हैं। भूकम्प के डेटा आईआईटी रुड़की के ईईडब्ल्यू सिस्टम प्रयोगशाला, सीओईडीएमएम स्थित सेंट्रल सर्वर में आते हैं। डेटा स्ट्रीम करने के लिए तीव्र गति दूरसंचार का उपयोग किया जाता है जबकि उच्च प्रदर्शन वाले कम्प्युटर गणना कार्य करते हैं। यह सर्वर सेंसर वाले क्षेत्रों में 5 से अधिक तीव्रता के भूकम्प का पता चलते ही सार्वजनिक चेतावनी देता है। भूकम्प के केंद्र से दूरी बढ़ने के साथ चेतावनी का समय बदलता है।

मोबाइल ऐप की विशिष्टता बताते हुए प्रोजेक्ट के प्रधान परीक्षक प्रोफेसर कमल के अनुसार यह ऐप भूकम्प के दौरान दुर्भाग्यवश फंस गए लोगों के स्थान का रिकॉर्ड भी रखता है और आपदा सहायता बल को इसकी सूचना देता है।

शुरुआती समय में आईआईटी रुड़की ने राज्य के भूकंप की पूर्व चेतावनी देने के लिए दो प्रमुख शहरों देहरादून और) में सार्वजनिक सायरन लगाने में उत्तर (हल्द्वानीाखंड सरकार की मदद की लेकिन पूरे राज्य को यह चेतावनी देने के लिए समय और संसाधन की कमी देखते हुए संस्थान ने स्मार्टफोन एप्लिकेशन को एक बेहतर विकल्प के तौर पर चुना क्योंकि आज अधिक से अधिक लोगों के पास स्मार्टफोन है और इसके माध्यम से चेतावनी जनता तक तुरंत पहुंचाई जा सकती है।

‘उत्तराखंड भूकम्प अलर्ट’ मोबाइल ऐप का प्रोजेक्ट उत्तराखंड राज्य आपदा प्रबंधन प्राधिकरण ने (यूएसडीएमए) स्पांसर किया है।

लॉन्च हुआ भूकम्प की पूर्व चेतावनी देने वाला पहला मोबाइल ऐप

04/08/2021

V3news India

नई दिल्ली, 04 अगस्त भूकम्प को लेकर उत्तराखंड विशेष रूप से संवेदनशील क्षेत्र माना जाता है जहां :(इंडिया साइंस वायर) रुड़की ने भूकंप की पूर्व चेतावनी देने वाला (आईआईटी) भूकम्प का अंदेशा हमेशा बना रहता है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान लॉन्च किया है। भूकम्प की पूर्व चेतावनी देने वाला यह देश का पहला ऐप है। यह (अलर्ट उत्तराखंड भूकम्प) एक मोबाइल ऐप मोबाइल एप्लिकेशन एंड्रॉयड और आईओएस दोनों प्लेटफॉर्म के लिए उपलब्ध हैं।

भूकम्प पूर्व चेतावनी प्राप्त करने के लिए यूजर को केवल यह ऐप इंस्टॉल करना है और इंस्टॉलेशन के दौरान कुछ जरूरी जानकारियां दर्ज करनी है। ऐप में ज्ञानवर्धक वीडियो हैं जो भूकम्प के दौरान जीवन रक्षा की सिलसिलेवार जानकारी देते हैं। यह ऐप उत्तराखंड में 5 से अधिक तीव्रता के विनाशकारी भूकम्पों की ही पूर्व चेतावनी देता है। ऐप पर चेतावनी के संकेत इंटरनेट के माध्यम से पहुंचते हैं। इसलिए यूजर को इंटरनेट से जुड़े रहना होगा।

हालांकि ऐप डेटा का इस्तेमाल केवल भूकम्प की सूचना देने के दौरान करता है। यह ऐप भूकम्प की रियल टाइम चेतावनी देता है। इसकी मदद से भूकम्प के झटको का आरंभ में ही पता लग सकता है और जोर के झटके आने से पहले ही सार्वजनिक चेतावनी द्वारा लोगों को आगह किया जा सकता है। इस भूकम्प पूर्व चेतावनी तंत्र का भौतिक आधार भूकम्प की तरंगों की गति है जो फॉल्ट लाइन में गति से स्ट्रेस रिलीज पर फैलती है।

धरती का जोर से हिलना तरंगों के कारण होता है जिसकी गति शुरुआती तरंगों की आधी होती है और जो विद्युत चुम्बकीय संकेतों से बहुत धीमी गति से बढ़ती है। यह सिस्टम इसी का लाभ लेता है। आईआईटी रुड़की के निदेशक प्रोफेसर अजीत के चतुर्वेदी कहते हैं "मुझे यह बताते हुए बहुत गर्व हो रहा है कि आईआईटीआर ने भूकंप की पूर्व चेतावनी देने वाला मोबाइल ऐप तैयार किया है, जो किसी भी तरह के जानमाल के नुकसान को रोकने के लिए भूकंप की घटना और उसके आने के अपेक्षित समय और तीव्रता की तत्काल सूचना देता है।

यह परियोजना विशेष रूप से उत्तराखंड सरकार के साथ सहयोगात्मक रूप से शुरू की गई थी क्योंकि यह क्षेत्र भूकंपीय गतिविधियों से ग्रस्त है "इस परियोजना के तहत उत्तराखंड राज्य के गढ़वाल और कुमाऊं क्षेत्र के ऊंचे इलाकों में सेंसर लगाए गए हैं। भूकम्प के डेटा आईआईटी रुड़की के ईईडब्ल्यू सिस्टम प्रयोगशाला, सीओईडीएमएम स्थित सेंट्रल सर्वर में आते हैं।

डेटा स्ट्रीम करने के लिए तीव्र गति दूरसंचार का उपयोग किया जाता है जबकि उच्च प्रदर्शन वाले कम्प्युटर गणना कार्य करते हैं। यह सर्वर सेंसर वाले क्षेत्रों में 5 से अधिक तीव्रता के भूकम्प का पता चलते ही सार्वजनिक चेतावनी देता है। भूकम्प के केंद्र से दूरी बढ़ने के साथ चेतावनी का समय बदलता है। मोबाइल ऐप की विशिष्टता बताते हुए प्रोजेक्ट के प्रधान परीक्षक प्रोफेसर कमल के अनुसार यह ऐप भूकम्प के दौरान दुर्भाग्यवश फंस गए लोगों के स्थान का रिकॉर्ड भी रखता है और आपदा सहायता बल को इसकी सूचना देता है।

शुरुआती समय में आईआईटी रुड़की ने राज्य के भूकंप की पूर्व चेतावानी देने के लिए दो प्रमुख शहरों में (देहरादून और हल्द्वानी) सार्वजनिक सायरन लगाने में उत्तराखंड सरकार की मदद की लेकिन पूरे राज्य को यह चेतावनी देने के लिए समय और संसाधन की कमी देखते हुए संस्थान ने स्मार्टफोन एप्लिकेशन को एक बेहतर विकल्प के तौर पर चुना क्योंकि आज अधिक से अधिक लोगों के पास स्मार्टफोन है और इसके माध्यम से चेतावनी जनता तक तुरंत पहुंचाई जा सकती है। 'उत्तराखंड भूकम्प अलर्ट' मोबाइल ऐप का प्रोजेक्ट उत्तराखंड राज्य आपदा प्रबंधन प्राधिकरण ने स्पांसर किया है। (यूएसडीएमए)

लॉन्च हुआ भूकम्प की पूर्व चेतावनी देने वाला पहला मोबाइल ऐप

लेखक: Snigdha Verma - अगस्त 06, 2021

गूगल प्ले-स्टोर पर मौजूद 'उत्तराखंड भूकम्प अलर्ट' ऐप

नई दिल्ली,(इंडिया साइंस वायरभूकम्प को लेकर उत्तराखंड विशेष रूप से संवेदनशील क्षेत्र माना जाता है जहां :(कंप की पूर्व चेतावनी रुड़की ने भू (आईआईटी) भूकम्प का अंदेशा हमेशा बना रहता है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान लॉन्च किय (उत्तराखंड भूकम्प अलर्ट) देने वाला एक मोबाइल ऐप‌ा है। भूकम्प की पूर्व चेतावनी देने वाला यह देश का पहला ऐप है। यह मोबाइल एप्लिकेशन एंड्रॉयड और आईओएस दोनों प्लेटफॉर्म के लिए उपलब्ध हैं। भूकम्प पूर्व चेतावनी प्राप्त करने के लिए यूजर को केवल यह ऐप इंस्टॉल करना है और इंस्टॉलेशन के दौरान कुछ जरूरी जानकारियां दर्ज करनी है। ऐप में ज्ञानवर्धक वीडियो हैं जो भूकम्प के दौरान जीवन रक्षा की सिलसिलेवार जानकारी देते हैं। यह ऐप उत्तराखंड में 5 से अधिक तीव्रता के विनाशकारी भूकम्पों की ही पूर्व चेतावनी देता है। ऐप पर चेतावनी के संकेत इंटरनेट के माध्यम से पहुंचते हैं। इसलिए यूजर को इंटरनेट से जुड़े रहना होगा। हालांकि ऐप डेटा का इस्तेमाल केवल भूकम्प की सूचना देने के दौरान करता है। यह ऐप भूकम्प की रियल टाइम चेतावनी देता है। इसकी मदद से भूकम्प के झटको का आरंभ में ही पता लग सकता है और जोर के झटके आने से पहले ही सार्वजनिक चेतावनी द्वारा लोगों को आगह किया जा सकता है। इस भूकम्प पूर्व चेतावनी तंत्र का भौतिक आधार भूकम्प की तरंगों की गति है जो फॉल्ट लाइन में गति से स्ट्रेस रिलीज पर फैलती है। धरती का जोर से हिलना तरंगों के कारण होता है जिसकी गति शुरुआती तरंगों की आधी होती है और जो विद्युत चुम्बकीय संकेतों से बहुत धीमी गति से बढ़ती है। यह सिस्टम इसी का लाभ लेता है। आईआईटी रुड़की के निदेशक प्रोफेसर अजीत के चतुर्वेदी कहते हैं -"मुझे यह बताते हुए बहुत गर्व हो रहा है कि आईआईटीआर ने भूकंप की पूर्व चेतावनी देने वाला मोबाइल ऐप तैयार किया है, जो किसी भी तरह के जानमाल के नुकसान को रोकने के लिए भूकंप की घटना और उसके आने के अपेक्षित समय और तीव्रता की तत्काल सूचना देता है। यह परियोजना विशेष रूप से उत्तराखंड सरकार के साथ सहयोगात्मक रूप से शुरू की गई थी क्योंकि यह क्षेत्र भूकंपीय गतिविधियों से ग्रस्त है" इस परियोजना के तहत उत्तराखंड राज्य के गढ़वाल और कुमाऊं क्षेत्र के ऊंचे इलाकों में सेंसर लगाए गए हैं। भूकम्प के डेटा आईआईटी रुड़की के ईईडब्ल्यू सिस्टम प्रयोगशाला, सीओईडीएमएम स्थित सेंट्रल सर्वर में आते हैं। डेटा स्ट्रीम करने के लिए तीव्र गति दूरसंचार का उपयोग किया जाता है जबकि उच्च प्रदर्शन वाले कम्प्युटर गणना कार्य करते हैं। यह सर्वर सेंसर वाले क्षेत्रों में 5 से

अधिक तीव्रता के भूकम्प का पता चलते ही सार्वजनिक चेतावनी देता है। भूकम्प के केंद्र से दूरी बढ़ने के साथ चेतावनी का समय बदलता है। मोबाइल ऐप की विशिष्टता बताते हुए प्रोजेक्ट के प्रधान परीक्षक प्रोफेसर कमल के अनुसार यह ऐप भूकम्प के दौरान दुर्भाग्यवश फंस गए लोगों के स्थान का रिकॉर्ड भी रखता है और आपदा सहायता बल को इसकी सूचना देता है। शुरुआती समय में आईआईटी रुड़की ने राज्य के भूकंप की पूर्व चेतावानी देने के लिए दो प्रमुख शहरों में सार्वजनिक सायरन लगाने में उत्तराखंड सरकार की मदद की लेकिन पूरे (देहरादून और हल्द्वानी) न ने स्मार्टफोन एप्लिकेशन को एक राज्य को यह चेतावनी देने के लिए समय और संसाधन की कमी देखते हुए संस्था बेहतर विकल्प के तौर पर चुना क्योंकि आज अधिक से अधिक लोगों के पास स्मार्टफोन है और इसके माध्यम से चेतावनी जनता तक तुरंत पहुंचाई जा सकती है। 'उत्तराखंड भूकम्प अलर्ट' मोबाइल ऐप का प्रोजेक्ट उत्तराखंड राज्य आपदा प्रबंधन प्राधिकरण ने स्पांसर किया है। (यूएसडीएमए)

प्रभासाक्षी

लॉन्च हुआ भूकम्प की पूर्व चेतावनी देने वाला पहला मोबाइल ऐप

इंडिया साइंस वायर Aug 04, 2021 17:29

> *भूकम्प पूर्व चेतावनी प्राप्त करने के लिए यूजर को केवल यह ऐप इंस्टॉल करना है और इंस्टॉलेशन के दौरान कुछ जरूरी जानकारियां दर्ज करनी है। ऐप में ज्ञानवर्धक वीडियो हैं जो भूकम्प के दौरान जीवन रक्षा की सिलसिलेवार जानकारी देते हैं।*

भूकम्प को लेकर उत्तराखंड विशेष रूप से संवेदनशील क्षेत्र माना जाता है जहां भूकम्प का अंदेशा हमेशा बना रहता है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान वाला एक रुड़की ने भूकंप की पूर्व चेतावनी देने (आईआईटी) मोबाइल ऐप (उत्तराखंड भूकम्प अलर्टह लॉन्च किया है। भूकम्प की पूर्व चेतावनी देने वाला यह देश का पहला ऐप है। य (मोबाइल एप्लिकेशन एंड्रॉयड और आईओएस दोनों प्लेटफॉर्म के लिए उपलब्ध हैं।

भूकम्प पूर्व चेतावनी प्राप्त करने के लिए यूजर को केवल यह ऐप इंस्टॉल करना है और इंस्टॉलेशन के दौरान कुछ जरूरी जानकारियां दर्ज करनी है। ऐप में ज्ञानवर्धक वीडियो हैं जो भूकम्प के दौरान जीवन रक्षा की

सिलसिलेवार जानकारी देते हैं। यह ऐप उत्तराखंड में 5 से अधिक तीव्रता के विनाशकारी भूकम्पों की ही पूर्व चेतावनी देता है। ऐप पर चेतावनी के संकेत इंटरनेट के माध्यम से पहुंचते हैं। इसलिए यूजर को इंटरनेट से जुड़े रहना होगा। हालांकि ऐप डेटा का इस्तेमाल केवल भूकम्प की सूचना देने के दौरान करता है।

यह ऐप भूकम्प की रियल टाइम चेतावनी देता है। इसकी मदद से भूकम्प के झटको का आरंभ में ही पता लग सकता है और जोर के झटके आने से पहले ही सार्वजनिक चेतावनी द्वारा लोगों को आगह किया जा सकता है। इस भूकम्प पूर्व चेतावनी तंत्र का भौतिक आधार भूकम्प की तरंगों की गति है जो फॉल्ट लाइन में गति से स्ट्रेस रिलीज पर फैलती है। धरती का जोर से हिलना तरंगों के कारण होता है जिसकी गति शुरुआती तरंगों की आधी होती है और जो विद्युत चुम्बकीय संकेतों से बहुत धीमी गति से बढ़ती है। यह सिस्टम इसी का लाभ लेता है।

आईआईटी रुड़की के निदेशक प्रोफेसर अजीत के चतुर्वेदी कहते हैं -"मुझे यह बताते हुए बहुत गर्व हो रहा है कि आईआईटीआर ने भूकंप की पूर्व चेतावनी देने वाला मोबाइल ऐप तैयार किया है, जो किसी भी तरह के जानमाल के नुकसान को रोकने के लिए भूकंप की घटना और उसके आने के अपेक्षित समय और तीव्रता की तत्काल सूचना देता है। यह परियोजना विशेष रूप से उत्तराखंड सरकार के साथ सहयोगात्मक रूप से शुरू की गई थी क्योंकि यह क्षेत्र भूकंपीय गतिविधियों से ग्रस्त है"

इस परियोजना के तहत उत्तराखंड राज्य के गढ़वाल और कुमाऊं क्षेत्र के ऊंचे इलाकों में सेंसर लगाए गए हैं। भूकम्प के डेटा आईआईटी रुड़की के ईईडब्ल्यू सिस्टम प्रयोगशाला, सीओईडीएमएम स्थित सेंट्रल सर्वर में आते हैं। डेटा स्ट्रीम करने के लिए तीव्र गति दूरसंचार का उपयोग किया जाता है जबकि उच्च प्रदर्शन वाले कम्प्युटर गणना कार्य करते हैं। यह सर्वर सेंसर वाले क्षेत्रों में 5 से अधिक तीव्रता के भूकम्प का पता चलते ही सार्वजनिक चेतावनी देता है। भूकम्प के केंद्र से दूरी बढ़ने के साथ चेतावनी का समय बदलता है।

मोबाइल ऐप की विशिष्टता बताते हुए प्रोजेक्ट के प्रधान परीक्षक प्रोफेसर कमल के अनुसार यह ऐप भूकम्प के दौरान दुर्भाग्यवश फंस गए लोगों के स्थान का रिकॉर्ड भी रखता है और आपदा सहायता बल को इसकी सूचना देता है।

शुरुआती समय में आईआईटी रुड़की ने राज्य के भूकंप की पूर्व चेतावानी देने के लिए दो प्रमुख शहरों देहरादून) में सार्वजनिक सायरन लगाने में उत्तराखंड सरकार की मदद की लेकिन पूरे राज्य को यह (और हल्द्वानी साधन कीचेतावनी देने के लिए समय और संकमी देखते हुए संस्थान ने स्मार्टफोन एप्लिकेशन को एक बेहतर विकल्प के तौर पर चुना क्योंकि आज अधिक से अधिक लोगों के पास स्मार्टफोन है और इसके माध्यम से चेतावनी जनता तक तुरंत पहुंचाई जा सकती है।

'उत्तराखंड भूकम्प अलर्ट' मोबाइल ऐप का प्रोजेक्ट उत्तराखंड राज्य आपदा प्रबंधन प्राधिकरण (यूएसडीएमएने (स्पांसर किया है।

रिपब्लिक न्यूज़इंडिया

लॉन्च हुआ भूकम्प की पूर्व चेतावनी देने वाला पहला मोबाइल ऐप

By **Rupesh Dharmik** - August 4, 2021

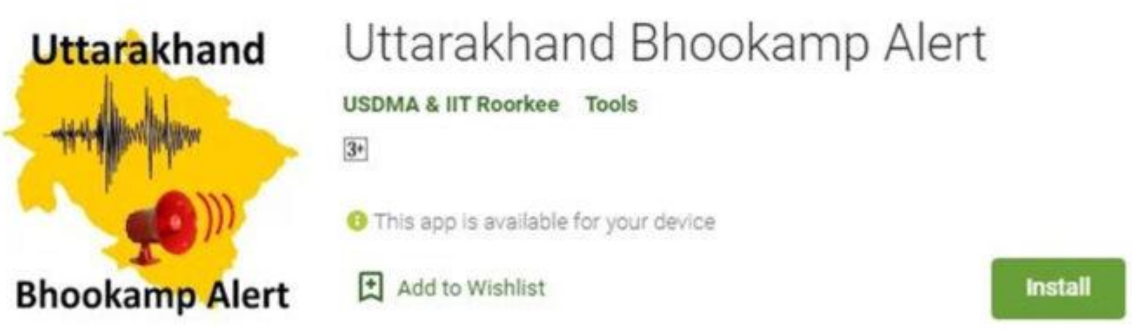

गूगल प्ले र पर मौजूदस्टो-'उत्तराखंड भूकम्प अलर्ट' ऐप

नई दिल्ली: भूकम्प को लेकर उत्तराखंडविशेष रूप से संवेदनशील क्षेत्र माना जाता हैजहां भूकम्प का अंदेशा हमेशा बना रहता है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान रुड़की ने भूकंप की पूर्व (आईआईटी) लॉन्चकिया है। भूकम्प की पूर्व चेतावनी (राखंड भूकम्प अलर्टउत्त) चेतावनी देने वाला एकमोबाइल ऐप देने वाला यह देश का पहला ऐप है। यह मोबाइल एप्लिकेशन एंड्रॉयड और आईओएस दोनोंप्लेटफॉर्म के लिए उपलब्ध हैं।

भूकम्प पूर्व चेतावनी प्राप्त करने के लिए यूजर को केवल यह ऐप इंस्टॉल करना है और इंस्टॉलेशन के दौरान कुछ जरूरी जानकारियां दर्ज करनी है। ऐप में ज्ञानवर्धक वीडियो हैं जो भूकम्प के दौरान जीवन रक्षा की सिलसिलेवार जानकारी देते हैं। यह ऐप उत्तराखंड में 5 से अधिक तीव्रता के विनाशकारी भूकम्पों की ही पूर्व चेतावनी देता है। ऐप पर चेतावनी के संकेत इंटरनेट के माध्यम से पहुंचते हैं। इसलिए यूजर को इंटरनेट से जुड़े रहना होगा। हालांकि ऐप डेटा का इस्तेमाल केवल भूकम्प की सूचना देने के दौरान करता है।

यह ऐप भूकम्प की रियल टाइम चेतावनी देता है। इसकी मदद से भूकम्प के झटको का आरंभ में ही पता लग सकता है और जोर के झटके आने से पहले ही सार्वजनिक चेतावनीद्वारा लोगों को आगह किया जा सकता है। इस भूकम्प पूर्व चेतावनी तंत्र का भौतिक आधार भूकम्प की तरंगों की गति है जो फॉल्ट लाइन में गति से स्ट्रेस रिलीज पर फैलती है। धरती का जोर से हिलना तरंगों के कारण होता है जिसकी गति शुरुआती तरंगों की आधी होती है और जो विद्युत चुम्बकीय संकेतों से बहुत धीमी गति से बढ़ती है। यह सिस्टम इसी का लाभ लेता है।

आईआईटी रुड़की के निदेशक प्रोफेसर अजीत के चतुर्वेदी कहते हैं -"मुझे यह बताते हुए बहुत गर्व हो रहा है कि आईआईटीआर ने भूकंप की पूर्व चेतावनी देने वाला मोबाइल ऐप तैयार किया है, जो किसी भी तरह के जानमाल के नुकसान को रोकने के लिए भूकंप की घटना और उसके आने के अपेक्षित समय और तीव्रता की तत्काल सूचना देता है। यह परियोजना विशेष रूप से उत्तराखंड सरकार के साथ सहयोगात्मक रूप से शुरू की गई थी क्योंकि यह क्षेत्र भूकंपीय गतिविधियों से ग्रस्त है"

इस परियोजना के तहत उत्तराखंड राज्य के गढ़वाल और कुमाऊं क्षेत्र के ऊंचे इलाकों में सेंसर लगाए गए हैं।भूकम्प के डेटा आईआईटी रुड़की के ईईडब्ल्यू सिस्टम प्रयोगशाला, सीओईडीएमएम स्थित सेंट्रल सर्वर में आते हैं। डेटा स्ट्रीम करने के लिए तीव्र गति दूरसंचार का उपयोग किया जाता है जबकि उच्च प्रदर्शन वाले कम्प्युटर गणना कार्य करते हैं। यह सर्वर सेंसर वाले क्षेत्रों में 5 से अधिक तीव्रता के भूकम्प का पता चलते ही सार्वजनिक चेतावनी देता है। भूकम्प के केंद्र से दूरी बढ़ने के साथ चेतावनी का समय बदलता है।

मोबाइल ऐप की विशिष्टता बताते हुए प्रोजेक्ट के प्रधान परीक्षक प्रोफेसर कमल के अनुसार यह ऐप भूकम्प के दौरान दुर्भाग्यवश फंस गए लोगों के स्थान का रिकॉर्ड भी रखता है और आपदा सहायता बल को इसकी सूचना देता है।

शुरुआती समय में आईआईटी रुड़की ने राज्य के भूकंप की पूर्व चेतावानी देने के लिए दो प्रमुख शहरों में सार्वजनिक सायरन लगाने में उत्तराखंड सरकार की मदद की लेकिन पूरे (देहरादून और हल्द्वानी) राज्य को यह चेतावनी देने केलिए समय और संसाधन की कमी देखते हुए संस्थान ने स्मार्टफोन एप्लिकेशन को एक बेहतर विकल्प के तौर पर चुना क्योंकि आज अधिक से अधिक लोगों के पास स्मार्टफोन है और इसके माध्यम से चेतावनीजनता तक तुरंत पहुंचाई जा सकती है।

'उत्तराखंड भूकम्प अलर्ट' मोबाइल ऐप का प्रोजेक्ट उत्तराखंड राज्य आपदा प्रबंधन प्राधिकरण (रइंडिया साइंस वाय) ने स्पांसर किया है। (यूएसडीएमए)

दी इंडियन बुलेटिन

लॉन्च हुआ भूकम्प की पूर्व चेतावनी देने वाला पहला मोबाइल ऐप

August 4, 2021

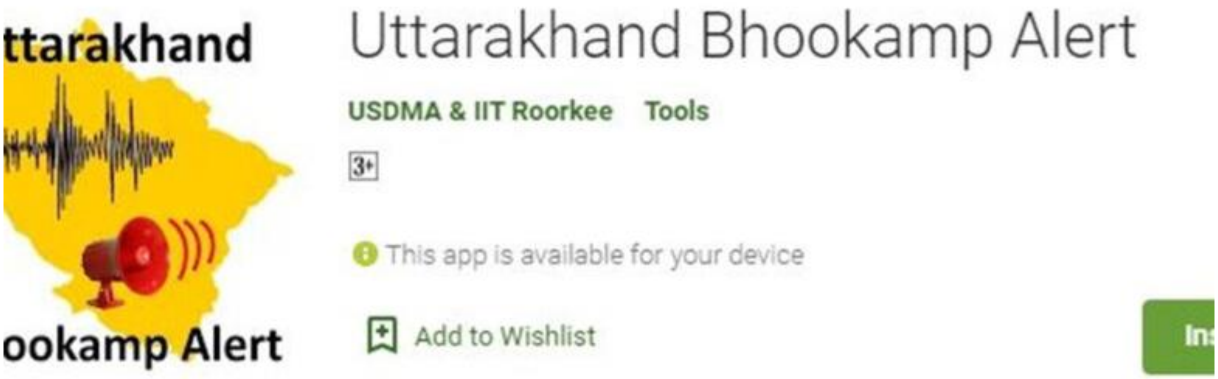

गूगल प्ले स्टोर पर मौजूद-'उत्तराखंड भूकम्प अलर्ट' ऐप

नई दिल्ली: भूकम्प को लेकर उत्तराखंडविशेष रूप से संवेदनशील क्षेत्र माना जाता हैजहां भूकम्प का अंदेशा हमेशा बना रहता है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान रुड़की ने भूकंप की पूर्व चेतावनी देने वाला एकमोबाइल (आईआईटी) लॉन्चकिया है। भूकम्प की पूर्व चेतावनी देने वाला (उत्तराखंड भूकम्प अलर्ट) ऐप यह देश का पहला ऐप है। यह मोबाइल एप्लिकेशन एंड्रॉयड और आईओएस दोनों प्लेटफॉर्म के लिए उपलब्ध हैं।
भूकम्प पूर्व चेतावनी प्राप्त करने के लिए यूजर को केवल यह ऐप इंस्टॉल करना है और इंस्टॉलेशन के दौरान कुछ जरूरी जानकारियां दर्ज करनी है। ऐप में ज्ञानवर्धक वीडियो हैं जो भूकम्प के दौरान जीवन रक्षा की सिलसिलेवार जानकारी देते हैं। यह ऐप उत्तराखंड में 5 से अधिक तीव्रता के विनाशकारी भूकम्पों की ही पूर्व चेतावनी देता है। ऐप पर चेतावनी के संकेत इंटरनेट के माध्यम से पहुंचते हैं। इसलिए यूजर को इंटरनेट से जुड़े रहना होगा। हालांकि ऐप डेटा का इस्तेमाल केवल भूकम्प की सूचना देने के दौरान करता है।

यह ऐप भूकम्प की रियल टाइम चेतावनी देता है। इसकी मदद से भूकम्प के झटको का आरंभ में ही पता लग सकता है और जोर के झटके आने से पहले ही सार्वजनिक चेतावनीद्वारा लोगों को आगह किया जा सकता है। इस भूकम्प पूर्व चेतावनी तंत्र का भौतिक आधार भूकम्प की तरंगों की गति है जो फॉल्ट लाइन में गति से स्ट्रेस रिलीज पर फैलती है।

धरती का जोर से हिलना तरंगों के कारण होता है जिसकी गति शुरुआती तरंगों की आधी होती है और जो विद्युत चुम्बकीय संकेतों से बहुत धीमी गति से बढ़ती है। यह सिस्टम इसी का लाभ लेता है।

आईआईटी रुड़की के निदेशक प्रोफेसर अजीत के चतुर्वेदी कहते हैं -"मुझे यह बताते हुए बहुत गर्व हो रहा है कि आईआईटीआर ने भूकंप की पूर्व चेतावनी देने वाला मोबाइल ऐप तैयार किया है, जो किसी भी तरह के जानमाल के नुकसान को रोकने के लिए भूकंप की घटना और उसके आने के अपेक्षित समय और तीव्रता की तत्काल सूचना देता है। यह परियोजना विशेष रूप से उत्तराखंड सरकार के साथ सहयोगात्मक रूप से शुरू की गई थी क्योंकि यह क्षेत्र भूकंपीय गतिविधियों से ग्रस्त है"

इस परियोजना के तहत उत्तराखंड राज्य के गढ़वाल और कुमाऊं क्षेत्र के ऊंचे इलाकों में सेंसर लगाए गए हैं।भूकम्प के डेटा आईआईटी रुड़की के ईईडब्ल्यू सिस्टम प्रयोगशाला, सीओईडीएमएम स्थित सेंट्रल सर्वर में आते हैं। डेटा स्ट्रीम करने के लिए तीव्र गति दूरसंचार का उपयोग किया जाता है जबकि उच्च प्रदर्शन वाले कम्प्युटर गणना कार्य करते हैं। यह सर्वर सेंसर वाले क्षेत्रों में 5 से अधिक तीव्रता के भूकम्प का पता चलते ही सार्वजनिक चेतावनी देता है। भूकम्प के केंद्र से दूरी बढ़ने के साथ चेतावनी का समय बदलता है।

मोबाइल ऐप की विशिष्टता बताते हुए प्रोजेक्ट के प्रधान परीक्षक प्रोफेसर कमल के अनुसार यह ऐप भूकम्प के दौरान दुर्भाग्यवश फंस गए लोगों के स्थान का रिकॉर्ड भी रखता है और आपदा सहायता बल को इसकी सूचना देता है।

शुरुआती समय में आईआईटी रुड़की ने राज्य के भूकंप की पूर्व चेतावनी देने के लिए दो प्रमुख शहरों देहरादून और) हल्द्वानीके में सार्वजनिक सायरन लगाने में उत्तराखंड सरकार की मदद की लेकिन पूरे राज्य को यह चेतावनी देने (लिए समय और संसाधन की कमी देखते हुए संस्थान ने स्मार्टफोन एप्लिकेशन को एक बेहतर विकल्प के तौर पर चुना क्योंकि आज अधिक से अधिक लोगों के पास स्मार्टफोन है और इसके माध्यम से चेतावनीजनता तक तुरंत पहुंचाई जा सकती है।

'उत्तराखंड भूकम्प अलर्ट' मोबाइल ऐप का प्रोजेक्ट उत्तराखंड राज्य आपदा प्रबंधन प्राधिकरण ने (यूएसडीएमए) (इंडिया साइंस वायर) स्पांसर किया है।

RD TIMES.in हिंदी

लॉन्च हुआ भूकम्प की पूर्व चेतावनी देने वाला पहला मोबाइल ऐप

By RD Times Hindi | August 4, 2021

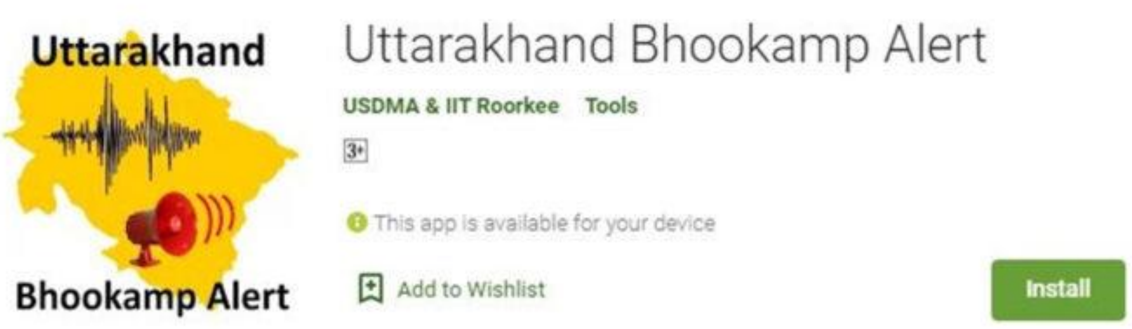

गूगल प्ले स्टोर पर मौजूद-'उत्तराखंड भूकम्प अलर्ट' ऐप

नई दिल्ली: भूकम्प को लेकर उत्तराखंडविशेष रूप से संवेदनशील क्षेत्र माना जाता हैजहां भूकम्प का अंदेशा हमेशा बना रहता है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान रुड़की ने भूकंप की पूर्व चेतावनी देने वाला (आईआईटी) लॉन्चकिया है। भूकम्प की पूर्व चेतावनी देने वाला यह देश का (उत्तराखंड भूकम्प अलर्ट) एकमोबाइल ऐप पहला ऐप है। यह मोबाइल एप्लिकेशन एंड्रॉयड और आईओएस दोनों प्लेटफॉर्म के लिए उपलब्ध हैं।

भूकम्प पूर्व चेतावनी प्राप्त करने के लिए यूजर को केवल यह ऐप इंस्टॉल करना है और इंस्टॉलेशन के दौरान कुछ जरूरी जानकारियां दर्ज करनी है। ऐप में ज्ञानवर्धक वीडियो हैं जो भूकम्प के दौरान जीवन रक्षा की सिलसिलेवार जानकारी देते हैं। यह ऐप उत्तराखंड में 5 से अधिक तीव्रता के विनाशकारी भूकम्पों की ही पूर्व चेतावनी देता है। ऐप पर चेतावनी के संकेत इंटरनेट के माध्यम से पहुंचते हैं। इसलिए यूजर को इंटरनेट से जुड़े रहना होगा। हालांकि ऐप डेटा का इस्तेमाल केवल भूकम्प की सूचना देने के दौरान करता है।

यह ऐप भूकम्प की रियल टाइम चेतावनी देता है। इसकी मदद से भूकम्प के झटको का आरंभ में ही पता लग सकता है और जोर के झटके आने से पहले ही सार्वजनिक चेतावनीद्वारा लोगों को आगह किया जा सकता है। इस भूकम्प पूर्व चेतावनी तंत्र का भौतिक आधार भूकम्प की तरंगों की गति है जो फॉल्ट लाइन में गति से स्ट्रेस

रिलीज पर फैलती है। धरती का जोर से हिलना तरंगों के कारण होता है जिसकी गति शुरुआती तरंगों की आधी होती है और जो विद्युत चुम्बकीय संकेतों से बहुत धीमी गति से बढ़ती है। यह सिस्टम इसी का लाभ लेता है।

आईआईटी रुड़की के निदेशक प्रोफेसर अजीत के चतुर्वेदी कहते हैं -"मुझे यह बताते हुए बहुत गर्व हो रहा है कि आईआईटीआर ने भूकंप की पूर्व चेतावनी देने वाला मोबाइल ऐप तैयार किया है, जो किसी भी तरह के जानमाल के नुकसान को रोकने के लिए भूकंप की घटना और उसके आने के अपेक्षित समय और तीव्रता की तत्काल सूचना देता है। यह परियोजना विशेष रूप से उत्तराखंड सरकार के साथ सहयोगात्मक रूप से शुरू की गई थी क्योंकि यह क्षेत्र भूकंपीय गतिविधियों से ग्रस्त है"

इस परियोजना के तहत उत्तराखंड राज्य के गढ़वाल और कुमाऊं क्षेत्र के ऊंचे इलाकों में सेंसर लगाए गए हैं।भूकम्प के डेटा आईआईटी रुड़की के ईईडब्ल्यू सिस्टम प्रयोगशाला, सीओईडीएमएम स्थित सेंट्रल सर्वर में आते हैं। डेटा स्ट्रीम करने के लिए तीव्र गति दूरसंचार का उपयोग किया जाता है जबकि उच्च प्रदर्शन वाले कम्प्युटर गणना कार्य करते हैं। यह सर्वर सेंसर वाले क्षेत्रों में 5 से अधिक तीव्रता के भूकम्प का पता चलते ही सार्वजनिक चेतावनी देता है। भूकम्प के केंद्र से दूरी बढ़ने के साथ चेतावनी का समय बदलता है।

मोबाइल ऐप की विशिष्टता बताते हुए प्रोजेक्ट के प्रधान परीक्षक प्रोफेसर कमल के अनुसार यह ऐप भूकम्प के दौरान दुर्भाग्यवश फंस गए लोगों के स्थान का रिकॉर्ड भी रखता है और आपदा सहायता बल को इसकी सूचना देता है।

शुरुआती समय में आईआईटी रुड़की ने राज्य के भूकंप की पूर्व चेतावानी देने के लिए दो प्रमुख शहरों देहरादून) में सार्वजनिक सायरन लगाने में उत्तराखंड सरकार की मदद की लेकिन पूरे राज्य (और हल्द्वानी को यह चेतावनी देने के लिए समय और संसाधन की कमी देखते हुए संस्थान ने स्मार्टफोन एप्लिकेशन को एक बेहतर विकल्प के तौर पर चुना क्योंकि आज अधिक से अधिक लोगों के पास स्मार्टफोन है और इसके माध्यम से चेतावनीजनता तक तुरंत पहुंचाई जा सकती है।

'उत्तराखंड भूकम्प अलर्ट' मोबाइल ऐप का प्रोजेक्ट उत्तराखंड राज्य आपदा प्रबंधन प्राधिकरण (यूएसडीएमए) (इंडिया साइंस वायर) ने स्पांसर किया है।

WEBDUNIA
हिंदी

भूकंप आने पर ‘अलर्ट’ करेगा यह ऐप, फिलहाल उत्तराखंड में करेगा काम

गूगल प्ले-स्टोर पर मौजूद 'उत्तराखंड भूकम्प अलर्ट' ऐप

Last Updated: गुरुवार, 5 अगस्त 2021 (15:45 IST)

नई दिल्ली, भूकम्प को लेकर उत्तराखंड विशेष रूप से संवेदनशील क्षेत्र माना जाता है जहां भूकम्प का अंदेशा हमेशा बना रहता है।

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान रुड़की ने भूकंप की पूर्व चेतावनी देने वाला एक मोबाइल ऐप (आईआईटी) लॉन्च किया है। (उत्तराखंड भूकम्प अलर्ट)

भूकम्प की पूर्व चेतावनी देने वाला यह देश का पहला ऐप है। यह मोबाइल एप्लिकेशन एंड्रॉयड और आईओएस दोनों प्लेटफॉर्म के लिए उपलब्ध हैं।

भूकम्प पूर्व चेतावनी प्राप्त करने के लिए यूजर को केवल यह ऐप इंस्टॉल करना है और इंस्टॉलेशन के दौरान कुछ जरूरी जानकारियां दर्ज करनी है। ऐप में ज्ञानवर्धक वीडियो हैं, जो भूकम्प के दौरान जीवन रक्षा की सिलसिलेवार जानकारी देते हैं।

यह ऐप उत्तराखंड में 5 से अधिक तीव्रता के विनाशकारी भूकम्पों की ही पूर्व चेतावनी देता है। ऐप पर चेतावनी के संकेत इंटरनेट के माध्यम से पहुंचते हैं। इसलिए यूजर को इंटरनेट से जुड़े रहना होगा। हालांकि ऐप डेटा का इस्तेमाल केवल भूकम्प की सूचना देने के दौरान करता है।

यह ऐप भूकम्प की रियल टाइम चेतावनी देता है। इसकी मदद से भूकम्प के झटकों का आरंभ में ही पता लग सकता है और जोर के झटके आने से पहले ही सार्वजनिक चेतावनी द्वारा लोगों को आगह किया जा सकता है। इस भूकम्प पूर्व चेतावनी तंत्र का भौतिक आधार भूकम्प की तरंगों की गति है जो फॉल्ट लाइन में गति से स्ट्रेस रिलीज पर फैलती है।

धरती का जोर से हिलना तरंगों के कारण होता है जिसकी गति शुरुआती तरंगों की आधी होती है और जो विद्युत चुम्बकीय संकेतों से बहुत धीमी गति से बढ़ती है। यह सिस्टम इसी का लाभ लेता है।

आईआईटी रुड़की के निदेशक प्रोफेसर अजीत के चतुर्वेदी कहते हैं -"मुझे यह बताते हुए बहुत गर्व हो रहा है कि आईआईटीआर ने भूकंप की पूर्व चेतावनी देने वाला मोबाइल ऐप तैयार किया है, जो किसी भी तरह के जानमाल के नुकसान को रोकने के लिए भूकंप की घटना और उसके आने के अपेक्षित समय और तीव्रता की तत्काल सूचना देता है। यह परियोजना विशेष रूप से उत्तराखंड सरकार के साथ सहयोगात्मक रूप से शुरू की गई थी, क्योंकि यह क्षेत्र भूकंपीय गतिविधियों से ग्रस्त है"

इस परियोजना के तहत उत्तराखंड राज्य के गढ़वाल और कुमाऊं क्षेत्र के ऊंचे इलाकों में सेंसर लगाए गए हैं। भूकम्प के डेटा आईआईटी रुड़की के ईईडब्ल्यू सिस्टम प्रयोगशाला, सीओईडीएमएम स्थित सेंट्रल सर्वर में आते हैं।

डेटा स्ट्रीम करने के लिए तीव्र गति दूरसंचार का उपयोग किया जाता है जबकि उच्च प्रदर्शन वाले कम्प्युटर गणना कार्य करते हैं। यह सर्वर सेंसर वाले क्षेत्रों में 5 से अधिक तीव्रता के भूकम्प का पता चलते ही सार्वजनिक चेतावनी देता है। भूकम्प के केंद्र से दूरी बढ़ने के साथ चेतावनी का समय बदलता है।

मोबाइल ऐप की विशिष्टता बताते हुए प्रोजेक्ट के प्रधान परीक्षक प्रोफेसर कमल के अनुसार यह ऐप भूकम्प के दौरान दुर्भाग्यवश फंस गए लोगों के स्थान का रिकॉर्ड भी रखता है और आपदा सहायता बल को इसकी सूचना देता है।

शुरुआती समय में आईआईटी रुड़की ने राज्य के भूकंप की पूर्व चेतावनी देने के लिए दो प्रमुख शहरों देहरादून)
ज्य को यह में सार्वजनिक सायरन लगाने में उत्तराखंड सरकार की मदद की लेकिन पूरे रा (और हल्द्वानी
चेतावनी देने के लिए समय और संसाधन की कमी देखते हुए संस्थान ने स्मार्टफोन एप्लिकेशन को एक बेहतर
विकल्प के तौर पर चुना क्योंकि आज अधिक से अधिक लोगोंके पास स्मार्टफोन है और इसके माध्यम से
चेतावनी जनता तक तुरंत पहुंचाई जा सकती है।

'उत्तराखंड भूकम्प अलर्ट' मोबाइल ऐप का प्रोजेक्ट उत्तराखंड राज्य आपदा प्रबंधन प्राधिकरण ने (यूएसडीएमए) स्पांसर किया है। ***(इंडिया साइंस वायर(***

DownToEarth | डाउन टू अर्थ

New polyhouse technology to help cultivate off-season crops

By India Science Wire
Published: Thursday 05 August 2021

A polyhouse is a specially constructed structure like a building where specialised polythene sheet is used as a covering material under which crops can be grown in partially or fully controlled climatic conditions. It is covered with a transparent material as to permit the entry of natural light. Polyhouses are also helpful in reducing threats such as extreme heat and pest attacks in crops.

Harish Hirani, director of Indian Council of Scientific and Industrial Research’s Central Mechanical Engineering Research Institute (CSIR-CMERI), Durgapur, recently inaugurated a “naturally ventilated polyhouse facility” and laid the foundation stone of “retractable roof polyhouse” its Ludhiana centre. With rapidly rising temperatures due to mounting greenhouse gases in the atmosphere from human

activities, crops are increasingly facing both threats — extreme heat and pest attacks — simultaneously, he said.

This is especially important for crops growing in the open field with no protection from the weather, and therefore its yield, quality, and crop maturity timings are changed. A combination of open field conditions and conventional greenhouse conditions is a more robust way to deal with climate change and associates problems in the future. Crop losses in India due to insect pests is about 15 per cent at present and this loss may increase as climate change lowers the plant defense system against insects and pests.

Conventional greenhouses have a stationary roof to reduce the effect of weather anomalies and pests. However, there are still disadvantages due to roof covering which sometimes lead to excessive heat and insufficient light (early morning). Besides this, they are also prone to insufficient levels of carbon dioxide, transpiration and water stress.

“Retractable Roof Polyhouse Technology will have an automatic retractable roof which will be operated based on weather conditions and crop requirements from the conditional database using PLC software. This ongoing development will be useful in our country with its 15 different agro-climatic zones and will help farmers to cultivate off-season crops that can fetch higher value and income”, Hirani said.

Jagdish Manikrao, a senior scientist leading the research team on the development of this technology, claimed the retractable roof would be used to manipulate sunlight quantity, quality & duration, water stress, humidity, carbon dioxide levels as well as crop and soil temperatures. (**ISW**)

EET INDIA

Polyhouse Technology to Help Cultivate Off-season Crops

Article By : India Science Wire

Category : AI | 2021-08-06

The polyhouse technology will have an automatic retractable roof operated based on weather conditions and crop requirements from the conditional database using PLC software.

A polyhouse is a specially constructed structure like a building where specialized polythene sheet is used as a covering material under which the crops can be grown in partially or fully controlled

climatic conditions. It is covered with a transparent material as to permit the entry of natural light. Polyhouses are also helpful in reducing threats such as extreme heat and pest attacks in crops.

Professor (Dr.) Harish Hirani, Director, CSIR- CMERI, Durgapur recently inaugurated a "naturally ventilated polyhouse facility" and laid the foundation stone of "retractable roof polyhouse" at CSIR-Central Mechanical Engineering Research Institute (CMERI)'s regional center based in Ludhiana. Briefing about the technology, Prof. Hirani said that with rapidly rising temperatures due to mounting greenhouse gases in the atmosphere from human activities, crops are increasingly facing both threats—extreme heat and pest attacks—simultaneously.

This is especially important for crops growing in the open field with no protection from the weather, and therefore its yield, quality, and crop maturity timings are changed. A combination of open field conditions and conventional greenhouse conditions is a more robust way to deal with climate change and associates problems in the future. Crop losses in India due to insect pests is about 15% at present and this loss may increase as climate change lowers the plant defense system against insects and pests.

Conventional greenhouses have a stationary roof to reduce the effect of weather anomalies and pests. However, there are still disadvantages due to roof covering which sometimes lead to excessive heat and insufficient light (early morning). Besides this, they are also prone to insufficient levels of CO_2, transpiration and water stress.

"Retractable Roof Polyhouse Technology will have an automatic retractable roof which will be operated based on weather conditions and crop requirements from the conditional database using PLC software. This ongoing development will be useful in our country with its 15 different agro-climatic zones and will help farmers to cultivate off-season crops that can fetch higher value and income," says Dr. Hirani.

Jagdish Manikrao, Senior Scientist, who is leading the research team on the development of this technology, explained that the retractable roof will be used to manipulate sunlight quantity, quality and duration, water stress, humidity, carbon-dioxide levels, and crop and soil temperatures. Dr.

Pradeep Rajan, Sr. Principal Scientist, Head, Farm Machinery and Precision Agriculture, further elaborated that this structure is being developed in collaboration with CSIR-IHBT, Palampur and is in the process of integrating artificial intelligence (AI) in automating the Polyhouse based on the crop and weather requirements and providing an IoT-enabled farmer friendly user interface.

The director also briefed that as the scientific experimental data on the advantages of the new polyhouse system are lacking, therefore, horticultural crops will be cultivated in both naturally ventilated polyhouse and retractable roof polyhouse for comparing the crop production and produce quality. “With installation of naturally ventilated polyhouse and retractable roof polyhouse side by side, we can get the required scientific data and by analyzing the results we can enhance productivity,” said Dr. Hirani.

The developed facility will be used as a demonstration farm for the farmers.

DELHI POST
Politics | Democracy | Development

New Polyhouse Technology to Help Cultivate Off-Season Crops

By **Team DP** On **Aug 8, 2021**

New Delhi, Aug 05 (India Science Wire): A polyhouse is a specially constructed structure like a building where specialized polythene sheet is used as a covering material under which the crops can be grown in partially or fully controlled climatic conditions. It is covered with a transparent material as to permit the entry of natural light. Polyhouses are also helpful in reducing threats such as extreme heat and pest attacks in crops.

Professor (Dr.) Harish Hirani, Director, CSIR- CMERI, Durgapur recently inaugurated a “naturally ventilated polyhouse facility” and laid the foundation stone of “retractable roof polyhouse” at CSIR-Central Mechanical Engineering Research Institute (CMERI)’s regional centre based in Ludhiana. Briefing about the technology, Prof. Hirani said that with rapidly rising temperatures due to mounting greenhouse gases in the atmosphere

from human activities, crops are increasingly facing both threats – extreme heat and pest attacks – simultaneously.

This is especially important for crops growing in the open field with no protection from the weather, and therefore its yield, quality, and crop maturity timings are changed. A combination of open field conditions and conventional greenhouse conditions is a more robust way to deal with climate change and associates problems in the future. Crop losses in India due to insect pests is about 15% at present and this loss may increase as climate change lowers the plant defense system against insects & pests.

Conventional greenhouses have a stationary roof to reduce the effect of weather anomalies and pests. However, there are still disadvantages due to roof covering which sometimes lead to excessive heat and insufficient light (early morning). Besides this, they are also prone to insufficient levels of CO_2, transpiration and water stress.

“Retractable Roof Polyhouse Technology will have an automatic retractable roof which will be operated based on weather conditions and crop requirements from the conditional database using PLC software. This ongoing development will be useful in our country with its 15 different agro-climatic zones and will help farmers to cultivate off-season crops that can fetch higher value and income”, says Dr Hirani.

Mr. Jagdish Manikrao, Senior Scientist, who is leading the research team on the development of this technology, explained that the retractable roof will be used to manipulate sunlight quantity, quality & duration, water stress, humidity, carbon-di-oxide levels, and crop & soil temperatures. Dr. Pradeep Rajan, Sr. Principal Scientist, Head, Farm Machinery and Precision Agriculture further elaborated that this structure is being developed in collaboration with CSIR-IHBT, Palampur and is in the process of integrating Artificial Intelligence in automating the Polyhouse based on the crop and weather requirements and providing an IoT enabled farmer friendly user interface.

The Director, also briefed that as the scientific experimental data on the advantages of the new polyhouse system are lacking, therefore horticultural crops will be cultivated in both naturally ventilated polyhouse and retractable roof polyhouse for comparing the crop production and produce quality. With installation of naturally ventilated polyhouse and retractable roof polyhouse side by side, we can get the required scientific data and by analyzing the results we can enhance productivity. The developed facility will be used as a demonstration farm for the farmers. (India Science Wire)

Voice of the Nation

ORGANISER

New polyhouse technology to help cultivate off-season crops

WEBDESKAug 06, 2021, 08:57 AM IST

With rapidly rising temperatures due to mounting greenhouse gases in the atmosphere from human activities, crops are increasingly facing both threats - extreme heat and pest attacks.

New Delhi: A polyhouse is a specially constructed structure like a building where a specialized polythene sheet is used as a covering material under which the crops can be grown in partially or fully controlled climatic conditions. It is covered with transparent material to permit the entry of natural light. Polyhouses are also helpful in reducing threats such as extreme heat and pest attacks in crops.

Professor (Dr.) Harish Hirani, Director, CSIR- CMERI, Durgapur, recently inaugurated a "naturally ventilated polyhouse facility" and laid the foundation stone of "retractable roof polyhouse" at CSIR-Central Mechanical Engineering Research Institute (CMERI)'s a regional centre based in Ludhiana. Briefing about the technology, Prof. Hirani said that with rapidly rising temperatures due to mounting greenhouse gases in the atmosphere from human activities, crops are increasingly facing both threats - extreme heat and pest attacks - simultaneously.

This is especially important for crops growing in the open field with no protection from the weather, and therefore, its yield, quality, and crop maturity timings are changed. A combination of open field conditions and conventional greenhouse conditions is a more robust way to deal with climate change and associates problems in the future. Crop losses in India due to insect pests is about 15% at present, and this loss may increase as climate change lowers the plant defence system against insects & pests.

Conventional greenhouses have a stationary roof to reduce the effect of weather anomalies and pests. However, there are still disadvantages due to roof covering, which sometimes lead to excessive heat and insufficient light (early morning). Besides this, they are also prone to insufficient levels of CO_2, transpiration and water stress.

"Retractable Roof Polyhouse Technology will have an automatic retractable roof which will be operated based on weather conditions and crop requirements from the conditional database using PLC software. This ongoing development will be useful in our country with its 15 different agro-climatic zones and will help farmers to cultivate off-season crops that can fetch higher value and income", says Dr Hirani.

Mr. Jagdish Manikrao, Senior Scientist, who is leading the research team on the development of this technology, explained that the retractable roof would be used to manipulate sunlight quantity, quality & duration, water stress, humidity, carbon-di-oxide levels, and crop & soil temperatures. Dr. Pradeep Rajan, Sr. Principal Scientist, Head, Farm Machinery and Precision Agriculture, further elaborated that this structure is being developed in collaboration with CSIR-IHBT, Palampur and is in the process of integrating Artificial Intelligence in

automating the Polyhouse based on the crop and weather requirements and providing an IoT enabled farmer-friendly user interface.

The Director also briefed that as the scientific experimental data on the advantages of the new polyhouse system are lacking. Therefore horticultural crops will be cultivated in both naturally ventilated polyhouse and retractable roof polyhouse for comparing the crop production and produce quality. With the installation of naturally ventilated polyhouse and retractable roof polyhouse side by side, we can get the required scientific data, and by analyzing the results, we can enhance productivity. The developed facility will be used as a demonstration farm for the farmers.

Courtesy: India Science Wire

New polyhouse technology to help cultivate off-season crops

Conventional greenhouses have disadvantages due to roof covering which sometimes lead to excessive heat and insufficient light (early morning). Besides this, they are also prone to insufficient levels of CO_2, transpiration and water stress

By **BioVoice News Desk** - August 6, 2021

New Delhi: A polyhouse is a specially constructed structure like a building where specialized polythene sheet is used as a covering material under which the crops can be grown in partially or fully controlled climatic conditions. It is covered with a transparent material as to permit the entry of natural light. Polyhouses are also helpful in reducing threats such as extreme heat and pest attacks in crops.

Professor (Dr.) Harish Hirani, Director, CSIR- CMERI, Durgapur recently inaugurated a "naturally ventilated polyhouse facility" and laid the foundation stone of "retractable roof polyhouse" at CSIR-Central Mechanical Engineering Research Institute (CMERI)'s regional centre based in Ludhiana.Briefing about the technology, Prof. Hirani said that with rapidly rising temperatures due to mounting greenhouse gases in the atmosphere from human activities, crops are increasingly facing both threats – extreme heat and pest attacks – simultaneously.

This is especially important for crops growing in the open field with no protection from the weather, and therefore its yield, quality, and crop maturity timings are changed. A combination of open field conditions and conventional greenhouse conditions is a more robust way to deal with climate change and associates problems in the future. Crop losses in India due to insect pests is about 15% at present and this loss may increase as climate change lowers the plant defense system against insects & pests.

Conventional greenhouses have a stationary roof to reduce the effect of weather anomalies and pests. However, there are still disadvantages due to roof covering which sometimes lead to excessive heat and insufficient light (early morning). Besides this, they are also prone to insufficient levels of CO_2, transpiration and water stress.

"Retractable Roof Polyhouse Technology will have an automatic retractable roof which will be operated based on weather conditions and crop requirements from the conditional database using PLC software. This ongoing development will be useful in our country with its 15 different agro-climatic zones and will help farmers to cultivate off-season crops that can fetch higher value and income", says Dr Hirani.

Mr. Jagdish Manikrao, Senior Scientist, who is leading the research team on the development of this technology, explained that the retractable roof will be used to manipulate sunlight quantity, quality & duration, water stress, humidity, carbon-di-oxide levels, and crop & soil temperatures. Dr. Pradeep Rajan, Sr. Principal Scientist, Head, Farm Machinery and Precision Agriculture further elaborated that this structure is being developed in collaboration with CSIR-IHBT, Palampur and is in the process of integrating Artificial Intelligence in automating the Polyhouse based on the crop and weather requirements and providing an IoT enabled farmer friendly user interface.

The Director, also briefed that as the scientific experimental data on the advantages of the new polyhouse system are lacking, therefore horticultural crops will be cultivated in both naturally ventilated polyhouse and retractable roof polyhouse for comparing the crop production and produce quality. With installation of naturally ventilated polyhouse and retractable roof polyhouse side by side, we can get the required scientific data and by analyzing the results we can enhance productivity. The developed facility will be used as a demonstration farm for the farmers.

(India Science Wire)

Indus Scrolls
Indian to the core

New polyhouse technology to help cultivate off-season crops

By **India Science Wire** - August 6, 2021

A polyhouse is a specially constructed structure like a building where specialized polythene sheet is used as a covering material under which the crops can be grown in partially or fully controlled climatic conditions. It is covered with a transparent material as to permit the entry of natural light. Polyhouses are also helpful in reducing threats such as extreme heat and pest attacks in crops.

Professor (Dr.) Harish Hirani, Director, CSIR- CMERI, Durgapur recently inaugurated a “naturally ventilated polyhouse facility” and laid the foundation stone of “retractable roof polyhouse” at CSIR-Central Mechanical Engineering Research Institute (CMERI)’s regional centre based in Ludhiana.Briefing about the technology, Prof. Hirani said that with rapidly rising temperatures due to mounting greenhouse gases in the atmosphere from human activities, crops are increasingly facing both threats – extreme heat and pest attacks – simultaneously.

This is especially important for crops growing in the open field with no protection from the weather, and therefore its yield, quality, and crop maturity timings are changed. A combination of open field conditions and conventional greenhouse conditions is a more robust way to deal with climate change and associates problems in the future. Crop losses in India due to insect pests is about 15% at present and this loss may increase as climate change lowers the plant defense system against insects & pests.

Conventional greenhouses have a stationary roof to reduce the effect of weather anomalies and pests. However, there are still disadvantages due to roof covering which sometimes lead to excessive heat and insufficient light (early morning). Besides this, they are also prone to insufficient levels of CO_2, transpiration and water stress.

"Retractable Roof Polyhouse Technology will have an automatic retractable roof which will be operated based on weather conditions and crop requirements from the conditional database using PLC software. This ongoing development will be useful in our country with its 15 different agro-climatic zones and will help farmers to cultivate off-season crops that can fetch higher value and income", says Dr Hirani.

Mr. Jagdish Manikrao, Senior Scientist, who is leading the research team on the development of this technology, explained that the retractable roof will be used to manipulate sunlight quantity, quality & duration, water stress, humidity, carbon-di-oxide levels, and crop & soil temperatures. Dr. Pradeep Rajan, Sr. Principal Scientist, Head, Farm Machinery and Precision Agriculture further elaborated that this structure is being developed in collaboration with CSIR-IHBT, Palampur and is in the process of integrating Artificial Intelligence in automating the Polyhouse based on the crop and weather requirements and providing an IoT enabled farmer friendly user interface.

The Director, also briefed that as the scientific experimental data on the advantages of the new polyhouse system are lacking, therefore horticultural crops will be cultivated in both naturally ventilated polyhouse and retractable roof polyhouse for comparing the crop production and produce quality. With installation of naturally ventilated polyhouse and retractable roof polyhouse side by side, we can get the required scientific data and by analyzing the results we can enhance productivity. The developed facility will be used as a demonstration farm for the farmers. (India Science Wire)

New polyhouse technology to help cultivate off-season crops

August 8, 2021

India Science Wire

A polyhouse is a specially constructed structure like a building where specialized polythene sheet is used as a covering material under which the crops can be grown in partially or fully controlled climatic conditions. It is covered with a transparent material as to permit the entry of natural light. Polyhouses are also helpful in reducing threats such as extreme heat and pest attacks in crops.

Professor (Dr.) Harish Hirani, Director, CSIR- CMERI, Durgapur recently inaugurated a "naturally ventilated polyhouse facility" and laid the foundation stone of "retractable roof polyhouse" at CSIR-Central Mechanical Engineering Research Institute (CMERI)'s regional centre based in Ludhiana. Briefing about the technology, Prof. Hirani said that with rapidly rising temperatures due to mounting greenhouse gases in the atmosphere from human activities, crops are increasingly facing both threats – extreme heat and pest attacks – simultaneously.

This is especially important for crops growing in the open field with no protection from the weather, and therefore its yield, quality, and crop maturity timings are changed. A combination of open field conditions and conventional greenhouse conditions is a more robust way to deal with climate change and associates problems in the future. Crop losses in India due to insect pests is about 15% at present and this loss may increase as climate change lowers the plant defense system against insects & pests.

Conventional greenhouses have a stationary roof to reduce the effect of weather anomalies and pests. However, there are still disadvantages due to roof covering which sometimes lead to excessive heat and insufficient light (early morning). Besides this, they are also prone to insufficient levels of CO_2, transpiration and water stress.

"Retractable Roof Polyhouse Technology will have an automatic retractable roof which will be operated based on weather conditions and crop requirements from the conditional database using PLC software. This ongoing development will be useful in our country with its 15 different agro-climatic zones and will help farmers to cultivate off-season crops that can fetch higher value and income", says Dr Hirani.

Mr. Jagdish Manikrao, Senior Scientist, who is leading the research team on the development of this technology, explained that the retractable roof will be used to manipulate sunlight quantity, quality & duration, water stress, humidity, carbon-di-oxide

levels, and crop & soil temperatures. Dr. Pradeep Rajan, Sr. Principal Scientist, Head, Farm Machinery and Precision Agriculture further elaborated that this structure is being developed in collaboration with CSIR-IHBT, Palampur and is in the process of integrating Artificial Intelligence in automating the Polyhouse based on the crop and weather requirements and providing an IoT enabled farmer friendly user interface.

The Director, also briefed that as the scientific experimental data on the advantages of the new polyhouse system are lacking, therefore horticultural crops will be cultivated in both naturally ventilated polyhouse and retractable roof polyhouse for comparing the crop production and produce quality. With installation of naturally ventilated polyhouse and retractable roof polyhouse side by side, we can get the required scientific data and by analyzing the results we can enhance productivity. The developed facility will be used as a demonstration farm for the farmers.

RD TIMES.in

New polyhouse technology to help cultivate off-season crops

By **RD Times Online** - August 7, 2021

New Delhi: A polyhouse is a specially constructed structure like a building where specialized polythene sheet is used as a covering material under which the crops can be grown in partially or fully controlled climatic conditions. It is covered with a transparent material as to permit the entry of natural light. Polyhouses are also helpful in reducing threats such as extreme heat and pest attacks in crops.

Professor (Dr.) Harish Hirani, Director, CSIR- CMERI, Durgapur recently inaugurated a "naturally ventilated polyhouse facility" and laid the foundation stone of "retractable roof polyhouse" at CSIR-Central Mechanical Engineering Research Institute (CMERI)'s regional centre based in Ludhiana.Briefing about the technology, Prof. Hirani said that with rapidly rising temperatures due to mounting greenhouse gases in the atmosphere from human activities, crops are

increasingly facing both threats – extreme heat and pest attacks – simultaneously.

This is especially important for crops growing in the open field with no protection from the weather, and therefore its yield, quality, and crop maturity timings are changed. A combination of open field conditions and conventional greenhouse conditions is a more robust way to deal with climate change and associates problems in the future. Crop losses in India due to insect pests is about 15% at present and this loss may increase as climate change lowers the plant defense system against insects & pests.

Conventional greenhouses have a stationary roof to reduce the effect of weather anomalies and pests. However, there are still disadvantages due to roof covering which sometimes lead to excessive heat and insufficient light (early morning). Besides this, they are also prone to insufficient levels of CO_2, transpiration and water stress.

"Retractable Roof Polyhouse Technology will have an automatic retractable roof which will be operated based on weather conditions and crop requirements from the conditional database using PLC software. This ongoing development will be useful in our country with its 15 different agro-climatic zones and will help farmers to cultivate off-season crops that can fetch higher value and income", says Dr Hirani.

Mr. Jagdish Manikrao, Senior Scientist, who is leading the research team on the development of this technology, explained that the retractable roof will be used to manipulate sunlight quantity, quality & duration, water stress, humidity, carbon-di-oxide levels, and crop & soil temperatures. Dr. Pradeep Rajan, Sr. Principal Scientist, Head, Farm Machinery and Precision Agriculture further elaborated that this structure is being developed in collaboration with CSIR-IHBT, Palampur and is in the process of integrating Artificial Intelligence in automating the Polyhouse based on the crop and weather requirements and providing an IoT enabled farmer friendly user interface.

The Director, also briefed that as the scientific experimental data on the advantages of the new polyhouse system are lacking, therefore horticultural crops will be cultivated in both naturally ventilated polyhouse and retractable roof polyhouse for comparing the crop production and produce quality. With installation of naturally ventilated polyhouse and retractable roof polyhouse side by side, we can get the required scientific data and by analyzing the results we can enhance productivity. The developed facility will be used as a demonstration farm for the farmers. (India Science Wire)

New polyhouse technology to help cultivate off-season crops

Editor Aug 8, 2021 - 08:58

Durgapur Harish Hirani, Director, CSIR CMERI has recently inaugurated a 'naturally ventilated facility' and laid foundation stones of a'retractable roof polyhouse at CSIR Central Mechanical Engineering Research Institute.

These polyhouse constructed structure under a polythene sheet, the crops can grow in fully controlled climates. It is transparently covered to permit natural light to pass through. Polyhouses help reduce the risk of pest attacks or extreme heat on crops.

This is especially important for crops grown in open areas without any protection from weather. It can change the crop's yield, quality, and maturity

timings. Combining open field and conventional greenhouse conditions can be more effective in dealing with climate change. India currently loses 15% of its crop to insects. This could increase as climate warming lowers the plant defenses against pests & insects.

To minimize the effects of pests and weather anomalies, traditional greenhouses have a permanent roof. The downsides to roof cover can still be problematic. It can lead to excessive heat, insufficient light (early dawn), and even extreme heat. They can also be susceptible to low levels of CO_2, transpiration or water stress.

"Retractable Polyhouse Technology will use PLC software to create an automatic retractable roofing system. It will function based off weather conditions and crop demands. This ongoing technology will be very useful for farmers in India, where there are 15 different agroclimatic zones.

Senior Scientist, Mr. Jagdish MANITRAO, explained that this retractable roof technology will be used to alter sunlight quantity, quality & length, water stress levels, humidity, carbon dioxide levels, crop & soil temperatures, and even temperature. Dr. Pradeep Ragan, Sr. Dr. Pradeep Rajan (Sr.) is the Principal Scientist and Head, Farm Machinery and Precision Agriculture. He further stated that the Polyhouse was being built in collaboration CSIR IHBT Palampur and that Artificial Intelligence is being used to automate it based on crop and weather conditions and provide an IoT-enabled farmer friendly user interface.

The Director also informed us that because there are not enough experimental scientific data about the advantages of the new system, we will have horticultural crops grown in both the naturally ventilated or retractable roof polyhouse. This will allow us to compare crop yield and quality. Installing a natural ventilated polyhouse with a retractable rooftop polyhouse side-by side will give us the required scientific information. By analysing these results, we can increase productivity. The new facility will serve as a demonstration garden for farmers. (India Science Wire).

प्रभासाक्षी

पूर्वोत्तर में वैज्ञानिक शोध की अलख जगाएंगे सीडीआरआई और नाइपर

इंडिया साइंस वायर Aug 06, 2021 16:30

नाइपरगुवाहाटी-, फार्मास्यूटिकल्स विभाग (डीओपी), रसायन और उर्वरक मंत्रालय, भारत सरकार का पूर्वोत्तर में वर्ष 2008 में स्थापित पहला फार्मा शिक्षा और अनुसंधान संस्थान है। वहीं, सीएसआईआर-सीडीआरआई विगत सात दशकों से देश का एक अग्रणी औषधि अनुसंधान संस्थान है।

वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद (सीएसआईआर)की लखनऊ स्थित प्रयोगशाला सेंट्रल ड्रग रिसर्च इंस्टीट्यूट और गुवाहाटी स्थित नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ फार्मास्यूटिकल एजुकेशन ऐंड रिसर्च (सीडीआरआई) अब पूर्वोत्तर के विकास के लिए साथ मिलकर काम करेंगे। पूर्वोत्तर भारत में अनुसंधान एवं विकास (नाइपर) परियोजनाओं को बढ़ावा देने और मानव संसाधन विकास के लिए दोनों संस्थानों के बीच एक समझौते पर हस्ताक्षर किए गए हैं। इस समझौते पर नाइपर के निदेशक डॉ यूमूर्ति और सीडीआरआई के निदेशक .एन.एस. प्रोफेसर तापस कुंडू द्वारा हस्ताक्षर किए गए हैं।

नाइपरगुवाहाटी-, फार्मास्यूटिकल्स विभाग (डीओपी), रसायन और उर्वरक मंत्रालय, भारत सरकार का पूर्वोत्तर में वर्ष 2008 में स्थापित पहला फार्मा शिक्षा और अनुसंधान संस्थान है। वहीं, सीएसआईआर-सीडीआरआई विगत सात दशकों से देश का एक अग्रणी औषधि अनुसंधान संस्थान है। सीडीआरआई में जीएलपी सुविधाओं सहित एसएआर, क्यूएसएआर, कॉम्बिनेटरियल सिंथेसिस, जैव सूचना विज्ञान, प्रोटिओमिक्स, जीनोमिक्स, नियामक विषविज्ञान-, फार्माकोलॉजी, फार्माकोकाइनेटिक्स आदि की महत्वपूर्ण सुविधाओं सहित नयी दवाओं के विकास हेतु कांसेप्ट से कमर्शियलाइजेशन तक सभी बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध हैं।

इन दोनों संस्थानों के बीच किए गए ताजा समझौते का एक प्रमुख उद्देश्य संयुक्त रूप से पारस्परिक हित के सहयोगी अनुसंधान कार्यक्रमों के संचालन के लिए विशिष्ट क्षेत्रों की पहचान, छात्रों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों की रूपरेखा तैयार कर उनका आयोजन, फैकल्टी एक्सचेंज प्रोग्राम्स का संचालन और इन्स्ट्रूमेंटेशन सुविधाओं को साझा करना है। इसके अलावा, इस अनुबंध के अनुसार चयनित अनुसंधान परियोजना प्रस्तावों को संयुक्त रूप से डीबीटी, सीएसआईआर, डीएसटी, आईसीएमआर या किसी अन्य फंडिंग एजेंसियों को अतिरिक्त फंडिंग के लिए प्रस्तुत किया जा सकता है।

सीएसआईआर सीडीआरआई के निदेशक प्रोफेसर तापस कुमार कुंडू ने कहा है कि-"दोनों संस्थानों के मध्य यह अनुबंध, अकादमिकऔर बौद्धिक (वैल्यू एडिशन) वैज्ञानिक उत्थान हेतु ज्ञान साझा करने तथा मूल्यवर्द्धन/ साइ) भागीदारींटिफिक इनपुटनिभाएगा। इस पहल से के माध्यम से महत्वपूर्ण भूमिका (, समृद्ध जैव-विविधता वाले पूर्वोत्तर भारत के हितग्राहियों दूसरे के साथ सहयोग करने का अवसर -को एक (स्टेकहोल्डर्स) मिलेगा और अंत में वे पारस्परिक रूप से विज्ञान की बेहतरी में सहभागिता कर सकते हैं।"

(इंडिया साइंस वायर(

WEBDUNIA
हिंदी

पूर्वोत्तर में वैज्ञानिक शोध की अलख जगाएंगे सीडीआरआई और नाइपर

पुनः संशोधित शनिवार, 7 अगस्त 2021 (13:48 IST)

नई दिल्ली, वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद की लखनऊ स्थित (सीएसआईआर) और गुवाहाटी स्थित नेशनल इंस्टीट्यूट (सीडीआरआई) प्रयोगशाला सेंट्रल ड्रग रिसर्च इंस्टीट्यूट ऑफ फार्मास्यूटिकल एजुकेशन ऐंड रिसर्च विकास के लिए साथ मिलकर अब पूर्वोत्तर के (नाइपर) काम करेंगे।

पूर्वोत्तर भारत में अनुसंधान एवं विकास परियोजनाओं को बढ़ावा देने और मानव संसाधन विकास के लिए दोनों संस्थानों के बीच बुधवार को एक समझौते पर हस्ताक्षर किए गए हैं।

इस समझौते पर नाइपर के निदेशक डॉ यूरआई के निदेशक प्रोफेसर मूर्ति और सीडीआ .एन.एस. तापस कुंडू द्वारा हस्ताक्षर किए गए हैं।

नाइपरगुवाहाटी-, फार्मास्यूटिकल्स विभाग (डीओपी), रसायन और उर्वरक मंत्रालय, भारत सरकार का पूर्वोत्तर में वर्ष 2008 में स्थापित पहला फार्मा शिक्षा और अनुसंधान संस्थान है। वहीं, सीएसआईआरविगत सात दशकों से देश का एक अग्रणी औषधि अनुसंधान संस्थान सीडीआरआई- है। सीडीआरआई में जीएलपी सुविधाओं सहित एसएआर, क्यूएसएआर, कॉम्बिनेटरियल सिंथेसिस, जैव सूचना विज्ञान, प्रोटिओमिक्स, जीनोमिक्स, नियामक विषविज्ञान-, फार्माकोलॉजी, फार्माकोकाइनेटिक्स आदि की महत्वपूर्ण सुविधाओं सहित नयी दवाओं के विकास हेतु कांसेप्ट से कमर्शियलाइजेशन तक सभी बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध हैं।

इन दोनों संस्थानों के बीच किए गए ताजा समझौते का एक प्रमुख उद्देश्य संयुक्त रूप से पारस्परिक हित के सहयोगी अनुसंधान कार्यक्रमों के संचालन के लिए विशिष्ट क्षेत्रों की पहचान, छात्रों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों की रूपरेखा तैयार कर उनका आयोजन, फैकल्टी एक्सचेंज प्रोग्राम्स का संचालन और इन्स्ट्रूमेंटेशन सुविधाओं को साझा करना है।

इसके अलावा, इस अनुबंध के अनुसार चयनित अनुसंधान परियोजना प्रस्तावों को संयुक्त रूप से डीबीटी, सीएसआईआर, डीएसटी, आईसीएमआर या किसी अन्य फंडिंग एजेंसियों को अतिरिक्त फंडिंग के लिए प्रस्तुत किया जा सकता है।

सीएसआईआर सीडीआरआई के निदेशक प्रोफेसर तापस कुमार कुंडू ने कहा है कि-“दोनों संस्थानों के मध्य यह अनुबंध, अकादमिकवैल्यू) साझा करने तथा मूल्यवर्द्धन वैज्ञानिक उत्थान हेतु ज्ञान/ के माध्यम से महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। (साइंटिफिक इनपुट) और बौद्धिक भागीदारी (एडिशन

इस पहल से, समृद्ध जैवदू-को एक (स्टेकहोल्डर्स) विविधता वाले पूर्वोत्तर भारत के हितग्राहियों-सरे के साथ सहयोग करने का अवसर मिलेगा और अंत में वे पारस्परिक रूप से विज्ञान की बेहतरी में सहभागिता कर सकते हैं।” ***(इंडिया साइंस वायर(***

दी इंडियन बुलेटिन

पूर्वोत्तर में वैज्ञानिक शोध की अलख जगाएंगे सीडीआरआई और नाइपर

August 7, 2021

समझौता प्रदान करते हुए डॉ-पत्र का आदान-यू(दाएं) और प्रोफेसर तापस कुंडू (बाएं) मूर्ति.एन.एस.

नई दिल्ली: वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद की लखनऊ स्थित प्रयोगशाला सेंट्रल ड्रग (सीएसआईआर) और गुवाहाटी स्थित नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ फार्मास्यूटिकल एजुकेशन ऐंड(सीडीआरआई) रिसर्च इंस्टीट्यूट रिसर्चम करेंगे। पूर्वोत्तर भारत में अनुसंधान एवं विकास अब पूर्वोत्तर के विकास के लिए साथ मिलकर का (नाइपर) परियोजनाओं को बढ़ावा देने और मानव संसाधन विकास के लिए दोनों संस्थानों के बीच बुधवार को एक समझौते पर हस्ताक्षर किए गए हैं। इस समझौते पर नाइपर के निदेशकडॉ यूमूर्तिऔर सीडीआरआई के निदेशक .एन.एस. डू द्वारा हस्ताक्षर किए गए हैं।प्रोफेसर तापस कुं

नाइपरगुवाहाटी-, फार्मास्यूटिकल्स विभाग (डीओपी), रसायन और उर्वरक मंत्रालय, भारत सरकार कापूर्वोत्तर मेंवर्ष 2008 में स्थापित पहला फार्मा शिक्षा और अनुसंधान संस्थान है। वहीं, सीएसआईआरसीडीआरआई विगत सात -

णी औषधि अनुसंधान संस्थान है। सीडीआरआई में जीएलपी सुविधाओं सहित एसएआरदशकों से देश का एक अग्र, क्यूएसएआर, कॉम्बिनेटरियल सिंथेसिस, जैव सूचना विज्ञान, प्रोटिओमिक्स, जीनोमिक्स, नियामक विषविज्ञान-, फार्माकोलॉजी, फार्माकोकाइनेटिक्स आदि की महत्वपूर्ण सुविधाओंसहित नयी दवाओं के विकास हेतु कांसेप्ट से कमर्शियलाइजेशन तक सभी बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध हैं।

इन दोनों संस्थानों के बीच किए गए ताजा समझौते का एक प्रमुख उद्देश्य संयुक्त रूप से पारस्परिक हित के सहयोगी अनुसंधान कार्यक्रमों के संचालन के लिए विशिष्ट क्षेत्रों की पहचान, छात्रों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों की रूपरेखा तैयार कर उनका आयोजन, फैकल्टी एक्सचेंज प्रोग्राम्स का संचालन और इन्स्ट्रूमेंटेशन सुविधाओं को साझा करना है। इसके अलावा, इस अनुबंध के अनुसार चयनित अनुसंधान परियोजना प्रस्तावों को संयुक्त रूप से डीबीटी, सीएसआईआर, डीएसटी, आईसीएमआर या किसी अन्य फंडिंग एजेंसियों को अतिरिक्त फंडिंग के लिए प्रस्तुत किया जा सकता है।

सीएसआईआर सीडीआरआई के निदेशक प्रोफेसर तापस कुमार कुंडू ने कहाहै कि-"दोनों संस्थानों के मध्य यह अनुबंध, अकादमिकवैज्ञानिक/ उत्थान हेतु ज्ञान साझा करने तथा मूल्यवर्द्धन और बौद्धिक भागीदारी (शनवैल्यू एडि) के माध्यम से महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। इस पहल से (साइंटिफिक इनपुट),समृद्धजैवविविधता वाले पूर्वोत्तर - दूसरे के साथ सहयोग करने का अवसर-को एक (स्टेकहोल्डर्स) भारतके हितग्राहियों मिलेगा और अंत में वे पारस्परिक रूप से विज्ञान की बेहतरी में सहभागिता कर सकते हैं।"(इंडिया साइंस वायर(

रिपब्लिक न्यूज़इंडिया

पूर्वोत्तर में वैज्ञानिक शोध की अलख जगाएंगे सीडीआरआई और नाइपर

By **Rupesh Dharmik** - August 7, 2021

समझौता(दाएं) और प्रोफेसर तापस कुंडू (बाएं) मूर्ति.एन.एस.ए डॉ यूप्रदान करते हु-पत्र का आदान-

नई दिल्ली: वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद की लखनऊ स्थित (सीएसआईआर) और गुवाहाटी स्थित नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ (सीडीआरआई) प्रयोगशाला सेंट्रल ड्रग रिसर्च इंस्टीट्यूट अब पूर्वोत्तर के विकास के लिए साथ मिलकर काम (नाइपर)फार्मास्यूटिकल एजुकेशन ऐंड रिसर्च करेंगे। पूर्वोत्तर भारत में अनुसंधान एवं विकास परियोजनाओं को बढ़ावा देने और मानव संसाधन विकास के लिए दोनों संस्थानों के बीच बुधवार को एक समझौते पर हस्ताक्षर किए गए हैं। इस

समझौते पर नाइपर के निदेशक डॉ यूमूर्तिऔर सीडीआरआई के निदेशक प्रोफेसर तापस कुंडू .एन.एस. द्वारा हस्ताक्षर किए गए हैं।

नाइपरगुवाहाटी-, फार्मास्यूटिकल्स विभाग (डीओपी), रसायन और उर्वरक मंत्रालय, भारत सरकार कापूर्वोत्तर मेंवर्ष 2008 में स्थापित पहला फार्मा शिक्षा और अनुसंधान संस्थान है। वहीं, सीएसआईआरसीडीआरआई विगत सात दशकों से देश का एक अग्रणी औषधि अनुसंधान सं-स्थान है। सीडीआरआई में जीएलपी सुविधाओं सहित एसएआर, क्यूएसएआर, कॉम्बिनेटरियल सिंथेसिस, जैव सूचना विज्ञान, प्रोटिओमिक्स, जीनोमिक्स, नियामक विषविज्ञान-, फार्माकोलॉजी, फार्माकोकाइनेटिक्स आदि की महत्वपूर्ण सुविधाओंसहित नयी दवाओं के विकास हेतु कांसेप्ट से कमर्शियलाइजेशन तक सभी बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध हैं।

इन दोनों संस्थानों के बीच किए गए ताजा समझौते का एक प्रमुख उद्देश्य संयुक्त रूप से पारस्परिक हित के सहयोगी अनुसंधान कार्यक्रमों के संचालन के लिए विशिष्ट क्षेत्रों की पहचान, छात्रों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों की रूपरेखा तैयार कर उनका आयोजन, फैकल्टी एक्सचेंज प्रोग्राम्स का संचालन और इन्स्ट्रूमेंटेशन सुविधाओं को साझा करना है। इसके अलावा, इस अनुबंध के अनुसार चयनित अनुसंधान परियोजना प्रस्तावों को संयुक्त रूप से डीबीटी, सीएसआईआर, डीएसटी, आईसीएमआर या किसी अन्य फंडिंग एजेंसियों को अतिरिक्त फंडिंग के लिए प्रस्तुत किया जा सकता है।

सीएसआईआर सीडीआरआई के निदेशक प्रोफेसर तापस कुमार कुंडू ने कहाहै कि-“दोनों संस्थानों के मध्य यह अनुबंध, अकादमिक (वैल्यू एडिशन) न हेतु ज्ञान साझा करने तथा मूल्यवर्द्धनवैज्ञानिक उत्था/ और बौद्धिकभागीदारी के माध्यम से महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। इस पहल (साइंटिफिक इनपुट) से,समृद्धजैवदूसरे के साथ सहयोग -को एक (स्टेकहोल्डर्स) विविधता वाले पूर्वोत्तर भारतके हितग्राहियों-गा और अंत में वे पारस्परिक रूप से विज्ञान की बेहतरी में सहभागिता करकरने का अवसर मिले सकते हैं।”(इंडिया साइंस वायर(

पूर्वोत्तर में वैज्ञानिक शोध की अलख जगाएंगे सीडीआरआई और नाइपर

05/08/2021 V3news India

नई दिल्ली, 05 अगस्त वैज्ञानिक तथा औद्योगिक :(इंडिया साइंस वायर)अनुसंधान परिषद की लखनऊ (सीएसआईआर) और गुवाहाटी स्थित नेशनल इंस्टीट्यूट ऑफ फार्मास्यूटिकल (सीडीआरआई) स्थित प्रयोगशाला सेंट्रल ड्रग रिसर्च इंस्टीट्यूट के विकास के लिए साथ मिलकर काम करेंगे। अब पूर्वोत्तर (नाइपर) एजुकेशन ऐंड रिसर्च

पूर्वोत्तर भारत में अनुसंधान एवं विकास परियोजनाओं को बढ़ावा देने और मानव संसाधन विकास के लिए दोनों संस्थानों के बीच बुधवार को एक समझौते पर हस्ताक्षर किए गए हैं। इस समझौते पर नाइपर के निदेशक डॉ यूमूर्ति और .एन.एस. रआई के निदेशक प्रोफेसर तापस कुंडू द्वारा हस्ताक्षर किए गए हैं।सीडीआ

नाइपरगुवाहाटी-, फार्मास्यूटिकल्स विभाग (डीओपी), रसायन और उर्वरक मंत्रालय, भारत सरकार का पूर्वोत्तर में वर्ष 2008 में स्थापित पहला फार्मा शिक्षा और अनुसंधान संस्थान है। वहीं, सीएसआईआरगत सात दशकों से देश का सीडीआरआई वि-एक अग्रणी औषधि अनुसंधान संस्थान है।

सीडीआरआई में जीएलपी सुविधाओं सहित एसएआर, क्यूएसएआर, कॉम्बिनेटरियल सिंथेसिस, जैव सूचना विज्ञान, प्रोटिओमिक्स, जीनोमिक्स, नियामक विषविज्ञान -, फार्माकोलॉजी, फार्माकोकाइनेटिक्स आदि की महत्वपूर्ण सुविधाओं सहित नयी दवाओं के विकास हेतु कांसेप्ट से कमर्शियलाइजेशन तक सभी बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध हैं।

इन दोनों संस्थानों के बीच किए गए ताजा समझौते का एक प्रमुख उद्देश्य संयुक्त रूप से पारस्परिक हित के सहयोगी अनुसंधान कार्यक्रमों के संचालन के लिए विशिष्ट क्षेत्रों की पहचान, छात्रों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों की रूपरेखा तैयार कर उनका आयोजन, फैकल्टी एक्सचेंज प्रोग्राम्स का संचालन और इन्स्ट्रूमेंटेशन सुविधाओं को साझा करना है।

इसके अलावा, इस अनुबंध के अनुसार चयनित अनुसंधान परियोजना प्रस्तावों को संयुक्त रूप से डीबीटी, सीएसआईआर, डीएसटी, आईसीएमआर या किसी अन्य फंडिंग एजेंसियों को अतिरिक्त फंडिंग के लिए प्रस्तुत किया जा सकता है। सीएसआईआरसीडीआरआई के निदेशक प्रोफेसर तापस कुमार कुंडू ने कहा है कि-

"दोनों संस्थानों के मध्य यह अनुबंध, अकादमिकऔर (वैल्यू एडिशन) करने तथा मूल्यवर्द्धन वैज्ञानिक उत्थान हेतु ज्ञान साझा/साइंटिफ) बौद्धिक भागीदारीिक इनपुटके माध्यम से महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। इस पहल से (, समृद्ध जैवविविधता वाले -वे पारस्परिक दूसरे के साथ सहयोग करने का अवसर मिलेगा और अंत में-को एक (स्टेकहोल्डर्स) पूर्वोत्तर भारत के हितग्राहियों रूप से विज्ञान की बेहतरी में सहभागिता कर सकते हैं।"

अग्निबाण

पूर्वोत्तर में वैज्ञानिक शोध की अलख जगाएंगे सीडीआरआई और नाइपर

Aug 7, 2021 | AGNIBAN

– इंडिया साइंस वायर

वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद रिसर्च ड्रग सेंट्रल प्रयोगशाला स्थित लखनऊ की (सीएसआईआर) रिसर्च ऐंड एजुकेशन फार्मास्यूटिकल ऑफ इंस्टीट्यूट नेशनल स्थित गुवाहाटी और (सीडीआरआई) इंस्टीट्यूट पूर्वो करेंगे। काम मिलकर साथ लिए के विकास के पूर्वोत्तर अब (परनाइ)त्तर भारत में अनुसंधान एवं विकास परियोजनाओं को बढ़ावा देने और मानव संसाधन विकास के लिए दोनों संस्थानों के बीच एक समझौते पर हस्ताक्षर किए गए हैं। इस समझौते पर नाइपर के निदेशक डॉ यू निदेशक के सीडीआरआई और मूर्ति .एन.एस. किए हस्ताक्षर द्वारा कुंडू तापस प्रोफेसर गए हैं।

नाइपरगुवाहाटी-, फार्मास्यूटिकल्स विभाग (डीओपी), रसायन और उर्वरक मंत्रालय, भारत सरकार का पूर्वोत्तर में वर्ष 2008 में स्थापित पहला फार्मा शिक्षा और अनुसंधान संस्थान है। वहीं, सीएसआईआर डीआरआईसी-संस्था अनुसंधान औषधि अग्रणी एक का देश से दशकों सात विगतन है। सीडीआरआई में जीएलपी सुविधाओं

सहित एसएआर, क्यूएसएआर, कॉम्बिनेटरियल सिंथेसिस, जैव सूचना विज्ञान, प्रोटिओमिक्स, जीनोमिक्स, नियामक विषविज्ञान-, फार्माकोलॉजी, फार्माकोकाइनेटिक्स आदि की महत्वपूर्ण सुविधाओं सहित नयी दवाओं के विकास हेतु कांसेप्ट से कमर्शियलाइजेशन तक सभी बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध हैं।

इन दोनों संस्थानों के बीच किए गए ताजा समझौते का एक प्रमुख उद्देश्य संयुक्त रूप से पारस्परिक हित के सहयोगी अनुसंधान कार्यक्रमों के संचालन के लिए विशिष्ट क्षेत्रों की पहचान, छात्रों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रमों की रूपरेखा तैयार कर उनका आयोजन, फैकल्टी एक्सचेंज प्रोग्राम्स का संचालन और इन्स्ट्रूमेंटेशन सुविधाओं को साझा करना है। इसके अलावा, इस अनुबंध के अनुसार चयनित अनुसंधान परियोजना प्रस्तावों को संयुक्त रूप से डीबीटी, सीएसआईआर, डीएसटी, आईसीएमआर या किसी अन्य फंडिंग एजेंसियों को अतिरिक्त फंडिंग के लिए प्रस्तुत किया जा सकता है।

सीएसआईआर कि है कहा ने कुंडू कुमार तापस प्रोफेसर निदेशक के सीडीआरआई-“दोनों संस्थानों के मध्य यह अनुबंध, अकादमिक बौद्धिक और (एडिशन वैल्यू) मूल्यवर्द्धन तथा करने साझा नज्ञा हेतु उत्थान वैज्ञानिक/ भागीदारी से पहल इस निभाएगा। भूमिका महत्वपूर्ण से माध्यम के (इनपुट साइंटिफिक), समृद्ध जैव-अवसर का करने सहयोग साथ के दूसरे-एक को (स्टेकहोल्डर्स) हितग्राहियों के भारत पूर्वोत्तर वाले विविधता स कर सहभागिता में बेहतरी की विज्ञान से रूप पारस्परिक वे में तअं और मिलेगाकते हैं।”

EET INDIA

New Chairs to Support Research in IIT Delhi

Article By : India Science Wire

Category : Market News | 2021-08-10

IIT Delhi established two new chairs to support research activities in micro-electronics and VLSI design, and geotechnical and geo-environmental engineering.

Two new chairs to support research activities especially in the area of micro-electronics and VLSI design and Geotechnical & Geo-Environmental Engineering have been established at the IIT Delhi. An IIT alumnus Saurabh Mittal has endowed these two chairs in honor of Professor G.S. Visweswaran and Professor Manoj Datta at the institution.

The "Professor G.S. Visweswaran Chair" aims to promote excellence and leadership in teaching, research, and development in the area of Microelectronics & VLSI Design and the "Professor Manoj Datta Chair" will encourage and support research in Geotechnical & Geo-environmental Engineering.

“IIT Delhi takes pride in its world-class faculty and alumni who have distinguished themselves in various walks of life. It’s gratifying to see our alumni recognizing their teachers by instituting chair professor positions to honor their commitment to the profession. As a society and as an Institution, we want to see more of this. I am proud that our eminent alumnus Saurabh Mittal and a few other alumni have come forward and are setting an example,” says Prof. V. Ramgopal Rao, Director, IIT Delhi.

Dr. Visweswaran joined the Electrical Engineering Department at IIT Delhi in 1980 and retired in 2015. He is well-known for his work in analog and mixed-signal circuit design, memory design, and digital electronics. During his stint at IIT Delhi, he also served as president, board of student welfare and head, students counselling service. After superannuation, Prof Visweswaran joined IIIT-Delhi as Dean of student affairs and held that office till July 2017.

Prof. Manoj Datta has been with the civil engineering department of IIT Delhi since 1980 and is now an Emeritus Professor. Prof Datta is well-known for his work in geotechnical and geo-environmental engineering and received the Lifetime Achievement Award (2017) and the Leadership award (2008) of the Delhi Chapter of Indian Geotechnical Society. He was Director, Punjab Engineering College (Deemed University), Chandigarh from 2008 to 2013 and Dean (Alumni Affairs & International Programs) at IIT Delhi from 2004 to 2007.

Saurabh Mittal, while speaking of the two Chairs endowed by him, said, “The impact that Professors have on the lives of students during their IIT years goes beyond the classroom. Diligence, persistence, and the pursuit of excellence – all of which are hallmarks of any successful person – are honed under the guidance and high standards of our teachers. I certainly benefited immensely from their guidance during my graduate years, and it is my honor to be able to endow chairs in their names to support research excellence in their specific domain.”

Saurabh Mittal is the Founder and Chairman of Mission Holdings, which focuses on building strong operating platforms in technology, financial services, and media. Before founding Mission Holdings, Mr Mittal was a partner at Noonday, an affiliate of Farallon Capital Management, one of the world's largest hedge funds where he was responsible for large public and private investments in the areas of Financial Services and Technology, Media, and Telecom (TMT). In 1999, Mittal co-founded Indiabulls, India's leading financial services, and real estate conglomerate, where he served as Co-founder & Vice Chairman from inception until 2014. In 2017, he was conferred the Distinguished Alumni Award by IIT Delhi in recognition of his contributions to corporate business development and entrepreneurship.

DELHI POST
Politics | Democracy | Development

New Chairs to Support Research in IIT Delhi

By **ISW Desk** On **Aug 9, 2021**

Two new chairs to support research activities especially in the area of micro-electronics & VLSI design and Geotechnical & Geo-Environmental Engineering have been established at the IIT Delhi. An IIT alumnus Saurabh Mittal has endowed these two chairs in honour of Professor G.S. Visweswaran and Professor Manoj Datta at the institution.

The "Professor G.S. Visweswaran Chair" aims to promote excellence and leadership in teaching, research, and development in the area of Microelectronics

& VLSI Design and the "Professor Manoj Datta Chair" will encourage and support research in Geotechnical & Geo-environmental Engineering.

"IIT Delhi takes pride in its world-class faculty and alumni who have distinguished themselves in various walks of life. It's gratifying to see our alumni recognizing their teachers by instituting chair professor positions to honour their commitment to the profession. As a society and as an Institution, we want to see more of this. I am proud that our eminent alumnus Saurabh Mittal and a few other alumni have come forward and are setting an example", says Prof. V. Ramgopal Rao, Director, IIT Delhi

Dr. Visweswaran joined the Electrical Engineering Department at IIT Delhi in 1980 and retired in 2015. He is well-known for his work in analog and mixed-signal circuit design, memory design, and digital electronics. During his stint at IIT Delhi, he also served as president, board of student welfare and head, students counselling service. After superannuation, Prof Visweswaran joined IIIT-Delhi as Dean of student affairs and held that office till July 2017.

Prof Manoj Datta has been with the civil engineering department of IIT Delhi since 1980 and is now an Emeritus Professor. Prof Datta is well-known for his work in geotechnical and geo-environmental engineering and received the Lifetime Achievement Award (2017) and the Leadership award (2008) of the Delhi Chapter of Indian Geotechnical Society. He was Director, Punjab Engineering College (Deemed University), Chandigarh from 2008 to 2013 and Dean (Alumni Affairs & International Programmes) at IIT Delhi from 2004 to 2007.

Saurabh Mittal, while speaking of the two Chairs endowed by him, said, "The impact that Professors have on the lives of students during their IIT years goes beyond the classroom. Diligence, persistence, and the pursuit of excellence – all

of which are hallmarks of any successful person – are honed under the guidance and high standards of our teachers. I certainly benefited immensely from their guidance during my graduate years, and it is my honour to be able to endow chairs in their names to support research excellence in their specific domain."

Saurabh Mittal is the Founder and Chairman of Mission Holdings, which focuses on building strong operating platforms in technology, financial services, and media. Before founding Mission Holdings, Mr Mittal was a partner at Noonday, an affiliate of Farallon Capital Management, one of the world's largest hedge funds where he was responsible for large public and private investments in the areas of Financial Services and Technology, Media, and Telecom (TMT). In 1999, Mittal co-founded Indiabulls, India's leading financial services, and real estate conglomerate, where he served as Co-founder & Vice Chairman from inception till 2014. In 2017, he was conferred the Distinguished Alumni Award by IIT Delhi in recognition of his contributions to Corporate Business Development & Entrepreneurship. (India Science Wire)

New chairs to support research in IIT Delhi

TOPICS:IIT Delhi

POSTED BY: HASTAKSHEP NEWS 6TH AUGUST 2021

New Delhi, Aug 06th, 2021: Two new chairs to support research activities especially in the area of micro-electronics & VLSI design and Geotechnical & Geo-Environmental Engineering have been established at the IIT Delhi. An IIT alumnus Saurabh Mittal has endowed these two chairs in honour of Professor G.S. Visweswaran and Professor Manoj Datta at the institution.

The "Professor G.S. Visweswaran Chair" aims to promote excellence and leadership in teaching, research, and development in the area of Microelectronics & VLSI Design and the "Professor Manoj Datta Chair" will encourage and support research in Geotechnical & Geo-environmental Engineering.

"IIT Delhi takes pride in its world-class faculty and alumni who have distinguished themselves in various walks of life. It's gratifying to see our alumni recognizing their teachers by instituting chair professor positions to honour their commitment to the

profession. As a society and as an Institution, we want to see more of this. I am proud that our eminent alumnus Saurabh Mittal and a few other alumni have come forward and are setting an example", says Prof. V. Ramgopal Rao, Director, IIT Delhi

Dr Visweswaran joined the Electrical Engineering Department at IIT Delhi in 1980 and retired in 2015. He is well-known for his work in analogue and mixed-signal circuit design, memory design, and digital electronics. During his stint at IIT Delhi, he also served as president, board of student welfare and head, students counselling service. After superannuation, Prof Visweswaran joined IIIT-Delhi as Dean of student affairs and held that office till July 2017.

Prof Manoj Datta has been with the civil engineering department of IIT Delhi since 1980 and is now an Emeritus Professor. Prof Datta is well-known for his work in geotechnical and geo-environmental engineering and received the Lifetime Achievement Award (2017) and the Leadership award (2008) of the Delhi Chapter of Indian Geotechnical Society. He was Director, Punjab Engineering College (Deemed University), Chandigarh from 2008 to 2013 and Dean (Alumni Affairs & International Programmes) at IIT Delhi from 2004 to 2007.

Saurabh Mittal, while speaking of the two Chairs endowed by him, said, "The impact that Professors have on the lives of students during their IIT years goes beyond the classroom. Diligence, persistence, and the pursuit of excellence – all of which are hallmarks of any successful person – are honed under the guidance and high standards of our teachers. I certainly benefited immensely from their guidance during my graduate years, and it is my honour to be able to endow chairs in their names to support research excellence in their specific domain."

Saurabh Mittal is the Founder and Chairman of Mission Holdings, which focuses on building strong operating platforms in technology, financial services, and media. Before founding Mission Holdings, Mr Mittal was a partner at Noonday, an affiliate of Farallon Capital Management, one of the world's largest hedge funds where he was responsible for large public and private investments in the areas of Financial Services and Technology, Media, and Telecom (TMT). In 1999, Mittal co-founded Indiabulls, India's leading financial services, and real estate conglomerate, where he served as Co-founder & Vice Chairman from inception till 2014. In 2017, he was conferred the Distinguished Alumni Award by IIT Delhi in recognition of his contributions to Corporate Business Development & Entrepreneurship.

(India Science Wire)

Voice of the Nation
ORGANISER

New chairs to support research in IIT Delhi

WEBDESK Aug 07, 2021, 07:24 AM IST

An IIT alumnus Saurabh Mittal has endowed these two chairs in honour of Professor G.S. Visweswaran and Professor Manoj Datta at the institution.

New Delhi: Two new chairs to support research activities, especially in the area of micro-electronics & VLSI design and Geotechnical & Geo-Environmental Engineering, have been established at the IIT Delhi. An IIT alumnus Saurabh Mittal has endowed these two chairs in honour of Professor G.S. Visweswaran and Professor Manoj Datta at the institution.

The "Professor G.S. Visweswaran Chair" aims to promote excellence and leadership in teaching, research, and development in the area of Microelectronics

& VLSI Design and the “Professor Manoj Datta Chair” will encourage and support research in Geotechnical & Geo-environmental Engineering.

“IIT Delhi takes pride in its world-class faculty and alumni who have distinguished themselves in various walks of life. It's gratifying to see our alumni recognizing their teachers by instituting chair professor positions to honour their commitment to the profession. As a society and as an Institution, we want to see more of this. I am proud that our eminent alumnus Saurabh Mittal and a few other alumni have come forward and are setting an example,” says Prof. V. Ramgopal Rao, Director, IIT Delhi Dr. Visweswaran joined the Electrical Engineering Department at IIT Delhi in 1980 and retired in 2015. He is well-known for his work in analog and mixed-signal circuit design, memory design, and digital electronics. During his stint at IIT Delhi, he also served as president, board of student welfare and head, students counselling service.

After superannuation, Prof Visweswaran joined IIIT-Delhi as Dean of student affairs and held that office till July 2017.

Prof Manoj Datta has been with the civil engineering department of IIT Delhi since 1980 and is now an Emeritus Professor. Prof Datta is well-known for his work in geotechnical and geo-environmental engineering and received the Lifetime Achievement Award (2017) and the Leadership award (2008) of the Delhi Chapter of Indian Geotechnical Society. He was Director, Punjab Engineering College (Deemed University), Chandigarh from 2008 to 2013 and Dean (Alumni Affairs & International Programmes) at IIT Delhi from 2004 to 2007.

While speaking of the two Chairs endowed by him, Saurabh Mittal said, “The impact that Professors have on the lives of students during their IIT years goes beyond the classroom. Diligence, persistence, and the pursuit of excellence - all of which are hallmarks of any successful person - are honed under the guidance and high standards of our teachers. I certainly benefited immensely from their guidance

during my graduate years, and it is my honour to be able to endow chairs in their names to support research excellence in their specific domain.”

Saurabh Mittal is the Founder and Chairman of Mission Holdings, which focuses on building strong operating platforms in technology, financial services, and media. Before founding Mission Holdings, Mr Mittal was a partner at Noonday, an affiliate of Farallon Capital Management, one of the world’s largest hedge funds, where he was responsible for large public and private investments in the areas of Financial Services and Technology, Media, and Telecom (TMT). In 1999, Mittal co-founded Indiabulls, India’s leading financial services and real estate conglomerate, where he served as Co-founder & Vice Chairman from inception till 2014. In 2017, he was conferred the Distinguished Alumni Award by IIT Delhi in recognition of his contributions to Corporate Business Development & Entrepreneurship.

Courtesy: India Science Wire

RD TIMES. education

New chairs to support research in IIT Delhi

RD Times Education | August 7, 2021

New Delhi: Two new chairs to support research activities especially in the area of micro-electronics & VLSI design and Geotechnical & Geo-Environmental Engineering have been established at the IIT Delhi. An IIT alumnus Saurabh Mittalhas endowed these two chairs in honour of Professor G.S. Visweswaran and Professor Manoj Datta at the institution.
The “Professor G.S. Visweswaran Chair” aims to promote excellence and leadership in teaching, research, and development in the area of Microelectronics & VLSI Design and the “Professor Manoj Datta Chair” will encourage and support research in Geotechnical & Geo-environmental Engineering.

“IIT Delhi takes pride in its world-class faculty and alumni who have distinguished themselves in various walks of life. It’s gratifying to see our alumni recognizing their teachers by instituting chair professor positions to honour their commitment to the

profession. As a society and as an Institution, we want to see more of this. I am proud that our eminent alumnus Saurabh Mittal and a few other alumni have come forward and are setting an example", says Prof. V. Ramgopal Rao, Director, IIT Delhi.

Dr. Visweswaran joined the Electrical Engineering Department at IIT Delhi in 1980 and retired in 2015. He is well-known for his work in analog and mixed-signal circuit design, memory design, and digital electronics. During his stint at IIT Delhi, he also served as president, board of student welfare and head, students counselling service. After superannuation, Prof Visweswaran joined IIIT-Delhi as Dean of student affairs and held that office till July 2017.

Prof Manoj Datta has been with the civil engineering department of IIT Delhi since 1980 and is now an Emeritus Professor. Prof Datta is well-known for his work in geotechnical and geo-environmental engineering and received the Lifetime Achievement Award (2017) and the Leadership award (2008) of the Delhi Chapter of Indian Geotechnical Society. He was Director, Punjab Engineering College (Deemed University), Chandigarh from 2008 to 2013 and Dean (Alumni Affairs& International Programmes) at IIT Delhi from 2004 to 2007.

Saurabh Mittal, while speaking of the two Chairs endowed by him, said, "The impact that Professors have on the lives of students during their IIT years goes beyond the classroom. Diligence, persistence, and the pursuit of excellence – all of which are hallmarks of any successful person – are honed under the guidance and high standards of our teachers. I certainly benefited immensely from their guidance during my graduate years, and it is my honour to be able to endow chairs in their names to support research excellence in their specific domain."

Saurabh Mittal is the Founder and Chairman of Mission Holdings, which focuses on building strong operating platforms in technology, financial services, and media. Before founding Mission Holdings, Mr Mittal was a partner at Noonday, an affiliate of Farallon Capital Management, one of the world's largest hedge funds where he was responsible for large public and private investments in the areas of Financial Services and Technology, Media, and Telecom (TMT). In 1999, Mittal co-founded Indiabulls, India's leading financial services, and real estate conglomerate, where he served as Co-founder & Vice Chairman from inception till 2014. In 2017, he was conferred the Distinguished Alumni Award by IIT Delhi in recognition of his contributions to Corporate Business Development & Entrepreneurship. (India Science Wire)

New chairs to support research in IIT Delhi

By **India Science Wire** - August 6, 2021

Two new chairs to support research activities especially in the area of micro-electronics & VLSI design and Geotechnical & Geo-Environmental Engineering have been established at the IIT Delhi. An IIT alumnus Saurabh Mittal has endowed these two chairs in honour of Professor G.S. Visweswaran and Professor Manoj Datta at the institution.

The "Professor G.S. Visweswaran Chair" aims to promote excellence and leadership in teaching, research, and development in the area of Microelectronics & VLSI Design and the "Professor Manoj Datta Chair" will encourage and support research in Geotechnical & Geo-environmental Engineering.

"IIT Delhi takes pride in its world-class faculty and alumni who have distinguished themselves in various walks of life. It's gratifying to see our alumni recognizing their teachers by instituting chair professor positions to honour their commitment to the profession. As a society and as an Institution, we want to see more of this. I am proud that our eminent alumnus Saurabh

Mittal and a few other alumni have come forward and are setting an example", says Prof. V. Ramgopal Rao, Director, IIT Delhi

Dr. Visweswaran joined the Electrical Engineering Department at IIT Delhi in 1980 and retired in 2015. He is well-known for his work in analog and mixed-signal circuit design, memory design, and digital electronics. During his stint at IIT Delhi, he also served as president, board of student welfare and head, students counselling service. After superannuation, Prof Visweswaran joined IIIT-Delhi as Dean of student affairs and held that office till July 2017.

Prof Manoj Datta has been with the civil engineering department of IIT Delhi since 1980 and is now an Emeritus Professor. Prof Datta is well-known for his work in geotechnical and geo-environmental engineering and received the Lifetime Achievement Award (2017) and the Leadership award (2008) of the Delhi Chapter of Indian Geotechnical Society. He was Director, Punjab Engineering College (Deemed University), Chandigarh from 2008 to 2013 and Dean (Alumni Affairs & International Programmes) at IIT Delhi from 2004 to 2007.

Saurabh Mittal, while speaking of the two Chairs endowed by him, said, "The impact that Professors have on the lives of students during their IIT years goes beyond the classroom. Diligence, persistence, and the pursuit of excellence – all of which are hallmarks of any successful person – are honed under the guidance and high standards of our teachers. I certainly benefited immensely from their guidance during my graduate years, and it is my honour to be able to endow chairs in their names to support research excellence in their specific domain."

Saurabh Mittal is the Founder and Chairman of Mission Holdings, which focuses on building strong operating platforms in technology, financial services, and media. Before founding Mission Holdings, Mr Mittal was a partner at Noonday, an affiliate of Farallon Capital Management, one of the world's largest hedge funds where he was responsible for large public and private investments in the areas of Financial Services and Technology, Media, and Telecom (TMT). In 1999, Mittal co-founded Indiabulls, India's leading financial services, and real estate conglomerate, where he served as Co-founder & Vice Chairman from inception till 2014. In 2017, he was conferred the Distinguished Alumni Award by IIT Delhi in recognition of his contributions to Corporate Business Development & Entrepreneurship. (India Science Wire)

The Indian Bulletin
www.theindianbulletin.com

New chairs to support research in IIT Delhi

By **The Indian Bulletin Online** - August 7, 2021

New Delhi: Two new chairs to support research activities especially in the area of micro-electronics & VLSI design and Geotechnical & Geo-Environmental Engineering have been established at the IIT Delhi. An IIT alumnus Saurabh Mittalhas endowed these two chairs in honour of Professor G.S. Visweswaran and Professor Manoj Datta at the institution.

The "Professor G.S. Visweswaran Chair" aims to promote excellence and leadership in teaching, research, and development in the area of Microelectronics & VLSI Design and the "Professor Manoj Datta Chair" will encourage and support research in Geotechnical & Geo-environmental Engineering.

"IIT Delhi takes pride in its world-class faculty and alumni who have distinguished themselves in various walks of life. It's gratifying to see our

alumni recognizing their teachers by instituting chair professor positions to honour their commitment to the profession. As a society and as an Institution, we want to see more of this. I am proud that our eminent alumnus Saurabh Mittal and a few other alumni have come forward and are setting an example", says Prof. V. Ramgopal Rao, Director, IIT Delhi.

Dr. Visweswaran joined the Electrical Engineering Department at IIT Delhi in 1980 and retired in 2015. He is well-known for his work in analog and mixed-signal circuit design, memory design, and digital electronics. During his stint at IIT Delhi, he also served as president, board of student welfare and head, students counselling service. After superannuation, Prof Visweswaran joined IIIT-Delhi as Dean of student affairs and held that office till July 2017.

Prof Manoj Datta has been with the civil engineering department of IIT Delhi since 1980 and is now an Emeritus Professor. Prof Datta is well-known for his work in geotechnical and geo-environmental engineering and received the Lifetime Achievement Award (2017) and the Leadership award (2008) of the Delhi Chapter of Indian Geotechnical Society. He was Director, Punjab Engineering College (Deemed University), Chandigarh from 2008 to 2013 and Dean (Alumni Affairs& International Programmes) at IIT Delhi from 2004 to 2007.

Saurabh Mittal, while speaking of the two Chairs endowed by him, said, "The impact that Professors have on the lives of students during their IIT years goes beyond the classroom. Diligence, persistence, and the pursuit of excellence – all of which are hallmarks of any successful person – are honed under the guidance and high standards of our teachers. I certainly benefited immensely from their guidance during my graduate years, and it is my honour to be able to endow chairs in their names to support research excellence in their specific domain."

Saurabh Mittal is the Founder and Chairman of Mission Holdings, which focuses on building strong operating platforms in technology, financial services, and media. Before founding Mission Holdings, Mr Mittal was a partner at Noonday, an affiliate of Farallon Capital Management, one of the world's largest hedge funds where he was responsible for large public and private investments in the areas of Financial Services and Technology, Media, and Telecom (TMT). In 1999, Mittal co-founded Indiabulls, India's leading financial services, and real estate conglomerate, where he served as Co-founder & Vice Chairman from inception till 2014. In 2017, he was conferred the Distinguished Alumni Award by IIT Delhi in recognition of his contributions to Corporate Business Development & Entrepreneurship. (India Science Wire)

science & technology INDIA

New chairs to support research in IIT Delhi

August 8, 2021

Two new chairs to support research activities especially in the area of micro-electronics & VLSI design and Geotechnical & Geo-Environmental Engineering have been established at the IIT Delhi. AnIIT alumnus Saurabh Mittalhas endowed these two chairs in honour of Professor G.S. Visweswaran and Professor Manoj Datta at the institution.

The "Professor G.S. Visweswaran Chair" aims to promote excellence and leadership in teaching, research, and development in the area of Microelectronics & VLSI Design and the "Professor Manoj Datta Chair" will encourage and support research inGeotechnical & Geo-environmental Engineering.

"IIT Delhi takes pride in its world-class faculty and alumni who have distinguished themselves in various walks of life. It's gratifying to see our alumni recognizing their teachers by instituting chair professor positions to honour their commitment to the profession. As a society and as an Institution, we want to see more of this. I am proud that our eminent alumnus Saurabh Mittal and a few other alumni have come forward and are setting an example", says Prof. V. Ramgopal Rao, Director, IIT Delhi

Dr.Visweswaran joined the Electrical Engineering Department at IIT Delhi in 1980 and retired in 2015. He is well-known for his work in analog and mixed-signal circuit design,

memory design, and digital electronics. During his stint at IIT Delhi, he also served as president, board of student welfare and head, students counselling service. After superannuation, Prof Visweswaran joined IIIT-Delhi as Dean of student affairs and held that office till July 2017.

Prof Manoj Datta has been with the civil engineering department of IIT Delhi since 1980 and is now an Emeritus Professor. Prof Datta is well-known for his work in geotechnical and geo-environmental engineering and received the Lifetime Achievement Award (2017) and the Leadership award (2008) of the Delhi Chapter of Indian Geotechnical Society. He was Director, Punjab Engineering College (Deemed University), Chandigarh from 2008 to 2013 and Dean (Alumni Affairs& International Programmes) at IIT Delhi from 2004 to 2007.

Saurabh Mittal, while speaking of the two Chairs endowed by him, said, “The impact that Professors have on the lives of students during their IIT years goes beyond the classroom. Diligence, persistence, and the pursuit of excellence – all of which are hallmarks of any successful person – are honed under the guidance and high standards of our teachers. I certainly benefited immensely from their guidance during my graduate years, and it is my honour to be able to endow chairs in their names to support research excellence in their specific domain.”

Saurabh Mittal is the Founder and Chairman of Mission Holdings, which focuses on building strong operating platforms in technology, financial services, and media. Before founding Mission Holdings, Mr Mittal was a partner at Noonday, an affiliate of Farallon Capital Management, one of the world’s largest hedge funds where he was responsible for large public and private investments in the areas of Financial Services and Technology, Media, and Telecom (TMT). In 1999, Mittal co-founded Indiabulls, India’s leading financial services, and real estate conglomerate, where he served as Co-founder & Vice Chairman from inception till 2014. In 2017, he was conferred the Distinguished Alumni Award by IIT Delhi in recognition of his contributions to Corporate Business Development & Entrepreneurship.

airvibe

New chairs to support research in IIT Delhi

Editor | Aug 8, 2021 - 09:03

The IIT Delhi has established two new chairs to support research activities in the areas of geotechnical & geo-environmental engineering and micro-electronics & VLSI design. Saurabh Mittal, an IIT alumnus, has given these chairs to Professor G.S. The institution is home to Professor Manoj Datta and Visweswaran.

The "Professor G.S. Visweswaran Chair", which aims to encourage excellence and leadership in teaching and research in the area Microelectronics & VLSI Design, and the "Professor Manoj Datta chair" will support and encourage research in Geotechnical & Geo-environmental Engineering.

"IIT Delhi is proud of its distinguished faculty and alumni. It is gratifying to see alumni recognize their teachers and establish chair professor positions to honor their dedication to the profession. We want more of this as a Society and Institution. I am proud of Saurabh Mittal, an eminent alumnus, and a few

alumni who have come forward and set an example," says Prof. V. Ramgopal Rao Director, IIT Delhi.

In 1980, Dr. Visweswaran was a member of the Electrical Engineering Department at IIT Delhi and he retired in 2015. His work in digital and analog mixed-signal circuit design and memory design is well-known. He was also the president of IIT Delhi's board on student welfare and the head of students counselling. Professor Visweswaran was appointed Dean of Student Affairs at IIIT-Delhi after he retired from the workforce. He held this office until July 2017.

Prof Manoj Datta has been associated with IIT Delhi's civil engineering department since 1980. He is currently an Emeritus professor. Professor Manoj Datta is well-known in the field of geotechnical engineering. He was awarded the Lifetime Achievement Award (2017) as well as the Leadership Award (2008) by the Delhi Chapter Indian Geotechnical Society. From 2008 to 2013, he was the Director of Punjab Engineering College (Deemed University), Chandigarh, and from 2004 to 2007, he was Dean (Alumni Affairs & International Programmes at IIT Delhi).

Saurabh Mittal spoke out about the Chairs he had endowed. He said that the impact Professors have on students' lives during their IIT years is more than what they see in the classroom. Our teachers have taught us how to be a successful person. They also teach you the importance of persistence, diligence, and excellence. Their guidance was invaluable during my graduate years. It is an honor to be able endow chairs in their name to support excellence in research in their particular field.

Saurabh Mittal, the founder and chairman of Mission Holdings, focuses on creating strong operating platforms in technology and financial services. Prior to founding Mission Holdings, Mr Mittal worked as a partner at Noonday, an affiliated of Farallon Capital Management, which was one of the largest hedge funds in the world. He was responsible for large private and public investments in areas such as Financial Services, Technology, Media, and Telecom. Mittal was the co-founder of Indiabulls in 1999. He served as Vice Chairman and Co-founder from its inception until 2014. He was awarded the Distinguished Alumni Award in 2017 by IIT Delhi for his contributions to Corporate Business Development & Entrepreneurship. (India Science Wire).

New chairs to support research in IIT Delhi

By **Rupesh Dharmik** - August 7, 2021

New Delhi: Two new chairs to support research activities especially in the area of micro-electronics & VLSI design and Geotechnical & Geo-Environmental Engineering have been established at the IIT Delhi. An IIT alumnus Saurabh Mittalhas endowed these two chairs in honour of Professor G.S. Visweswaran and Professor Manoj Datta at the institution.

The “Professor G.S. Visweswaran Chair” aims to promote excellence and leadership in teaching, research, and development in the area of Microelectronics & VLSI Design and the “Professor Manoj Datta Chair” will encourage and support research in Geotechnical & Geo-environmental Engineering.

“IIT Delhi takes pride in its world-class faculty and alumni who have distinguished themselves in various walks of life. It’s gratifying to see our

alumni recognizing their teachers by instituting chair professor positions to honour their commitment to the profession. As a society and as an Institution, we want to see more of this. I am proud that our eminent alumnus Saurabh Mittal and a few other alumni have come forward and are setting an example", says Prof. V. Ramgopal Rao, Director, IIT Delhi.

Dr. Visweswaran joined the Electrical Engineering Department at IIT Delhi in 1980 and retired in 2015. He is well-known for his work in analog and mixed-signal circuit design, memory design, and digital electronics. During his stint at IIT Delhi, he also served as president, board of student welfare and head, students counselling service. After superannuation, Prof Visweswaran joined IIIT-Delhi as Dean of student affairs and held that office till July 2017.

Prof Manoj Datta has been with the civil engineering department of IIT Delhi since 1980 and is now an Emeritus Professor. Prof Datta is well-known for his work in geotechnical and geo-environmental engineering and received the Lifetime Achievement Award (2017) and the Leadership award (2008) of the Delhi Chapter of Indian Geotechnical Society. He was Director, Punjab Engineering College (Deemed University), Chandigarh from 2008 to 2013 and Dean (Alumni Affairs& International Programmes) at IIT Delhi from 2004 to 2007.

Saurabh Mittal, while speaking of the two Chairs endowed by him, said, "The impact that Professors have on the lives of students during their IIT years goes beyond the classroom. Diligence, persistence, and the pursuit of excellence – all of which are hallmarks of any successful person – are honed under the guidance and high standards of our teachers. I certainly benefited immensely from their guidance during my graduate years, and it is my honour to be able to endow chairs in their names to support research excellence in their specific domain."

Saurabh Mittal is the Founder and Chairman of Mission Holdings, which focuses on building strong operating platforms in technology, financial services, and media. Before founding Mission Holdings, Mr Mittal was a partner at Noonday, an affiliate of Farallon Capital Management, one of the world's largest hedge funds where he was responsible for large public and private investments in the areas of Financial Services and Technology, Media, and Telecom (TMT). In 1999, Mittal co-founded Indiabulls, India's leading financial services, and real estate conglomerate, where he served as Co-founder & Vice Chairman from inception till 2014. In 2017, he was conferred the Distinguished Alumni Award by IIT Delhi in recognition of his contributions to Corporate Business Development & Entrepreneurship. (India Science Wire)

Voice of the Nation
ORGANISER

Researchers develop alternatives to curb antibiotic resistance

WEBDESK Aug 10, 2021, 08:03 AM IST

Umashankar Mishra

CSIR–CFTRI researchers have identified one from beneficial microbes to demonstrate how it is better than antibiotics.

New Delhi: Antibiotic resistance, the ability of bacteria and other microorganisms to resist the effects of an antibiotic to which they were once sensitive, is a major concern all over the world. A new study, conducted by the scientists at Council Of Scientific And Industrial Research–Central Food Technological Research Institute (CSIR–CFTRI), has sounded the alarm bell on the indiscriminate and rampant use of such conventional antibiotics in the food industry.

New protein-based antimicrobials from beneficial microbes could be a better replacement for conventional antibiotics in the food industry, the study revealed. CSIR–CFTRI researchers have identified one from beneficial microbes to demonstrate how it is better than antibiotics. The development of natural antimicrobials and their use in the food industry is an emerging phenomenon, researchers added.

“We were able to identify antimicrobial peptide from beneficial microbe. We checked its function in comparison with the other antimicrobial commercially available and developed in Europe. Our antimicrobial agent was found much better as it can kill WHO prioritized Group-I, Group-II, and Group-III organisms. The molecule works in very high temperatures, in harsh conditions such as acidic, and alkaline”, said Professor Rajagopal Kammara, Head, Department of Protein Chemistry and Technology, CSIR-CFTRI, who was leading the study.

“It is highly suitable for food industry because it works in the presence of metal salts, detergents, and enzymes. It does not cause any harm after consumption, instead, it cleans up the harmful pathogens in the stomach, without harming the beneficial microbes”, added Professor Kammara.

“Everywhere the conventional antibiotics are in rampant use, even in foods such as meat, vegetables, and even one can find its traces in water. There is huge contamination of antibiotics that is creating antibiotic -resistant organisms. This rampant use is creating major problem in the environment, the beneficial microbes are turning into antibiotic-resistant. Therefore, it is time for us to look for replacements for antibiotics. Best thing may be proteins or peptides from beneficial microbes”, observed Professor Kammara.

This study began with the isolation of indigenous fermented foods, screening for bacteria producing various antimicrobials, and characterizing them. One of the best-isolated ones was the Bug-Buster produced by Bacillus, and it was further characterized in comparison with Nisin, a polycyclic antibacterial peptide produced by the bacterium Lactococcus lactis, used as a food preservative.

“A simple well diffusion antimicrobial assay was followed to check its ability to work in various conditions such as high temperature, pH, and presence of salts, physiological enzymes, and detergents. Antimicrobial agent Bug-Buster was purified from the organism, further characterized to know its sequence, as a protein. At genome, we were able to find its sequence by whole genome sequencing approach. The purification technology of Bug-Buster has been patented and many well-known MNC’s have approached us for the technology transfer,” researchers said.

This Indigenously developed antimicrobial agent can be stored at room temperature for three months. Having a wide activity spectrum and potential to control Salmonella and Listeria bacteria, the Bug-Buster possesses commercially viable bioprocess with Hemolytic negative properties. Haemolytic negative

property is not only unique but also open doors for therapeutical use, Professor Kammara explained.

Probiotics are living organisms with ‘Generally Recognized as Safe’ (GRAS) status that several companies market as food or supplements, offering protection against diarrhoea and a host of other diseases. GRAS is a United States Food and Drug Administration (FDA) designation that means a chemical or substance added to food is considered safe by experts.

Researchers believe this development could bring the paradigm shift in making germ-free foods, food preservation, and eradication of further rise of antibiotic-resistant organisms. The Bug-Buster stands globally having the ability to kill ESKAPE organisms. ESKAPE is an acronym comprising the scientific names of six highly virulent and antibiotic-resistant bacterial pathogens including Enterococcus faecium, Staphylococcus aureus, Klebsiella pneumonia, Acinetobacter baumannii, Pseudomonas aeruginosa, and Enterobacter spp.

Apart from Professor Rajagopal Kammara, the research team included Shilja Choyam and Priyanshi M. Jain. The study has been published in the Frontiers in Microbiology journal.

Courtesy: India Science Wire

Researchers develop alternatives to curb antibiotic resistance

A new study, conducted by the scientists at Council Of Scientific And Industrial Research–Central Food Technological Research Institute (CSIR–CFTRI), has sounded alarm bell on the indiscriminate and rampant use of such 'conventional antibiotics' in the food industry

By **BioVoice News Desk** - August 10, 2021

Professor Rajagopal Kammara with his team of researchers.

New Delhi: Antibiotic resistance, the ability of bacteria and other microorganisms to resist the effects of an antibiotic to which they were once sensitive, is a major concern all over the world. A new study, conducted by the scientists at Council Of Scientific And Industrial Research–Central Food Technological Research Institute (CSIR–CFTRI), has sounded alarm bell on the indiscriminate and rampant use of such ‘conventional antibiotics’ in the food industry.

New protein-based antimicrobials from beneficial microbes could be a better replacement for ‘conventional antibiotics’ in the food industry, the study revealed. CSIR–CFTRI researchers have identified one from beneficial microbes, to demonstrate how it is better than antibiotics. The development of natural antimicrobials and their use in the food industry is an emerging phenomenon, researchers added.

“We were able to identify antimicrobial peptide from beneficial microbe. We checked its function in comparison with the other antimicrobial commercially available and developed in Europe. Our antimicrobial agent was found much better as it can kill WHO prioritized Group-I, Group-II, and Group-III organisms. The molecule works in very high temperatures, in harsh conditions such as acidic, and alkaline”, said Professor Rajagopal Kammara, Head, Department of Protein Chemistry and Technology, CSIR-CFTRI, who was leading the study.

“It is highly suitable for food industry because it works in the presence of metal salts, detergents, and enzymes. It does not cause any harm after consumption, instead, it cleans up the harmful pathogens in the stomach, without harming the beneficial microbes”, added Professor Kammara.

“Everywhere the conventional antibiotics are in rampant use, even in foods such as meat, vegetables, and even one can find its traces in water. There is huge contamination of antibiotics that is creating antibiotic -resistant organisms. This rampant use is creating major problem in the environment, the beneficial microbes are turning into antibiotic-resistant. Therefore, it is time for us to look for replacements for antibiotics. Best thing may be proteins or peptides from beneficial microbes”, observed Professor Kammara .

This study began with the isolation of indigenous fermented foods, screening for bacteria producing various antimicrobials, and characterizing them. One of the best isolated ones was the Bug-Buster produced by *Bacillus*, and it was further characterized in comparison with Nisin, a polycyclic antibacterial peptide produced by the bacterium Lactococcus lactis , used as a food preservative.

“A simple well diffusion antimicrobial assay was followed to check its ability to work in various conditions such as high temperature, pH, and presence of salts, physiological enzymes, and detergents. Antimicrobial agent Bug-Buster was purified from the organism, further characterized to know its sequence, as a protein. At genome, we were able to find its sequence by whole genome sequencing approach. The purification technology of Bug-Buster has been patented and many well-known MNC’s have approached us for the technology transfer” researchers said.

This Indigenously developed antimicrobial agent can be stored at room temperature for three months. Having a wide activity spectrum and potential to control Salmonella, and Listeria bacteria, the Bug-Buster possesses commercially viable bioprocess with Hemolytic negative properties. Haemolytic negative property is not only unique but also open doors for therapeutical use, Professor Kammara explained.

Probiotics are living organisms with ‘Generally Recognized as Safe’ (GRAS) status that several companies market as food or supplements, offering protection against diarrhoea and a host of other diseases. GRAS is a United States Food and Drug Administration (FDA) designation that means a chemical or substance added to food is considered safe by experts.

Researchers believe this development could bring the paradigm shift in making germ-free foods, food preservation, and eradication of further rise of antibiotic-resistant organisms. The Bug-Buster stands globally having the ability to kill ESKAPE organisms. ESKAPE is an acronym comprising the scientific names of six highly virulent and antibiotic-resistant bacterial pathogens including *Enterococcus faecium*, *Staphylococcus aureus*, *Klebsiella pneumoniae*, *Acinetobacter baumannii*, *Pseudomonas aeruginosa*, and *Enterobacter spp*.

Apart from Professor Rajagopal Kammara, the research team included Shilja Choyam, and Priyanshi M. Jain. The study has been published in the Frontiers in Microbiology journal.

(India Science Wire)

DELHI POST
Politics | Democracy | Development

Researchers Develop Alternatives to Curb Antibiotic Resistance

By Team DP On Aug 11, 2021

Antibiotic resistance, the ability of bacteria and other microorganisms to resist the effects of an antibiotic to which they were once sensitive, is a major concern all over the world. A new study, conducted by the scientists at Council Of Scientific And Industrial Research–Central Food Technological Research Institute (CSIR–CFTRI), has sounded alarm bell on the indiscriminate and rampant use of such 'conventional antibiotics' in the food industry.

Professor Rajagopal Kammara with his team of researchers

New protein-based antimicrobials from beneficial microbes could be a better replacement for 'conventional antibiotics' in the food industry, the study revealed. CSIR–CFTRI researchers have identified one from beneficial microbes, to demonstrate how it is better than antibiotics. The development of natural antimicrobials and their use in the food industry is an emerging phenomenon, researchers added.

"We were able to identify antimicrobial peptide from beneficial microbe. We checked its function in comparison with the other antimicrobial commercially available and developed in Europe. Our antimicrobial agent was found much better as it can kill WHO prioritized Group-I, Group-II, and Group-

III organisms. The molecule works in very high temperatures, in harsh conditions such as acidic, and alkaline", said Professor Rajagopal Kammara, Head, Department of Protein Chemistry and Technology, CSIR-CFTRI, who was leading the study.

"It is highly suitable for food industry because it works in the presence of metal salts, detergents, and enzymes. It does not cause any harm after consumption, instead, it cleans up the harmful pathogens in the stomach, without harming the beneficial microbes", added Professor Kammara.

"Everywhere the conventional antibiotics are in rampant use, even in foods such as meat, vegetables, and even one can find its traces in water. There is huge contamination of antibiotics that is creating antibiotic - resistant organisms. This rampant use is creating major problem in the environment, the beneficial microbes are turning into antibiotic-resistant. Therefore, it is time for us to look for replacements for antibiotics. Best thing may be proteins or peptides from beneficial microbes", observed Professor Kammara.

This study began with the isolation of indigenous fermented foods, screening for bacteria producing various antimicrobials, and characterizing them. One of the best isolated ones was the Bug-Buster produced by *Bacillus*, and it was further characterized in comparison with Nisin, a polycyclic antibacterial peptide produced by the bacterium Lactococcus lactis, used as a food preservative.

"A simple well diffusion antimicrobial assay was followed to check its ability to work in various conditions such as high temperature, pH, and presence of salts, physiological enzymes, and detergents. Antimicrobial agent Bug-Buster was purified from the organism, further characterized to know its sequence, as a protein. At genome, we were able to find its sequence by whole genome sequencing approach. The purification technology of Bug-Buster has been patented and many well-known MNC's have approached us for the technology transfer" researchers said.

This Indigenously developed antimicrobial agent can be stored at room temperature for three months. Having a wide activity spectrum and potential to control Salmonella, and Listeria bacteria, the Bug-Buster possesses commercially viable bioprocess with Hemolytic negative properties. Haemolytic negative property is not only unique but also open doors for therapeutical use, Professor Kammara explained.

Probiotics are living organisms with 'Generally Recognized as Safe' (GRAS) status that several companies market as food or supplements, offering protection against diarrhoea and a host of other diseases. GRAS is a United States Food and Drug Administration (FDA) designation that means a chemical or substance added to food is considered safe by experts.

Researchers believe this development could bring the paradigm shift in making germ-free foods, food preservation, and eradication of further rise of antibiotic-resistant organisms. The Bug-Buster stands globally having the ability to kill ESKAPE organisms. ESKAPE is an acronym comprising the scientific names of six highly virulent and antibiotic-resistant bacterial pathogens including *Enterococcus faecium, Staphylococcus aureus, Klebsiella pneumoniae, Acinetobacter baumannii, Pseudomonas aeruginosa,* and *Enterobacter spp*.

Apart from Professor Rajagopal Kammara, the research team included Shilja Choyam, and Priyanshi M. Jain. The study has been published in the Frontiers in Microbiology journal. (India Science Wire)

हस्तक्षेप.com

MAKE THE WORLD A BETTER PLACE WITH HASTAKSHEP NEWS

Researchers develop alternatives to curb antibiotic resistance

TOPICS: Antibiotic ResistanceBacteriaMicroorganisms

POSTED BY: HASTAKSHEP NEWS 9TH AUGUST 2021

New Delhi, Aug 09, 2021: **Antibiotic resistance**, the ability of **bacteria** and other **microorganisms** to resist the effects of an antibiotic to which they were once sensitive, is a major concern all over the world.

A new study, conducted by the scientists at Council Of Scientific And Industrial Research–Central Food Technological Research Institute (CSIR–CFTRI), has sounded

the alarm bell on the indiscriminate and rampant use of such 'conventional antibiotics' in the food industry.

New protein-based antimicrobials from beneficial microbes could be a better replacement for 'conventional antibiotics' in the food industry, the study revealed. CSIR–CFTRI researchers have identified one from beneficial microbes, to demonstrate how it is better than antibiotics.

The development of natural antimicrobials and their use in the food industry is an emerging phenomenon, researchers added.

"We were able to identify antimicrobial peptides from a beneficial microbe. We checked its function in comparison with the other antimicrobial commercially available and developed in Europe. Our antimicrobial agent was found much better as it can kill WHO prioritized Group-I, Group-II, and Group-III organisms. The molecule works in very high temperatures, in harsh conditions such as acidic, and alkaline", said Professor Rajagopal Kammara, Head, Department of Protein Chemistry and Technology, CSIR-CFTRI, who was leading the study.

"It is highly suitable for the food industry because it works in the presence of metal salts, detergents, and enzymes. It does not cause any harm after consumption, instead, it cleans up the harmful pathogens in the stomach, without harming the beneficial microbes", added Professor Kammara.

"Everywhere the conventional antibiotics are in rampant use, even in foods such as meat, vegetables, and even one can find its traces in water. There is huge contamination of antibiotics that is creating antibiotic-resistant organisms.

This rampant use is creating a major problem in the environment, the beneficial microbes are turning into antibiotic-resistant. Therefore, it is time for us to look for replacements for antibiotics. The best thing may be proteins or peptides from beneficial microbes", observed Professor Kammara.

This study began with the isolation of indigenous fermented foods, screening for bacteria producing various antimicrobials, and characterizing them. One of the best-isolated ones was the Bug-Buster produced by *Bacillus*, and it was further characterized in comparison with Nisin, a polycyclic antibacterial peptide produced by the bacterium Lactococcus lactis, used as a food preservative.

"A simple well diffusion antimicrobial assay was followed to check its ability to work in various conditions such as high temperature, pH, and presence of salts, physiological enzymes, and detergents. Antimicrobial agent Bug-Buster was purified from the organism, further characterized to know its sequence, as a protein. At genome, we were able to find its sequence by the whole genome sequencing approach. The purification technology of Bug-Buster has been patented and many well-known MNC's have approached us for the technology transfer" researchers said.

This Indigenously developed antimicrobial agent can be stored at room temperature for three months. Having a wide activity spectrum and potential to control Salmonella, and Listeria bacteria, the Bug-Buster possesses commercially viable bioprocess with Hemolytic negative properties. Haemolytic negative property is not only unique but also open doors for therapeutical use, Professor Kammara explained.

What are Probiotics?

Probiotics are living organisms with 'Generally Recognized as Safe' (GRAS) status that several companies market as food or supplements, offering protection against diarrhoea and a host of other diseases. GRAS is a United States Food and Drug Administration (FDA) designation that means a chemical or substance added to food is considered safe by experts.

Researchers believe this development could bring the paradigm shift in making germ-free foods, food preservation, and eradication of further rise of antibiotic-resistant organisms. The Bug-Buster stands globally having the ability to kill ESKAPE organisms. ESKAPE is an acronym comprising the scientific names of six highly virulent and antibiotic-resistant bacterial pathogens including *Enterococcus faecium, Staphylococcus aureus, Klebsiella pneumoniae, Acinetobacter baumannii*, *Pseudomonas aeruginosa*, and *Enterobacter spp*.

Apart from Professor Rajagopal Kammara, the research team included Shilja Choyam and Priyanshi M. Jain. The study has been published in the **Frontiers in Microbiology** journal. (India Science Wire)

Indus Scrolls
Indian to the core

Researchers develop alternatives to curb antibiotic resistance

By **India Science Wire** - August 10, 2021

Antibiotic resistance, the ability of bacteria and other microorganisms to resist the effects of an antibiotic to which they were once sensitive, is a major concern all over the world. A new study, conducted by the scientists at Council Of Scientific And Industrial Research–Central Food Technological Research Institute (CSIR–CFTRI), has sounded alarm bell on the indiscriminate and rampant use of such ‘conventional antibiotics’ in the food industry.

New protein-based antimicrobials from beneficial microbes could be a better replacement for ‘conventional antibiotics’ in the food industry, the study revealed. CSIR–CFTRI researchers have identified one from beneficial microbes, to demonstrate how it is better than antibiotics. The development of natural antimicrobials and their use in the food industry is an emerging phenomenon, researchers added.

“We were able to identify antimicrobial peptide from beneficial microbe. We checked its function in comparison with the other antimicrobial commercially available and developed in Europe. Our antimicrobial agent was found much better as it can kill WHO prioritized Group-I, Group-II, and Group-III organisms. The molecule works in very high temperatures, in harsh conditions such as acidic, and alkaline”, said Professor Rajagopal Kammara, Head, Department of Protein Chemistry and Technology, CSIR-CFTRI, who was leading the study.

“It is highly suitable for food industry because it works in the presence of metal salts, detergents, and enzymes. It does not cause any harm after consumption, instead, it cleans up the harmful pathogens in the stomach, without harming the beneficial microbes”, added Professor Kammara.

“Everywhere the conventional antibiotics are in rampant use, even in foods such as meat, vegetables, and even one can find its traces in water. There is huge contamination of antibiotics that is creating antibiotic -resistant organisms. This rampant use is creating major problem in the environment, the beneficial microbes are turning into antibiotic-resistant. Therefore, it is time for us to look for replacements for antibiotics. Best thing may be proteins or peptides from beneficial microbes”, observed Professor Kammara .

This study began with the isolation of indigenous fermented foods, screening for bacteria producing various antimicrobials, and characterizing them. One of the best isolated ones was the Bug-Buster produced by *Bacillus*, and it was further characterized in comparison with Nisin, a polycyclic antibacterial peptide produced by the bacterium Lactococcus lactis , used as a food preservative.

“A simple well diffusion antimicrobial assay was followed to check its ability to work in various conditions such as high temperature, pH, and presence of salts,

physiological enzymes, and detergents. Antimicrobial agent Bug-Buster was purified from the organism, further characterized to know its sequence, as a protein. At genome, we were able to find its sequence by whole genome sequencing approach. The purification technology of Bug-Buster has been patented and many well-known MNC’s have approached us for the technology transfer” researchers said.

This Indigenously developed antimicrobial agent can be stored at room temperature for three months. Having a wide activity spectrum and potential to control Salmonella, and Listeria bacteria, the Bug-Buster possesses commercially viable bioprocess with Hemolytic negative properties. Haemolytic negative property is not only unique but also open doors for therapeutical use, Professor Kammara explained.

Probiotics are living organisms with ‘Generally Recognized as Safe’ (GRAS) status that several companies market as food or supplements, offering protection against diarrhoea and a host of other diseases. GRAS is a United States Food and Drug Administration (FDA) designation that means a chemical or substance added to food is considered safe by experts.

Researchers believe this development could bring the paradigm shift in making germ-free foods, food preservation, and eradication of further rise of antibiotic-resistant organisms. The Bug-Buster stands globally having the ability to kill ESKAPE organisms. ESKAPE is an acronym comprising the scientific names of six highly virulent and antibiotic-resistant bacterial pathogens including *Enterococcus faecium, Staphylococcus aureus, Klebsiella pneumoniae, Acinetobacter baumannii, Pseudomonas aeruginosa,* and *Enterobacter spp*.

Apart from Professor Rajagopal Kammara, the research team included Shilja Choyam, and Priyanshi M. Jain. The study has been published in the Frontiers in Microbiology journal. (India Science Wire)

Republic NewsIndia

Researchers develop alternatives to curb antibiotic resistance

By **Rupesh Dharmik** - August 9, 2021

Professor Rajagopal Kammara with his team of researchers

New Delhi: Antibiotic resistance, the ability of bacteria and other microorganisms to resist the effects of an antibiotic to which they were once sensitive, is a major concern all over the world. A new study, conducted by the scientists at Council Of Scientific And Industrial Research–Central Food Technological Research Institute (CSIR–CFTRI), has sounded the alarm bell on

the indiscriminate and rampant use of such ‘conventional antibiotics’ in the food industry.

New protein-based antimicrobials from beneficial microbes could be a better replacement for conventional antibiotics in the food industry, the study revealed. CSIR–CFTRI researchers have identified one from beneficial microbes, to demonstrate how it is better than antibiotics. The development of natural antimicrobials and their use in the food industry is an emerging phenomenon, researchers added.

“We were able to identify antimicrobial peptides from a beneficial microbe. We checked its function in comparison with the other antimicrobial commercially available and developed in Europe. Our antimicrobial agent was found much better as it can kill WHO prioritized Group-I, Group-II, and Group-III organisms. The molecule works in very high temperatures, in harsh conditions such as acidic, and alkaline”, said Professor Rajagopal Kammara, Head, Department of Protein Chemistry and Technology, CSIR-CFTRI, who was leading the study.

“It is highly suitable for the food industry because it works in the presence of metal salts, detergents, and enzymes. It does not cause any harm after consumption, instead, it cleans up the harmful pathogens in the stomach, without harming the beneficial microbes”, added Professor Kammara.

“Everywhere the conventional antibiotics are in rampant use, even in foods such as meat, vegetables, and even one can find its traces in water. There is huge contamination of antibiotics that is creating antibiotic-resistant organisms. This rampant use is creating major problems in the environment, the beneficial microbes are turning into antibiotic-resistant. Therefore, it is time for us to look for replacements for antibiotics. The best thing may be proteins or peptides from beneficial microbes”, observed Professor Kammara.

This study began with the isolation of indigenous fermented foods, screening for bacteria producing various antimicrobials, and characterizing them. One of the best-isolated ones was the Bug-Buster produced by *Bacillus*, and it was further characterized in comparison with Nisin, a polycyclic antibacterial peptide produced by the bacterium Lactococcuslactis, used as a food preservative.

“A simple well diffusion antimicrobial assay was followed to check its ability to work in various conditions such as high temperature, pH, and presence of salts, physiological enzymes, and detergents. Antimicrobial agent Bug-Buster was purified from the organism, further characterized to know its sequence, as a protein. At genome, we were able to find its sequence by whole genome sequencing approach. The purification technology of Bug-Buster has been

patented and many well-known MNC’s have approached us for the technology transfer” researchers said.

ThisIndigenously developed antimicrobial agent can be stored at room temperature for three months. Having a wide activity spectrum and potential to control Salmonella, and Listeria bacteria, the Bug-Buster possess commercially viable bioprocess with Hemolytic negative properties. Haemolytic negative property is not only unique but also open doors for therapeutical use, Professor Kammara explained.

Probiotics are living organisms with ‘Generally Recognized as Safe’ (GRAS) status that several companies market as food or supplements, offering protection against diarrhoea and a host of other diseases. GRAS is a United States Food and Drug Administration (FDA) designation that means a chemical or substance added to food is considered safe by experts.

Researchers believe this development could bring the paradigm shift in making germ-free foods, food preservation, and eradication of further rise of antibiotic-resistant organisms. The Bug-Buster stands globally having the ability to kill ESKAPE organisms. ESKAPE is an acronym comprising the scientific names of six highly virulent and antibiotic-resistant bacterial pathogens including *Enterococcus faecium, Staphylococcus aureus, Klebsiella pneumoniae, Acinetobacter baumannii, Pseudomonas aeruginosa,* and *Enterobacter spp*.

Apart from Professor RajagopalKammara, the research team included Shilja Choyam, and Priyanshi M. Jain. The study has been published in the Frontiers in Microbiology journal.(India Science Wire)

WEBDUNIA
हिंदी

ड्रेसिंग की नई तकनीक से ठीक हो सकेंगे पुराने और जटिल घाव

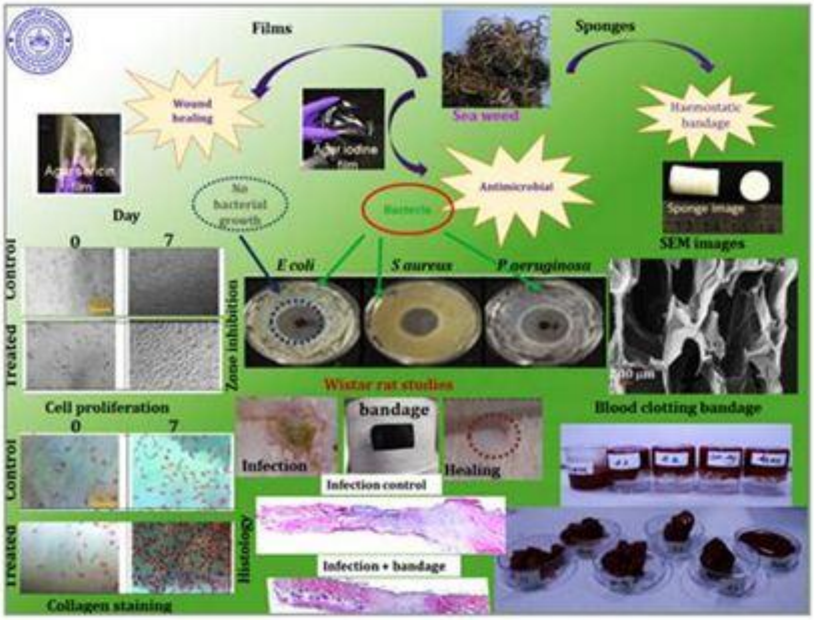

नई दिल्ली, पुराने घाव से परेशान मरीजों के लिए एक राहत भरी खबर है। समुद्री शैवाल ‘अगर’ से प्राप्त एक प्राकृतिक बहुलक यानी नेचुरल पॉलीमर से घाव पर मरहमकी उन्नत विकसित की गई है। (ड्रेसिंग) पट्टी-यह विशेषकर मधुमेह रोगियों के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो सकती है, जिनके घाव भरने में काफी समय लगता है।

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, कानपुर के डॉ विवेक वर्मा ने आयोडीन और साइट्रिक एसिड जैसे कई योजक अणुओं को जोड़कर इसे विकसित किया है। इस जैव विखंडनीय और गैरमक पट्टी को एक स्थिर एवं संक्रा-टिकाऊ स्रोत से प्राप्त करने के बाद अपेक्षित रूप दिया गया है।

इस परियोजना को भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग से उन्नत विनिर्माण प्रौद्योगिकी (डीएसटी) कार्यक्रम के अंतर्गत आवश्यक सहायता प्राप्त हुई है। अब इसे'मेक इन इंडिया' पहल के साथ भी जोड़ दिया गया है। इसे राष्ट्रीय पेटेंट मिल चुका है। चूहे के इनवीवो मॉडल पर परीक्षण किए जाने बाद ही इसे -विट्रो और इन-मान्यता प्रदान की गई है।

इस उन्नत पट्टी में सेरेसिन, आयोडीन और साइट्रिक एसिड जैसे तत्वों की महत्वपूर्ण भूमिका है। इनके सक्रिय अणुओं को जोड़ने की भूमिका का मूल्यांकन पुराने घावों के संबंध में उनके उपचार और रोकथाम के गुणों के

परिप्रेक्ष्य में किया गया है। यह नवाचार विशेष रूप से
संक्रमित मधुमेह के घावों के उपचार के लिए उपयोगी सुरक्षा आवरण प्रदान करता है। घाव की गंभीरता और प्रकृति के आधार पर इसको एक पट्टी (सिंगल लेयर), दोहरी पट्टी या (बाइलेयर) अनेक पट्टी वाली (लेयर-मल्टी) हाइड्रोजेल फिल्मों के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है।

विकास के पैमाने पर फिलहाल यह प्रौद्योगिकी तीसरे चरण में है। अभी 5 मिमी व्यास के छोटे आकार के गोलाकार घाव के साथ चूहे के मॉडल पर इस मरहमपट्टी का परीक्षण किया गया है। वह-ीं इसमें अभी केवल एक सक्रिय संघटक के साथ एक पट्टी शामिल है। परीक्षण के अगले चरण में इसे खरगोश (सिंगल लेयर ड्रेसिंग) जाएगा। और सूअर जैसे अन्य जानवरों पर परख कर इसकी प्रभोत्पादकता के स्तर को जांचा

इस नवाचार के सूत्रधार डॉ वर्मा इसमें सक्रिय सभी रसायनों को .एकल या बहुस्तरीय व्यवस्था में शामिल करने और इससे संबंधित विभिन्न मापदंडों के समायोजन की दिशा में काम कर रहे हैं। इसके अंतिम चरण में नैदानिक परीक्षण शामिल होंगे। इन चरणों के पूरा होने पर यह प्रौद्योगिकी व्यावसायिक स्तर पर उत्पादन के लिए उपलब्ध हो सकेगी। इसका एक उल्लेखनीय पहलू है कि यह मरीजों के लिए किफायती दर पर उपलब्ध हो सकेगी। ***(इंडिया साइंस वायर(***

ड्रेसिंग की इस नयी तकनीक से ठीक हो सकेंगे पुराने और जटिल घाव

पुराने घाव से परेशान मरीजों के लिए एक राहत भरी खबर है। समुद्री शैवाल ‘अगर’ से प्राप्त एक प्राकृतिक बहुलक यानी नेचुरल पॉलीमर से घाव पर मरहमकी उन्नत (ड्रेसिंग) पट्टी- विकसित की गयी है।

By Guest Writer | Mon, 9 Aug 2021

Old and complicated wounds will be able to heal with this new technique of dressing

समुद्री शैवाल के लाभ | Benefits of seaweed in Hindi

नई दिल्ली, 09 अगस्त 2021: पुराने घाव से परेशान मरीजों के लिए एक राहत भरी खबर है। **समुद्री शैवाल** **‘अगर’** से प्राप्त एक प्राकृतिक बहुलक यानी नेचुरल पॉलीमर से घाव पर मरहम) पट्टी-ड्रेसिंग) की उन्नत विकसित की गयी है। यह विशेषकर **मधुमेह रोगियों के लिए अत्यंत उपयोगी (extremely useful for diabetics)** सिद्ध हो सकती है, जिनके घाव भरने में काफी समय लगता है।

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, कानपुर के डॉ विवेक वर्मा ने आयोडीन और साइट्रिक एसिड जैसे कई योजक अणुओं को जोड़कर इसे विकसित किया है। इस जैव विखंडनीय और गैरस्थिर एवं संक्रामक पट्टी को एक-टिकाऊ स्रोत से प्राप्त करने के बाद अपेक्षित रूप दिया गया है।

राष्ट्रीय पेटेंट मिल चुका है इस परियोजना को

इस परियोजना को भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग से उन्नत विनिर्माण प्रौद्योगिकी (डीएसटी) प्त हुई है। अब इसेकार्यक्रम के अंतर्गत आवश्यक सहायता प्रा '**मेक इन इंडिया**' पहल के साथ भी जोड़ दिया गया है। इसे राष्ट्रीय पेटेंट मिल चुका है। चूहे के इन वीवो मॉडल पर परीक्षण-विट्रो और इन-किए जाने बाद ही इसे मान्यता प्रदान की गई है।

इस उन्नत पट्टी में सेरेसिन, आयोडीन और साइट्रिक एसिड जैसे तत्वों की महत्वपूर्ण भूमिका है। इनके सक्रिय अणुओं को जोड़ने की भूमिका का मूल्यांकन पुराने घावों के संबंध में उनके उपचार और रोकथाम के गुणों के परिप्रेक्ष्य में किया गया है। यह नवाचार विशेष रूप से संक्रमित मधुमेह के घावों के उपचार के लिए उपयोगी सुरक्षा आवरण प्रदान करता है।

घाव की गंभीरता और प्रकृति के आधार पर इसको एक पट्टी (सिंगल लेयर), दोहरी पट्टी या अनेक (बाइलेयर) वाली हाइड्रोजेल फिल्मों (लेयर-मल्टी) पट्टीके रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है।

विकास के पैमाने पर फिलहाल यह प्रौद्योगिकी तीसरे चरण में है। अभी 5 मिमी व्यास के छोटे आकार के गोलाकार घाव के साथ चूहे के मॉडल पर इस मरहमपट्टी का परीक्षण किया गया है। वहीं इसमें अभी केवल - शामिल है। (सिंगल लेयर ड्रेसिंग) एक सक्रिय संघटक के साथ एक पट्टी

परीक्षण के अगले चरण में इसे खरगोश और सूअर जैसे अन्य जानवरों पर परख कर इसकी प्रभोत्पादकता के स्तर को जांचा जाएगा। इस नवाचार के सूत्रधार डॉवर्मा इसमें सक्रिय सभी रसायनों को एकल या बहुस्तरीय . व्यवस्था में शामिल करने और इससे संबंधित विभिन्न मापदंडों के समायोजन की दिशा में काम कर रहे हैं। इसके अंतिम चरण में नैदानिक परीक्षण शामिल होंगे। इन चरणों के पूरा होने पर यह प्रौद्योगिकी व्यावसायिक स्तर पर उत्पादन के लिए उपलब्ध हो सकेगी। इसका एक उल्लेखनीय पहलू है कि यह मरीजों के लिए किफायती दर पर उपलब्ध हो सकेगी।

(इंडिया साइंस वायर(

फाड़ डालो डॉट कॉम
धाँसू ख़बरें और ख़बरों की चीर-फाड़

पुराने घाव से परेशान मरीजों के लिए राहत भरी खबर

हस्तक्षेप.com
उनकी खबरें जो खबर नहीं बनते

By Ram Bharose

अगस्त 9, 2021 clinical trial, diabetic, disease, DST, environmental factors, IIT Kanpur, India, Innovation, medical science, patients, pig, rabbit, science, technology, World

ड्रेसिंग की नयी तकनीक से ठीक हो सकेंगे पुराने और जटिल घाव

Relief news for patients suffering from old wounds

नई दिल्ली, 09 अगस्त 2021: पुराने घाव से परेशान मरीजों के लिए एक राहत भरी खबर है। समुद्री शैवाल ‘अगर’ से प्राप्त एक प्राकृतिक बहुलक यानी नेचुरल पॉलीमर से घाव पर मरहमकी उन्नत (ड्रेसिंग) पट्टी- विकसित की गयी है। यह विशेषकर मधुमेह रोगियों के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो सकती है, जिनके घाव भरने में काफी समय लगता है।

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, कानपुर के डॉ विवेक वर्मा ने आयोडीन और साइट्रिक एसिड जैसे कई योजक अणुओं को जोड़कर इसे विकसित किया है। इस जैव विखंडनीय और गैरसंक्रामक पट्टी को एक स्थिर एवं - टिकाऊ स्रोत से प्राप्त करने के बाद अपेक्षित रूप दिया गया है।

इस परियोजना को भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग से उन्नत विनिर्माण प्रौद्योगिकी (डीएसटी) म के अंतर्गत आवश्यक सहायता प्राप्त हुई है। अब इसेकार्यक्र‘मेक इन इंडिया’ पहल के साथ भी जोड़ दिया गया है। इसे राष्ट्रीय पेटेंट मिल चुका है। चूहे के इनवीवो मॉडल पर परीक्षण किए जाने बाद ही इसे -विट्रो और इन- मान्यता प्रदान की गई है।

इस उन्नत पट्टी में सेरेसिन, आयोडीन और साइट्रिक एसिड जैसे तत्वों की महत्वपूर्ण भूमिका है। इनके सक्रिय अणुओं को जोड़ने की भूमिका का मूल्यांकन पुराने घावों के संबंध में उनके उपचार और रोकथाम के गुणों के परिप्रेक्ष्य में किया गया है। यह नवाचार विशेष रूप से संक्रमित मधुमेह के घावों के उपचार के लिए उपयोगी सुरक्षा आवरण प्रदान करता है। घाव की गंभीरता और प्रकृति के आधार पर इसको एक पट्टी (सिंगल लेयर), दोहरी पट्टी य (बाइलेयर)ा अनेक पट्टी वाली हाइड्रोजेल फिल्मों के रूप में इस्तेमाल किया जा (लेयर-मल्टी) सकता है।

विकास के पैमाने पर फिलहाल यह प्रौद्योगिकी तीसरे चरण में है। अभी 5 मिमी व्यास के छोटे आकार के गोलाकार घाव के साथ चूहे के मॉडल पर इस मरहमपट्टी का परीक्षण किया गया है। व-हीं इसमें अभी केवल एक सक्रिय संघटक के साथ एक पट्टी शामिल है। परीक्षण के अगले चरण में इसे खरगोश (सिंगल लेयर ड्रेसिंग) से अन्य जानवरों पर परख कर इसकी प्रभोत्पादकता के स्तर को जांचा जाएगा। इस नवाचार के और सूअर जै वर्मा इसमें सक्रिय सभी रसायनों को .सूत्रधार डॉएकल या बहुस्तरीय व्यवस्था में शामिल करने और इससे संबंधित विभिन्न मापदंडों के समायोजन की दिशा में काम कर रहे हैं। इसके अंतिम चरण में नैदानिक परीक्षण शामिल होंगे। इन चरणों के पूरा होने पर यह प्रौद्योगिकी व्यावसायिक स्तर पर उत्पादन के लिए उपलब्ध हो सकेगी। इसका एक उल्लेखनीय पहलू है कि यह मरीजों के लिए किफायती दर पर उपलब्ध हो सकेगी।

(इंडिया साइंस वायर(

RD TIMES Health

ड्रेसिंग की नयी तकनीक से ठीक हो सकेंगे पुराने और जटिल घाव

RD Times Health | August 9, 2021

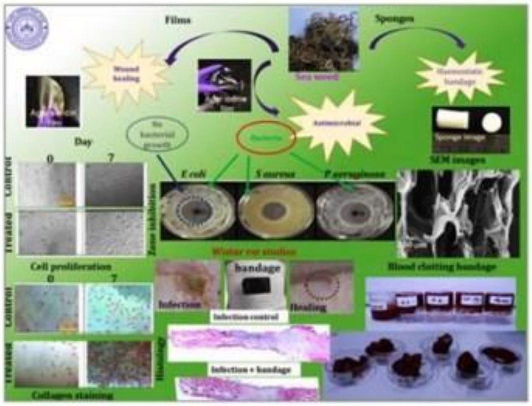

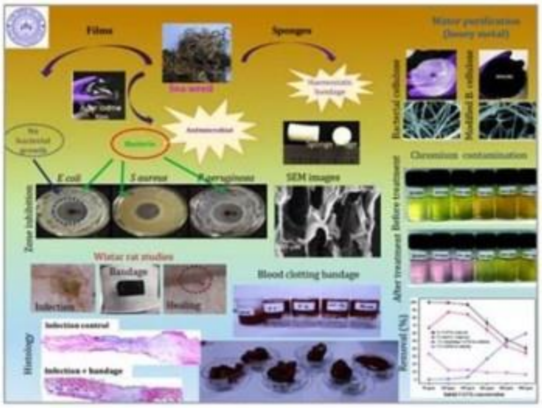

नई दिल्ली: पुराने घाव से परेशान मरीजों के लिए एक राहत भरी खबर है। समुद्री शैवाल 'अगर' से प्राप्त एक प्राकृतिक बहुलक यानी नेचुरल पॉलीमर से घाव पर मरहमकी उन्नत विकसित कीगयी है। यह (ड्रेसिंग) पट्टी- विशेषकर मधुमेह रोगियों के लिए अत्यंत उपयोगी सिद्ध हो सकती है, जिनके घाव भरने में काफी समय लगता है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, कानपुर के डॉ विवेक वर्मा ने आयोडीन और साइट्रिक एसिड जैसे कई योजक अणुओं को जोड़कर इसे विकसित किया है। इस जैव विखंडनीय और गैरसंक्रामक पट्टी को एक स्थिर एवं टिकाऊ स्रोत से - । इस परियोजना को भारत सरकार के विज्ञान एवं प्रौद्योगिकीप्राप्त करने के बाद अपेक्षित रूप दिया गया है विभाग से उन्नत विनिर्माण प्रौद्योगिकी कार्यक्रम के अंत (डीएसटी)र्गत आवश्यक सहायता प्राप्त हुई है। अब इसे 'मेक इन इंडिया' पहल के साथ भी जोड़ दिया गया है। इसे राष्ट्रीय पेटेंट मिल चुका है। चूहे के इनवीवो -ट्रो और इनवि- मॉडल पर परीक्षण किए जाने बाद ही इसे मान्यता प्रदान की गई है।

इस उन्नतपट्टी में सेरेसिन, आयोडीन और साइट्रिक एसिड जैसे तत्वों की महत्वपूर्ण भूमिका है। इनके सक्रिय अणुओं को जोड़ने की भूमिका का मूल्यांकन पुराने घावों के संबंध में उनके उपचार और रोकथाम के गुणों के परिप्रेक्ष्य में कियागया है। यह नवाचार विशेष रूप से संक्रमित मधुमेह के घावों के उपचार के लिए उपयोगी सुरक्षा आवरण प्रदान करता है। घाव की गंभीरता और प्रकृति के आधार पर इसकोएक पट्टी (सिंगल लेयर), दोहरी पट्टी (बाइलेयर) वाली हाइड्रोजेल फिल्मों के रूप में इस्तेमाल किया जा सकता है। (लेयर-मल्टी) या अनेक पट्टी

विकास के पैमाने परफिलहाल यह प्रौद्योगिकी तीसरे चरण में है। अभी 5 मिमी व्यास के छोटे आकार के गोलाकार घाव के साथ चूहे के मॉडल पर इस मरहमक्रिय संघटक पट्टी का परीक्षण किया गया है। वहीं इसमें अभी केवल एक स-शामिल है। परीक्षण के अगले चरण में इसे खरगोश और सूअर जैसे अन्य (सिंगल लेयर ड्रेसिंग) के साथ एक पट्टी जानवरों पर परख कर इसकी प्रभोत्पादकता के स्तर को जांचा जाएगा। इस नवाचार के सूत्रधार डॉवर्मा इसमें . में शामिल करने और इससे संबंधित विभिन्न मापदंडों के सक्रिय सभी रसायनों को एकल या बहुस्तरीय व्यवस्था समायोजन की दिशा में काम कर रहे हैं। इसके अंतिम चरण में नैदानिक परीक्षण शामिल होंगे। इन चरणों के पूरा होने पर यह प्रौद्योगिकी व्यावसायिक स्तर पर उत्पादन के लिए उपलब्ध हो सकेगी। इसका एक उल्लेखनीय पहलू है कि यह मरीजों के लिए किफायती दर पर उपलब्ध हो सकेगी। (इंडिया साइंस वायर)

Voice of the Nation
ORGANISER

Patent for KVIC technology to recycle plastic waste

WEBDESKAug 11, 2021, 09:04 AM IST

Umashankar Mishra

The plastic-mixed handmade paper was developed under a project named REPLAN (REducing PLAstic from Nature).

New Delhi: Khadi and Village Industries Commission (KVIC) has secured a patent registration for an innovative plastic-mixed handmade paper developed to fight the menace of plastic waste.

The patent certificate was issued to the Commission's Kumarappa National Handmade Paper Institute (KNHPI) at Jaipur, on 2nd August 2021, by the Controller of Patent at the Government of India's The Patent Office.

KVIC Chairman Shri Vinai Kumar Saxena mooted the idea of developing a plastic-mixed handmade paper in September 2018. In just two months, in November 2018, a team of scientists at KNHPI executed the project.

The plastic-mixed handmade paper was developed under a project named REPLAN (REducing PLAstic from Nature). This is the first of its kind project in India, where plastic waste is de-structured, degraded, diluted, and added to paper pulp used in making handmade paper. The invention is aligned with the Prime Minister, Mr. Narendra Modi's call for fighting the menace of single-use plastic.

KVIC Chairman welcomed the patent grant and said the production of plastic waste mixed handmade paper would serve the twin objectives of protecting the environment and creating sustainable employment.

"The innovative plastic mixed handmade paper will be of great benefit to the environment. There are nearly 2,640 handmade paper-making units in the country under KVIC and State Khadi Boards. They now have the potential to clear approximately 3,000 MT of waste plastic from nature every year. At the same time, it can create thousands of new jobs like the collection of waste plastic, cleaning and processing. It is, therefore, an apt model of sustainable development," Saxena said.

KVIC, he added, would soon begin training entrepreneurs in making plastic-mixed handmade paper and share technical know-how with the domestic paper industry.

The technology developed by KVIC uses both high & low-density waste polythene. This will add strength to the paper. The product is recyclable and eco-friendly. KVIC has developed products such as carry bags, envelopes, files/folders, etc., using plastic-mixed handmade paper. So far, it has sold over 13 lakh plastic mixed paper carry bags utilizing nearly 40 MT of waste plastic of Jaipur city while generating revenue of nearly Rs 1.30 crore.

Plastic mixed handmade paper carry bags are used at all Khadi India outlets for delivering goods to buyers. KVIC is also selling these paper bags and envelopes through its e- portal www.khadiindia.gov.in.

Courtesy: Indian Science Wire

DELHI POST
Politics | Democracy | Development

Patent for KVIC Technology to Recycle Plastic Waste

By **ISW Desk** On **Aug 16, 2021**

Khadi and Village Industries Commission (KVIC) has secured a patent registration for an innovative plastic-mixed handmade paper developed to fight the menace of plastic waste.

The patent certificate was issued to the Commission's Kumarappa National Handmade Paper Institute (KNHPI) at Jaipur, on 2nd August 2021, by the Controller of Patent at the Government of India's The Patent Office.

The idea of developing a plastic-mixed handmade paper was mooted by KVIC Chairman Shri Vinai Kumar Saxena in September 2018, and in just two months, in November 2018, the project was executed by a team of scientists at KNHPI.

The plastic-mixed handmade paper was developed under a project named REPLAN (REducing PLAstic from Nature). This is the first of its kind project in India, where plastic waste is de-structured, degraded, diluted, and added to paper pulp used in making handmade paper. The invention is aligned with the Prime Minister, Mr. Narendra Modi's call for fighting the menace of single-use plastic.

KVIC Chairman welcomed the grant of patent and said the production of plastic waste mixed handmade paper would serve the twin objectives of protecting the environment alongside creating sustainable employment.

"The innovative plastic mixed handmade paper will be of great benefit to the environment. There are nearly 2,640 handmade paper-making units in the country under KVIC and State Khadi Boards. They now have the potential to clear approximately 3,000 MT of waste plastic from nature every year. At the same time, it can create thousands of new jobs like the collection of waste plastic, cleaning and processing. It is, therefore, an apt model of sustainable development," Saxena said.

KVIC, he added, would soon begin training entrepreneurs in making plastic-mixed handmade paper and share technical know-how with the domestic paper industry.

The technology developed by KVIC uses both high & low density waste polythene. This will add strength to the paper. The product is recyclable and eco-friendly. KVIC has developed products such as carry bags, envelopes, files/folders, etc. using the plastic-mixed handmade paper. So far it has sold over 13 lakh plastic mixed paper carry bags utilizing nearly 40 MT of waste plastic of Jaipur city while generating revenue of nearly Rs 1.30 crore.

Plastic mixed handmade paper carry bags are used at all Khadi India outlets for delivering goods to the buyers. KVIC is also selling these paper bags and envelopes through its e-portal www.khadiindia.gov.in.

Indus Scrolls
Indian to the core

Patent for KVIC technology to recycle plastic waste

By **India Science Wire** - August 10, 2021

Khadi and Village Industries Commission (KVIC) has secured a patent registration for an innovative plastic-mixed handmade paper developed to fight the menace of plastic waste.

The patent certificate was issued to the Commission's Kumarappa National Handmade Paper Institute (KNHPI) at Jaipur, on 2nd August 2021, by the Controller of Patent at the Government of India's The Patent Office.

The idea of developing a plastic-mixed handmade paper was mooted by KVIC Chairman Shri Vinai Kumar Saxena in September 2018, and in just two months, in November 2018, the project was executed by a team of scientists at KNHPI.

The plastic-mixed handmade paper was developed under a project named REPLAN (REducing PLAstic from Nature). This is the first of its kind project in India, where plastic waste is de-structured, degraded, diluted, and added to paper pulp used in making handmade paper. The invention is aligned with the Prime Minister, Mr. Narendra Modi's call for fighting the menace of single-use plastic.

KVIC Chairman welcomed the grant of patent and said the production of plastic waste mixed handmade paper would serve the twin objectives of protecting the environment alongside creating sustainable employment.

"The innovative plastic mixed handmade paper will be of great benefit to the environment. There are nearly 2,640 handmade paper-making units in the country under KVIC and State Khadi Boards. They now have the potential to clear approximately 3,000 MT of waste plastic from nature every year. At the same time, it can create thousands of new jobs like the collection of waste plastic, cleaning and processing. It is, therefore, an apt model of sustainable development," Saxena said.

KVIC, he added, would soon begin training entrepreneurs in making plastic-mixed handmade paper and share technical know-how with the domestic paper industry.

The technology developed by KVIC uses both high & low density waste polythene. This will add strength to the paper. The product is recyclable and eco-friendly. KVIC has developed products such as carry bags, envelopes, files/folders, etc. using the plastic-mixed handmade paper. So far it has sold over 13 lakh plastic mixed paper carry bags utilizing nearly 40 MT of waste plastic of Jaipur city while generating revenue of nearly Rs 1.30 crore.

Plastic mixed handmade paper carry bags are used at all Khadi India outlets for delivering goods to the buyers. KVIC is also selling these paper bags and envelopes through its e-portal www.khadiindia.gov.in.

The Indian Bulletin
www.theindianbulletin.com

Patent for KVIC technology to recycle plastic waste

By **The Indian Bulletin Online** - August 12, 2021

New Delhi: Khadi and Village Industries Commission (KVIC) has secured a patent registration for an innovative plastic-mixed handmade paper developed to fight the menace of plastic waste.

The patent certificate was issued to the Commission's Kumarappa National Handmade Paper Institute (KNHPI) at Jaipur, on 2nd August 2021, by the Controller of Patent at the Government of India's The Patent Office.

The idea of developing a plastic-mixed handmade paper was mooted by KVIC Chairman Shri Vinai Kumar Saxena in September 2018, and in just two months, in November 2018, the project was executed by a team of scientists at KNHPI.

The plastic-mixed handmade paper was developed under a project named REPLAN (REducingPLAstic from Nature). This is the first of its kind project in India, where plastic waste is de-structured, degraded, diluted, and added to paper pulp used in making handmade paper. The invention is aligned with the Prime Minister, Mr. Narendra Modi's call for fighting the menace of single-use plastic.

KVIC Chairman welcomed the grant of patent and said the production of plastic waste mixed handmade paper would serve the twin objectives of protecting the environment alongside creating sustainable employment.

"The innovative plastic mixed handmade paper will be of great benefit to the environment. There are nearly 2,640 handmade paper-making units in the country under KVIC and State Khadi Boards. They nowhave the potential to clearapproximately 3,000 MT of waste plastic from nature every year. At the same time, it can create thousands of new jobs like the collection of waste plastic, cleaningand processing. It is, therefore, an apt model of sustainable development," Saxena said.

KVIC, he added, would soon begin training entrepreneurs in making plastic-mixed handmade paper and share technical know-how with the domestic paper industry.

The technology developed by KVIC uses both high & low density waste polythene. This will add strength to the paper. The product is recyclable and eco-friendly. KVIC has developed products such as carry bags, envelopes, files/folders, etc. using the plastic-mixed handmade paper. So far it has sold over 13 lakh plastic mixed paper carry bags utilizing nearly 40 MT of waste plastic of Jaipur city while generating revenue of nearly Rs 1.30 crore.

Plastic mixed handmade paper carry bags are used at all Khadi India outlets for delivering goods to the buyers. KVIC is also selling these paper bags and envelopes through its e-portal www.khadiindia.gov.in. (India Science Wire)

DELHI POST
Politics | Democracy | Development

Scientists Develop Low-Cost Biodegradable Wound Dressing Film

By **Team DP** On **Aug 15, 2021**

Cotton wool, lint, and gauzes are commonly used wound dressing materials. They are often deployed to manage the wound exudates and accelerate the healing process. However, a major disadvantage of such materials is the concerning painful removal exercises that can even damage a healed tissue. Further, their opaqueness becomes a critical issue for sensitive wound applications that demand periodic visualization-based analysis and treatment procedures.

IIT Guwahati researchers

Researchers at the Indian Institute of Technology (IIT) Guwahati have invented a biodegradable low-cost composite transparent wound dressing film. This material, based on the integration of a synthetic polymer, is non-toxic and will create a moist environment that would enable the body to heal on its own through the endogenous enzymes, according to recent research. Some of the findings have been published in the *International Journal of Biological Macromolecules* journal.

This study was conducted by Ms. Aritra Das (First Author), Ph.D. Scholar, Ms. Srirupa Bhattacharya, Doctoral Fellow, IIT Guwahati, Prof. Chandan Das, and Prof. Ramagopal V. S. Uppaluri, Faculty in the Department of Chemical Engineering, IIT Guwahati.

Several promising features and advantages exist for the polymer-based hydrogel films as novel wound dressing materials. In addition to their bio-degradability that counters environmental hazards, the mentioned films are easy for people to afford them. Wound dressing films are biocompatible and prevent any kind of toxicity that counters and hampers the growth of cells, tissues and natural healing processes. This is a transparent material that helps wound observation without changing the dressing materials. Further, ease of removal can be addressed, thanks to the controlled moist environment being facilitated by the material. Thus, the transparent film can be easily removed, said IIT Guwahati statement.

"*This invention of IIT Guwahati has the potential to make a huge impact on the field. It emphasizes upon the integration of a synthetic polymer namely polyvinyl alcohol (PVA) with a natural polymer starch (St) to eventually achieve a low-cost, biodegradable, non-toxic and transparent composite hydrogel*," said Ms. Aritra Das.

IIT Guwahati has created the knowledge framework and associated protocols for successful identification and optimization of polymer hydrogel films for the probable wound dressing applications.

Such customized and effectively designed novel materials provide the necessary hope to effectively address issues such as biodegradability of synthetic polymer-based materials, cost of raw materials and processes, utilization of expensive natural polymers to achieve functional materials, and biocompatibility of developed products, among others. All

these are expected to further enrich the on-field applications of polymers in real-world applications.

Explaining how this invention will have an impact in the real world, Prof. Chandan Das, Department of Chemical Engineering, IIT Guwahati, said, “The product has potential to prevent bacterial invention even after it gets swelled under hydrolytic environment and loses its occlusivity. The steady weight loss characteristics presented by the polymer network provide essential release of the components, especially citric acid which secures the protective barrier. Apart from providing adequate environment towards the growth of the wounded cells, the leached components from the composite as well assist towards the accelerated growth of the healthy cells and tissues.”

The laboratory achieved film constitution can be further targeted towards in-vivo characterizations and needful scale-up investigations. The enhancement of PVA-St composite hydrogel film characteristics with malic acid replacing citric acid affirmed even more promising results in terms of both property enhancement as a viable wound dressing film, and reduction in the retail cost of the film fabrication.

Further, elaborating on the current status of the research and how it can be taken to the field, Prof. Ramagopal V. S. Uppaluri, Department of Chemical Engineering, IIT Guwahati, said, “The study has been carried out in an experimental and tabletop research environment that needs further studies towards scale-up as well as in-vivo analysis (real world applications). Among these, the scale-up related studies can be addressed after targeting the in-vivo analysis using specimens such as wounded rats.”

The laboratory scale-based retail cost of the optimized CA-based PVA-St composite hydrogel film has been about ₹ 0.188/cm^2, which is about 66 percent inexpensive in comparison with similar commercial materials that cost ₹ 0.565 /cm^2

Considering processing costs and probable insights from scale-up studies, the anticipated price of the developed materials is expected to be about 50% or lesser of the commercial price of the mentioned materials. Compared to the CA-based PVA-St composite hydrogel film, the recently invented MA-based similar film has been about 4.56 percent inexpensive. (India Science Wire)

Scientists develop low-cost biodegradable wound dressing film

Editor | Aug 13, 2021 - 08:11

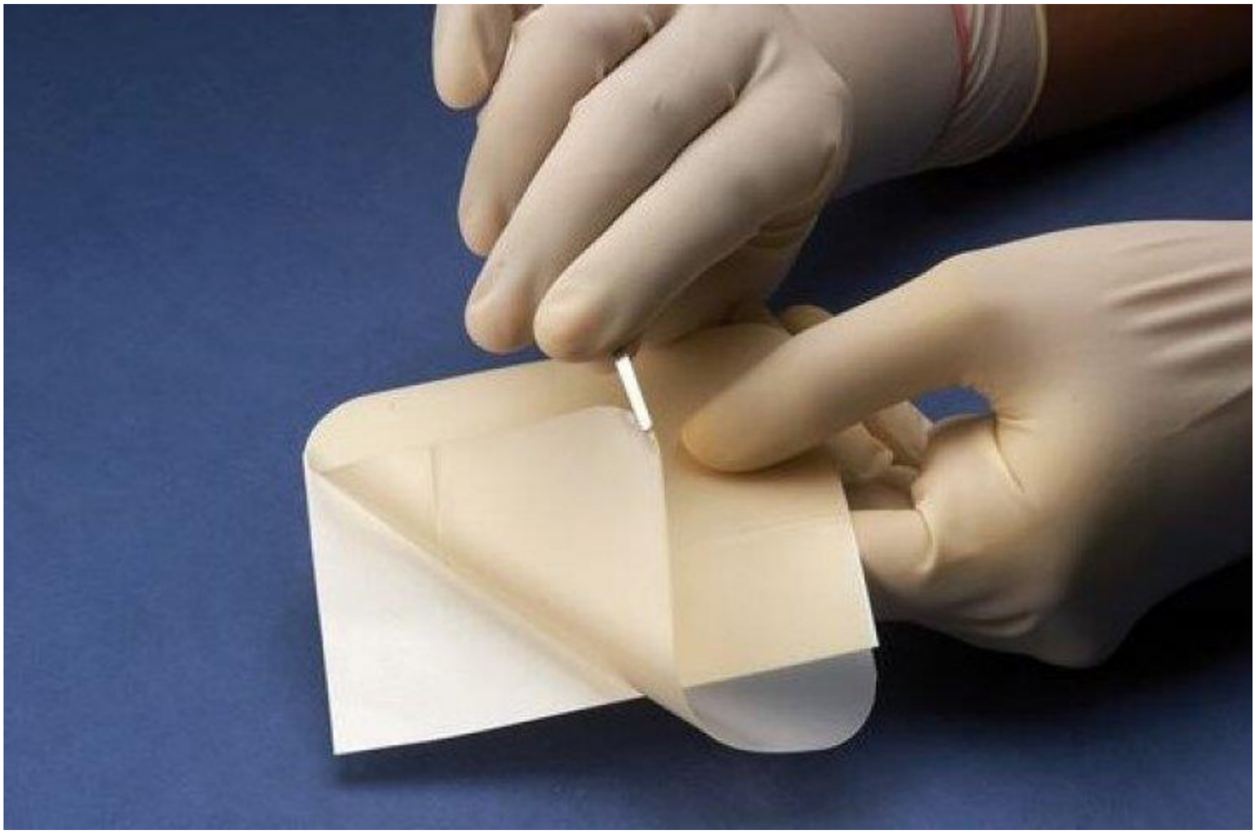

Wound dressings made of cotton wool, lint, or gauzes are all common. These materials are used to reduce the amount of wound exudates and speed up the healing process. They have a downside: they can cause tissue damage and require painful removal. Their opaque nature is a problem for sensitive wound applications, which require periodic visualization-based analysis and treatment.

The Indian Institute of Technology (IIT Guwahati) has created a low-cost, biodegradable transparent wound dressing film. The material is made from a combination of a synthetic polymer and a water-soluble adhesive. This will allow the body to heal itself through endogenous enzymes. Some of the findings have been published in the International Journal of Biological Macromolecules journal.

This study was performed by Ms. Aritra das (First Author), Ph.D. scholar, Ms. Srirupa Battacharya, Doctoral Fellow at IIT Guwahati and Prof. Chandan Das. Prof. Ramagopal V. S. Uppaluri is Faculty in the Department of Chemical Engineering at IIT Guwahati.

The polymer-based hydrogel film is a novel way to treat wounds. There are many promising features and benefits. The mentioned films are biodegradable and can be used to protect the environment. They are also affordable. The wound dressing films are biocompatible, and they prevent any toxicity from affecting the growth of cells, tissues, and natural healing processes. It is transparent and allows for wound observation, without the need to change dressings. The material's controlled moisture environment makes it easy to remove. According to an IIT Guwahati statement, transparent films can be removed easily.

"IIT Guwahati's invention has the potential for a significant impact on the field. It focuses on the combination of a synthetic plastic, namely polyvinyl alcohol, (PVA), with a natural starch (St), to eventually create a low-cost composite hydrogel that is biodegradable, transparent, non-toxic, and non-toxic." said Ms. Aritra.

IIT Guwahati created the knowledge framework for the successful optimization and identification of polymer hydrogel film for wound dressing applications.

These novel materials can be customized and designed in a way that is effective and addresses issues like biodegradability of synthetic-based polymer-based materials; cost of raw materials and processing; utilization of costly natural polymers to create functional materials; and biocompatibility. These will all be used to enhance the field applications of polymers in real world applications.

Professor Chandan Das of the Department of Chemical Engineering at IIT Guwahati explained how this invention would impact the real world. He said that "The product has potential prevent bacterial invention even if it gets swelled in a hydrolytic environment and loses occlusivity." The polymer network's steady weight loss provides essential release of components, particularly citric acid, which protects the barrier. The leached components of the composite not only provide a favorable environment for the growth of wounded cells but also aid in the rapid growth of healthy cells and tissues.

This laboratory-achieved film constitution can then be used to further target in-vivo characterizations or scale-up studies. PVA-St composite film characteristics were enhanced with malic acid replacing the citric acid. This resulted in even better results in terms both of property enhancement and lower retail costs.

Prof. Ramagopal V. S. Uppaluri from the Department of Chemical Engineering at IIT Guwahati outlined the current state of the research and suggested ways it could be applied to the field. He said that the study was done in an experimental and tabletop environment and needed further studies for scale-up and in-vivo analysis (real-world applications). The scale-up studies can be addressed by focusing on in-vivo analysis with specimens like wounded rats.

The lab-based retail price of the PVA-St optimized composite hydrogel film was Rs 0.188/cm2. This is about 66% less than similar commercial materials which cost Rs 0.565/cm2.

The anticipated price of the materials will be half of what it would cost to produce them, taking into account the processing costs and the likely insights from scale-up trials. Comparable to the CA-based PVA/St composite hydrogel film film, the MA-based similar film was 4.56 percent less expensive. (India Science Wire).

Voice of the Nation

ORGANISER

Scientists develop low-cost biodegradable wound dressing film

WEBDESK Aug 11, 2021, 09:17 AM IST

Umashankar Mishra

Researchers at the Indian Institute of Technology (IIT) Guwahati have invented a biodegradable low-cost composite transparent wound dressing film.

New Delhi: Cotton wool, lint, and gauzes are commonly used wound dressing materials. They are often deployed to manage the wound exudates and accelerate the healing process. However, a

major disadvantage of such materials is the concerning painful removal exercises that can even damage a healed tissue. Further, their opaqueness becomes a critical issue for sensitive wound applications that demand periodic visualization-based analysis and treatment procedures.

Researchers at the Indian Institute of Technology (IIT) Guwahati have invented a biodegradable low-cost composite transparent wound dressing film. According to recent research, this material, based on the integration of a synthetic polymer, is non-toxic and will create a moist environment that would enable the body to heal on its own through the endogenous enzymes. Some of the findings have been published in the International Journal of Biological Macromolecules journal.

This study was conducted by Ms. Aritra Das (First Author), Ph.D. Scholar, Ms. Srirupa Bhattacharya, Doctoral Fellow, IIT Guwahati Prof. Chandan Das, and Prof. Ramagopal V. S. Uppaluri, Faculty in the Department of Chemical Engineering, IIT Guwahati.

Several promising features and advantages exist for the polymer-based hydrogel films as novel wound dressing materials. In addition to their bio-degradability that counters environmental hazards, the mentioned films are easy for people to afford them. Wound dressing films are biocompatible and prevent any kind of toxicity that counters and hampers the growth of cells, tissues, and natural healing processes. This is a transparent material that helps wound observation without changing the dressing materials. Further, ease of removal can be addressed, thanks to the controlled moist environment being facilitated by the material. Thus, the transparent film can be easily removed, said IIT Guwahati statement.

“This invention of IIT Guwahati has the potential to make a huge impact on the field. It emphasizes upon the integration of a synthetic polymer namely polyvinyl alcohol (PVA) with a natural polymer starch (St) to eventually achieve a low-cost, biodegradable, non-toxic and transparent composite hydrogel,” said Ms. Aritra Das.

IIT Guwahati has created the knowledge framework and associated protocols for successfully identifying and optimising polymer hydrogel films for probable wound dressing applications.

Such customized and effectively designed novel materials provide the necessary hope to effectively address issues such as biodegradability of synthetic polymer-based materials, cost of raw materials and processes, utilization of expensive natural polymers to achieve functional materials, and biocompatibility of developed products, among others. All these are expected to further enrich the on-field applications of polymers in real-world applications.

Explaining how this invention will have an impact in the real world, Prof. Chandan Das, Department of Chemical Engineering, IIT Guwahati, said, “The product has potential to prevent bacterial invention even after it gets swelled under hydrolytic environment and loses its occlusivity. The steady weight loss characteristics presented by the polymer network provide an essential release of the components, especially citric acid, which secures the protective barrier.

Apart from providing adequate environment towards the growth of the wounded cells, the leached components from the composite as well assist towards the accelerated growth of the healthy cells and tissues.”

The laboratory achieved film constitution can be further targeted towards in-vivo characterizations and needful scale-up investigations. The enhancement of PVA-St composite hydrogel film characteristics with malic acid replacing citric acid affirmed even more promising results in terms of both property enhancement as a viable wound dressing film and reduction in the retail cost of the film fabrication.

Further, elaborating on the current status of the research and how it can be taken to the field, Prof. Ramagopal V. S. Uppaluri, Department of Chemical Engineering, IIT Guwahati, said, “The study has been carried out in an experimental and tabletop research environment that needs further studies towards scale-up as well as in-vivo analysis (real world applications). Among these, the scale-up related studies can be addressed after targeting the in-vivo analysis using specimens such as wounded rats.”

The laboratory scale-based retail cost of the optimized CA-based PVA-St composite hydrogel film has been about ₹ 0.188/cm 2, which is about 66 per cent inexpensive in comparison with similar commercial materials that cost ₹ 0.565 /cm 2 Considering processing costs and probable insights from scale-up studies, the anticipated price of the developed materials is expected to be about 50% or lesser of the commercial price of the mentioned materials. Compared to the CA-based PVA-St composite hydrogel film, the recently invented MA-based similar film has been about 4.56 per cent inexpensive.

Courtesy: India Science Wire

India हिन्दी waterportal

जलवायु परिवर्तन पर 'रेड कोड अलर्ट'

Source: इंडिया साइंस वायर Submitted by Editorial Team on Wed, 08/11/2021 - 11:28

जलवायु परिवर्तन, फोटोसाभार : इंडिया साइंस वायर

नई दिल्ली, 10 अगस्त संयुक्त राष्ट्र द्वारा :(इंडिया साइंस वायर)9 अगस्त को जलवायु परिवर्तन पर अंतर- की ताजा (आईपीसीसी) सरकारी पैनलरिपोर्ट जारी की गई है। इस रिपोर्ट का संदेश और सार पृथ्वी के लिए तमाम खतरों की ओर संकेत करता है। जलवायुपरिवर्तन के दुष्परिणामों से न केवल मानव जाति-, बल्कि पृथ्वी पर जीवन को संभालने वाले पारिस्थितिक तंत्र का तानाबाना ही बदल जाने की आशंका जताई जा रही है। इस- रिपोर्ट को मानवता के लिए कोड रेड अलर्ट का नाम दिया जा रहा है। इसके माध्यम से वैज्ञानिकों ने एक तरह की स्पष्ट चेतावनी दे दी है कि यदि मानव ने अपनी गतिविधियों पर अंकुश नहीं लगाया तो आने वाले समय में उसका अस्तित्व ही खतरे में पड़ सकता है।

रिपोर्ट के अनुसार, 'वातावरण लगातार गर्म हो रहा है। तय है कि हालात और खराब होने वाले हैं। भागने या छिपने के लिए भी जगह नहीं बचेंगी।' इस चेतावनी को ध्यान में रखते हुए ही शीर्ष वैश्विक संस्था संयुक्त राष्ट्र ने इसे मानवता के लिए रेड कोड अलर्ट कहा है, जिसमें जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग के लिए सीधे तौर पर मानवीय गतिविधियों को जिम्मेदार बताया गया है।

करीब 3000 पन्नों की आईपीसीसी की इस रिपोर्ट को दुनिया भर के 234 वैज्ञानिकों ने मिलकर तैयार किया है। इससे पहले ऐसी रिपोर्ट वर्ष 2013 में आई थी। ताजा रिपोर्ट में पांच संभावित परिदृश्य पर विचार किया गया है। राहत की बात सिर्फ इतनी है कि इसमें व्यक्त सबसे खराब परिदृश्य के आकार लेने की आशंका बेहद न्यून बताई गई है। इसका आधार विभिन्न सरकारों द्वारा कार्बन उत्सर्जन में कटौती कि लिए किए जा रहे प्रयासों को

बताया गया है, लेकिन पृथ्वी के तापमान में जिस रफ्तार से बढ़ोतरी होती दिख रही है, उसे देखते हुए ये प्रयास भी अपर्याप्त माने जा रहे हैं। फिर भी इनके दम पर सबसे खराब परिदृश्य के घटित होने की आशंका कम बताई गई है।

रिपोर्ट के अनुसार सबसे बुरा परिदृश्य यही हो सकता कि यदि जलवायु परिवर्तन को रोकने के लिए प्रयास सिरे नहीं चढ़ पाते हैं तो इस सदी के अंत तक पृथ्वी का औसत तापमान 3.3 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ सकता है। कुछ जानकार ऐसी बढ़ोतरी को प्रलयंकारी मान रहे हैं। उल्लेखनीय है कि वर्ष 2015 में पेरिस जलवायु समझौते में विभिन्न अंशभागियों ने इस पर सहमति जताई थी कि 21वीं सदी के अंत तक पृथ्वी का अधिकतम तापमान 1.5 डिग्री सेल्सियस से अधिक नहीं बढ़ने देना है। अमेरिका जैसे देश की पेरिस समझौते पर असहमति से यह लक्ष्य भी अधर में पड़ता दिख रहा है। इस सदी के समापन में अभी काफी समय है और पृथ्वी का तापमान पहले ही 1.1 प्रतिशत बढ़ चुका है। स्पष्ट है कि इस सदी के अंत तक पृथ्वी के तापमान में बढ़ोतरी लक्षित सीमा से आगे निकल जाएगी। आईपीसीसी की रिपोर्ट के सभी अनुमान इस रुझान की पुष्टि भी करते हैं।

इस रिपोर्ट की सहप्रतिष्ठित जलवायु वैज्ञानिक वेलेरी मेसन डे अध्यक्ष और फ्रांस की-मॉट का कहना है कि अगले कुछ दशकों के दौरान हमें गर्म जलवायु के लिए तैयार रहना होगा। उनका यह भी मानना है कि ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन पर अंकुश लगाकर हम स्थिति से कुछ हद तक बच भी सकते हैं। रिपोर्ट में बढ़ते तापमान के लिए कार्बन डाई ऑक्साइड और मीथेन जैसी गैसों को ही मुख्य रूप से जिम्मेदार बताया गया है। बताया गया है कि इनके उत्सर्जन के प्राकृतिक माध्यम औसत तापमान में 10वें या 20वें हिस्से के बराबर वृद्धि की कारण बन सकते हैं।

इस रिपोर्ट को इस आधार पर भी भयावह संकेत माना जा रहा है कि बढ़ते तापमान के कारण विश्व भर में प्रतिकूल मौसमी परिघटनाओं में तेजी वृद्धि हुई है। हाल के दिनों में आर्कटिक से लेकर अंटार्कटिका तक बर्फ पिघलने की तस्वीरें देखने को मिली हैं। वहीं, हिमालयी हिमनद भी तेजी से अपना वजूद खोते जा रहे हैं। इसका परिणाम समुद्री जल के बढ़ते हुए स्तर के रूप में सामने आ रहा है। यदि औसत तापमान वृद्धि को 2 डिग्री सेल्सियस तक भी रोक लिया गया तब भी माना जा रहा है कि वर्ष 2030 तक समुद्र के जल स्तर में बढ़ोतरी को दो से तीन मीटर तक के दायरे में रोका जा सकता है। हालांकि इसके भी खासे दुष्प्रभाव होंगे, लेकिन यह यकीनन सबसे खराब परिदृश्य के मुकाबले अपेक्षाकृत बेहतर स्थिति होगी।

आईपीसीसी की रिपोर्ट कई और खतरनाक रुझानों की ओर संकेत करती है। विश्व में पहले जो हीट वेव्स यानी गर्म हवाओं के थपेड़े आधी सदी यानी पचास वर्षों में आते थे वे अब मात्र एक दशक के अंतराल पर आने लगे हैं। इससे विषम मौसमी परिघटनाएं जन्म लेती हैं। भारत के संदर्भ में भी रिपोर्ट कहती है कि जलवायु परिवर्तन के कारण गर्म हवाएं, चक्रवात, अतिवृष्ट और बाढ़ जैसी समस्याएं 21वीं सदी में बेहद आम हो जाएंगी। महासागरों में विशेषकर हिंद महासागर सबसे तेजी से गर्म हो रहा है। इसके भारत के लिए गहरे निहितार्थ होंगे। इस पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए केंद्रीय वन, पर्यावरण एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री भूपेंद्र यादव ने कहा है कि यह रिपोर्ट विकसित देशों के लिए स्पष्ट रूप से संकेत है कि वे अपने द्वारा किए जा रहे उत्सर्जन में कटौती के प्रयासों को और गति दें। (इंडिया साइंस वायर)

ISW/RM/MoEFCC/HIN/10/08/2021

जलवायु परिवर्तन पर 'रेड कोड अलर्ट'

News Wave Wednesday, 11 August, 2021

संयुक्त राष्ट्र संघ ने जलवायु परिवर्तन पर आईपीसीसी की ताजा रिपोर्ट से चेताया

न्यूजवेव@ नई दिल्ली

संयुक्त राष्ट्र संघ ने 9 अगस्त को जलवायु परिवर्तन पर अंतर) सरकारी पैनल-IPCC) की ताजा रिपोर्ट जारी की है। यह रिपोर्ट पृथ्वी पर संभावित खतरे को आगाह करती है। जलवायु परिवर्तन के दुष्परिणाम से धरती पर जीवन संभालने वाले पारिस्थितिक तंत्र में आमूलचूल बदलाव होने की आशंका जताई गई है। दूसरें शब्दों में, इस रिपोर्ट को मानवता के लिए रेड कोड अलर्ट का नाम दिया जा रहा है। रिपोर्ट में वैज्ञानिकों ने स्पष्ट चेतावनी दी कि मानव ने अपनी गतिविधियों पर अंकुश नहीं लगाया तो आने वाले समय में उसका अस्तित्व ही खतरे में पड़ सकता है।

वैज्ञानिक रिपोर्ट के अनुसार, 'दुनिया में वातावरण लगातार गर्म हो रहा है। तय है कि हालात और खराब होने वाले हैं। भागने या छिपने के लिए भी जगह नहीं बचेंगी।' इस चेतावनी को ध्यान में रखते हुए ही शीर्ष वैश्विक संस्था संयुक्त राष्ट्र ने इसे मानवता के लिए रेड कोड अलर्ट कहा है, जिसमें जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग के लिए सीधे तौर पर मानवीय गतिविधियों को जिम्मेदार बताया गया है।

करीब 3000 पेज की IPCC रिपोर्ट को दुनिया के 234 वैज्ञानिकों ने तैयार किया है। ताजा रिपोर्ट में पांच संभावित परिदृश्य पर विचार किया गया है। राहत की बात सिर्फ इतनी है कि इसमें व्यक्त सबसे खराब परिदृश्य के आकार लेने की आशंका बेहद न्यून बताई गई है। इसका आधार विभिन्न सरकारों द्वारा कार्बन उत्सर्जन में कटौती के लिए किए जा रहे प्रयासों को बताया गया है, लेकिन पृथ्वी के तापमान में जिस रफ्तार से बढ़ोतरी होती दिख रही है, उसे देखते हुए ये प्रयास भी अपर्याप्त माने जा रहे हैं। फिर भी इनके दम पर सबसे खराब परिदृश्य के घटित होने की आशंका कम बताई गई है।

औसत तापमान 3.3 डिग्री सेल्सियस बढेगा

रिपोर्ट के अनुसार सबसे बुरा परिदृश्य यही हो सकता कि यदि जलवायु परिवर्तन को रोकने के लिए प्रयास सिरे नहीं चढ़ पाते हैं तो इस सदी के अंत तक पृथ्वी का औसत तापमान 3.3 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ सकता है। जानकार ऐसी बढ़ोतरी को प्रलयंकारी मान रहे हैं। उल्लेखनीय है कि वर्ष 2015 में पेरिस जलवायु समझौते में विभिन्न अंशभागियों ने इस पर सहमति जताई थी कि 21वीं सदी के अंत तक पृथ्वी का अधिकतम तापमान 1.5 डिग्री सेल्सियस से अधिक नहीं बढ़ने देना है। अमेरिका जैसे देशकी पेरिस समझौते पर असहमति से यह लक्ष्य भी अधर में पड़ता दिख रहा है। इस सदी के समापन में अभी काफी समय है और पृथ्वी का तापमान पहले ही 1.1 प्रतिशत बढ़ चुका है। स्पष्ट है कि इस सदी के अंत तक पृथ्वी के तापमान में बढ़ोतरी लक्षित सीमा से आगे निकल जाएगी। IPCC की रिपोर्ट के सभी अनुमान इस रुझान की पुष्टि भी करते हैं।

इस रिपोर्ट की सहअध्यक्ष और फ्रांस की प्रतिष्ठित जलवायु वैज्ञानिक वेलेरी मेसन डेमॉट का कहना है कि अगले - कुछ दशकों के दौरान हमें गर्म जलवायु के लिए तैयार रहना होगा। उनका यह भी मानना है कि ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन पर अंकुश लगाकर हम स्थिति से कुछ हद तक बच भी सकते हैं। रिपोर्ट में बढ़ते तापमान के लिए कार्बन डाई ऑक्साइड और मीथेन जैसी गैसों को ही मुख्य रूप से जिम्मेदार बताया गया है। बताया गया है

कि इनके उत्सर्जन के प्राकृतिक माध्यम औसत तापमान में 10वें या 20वें हिस्से के बराबर वृद्धि की कारण बन सकते हैं।

गर्म हवाओं के थपेड़े आने लगे

आईपीसीसी की रिपोर्ट कई और खतरनाक रुझानों की ओर संकेत करती है। विश्व में पहले जो हीट वेव्स यानी गर्म हवाओं के थपेड़े आधी सदी यानी पचास वर्षों में आते थे वे अब मात्र एक दशक के अंतराल पर आने लगे हैं। इससे विषम मौसमी परिघटनाएं जन्म लेती हैं। भारत के संदर्भ में भी रिपोर्ट कहती है कि जलवायु परिवर्तन के कारण गर्म हवाएं, चक्रवात, अतिवृष्ट और बाढ़ जैसी समस्याएं 21वीं सदी में बेहद आम हो जाएंगी। महासागरों में विशेषकर हिंद महासागर सबसे तेजी से गर्म हो रहा है। इसके भारत के लिए गहरे निहितार्थ होंगे। इस पर अपनीप्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए केंद्रीय वन,पर्यावरण एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री भूपेंद्र यादव ने कहा है कि यह रिपोर्ट विकसित देशों के लिए स्पष्ट रूप से संकेत है कि वे अपने द्वारा किए जा रहे उत्सर्जन में कटौती के प्रयासों को और गति दें।(इंडिया साइंस वायर)

जलवायु परिवर्तन पर 'रेड कोड अलर्ट'

August 11, 2021 / DNU Team

संयुक्त राष्ट्र की ओर से 9 अगस्त को इंटरगवर्नमेंटल पैनल ऑन क्लाइमेट चेंज की ताजा रिपोर्ट जारी (आईपीसीसी) है। इस रिपोर्ट का संदेश और सार पृथ्वी के की गईलिए सभी खतरों की ओर इशारा करता है। जलवायु परिवर्तन के दुष्परिणामों से न केवल मानव जाति, बल्कि पृथ्वी पर जीवन का समर्थन करने वाले पारिस्थितिक तंत्र के तानेबाने - मैनिटी नाम दिया जा रहा है। इसके माध्यमको बदलने की आशंका है। इस रिपोर्ट को कोड रेड अलर्ट फॉर ह्यू से वैज्ञानिकों ने एक तरह की स्पष्ट चेतावनी दी है कि यदि मनुष्य ने अपनी गतिविधियों पर अंकुश नहीं लगाया तो आने वाले समय में उनका अस्तित्व खतरे में पड़ सकता है।

रिपोर्ट के मुताबिक, 'माहौल लगातार गर्म हो रहा है। यह तय है कि स्थिति और खराब होने वाली है। भागने या छिपने की जगह नहीं होगी। इस चेतावनी को ध्यान में रखते हुए शीर्ष वैश्विक निकाय संयुक्त राष्ट्र ने इसे मानवता के लिए रेड कोड अलर्ट कहा है, जिसमें मानव गतिविधियां जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग के लिए सीधे तौर पर जिम्मेदार हैं।

करीब 3000 पन्नों की इस आईपीसीसी रिपोर्ट को दुनिया भर के 234 वैज्ञानिकों ने तैयार किया है। इससे पहले ऐसी रिपोर्ट साल 2013 में आई थी। ताजा रिपोर्ट में पांच संभावित परिदृश्यों पर विचार किया गया है। राहत की बात यह है कि इसमें सबसे खराब स्थिति के व्यक्त होने की संभावना बेहद कम बताई जा रही हैइसका आधार विभिन्न . सरकारों द्वारा कार्बन उत्सर्जन में कटौती के लिए किए जा रहे प्रयासों को दिया गया है, लेकिन जिस गति से पृथ्वी का तापमान बढ़ रहा है, उसे देखते हुए इन प्रयासों को भी अपर्याप्त माना जाता है। फिर भी सबसे खराब स्थिति के अपने आप होने की संभावना कम बताई जाती है।

रिपोर्ट के मुताबिक, सबसे खराब स्थिति यह हो सकती है कि अगर जलवायु परिवर्तन को रोकने के प्रयास काम नहीं आए तो इस सदी के अंत तक पृथ्वी का औसत तापमान 3.3 डिग्री सेल्सियस बढ़ सकता है। कुछ विशेषज्ञ इस तरह की वृद्धि को विनाशकारी मान रहे हैं। उल्लेखनीय है कि वर्ष 2015 में पेरिस जलवायु समझौते में विभिन्न प्रतिभागियों ने 21वीं सदी के अंत तक पृथ्वी के अधिकतम तापमान को 1.5 डिग्री सेल्सियस से अधिक नहीं बढ़ने देने पर सहमति व्यक्त की थी। पेरिस समझौते पर अमेरिका जैसे देश की असहमति के कारण यह लक्ष्य भी अधर में है। इस सदी के अंत तक आने में अभी काफी समय है और पृथ्वी के तापमान में पहले ही 1.1 प्रतिशत की वृद्धि हो चुकी है। स्पष्ट है कि इस सदी के अंत तक पृथ्वी के तापमान में वृद्धि लक्ष्य सीमा से अधिक हो जाएगी। आईपीसीसी रिपोर्ट के सभी अनुमान इस प्रवृत्ति की पुष्टि करते हैं।

इस रिपोर्ट के सहअध्यक्ष और फ्रांस के प्रतिष्ठित जलवायु वैज्ञानिक वैलेरी मेसन डैमोट का कहना है कि अगले कुछ - गैसों के है कि ग्रीनहाउसदशकों के दौरान हमें गर्म जलवायु के लिए तैयार रहना होगा। उनका यह भी मानना उत्सर्जन पर अंकुश लगाकर हम कुछहद तक स्थिति से बच सकते हैं। रिपोर्ट में बढ़ते तापमान के लिए मुख्य रूप से कार्बन डाइऑक्साइड और मीथेन जैसी गैसें जिम्मेदार हैं। यह बताया गया है कि उनके उत्सर्जन के प्राकृतिक साधन औसत तापमान के 10वें या 20वें हिस्से की वृद्धि का कारण बन सकते हैं।

इस रिपोर्ट को इस आधार पर भी भयावह संकेत माना जा रहा है कि बढ़ते तापमान के कारण दुनिया भर में प्रतिकूल मौसम की घटनाओं में तेज वृद्धि हुई है। हाल के दिनों में आर्कटिक से लेकर अंटार्कटिका तक बर्फ पिघलने की तस्वीरें देखने को मिली हैं। वहीं हिमालय के ग्लेशियर भी तेजी से अपना अस्तित्व खो रहे हैं। इससे समुद्र का जल स्तर बढ़ रहा है। भले ही औसत तापमान वृद्धि को 2 डिग्री सेल्सियस तक नियंत्रित कर लिया जाए, फिर भी यह माना जाता है कि वर्ष 2030 तक समुद्र के स्तर में वृद्धि को दो से तीन मीटर के दायरे में रोका जा सकता है। जबकि इसके महत्वपूर्ण दुष्प्रभाव भी होंगे, यह निश्चित रूप से सबसे खराब स्थिति की तुलना में बेहतर स्थिति होगी।

आईपीसीसी की रिपोर्ट कई और खतरनाक प्रवृत्तियों की ओर इशारा करती है। आधी सदी यानि पचास साल में दुनिया में जो गर्मी की लहरें आती थीं, वे एक दशक के अंतराल पर ही आने लगी हैं। यह विषम मौसम की घटनाओं को जन्म देता है। भारत के संदर्भ में भी रिपोर्ट कहती है कि जलवायु परिवर्तन के कारण 21वीं सदी में गर्म हवाएं, चक्रवात, बाढ़ और बाढ़ जैसी समस्याएं बहुत आम हो जाएंगी। महासागरों में, विशेष रूप से हिंद महासागर, सबसे तेजी से गर्म हो रहा है। इसका भारत पर गहरा प्रभाव पड़ेगा। इस पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए केंद्रीय वन, पर्यावरण और जलवायु परिवर्तन मंत्री भूपेंद्र यादव ने कहा है कि यह रिपोर्ट विकसित देशों के लिए उत्सर्जन में कटौती के अपने प्रयासों को और गति देने के लिए एक स्पष्ट संकेत है।

(इंडिया साइंस वायर(

जलवायु परिवर्तन पर 'रेड कोड अलर्ट'-आईपीसीसी रिपोर्ट

August 12, 2021

इंडिया साइंस वायर

संयुक्त राष्ट्र द्वारा 9 अगस्त को जलवायु परिवर्तन पर अंतरकी ताजा रिपोर्ट जारी (आईपीसीसी) सरकारी पैनल--की गई है। इस रिपोर्ट का संदेश और सार पृथ्वी के लिए तमाम खतरों की ओर संकेत करता है। जलवायु परिवर्तन के दुष्परिणामोंसे न केवल मानव जाति, बल्कि पृथ्वी पर जीवन को संभालने वाले पारिस्थितिक तंत्र का ताना बाना-ही बदलजाने की आशंका जताई जा रही है। इस रिपोर्ट को मानवता के लिए कोड रेड अलर्ट का नाम दिया जा रहा है। इसके माध्यम से वैज्ञानिकों ने एक तरह की स्पष्ट चेतावनी दे दी है कि यदि मानव ने अपनी गतिविधियों पर अंकुश नहीं लगाया तो आने वाले समय में उसका अस्तित्व ही खतरे में पड़ सकता है।

रिपोर्ट के अनुसार, 'वातावरण लगातार गर्म हो रहा है। तय है कि हालात और खराब होने वाले हैं। भागने या छिपने के लिए भी जगह नहीं बचेंगी।' इस चेतावनी को ध्यान में रखते हुए ही शीर्ष वैश्विक संस्था संयुक्त राष्ट्र ने इसे मानवता के लिए रेड कोड अलर्ट कहा है, जिसमें जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग के लिए सीधे तौरपर मानवीय गतिविधियों को जिम्मेदार बताया गया है।

(फोटोः क्रिएटिव कॉमन्स(

करीब 3000 पन्नों की आईपीसीसी की इस रिपोर्ट को दुनिया भर के 234 वैज्ञानिकों ने मिलकर तैयार किया है। इससे पहले ऐसी रिपोर्ट वर्ष 2013 में आई थी। ताजा रिपोर्ट में पांच संभावित परिदृश्य पर विचार किया गया है। राहत की बात सिर्फ इतनी है कि इसमें व्यक्त सबसे खराब परिदृश्य के आकार लेने की आशंका बेहद न्यून बताई गई है। इसका आधार विभिन्न सरकारों द्वारा कार्बन उत्सर्जन में कटौती कि लिए किए जा रहे प्रयासों को बताया गया है, लेकिन पृथ्वी के तापमान में जिस रफ्तार से बढ़ोतरी होती दिख रही है, उसे देखते हुए ये प्रयास

भी अपर्याप्त माने जा रहे हैं। फिर भी इनके दम पर सबसे खराब परिदृश्य के घटित होने की आशंका कम बताई गई है।

रिपोर्ट के अनुसार सबसे बुरा परिदृश्य यही हो सकता कि यदि जलवायु परिवर्तन को रोकने के लिए प्रयास सिरे नहीं चढ़ पाते हैंतो इस सदी के अंत तक पृथ्वी का औसत तापमान 3.3 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ सकता है। कुछ जानकार ऐसी बढ़ोतरी को प्रलयंकारी मान रहे हैं। उल्लेखनीय है कि वर्ष 2015 में पेरिस जलवायु समझौते में विभिन्न अंशभागियों ने इस पर सहमति जताई थी कि 21वीं सदी के अंत तक पृथ्वी का अधिकतम तापमान 1.5 डिग्री सेल्सियस से अधिक नहीं बढ़ने देना है। अमेरिका जैसे देशकी पेरिस समझौते पर असहमतिसे यह लक्ष्य भीअधर में पड़ता दिख रहा है। इस सदी के समापन में अभी काफी समय है और पृथ्वी का तापमान पहले ही 1.1 प्रतिशत बढ़ चुका है। स्पष्ट है कि इस सदी के अंत तक पृथ्वी के तापमान में बढ़ोतरी लक्षित सीमा से आगे निकल जाएगी। आईपीसीसी की रिपोर्ट के सभी अनुमान इस रुझान की पुष्टि भी करते हैं।

इस रिपोर्ट की सहअध्यक्ष और फ्रांस की प्रतिष्ठित जलवायु वैज्ञानिक वेलेरी मेसन डेमॉट का कहना है कि अगले -कुछ दशकों के दौरान हमें गर्म जलवायु के लिए तैयार रहना होगा। उनका यह भी मानना है कि ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन पर अंकुश लगाकर हम स्थिति से कुछ हद तक बच भी सकते हैं। रिपोर्ट में बढ़ते तापमान के लिए कार्बन डाई ऑक्साइड और मीथेन जैसी गैसों को ही मुख्य रूप से जिम्मेदार बताया गया है। बताया गया है कि इनके उत्सर्जन के प्राकृतिक माध्यम औसत तापमान में 10वें या 20वें हिस्से के बराबर वृद्धि की कारण बन सकते हैं।

इस रिपोर्ट को इस आधार पर भी भयावह संकेत माना जा रहा है कि बढ़ते तापमान के कारण विश्व भर में प्रतिकूल मौसमी परिघटनाओं में तेजी वृद्धि हुई है। हाल के दिनों में आर्कटिक से लेकर अंटार्कटिका तक बर्फ पिघलने की तस्वीरें देखने को मिली हैं। वहीं, हिमालयी हिमनद भी तेजी से अपना वजूद खोते जा रहे हैं। इसका परिणाम समुद्री जल के बढ़ते हुए स्तर के रूप में सामने आ रहा है। यदि औसत तापमान वृद्धि को 2 डिग्री सेल्सियस तक भी रोक लिया गया तब भी माना जा रहा है कि वर्ष 2030 तक समुद्र के जल स्तर में बढ़ोतरी को दो से तीन मीटर तक के दायरे में रोका जा सकता है। हालांकि इसके भी खासे दुष्प्रभाव होंगे, लेकिन यह यकीनन सबसे खराब परिदृश्य के मुकाबले अपेक्षाकृत बेहतर स्थिति होगी।

आईपीसीसी की रिपोर्ट कई और खतरनाक रुझानों की ओर संकेत करती है। विश्व में पहले जो हीट वेव्स यानी गर्म हवाओं के थपेड़े आधी सदी यानी पचास वर्षों में आते थे वे अब मात्र एक दशक के अंतराल पर आने लगे हैं। इससे विषम मौसमी परिघटनाएं जन्म लेती हैं। भारत के संदर्भ में भी रिपोर्ट कहती है कि जलवायु परिवर्तन के कारण गर्म हवाएं, चक्रवात, अतिवृष्ट और बाढ़ जैसी समस्याएं 21वीं सदी में बेहद आम हो जाएंगी। महासागरों में विशेषकरहिंद महासागर सबसे तेजी से गर्म हो रहा है। इसके भारत के लिए गहरे निहितार्थ होंगे। इस पर अपनीप्रतिक्रया व्यक्त करते हुए केंद्रीय वन,पर्यावरण एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री भूपेंद्र यादव ने कहा हैकि यह रिपोर्ट विकसित देशों के लिए स्पष्ट रूप से संकेत है कि वे अपने द्वारा किए जा रहे उत्सर्जन में कटौती के प्रयासों को और गति दें।

जलवायु परिवर्तन पर 'रेड कोड अलर्ट'

10/08/2021 V3news India

नई दिल्ली, 10 अगस्त संयुक्त राष्ट्र द्वारा :(इंडिया साइंस वायर)9 अगस्त को जलवायु परिवर्तन पर अंतर सरकारी पैनल- की ताजा रिपोर्ट जारी की गई है। इस रिपोर्ट का संदेश और सार पृथ्वी के लिए तमाम खतरों की ओर संकेत (आईपीसीसी) परिवर्तन के दुष्परिणामों-करता है। जलवायुसे न केवल मानव जाति, बल्कि पृथ्वी पर जीवन को संभालने वाले पारिस्थितिक तंत्र का तानाबाना ही बदल जाने की आशंका जताई जा रही है।-

इस रिपोर्ट को मानवता के लिए कोड रेड अलर्ट का नाम दिया जा रहा है। इसके माध्यम से वैज्ञानिकों ने एक तरह की स्पष्ट चेतावनी दे दी है कि यदि मानव ने अपनी गतिविधियों पर अंकुश नहीं लगाया तो आने वाले समय में उसका अस्तित्व ही खतरे में पड़ सकता है। रिपोर्ट के अनुसार, 'वातावरण लगातार गर्म हो रहा है। तय है कि हालात और खराब होने वाले हैं।

भागने या छिपने के लिए भी जगह नहीं बचेंगी।' इस चेतावनी को ध्यान में रखते हुए ही शीर्ष वैश्विक संस्था संयुक्त राष्ट्र ने इसे मानवता के लिए रेड कोड अलर्ट कहा है, जिसमें जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग के लिए सीधे तौर पर मानवीय गतिविधियों को जिम्मेदार बताया गया है। करीब 3000 पन्नों की आईपीसीसी की इस रिपोर्ट को दुनिया भर के 234 वैज्ञानिकों ने मिलकर तैयार किया है।

इससे पहले ऐसी रिपोर्ट वर्ष 2013 में आई थी। ताजा रिपोर्ट में पांच संभावित परिदृश्य पर विचार किया गया है। राहत की बात सिर्फ इतनी है कि इसमें व्यक्त सबसे खराब परिदृश्य के आकार लेने की आशंका बेहद न्यून बताई गई है। इसका आधार विभिन्न सरकारों द्वारा कार्बन उत्सर्जन में कटौती कि लिए किए जा रहे प्रयासों को बताया गया है, लेकिन पृथ्वी के तापमान में जिस रफ्तार से बढ़ोतरी होती दिख रही है,

उसे देखते हुए ये प्रयास भी अपर्याप्त माने जा रहे हैं। फिर भी इनके दम पर सबसे खराब परिदृश्य के घटित होने की आशंका कम बताई गई है। रिपोर्ट के अनुसार सबसे बुरा परिदृश्य यही हो सकता कि यदि जलवायु परिवर्तन को रोकने के लिए प्रयास सिरे नहीं चढ़ पाते हैं तो इस सदी के अंत तक पृथ्वी का औसत तापमान 3.3 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ सकता है। कुछ जानकार ऐसी बढ़ोतरी को प्रलयंकारी मान रहे हैं।

उल्लेखनीय है कि वर्ष 2015 में पेरिस जलवायु समझौते में विभिन्न अंशभागियों ने इस पर सहमति जताई थी कि 21वीं सदी के अंत तक पृथ्वी का अधिकतम तापमान 1.5 डिग्री सेल्सियस से अधिक नहीं बढ़ने देना है। अमेरिका जैसे देश की पेरिस समझौते पर असहमति से यह लक्ष्य भी अधर में पड़ता दिख रहा है। इस सदी के समापन में अभी काफी समय है और पृथ्वी का तापमान पहले ही 1.1 प्रतिशत बढ़ चुका है।

स्पष्ट है कि इस सदी के अंत तक पृथ्वी के तापमान में बढ़ोतरी लक्षित सीमा से आगे निकल जाएगी। आईपीसीसी की रिपोर्ट के सभी अनुमान इस रुझान की पुष्टि भी करते हैं। इस रिपोर्ट की सहअध्यक्ष और फ्रांस की प्रतिष्ठित जलवायु वैज्ञानिक वेलेरी - मेसन डेमॉट का कहना है कि अगले कुछ दशकों के दौरान हमें गर्म जलवायु के लिए तैयार रहना होगा। उनका यह भी मानना है कि ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन पर अंकुश लगाकर हम स्थिति से कुछ हद तक
बच भी सकते हैं।

रिपोर्ट में बढ़ते तापमान के लिए कार्बन डाई ऑक्साइड और मीथेन जैसी गैसों को ही मुख्य रूप से जिम्मेदार बताया गया है। बताया गया है कि इनके उत्सर्जन के प्राकृतिक माध्यम औसत तापमान में 10वें या 20वें हिस्से के बराबर वृद्धि की कारण बन सकते हैं। इस रिपोर्ट को इस आधार पर भी भयावह संकेत माना जा रहा है कि बढ़ते तापमान के कारण
विश्व भर में प्रतिकूल मौसमी परिघटनाओं में तेजी वृद्धि हुई है। हाल के दिनों में आर्कटिक से लेकर अंटार्कटिका तक बर्फ पिघलने की तस्वीरें देखने को मिली हैं।

वहीं, हिमालयी हिमनद भी तेजी से अपना वजूद खोते जा रहे हैं। इसका परिणाम समुद्री जल के बढ़ते हुए स्तर के रूप में सामने आ रहा है। यदि औसत तापमान वृद्धि को 2 डिग्री सेल्सियस तक भी रोक लिया गया तब भी माना जा रहा है कि वर्ष 2030 तक समुद्र के जल स्तर में बढ़ोतरी को दो से तीन मीटर तक के दायरे में रोका जा सकता है। हालांकि इसके भी खासे दुष्प्रभाव होंगे, लेकिन यह यकीनन सबसे खराब परिदृश्य के मुकाबले अपेक्षाकृत बेहतर स्थिति होगी।

आईपीसीसी की रिपोर्ट कई और खतरनाक रुझानों की ओर संकेत करती है। विश्व में पहले जो हीट वेव्स यानी गर्म हवाओं के थपेड़े आधी सदी यानी पचास वर्षों में आते थे वे अब मात्र एक दशक के अंतराल पर आने लगे हैं। इससे विषम मौसमी परिघटनाएं जन्म लेती हैं। भारत के संदर्भ में भी रिपोर्ट कहती है कि जलवायु परिवर्तन के कारण गर्म हवाएं, चक्रवात, अतिवृष्ट और बाढ़ जैसी समस्याएं 21वीं सदी में बेहद आम हो जाएंगी।

महासागरों में विशेषकर हिंद महासागर सबसे तेजी से गर्म हो रहा है। इसके भारत के लिए गहरे निहितार्थ होंगे। इस पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए केंद्रीय वन, पर्यावरण एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री भूपेंद्र यादव ने कहा है कि यह रिपोर्ट विकसित देशों के लिए स्पष्ट रूप से संकेत है कि वे अपने द्वारा किए जा रहे उत्सर्जन में कटौती के प्रयासों को और गति दें।

रिपब्लिक न्यूज़इंडिया

जलवायु परिवर्तन पर 'रेड कोड अलर्ट'

By **Rupesh Dharmik** - August 12, 2021

(फोटोः क्रिएटिव कॉमन्स(

नई दिल्ली: संयुक्त राष्ट्र द्वारा 9 अगस्त को जलवायु परिवर्तन पर अंतरकी ताजा रिपोर्ट (आईपीसीसी) सरकारी पैनल- जारी की गई है। इसरिपोर्ट का संदेश और सार पृथ्वी के लिए तमाम खतरों की ओर संकेत करता है। जलवायुर्तन के परिव- दुष्परिणामोंसे न केवल मानव जाति, बल्कि पृथ्वी पर जीवन को संभालने वाले पारिस्थितिक तंत्र का तानाबाना ही - बदलजाने की आशंका जताई जा रही है। इस रिपोर्ट को मानवता के लिए कोड रेड अलर्ट का नाम दिया जा रहा है। इसके माध्यम से वैज्ञानिकों ने एक तरह की स्पष्ट चेतावनी दे दी है कि यदि मानव ने अपनी गतिविधियों पर अंकुश नहीं लगाया तो आने वाले समय में उसका अस्तित्व ही खतरे में पड़ सकता है।

रिपोर्ट के अनुसार, 'वातावरण लगातार गर्म हो रहा है। तय है कि हालात और खराब होने वाले हैं। भागने या छिपने के लिए भी जगह नहीं बचेंगी।' इस चेतावनी को ध्यान में रखते हुए ही शीर्ष वैश्विक संस्था संयुक्त राष्ट्र ने इसे मानवता के लिए रेड कोड अलर्ट कहा है, जिसमें जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग के लिए सीधे तौर पर मानवीय गतिविधियों को जिम्मेदार बताया गया है।

करीब 3000 पन्नों की आईपीसीसी की इस रिपोर्ट को दुनिया भर के 234 वैज्ञानिकों ने मिलकर तैयार किया है। इससे पहले ऐसी रिपोर्ट वर्ष 2013 में आई थी। ताजा रिपोर्ट में पांच संभावित परिदृश्य पर विचार किया गया है। राहत की बात सिर्फ इतनी है कि इसमें व्यक्त सबसे खराब परिदृश्य के आकार लेने की आशंका बेहद न्यून बताई गई है। इसका आधार विभिन्न सरकारों द्वारा कार्बन उत्सर्जन में कटौती कि लिए किए जा रहे प्रयासों को बताया गया है, लेकिन पृथ्वी के तापमान में जिस रफ्तार से बढ़ोतरी होती दिख रही है, उसे देखते हुए ये प्रयास भी अपर्याप्त माने जा रहे हैं। फिर भी इनके दम पर सबसे खराब परिदृश्य के घटित होने की आशंका कम बताई गई है।

रिपोर्ट के अनुसार सबसे बुरा परिदृश्य यही हो सकता कि यदि जलवायु परिवर्तन को रोकने के लिए प्रयास सिरे नहीं चढ़ पाते हैंतो इस सदी के अंत तक पृथ्वी का औसत तापमान 3.3 डिग्री सेल्सियस तक बढ़ सकता है। कुछ जानकार ऐसी बढ़ोतरी को प्रलयंकारी मान रहे हैं। उल्लेखनीय है कि वर्ष 2015 में पेरिस जलवायु समझौते में विभिन्न अंशभागियों ने इस पर सहमति जताई थी कि 21वीं सदी के अंत तक पृथ्वी का अधिकतम तापमान 1.5 डिग्री सेल्सियस से अधिक नहीं बढ़ने देना है। अमेरिका जैसे देशकी पेरिस समझौते पर असहमतिसे यह लक्ष्य भीअधर में पड़ता दिख रहा है। इस सदी के समापन में अभी काफी समय है और पृथ्वी का तापमान पहले ही 1.1 प्रतिशत बढ़ चुका है। स्पष्ट है कि इस सदी के अंत तक पृथ्वी के तापमान में बढ़ोतरी लक्षित सीमा से आगे निकल जाएगी। आईपीसीसी की रिपोर्ट के सभी अनुमान इस रुझान की पुष्टि भी करते हैं।

इस रिपोर्ट की सहअध्यक्ष और फ्रांस की प्रतिष्ठित जलवायु वैज्ञानिक वेलेरी मेसन डेमॉट का कहना है कि अगले कुछ - दशकों के दौरान हमें गर्म जलवायु के लिए तैयार रहना होगा। उनका यह भी मानना है कि ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन पर अंकुश लगाकर हम स्थिति से कुछ हद तक बच भी सकते हैं। रिपोर्ट में बढ़ते तापमान के लिए कार्बन डाई ऑक्साइड और मीथेन जैसी गैसों को ही मुख्य रूप से जिम्मेदार बताया गया है। बताया गया है कि इनके उत्सर्जन के प्राकृतिक माध्यम औसत तापमान में 10वें या 20वें हिस्से के बराबर वृद्धि की कारण बन सकते हैं।

इस रिपोर्ट को इस आधार पर भी भयावह संकेत माना जा रहा है कि बढ़ते तापमान के कारण विश्व भर में प्रतिकूल मौसमी परिघटनाओं में तेजी वृद्धि हुई है। हाल के दिनों में आर्कटिक से लेकर अंटार्कटिका तक बर्फ पिघलने की तस्वीरें देखने को मिली हैं। वहीं, हिमालयी हिमनद भी तेजी से अपना वजूद खोते जा रहे हैं। इसका परिणाम समुद्री जल के बढ़ते हुए स्तर के रूप में सामने आ रहा है। यदि औसत तापमान वृद्धि को 2 डिग्री सेल्सियस तक भी रोक लिया गया तब भी माना जा रहा है कि वर्ष 2030 तक समुद्र के जल स्तर में बढ़ोतरी को दो से तीन मीटर तक के दायरे में रोका जा सकता है। हालांकि इसके भी खासे दुष्प्रभाव होंगे, लेकिन यह यकीनन सबसे खराब परिदृश्य के मुकाबले अपेक्षाकृत बेहतर स्थिति होगी।

आईपीसीसी की रिपोर्ट कई और खतरनाक रुझानों की ओर संकेत करती है। विश्व में पहले जो हीट वेव्स यानी गर्म हवाओं के थपेड़े आधी सदी यानी पचास वर्षों में आते थे वे अब मात्र एक दशक के अंतराल पर आने लगे हैं। इससे विषम मौसमी परिघटनाएं जन्म लेती हैं। भारत के संदर्भ में भी रिपोर्ट कहती है कि जलवायु परिवर्तन के कारण गर्म हवाएं, चक्रवात, अतिवृष्ट और बाढ़ जैसी समस्याएं 21वीं सदी में बेहद आम हो जाएंगी। महासागरों में विशेषकरहिंद महासागर सबसे तेजी से गर्म हो रहा है। इसके भारत के लिए गहरे निहितार्थ होंगे। इस पर अपनीप्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए केंद्रीय वन,पर्यावरण एवं जलवायु परिवर्तन मंत्री भूपेंद्र यादव ने कहा हैकि यह रिपोर्ट विकसित देशों के लिए स्पष्ट रूप से संकेत है कि वे अपने द्वारा किए जा रहे उत्सर्जन में कटौती के प्रयासों को और गति दें। (इंडिया साइंस वायर)

Voice of the Nation
ORGANISER

Conference to highlight the role of Indian scientists during the independence movement

WEBDESK Aug 13, 2021, 09:20 AM IST

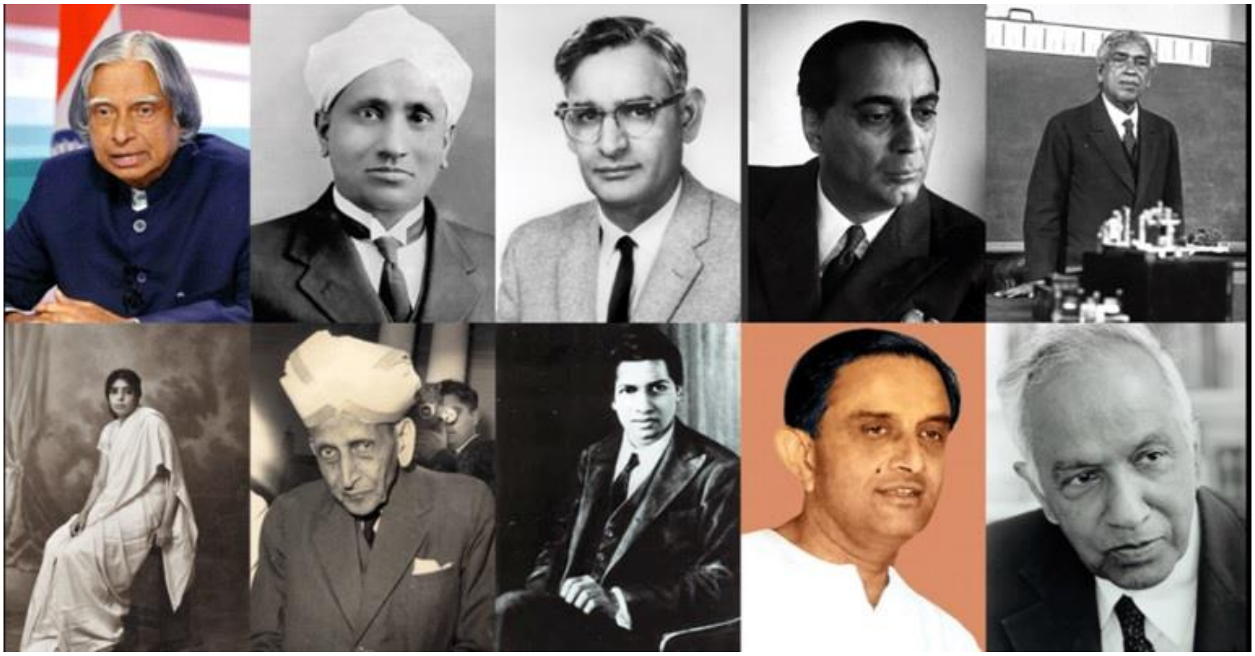

The conference will be held in New Delhi on October 20 and 21 which will be attended by science communicators from Government and non-government organisations, besides members of the media.

New Delhi: A mega two-day All India Seminar with the theme of `Role of Science Communicators during the Indian Independence Movement' is to be organised to mark the 75th anniversary of India's Independence.

The conference is being organised by the Department of Science and Technology's Vigyan Prasar in association with science NGO Vijnana Bharati (VIBHA) and the Council of Scientific and Industrial Research's National Institute of Science Communication and Policy Research (CSIR-NIScPR).

The conference will be held in New Delhi on October 20 and 21. It will be attended by science communicators from Government and non-government organisations, besides members of the media.

Announcing the conference, National Organising Secretary of VIBHA, Dr. Jayant Sahasrabudhe, noted that there is a general perception in the country that India's freedom struggle was mainly political and economical with some social aspects associated with it, even as there was a freedom movement going on in the arena of science too and scientists played an important role in it. "Even people working in the field have very little information about this." said Sahasrabudhe.

He recalled how Dr. Jagadish Chandra Bose opposed the British colonial rulers' injustice meted out to Indian scientists. Several of them were working in various scientific institutions. Like any other scientists, they also came out with research papers. But, they were all published in journals in England and the knowledge developed in India was used for the advancement of science in England and not India. Dr. Bose opposed this, and when he started doing research after teaching for ten years, he set up a laboratory of his own and conducted studies without receiving any funding from the British.

'The reality is that sacrifices and contributions made by many such scientists provided Indian science and technology a basis in 1947, on which we could build our current-day S&T prowess further', added Sahasrabudhe.

Vice-Chancellor of the Bhopal-based Makhanlal Chaturvedi National University of Journalism and Communication, Prof K.G.Suresh, who was the chief guest at the programme organised on Thursday to announce the conference, welcomed the initiative and said it was essential that the common man knew that all sections of society had participated in the freedom movement and not just a few individuals.

He urged that all forms of communication, including comic books and animation, be employed to take the stories about the Indian scientists who had contributed to youngsters in an interesting manner during the independence movement. "Indian youth need to have scientists as icons more than film stars and other such celebrities", Suresh said.

The conference is part of a year-long celebration being organised by Vigyan Prasar, VIBHA, and CSIR-NIScPR to celebrate the 75th anniversary of Indian independence as `Swatantrata ka Amrit Mahotsav'. National Convenor of the celebrations and Director, CSIR-NIScPR, Dr Ranjana Aggarwal presented the details of the year-long programme.

Vigyan Prasar Director, Nakul Parashar, Director General of Software Technology Parks of India, Onkar Rai, and Director of CSIR-National Physical Laboratory, Venu Gopal Achanta, participated in the programme.

Courtesy: Indian Science Wire

Indus Scrolls
Indian to the core

Conference to highlight role of Indian scientists during independence movement

By **India Science Wire** - August 13, 2021

A mega two-day All India Seminar with the theme of `Role of Science Communicators during the Indian Independence Movement' is to be organised to mark the 75th anniversary of India's Independence.

The conference is being organised by the Department of Science and Technology's Vigyan Prasar in association with science NGO Vijnana Bharati (VIBHA) and the Council of Scientific and Industrial Research's National Institute of Science Communication and Policy Research (CSIR-NIScPR).

The conference will be held in New Delhi on October 20 and 21. It will be attended by science communicators from Government and non-government organisations, besides members of the media.

Announcing the conference, National Organising Secretary of VIBHA, Dr. Jayant Sahasrabudhe noted that there is a general perception in the country that India's freedom struggle was mainly political and economic with some social aspects associated with it, even as there was a freedom movement going on in the arena of science too and scientists played an important role in it. "Even people working in the field have very little information about this", said Sahasrabudhe.

He recalled how Dr. Jagadish Chandra Bose opposed the injustice being meted out by the British colonial rulers to Indian scientists. Several of them were working in various scientific institutions. Like any other scientists, they also came out with research papers. But, they were all published in journals in England and the knowledge developed in India was used for the advancement of science in England and not India. Dr. Bose opposed this and when he started doing research after teaching for 10 years, he set up a laboratory of his own and conducted studies without receiving any funding from the British.

'The reality is that sacrifices and contributions made by many such scientists provided Indian science and technology a basis in 1947, on which we could build our current-day S&T prowess further', added Sahasrabudhe.

Vice-Chancellor of the Bhopal-based Makhanlal Chaturvedi National University of Journalism and Communication, Prof K.G.Suresh, who was the chief guest at the programme organised on Thursday to announce the conference, welcomed the initiative and said it was essential that the common man knew that all section of society had participated in the freedom movement and not just a few individuals.

He urged that all forms of communication including comic books and animation be employed to take the stories about the Indian scientists who had contributed during the independence movement to youngsters in an interesting manner. "Indian youth need to have scientists as icons more than film stars and other such celebrities", Suresh said.

The conference is part of a year-long celebration being organised by Vigyan Prasar, VIBHA, and CSIR-NIScPR to celebrate the 75th anniversary of Indian independence as `Swatantrata ka Amrit Mahotsav'. National Convenor of the celebrations and Director, CSIR-NIScPR, Dr Ranjana Aggarwal, presented the details of the year-long programme.

Vigyan Prasar Director, Nakul Parashar, Director General of Software Technology Parks of India, Onkar Rai, and Director of CSIR-National Physical Laboratory, Venu Gopal Achanta, participated in the programme.

DELHI POST
Politics | Democracy | Development

Conference to Highlight Role of Indian Scientists During Independence Movement

By **ISW Desk** On **Aug 15, 2021**

A mega two-day All India Seminar with the theme of `Role of Science Communicators during the Indian Independence Movement' is to be organised to mark the 75th anniversary of India's Independence.

The conference is being organised by the Department of Science and Technology's Vigyan Prasar in association with science NGO Vijnana Bharati (VIBHA) and the Council of Scientific and Industrial Research's National Institute of Science Communication and Policy Research (CSIR-NIScPR).

The conference will be held in New Delhi on October 20 and 21. It will be attended by science communicators from Government and non-government organisations, besides members of the media.

Announcing the conference, National Organising Secretary of VIBHA, Dr. Jayant Sahasrabudhe noted that there is a general perception in the country that India's freedom struggle was mainly political and economic with some social aspects associated with it, even as there was a freedom movement going on in the arena of science too and

scientists played an important role in it. “Even people working in the field have very little information about this”, said Sahasrabudhe.

He recalled how Dr. Jagadish Chandra Bose opposed the injustice being meted out by the British colonial rulers to Indian scientists. Several of them were working in various scientific institutions. Like any other scientists, they also came out with research papers. But, they were all published in journals in England and the knowledge developed in India was used for the advancement of science in England and not India. Dr. Bose opposed this and when he started doing research after teaching for 10 years, he set up a laboratory of his own and conducted studies without receiving any funding from the British.

‘The reality is that sacrifices and contributions made by many such scientists provided Indian science and technology a basis in 1947, on which we could build our current-day S&T prowess further’, added Sahasrabudhe.

Vice-Chancellor of the Bhopal-based Makhanlal Chaturvedi National University of Journalism and Communication, Prof K.G.Suresh, who was the chief guest at the programme organised on Thursday to announce the conference, welcomed the initiative and said it was essential that the common man knew that all section of society had participated in the freedom movement and not just a few individuals.

He urged that all forms of communication including comic books and animation be employed to take the stories about the Indian scientists who had contributed during the independence movement to youngsters in an interesting manner. “Indian youth need to have scientists as icons more than film stars and other such celebrities”, Suresh said.

The conference is part of a year-long celebration being organised by Vigyan Prasar, VIBHA, and CSIR-NIScPR to celebrate the 75th anniversary of Indian independence as `Swatantrata ka Amrit Mahotsav’. National Convenor of the celebrations and Director, CSIR-NIScPR, Dr Ranjana Aggarwal, presented the details of the year-long programme.

Vigyan Prasar Director, Nakul Parashar, Director General of Software Technology Parks of India, Onkar Rai, and Director of CSIR-National Physical Laboratory, Venu Gopal Achanta, participated in the programme.

जनसत्ता

आईवीएफ की सफलता दर को और बेहतर बनाएगी नई तकनीक

निःसंतान दंपत्तियों के लिए सहायक प्रजनन तकनीक आईवीएफ उम्मीद की एक किरण है, लेकिन इस तकनीक की सफलता की राह में कुछ चुनौतियां भी हैं।

Written By **जनसत्ता ऑनलाइन**

नई दिल्ली | August 13, 2021 6:14:19 am

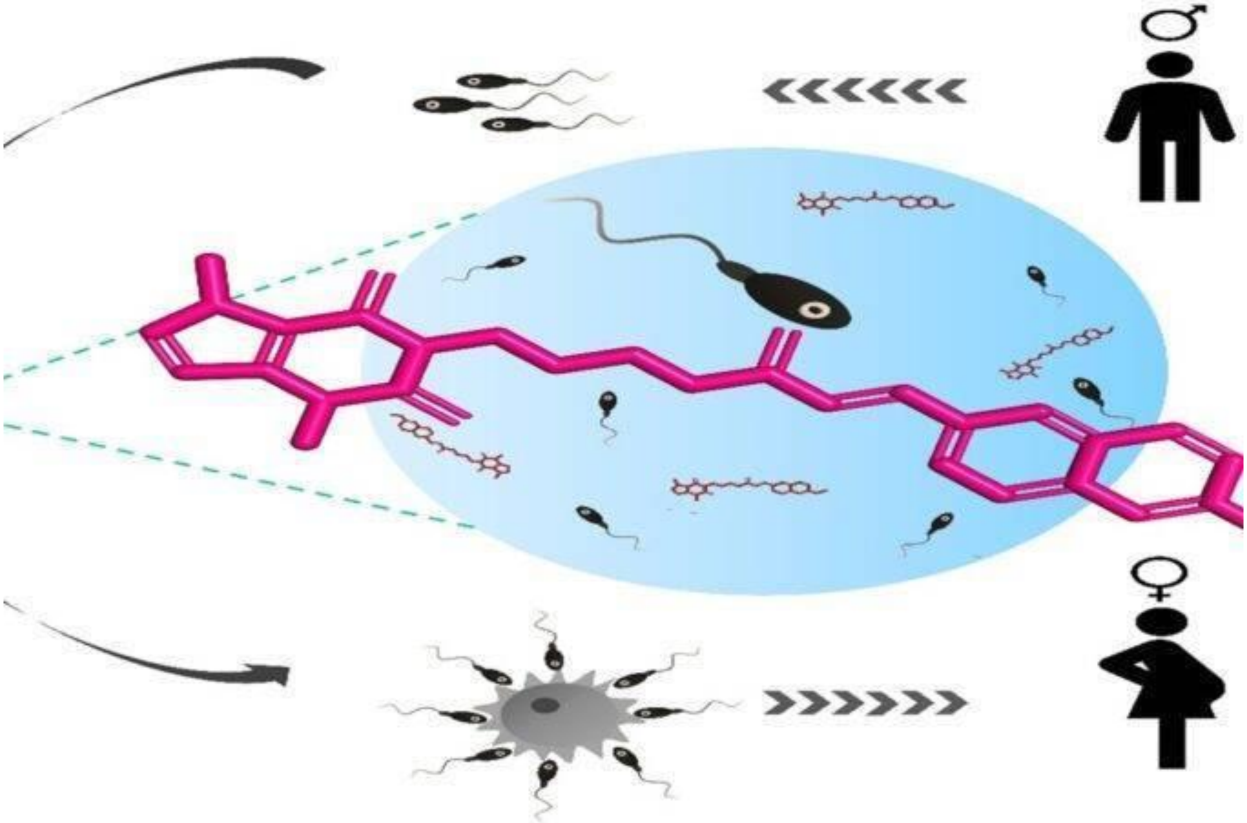

एमपीटीएक्स की कार्यविधि का ग्राफिक चित्रण!

निःसंतान दंपत्तियों के लिए सहायक प्रजनन तकनीक आईवीएफ उम्मीद की एक किरण है, लेकिन इस तकनीक की सफलता की राह में कुछ चुनौतियां भी हैं। इसी को ध्यान में रखते हुए वैज्ञानिकों ने एमपीटीएक्स)mPTX) या एमपीटैक्स नाम का एक लघु कार्बनिक अणु निक स्मॉल आर्गे) का डिजा (मॉलिक्यूलइन तैयार किया है जो इन विट्रो फर्टिलाइजेशन प्रक्रिया की (आईवीएफ) सफलता में अहम भूमिका निभाने वाले स्पर्म की क्षमताओं को बेहतर बनाती है। इसे भारतीय

के राजाकुमारा ईरप्पा .हैदराबाद में जैवप्रौद्योगिकी विभाग के डॉ (आईआईटी) प्रौद्योगिकी संस्थान समूह, मेंगलूर विश्वविद्यालय के डॉजगदीश प्रसाद दासप्पा के समूह और मणिपाल एकेडमी ऑफ . गुरुप्रसाद कल्थूर के समूह ने मिलकर विकसित किया है। .हायर एजुकेशन के प्रो

इन समूहों के अध्ययन ने यही स्थापित किया है कि एक पेंटोक्सिफाइलाइन डेरिवेटिव के रूप में एमपीटैक्स स्पर्म की आवाजाही या सक्रियता को बढ़ाने, वाइट्रो स्पर्म को लंबे समय तक अक्षुण्ण बनाए रखने और स्पर्म फर्टिलाइजेशन संभावनाओं को बढ़ाने में सहायक सिद्ध होता है। यह भी उल्लेखनीय है कि एमपीटैक्स के माध्यम से आगे बढ़ने वाली इस प्रक्रिया के दुष्प्रभाव नगण्य हैं। फिलहाल आईवीएफ तकनीक में फार्माकॉलोजिकल एजेंट के रूप में जिस पेंटोक्सिफाइलिन का इस्तेमाल किया जाता है, उसकी तुलना में अपेक्षाकृत कम संकेंद्रण वाला एमपीटैक्स शरीर पर कम दुष्प्रभाव दिखाता है। ऐसे में सहायक प्रजनन प्रक्रियाओं में जिन दवाओं का उपयोग किया जा रहा है उनके मुकाबले एमपीटैक्स को एक बेहतर विकल्प के रूप में देखा जा रहा है।

आईआईटी हैदराबाद के निदेशक प्रोबीएस मूर्ति कहते हैं ., 'मातृत्वपितृत्व के सुख को शब्दों में - यों राजकुमारा के नेतृत्व में हुई यह खोज निःसंतान दंपत्ति .व्यक्त नहीं किया जा सकता। ऐसे में डॉ के लिए खुशियोंकी सौगात लाएगी, क्योंकि इससे आईवीएफ में सफलता की संभावनाएं और बढ़ गई हैं। साथ ही यह खोज विभिन्न समूहों के साथ में काम करने के जबरदस्त प्रभाव को भी दर्शाती है।'

पुरुष शुक्राणुओं में गतिशीलता की कमी बांझपन की एक प्रमुख वजह मानी जाती है। गर्भधारण के लिए शुक्राणुओं का निशेचन स्थान तक पहुंचना आवश्यक होता है। माना जा रहा है कि यह नई तकनीक गर्भाधान और उसके आगे की प्रक्रियाओं को निर्विघ्न बनाने में सहायक सिद्ध होगी। विज्ञान और इंजीनियरिंग अनुसन्धान बोर्ड के द्वारा पोषित इस शोध अध्ययन कर निष्कर्ष 'नेचर साइंटिफिक रिपोर्ट्स में प्रकाशित किये गए हैं। (इंडिया साइंस वायर)

'आईवीएफ' की सफलता दर को और बेहतर बनाएगी यह नई तकनीक

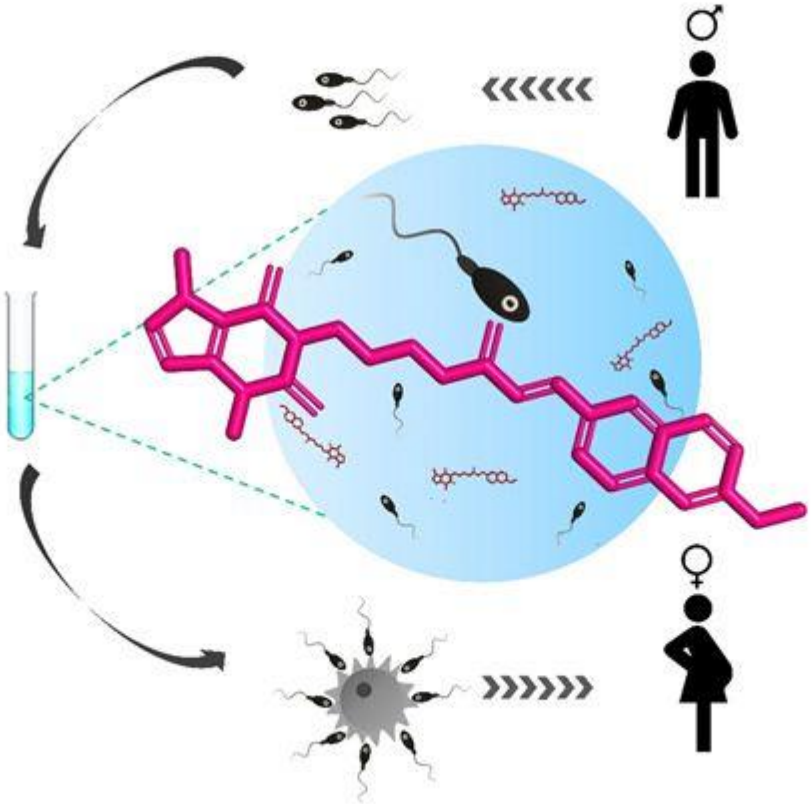

Last Updated: शनिवार, 14 अगस्त 2021 (12:36 IST)

नई दिल्ली, निःसंतान दंपत्तियों के लिए सहायक प्रजनन तकनीक आईवीएफ उम्मीद की एक किरण है, लेकिन इस तकनीक की सफलता की राह में कुछ चुनौतियां भी हैं।

इसी को ध्यान में रखते हुए वैज्ञानिकों ने एमपीटीएक्स)mPTX) या एमपीटैक्स नाम का एक लघु कार्बनिक अणु का डिजाइन तैयार किया है (स्मॉल आर्गेनिक मॉलिक्यूल), जो इन विट्रो फर्टिलाइजेशन (आईवीएफ) क्रिया की सफलता मेप्रं अहम भूमिका निभाने वाले स्पर्म की क्षमताओं को बेहतर बनाती है।

इसे भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान राजाकुमारा ईरप्पा .हैदराबाद में जैवप्रौद्योगिकी विभाग के डॉ (आईआईटी) के समूह, मेंगलूर विश्वविद्यालय के डॉणिपाल एकेडमी ऑफ हायरजगदीश प्रसाद दासप्पा के समूह और म . एजुकेशन के प्रोगुरुप्रसाद कल्थूर के समूह ने मिलकर विकसित किया है। .

इन समूहों के अध्ययन ने यही स्थापित किया है कि एक पेंटोक्सिफाइलाइन डेरिवेटिव के रूप में एमपीटैक्स स्पर्म की आवाजाही या सक्रियता को बढ़ाने, वाइट्रो स्पर्म को लंबे समय तक अक्षुण्ण बनाए रखने और स्पर्म फर्टिलाइजेशन संभावनाओं को बढ़ाने में सहायक सिद्ध होता है।

यह भी उल्लेखनीय है कि एमपीटैक्स के माध्यम से आगे बढ़ने वाली इस प्रक्रिया के दुष्प्रभाव नगण्य हैं। फिलहाल आईवीएफ तकनीक में फार्माकॉलोजिकल एजेंट के रूप में जिस पेंटोक्सिफाइलिन का इस्तेमाल किया जाता है, उसकी तुलना में अपेक्षाकृत कम संकेंद्रण वाला एमपीटैक्स शरीर पर कम दुष्प्रभाव दिखाता है।

ऐसे में सहायक प्रजनन प्रक्रियाओं में जिन दवाओं का उपयोग किया जा रहा है उनके मुकाबले एमपीटैक्स को एक बेहतर विकल्प के रूप में देखा जा रहा है।

आईआईटी हैदराबाद के निदेशक प्रोबीएस मूर्ति कहते हैं ., 'मातृत्वपितृत्व के सुख को शब्दों में व्यक्त नहीं किया - राजकुमारा के नेतृत्व में हुई यह खोज निःसंतान दंपत्तियों के लिए खुशियों की सौगात .जा सकता। ऐसे में डॉ लाएगी, क्योंकि इससे आईवीएफ में सफलता की संभावनाएं और बढ़ गई हैं। साथ ही यह खोज विभिन्न समूहों के साथ में काम करने के जबरदस्त प्रभाव को भी दर्शाती है।'

पुरुष शुक्राणुओं में गतिशीलता की कमी बांझपन की एक प्रमुख वजह मानी जाती है। गर्भधारण के लिए शुक्राणुओं का निशेचन स्थान तक पहुंचना आवश्यक होता है। माना जा रहा है कि यह नई तकनीक गर्भाधान और उसके आगे की प्रक्रियाओं को निर्विघ्न बनाने में सहायक सिद्ध होगी।

विज्ञान और इंजीनियरिंग अनुसन्धान बोर्ड के द्वारा पोषित इस शोध अध्ययन कस निष्कर्ष 'नेचर साइंटिफिक रिपोर्ट्स में प्रकाशित किये गए हैं। ***(इंडिया साइंस वायर(***

आईवीएफ की सफलता दर को और बेहतर बनाएगी नई तकनीक

By **AAZKANEWS.COM** - August 13, 2021

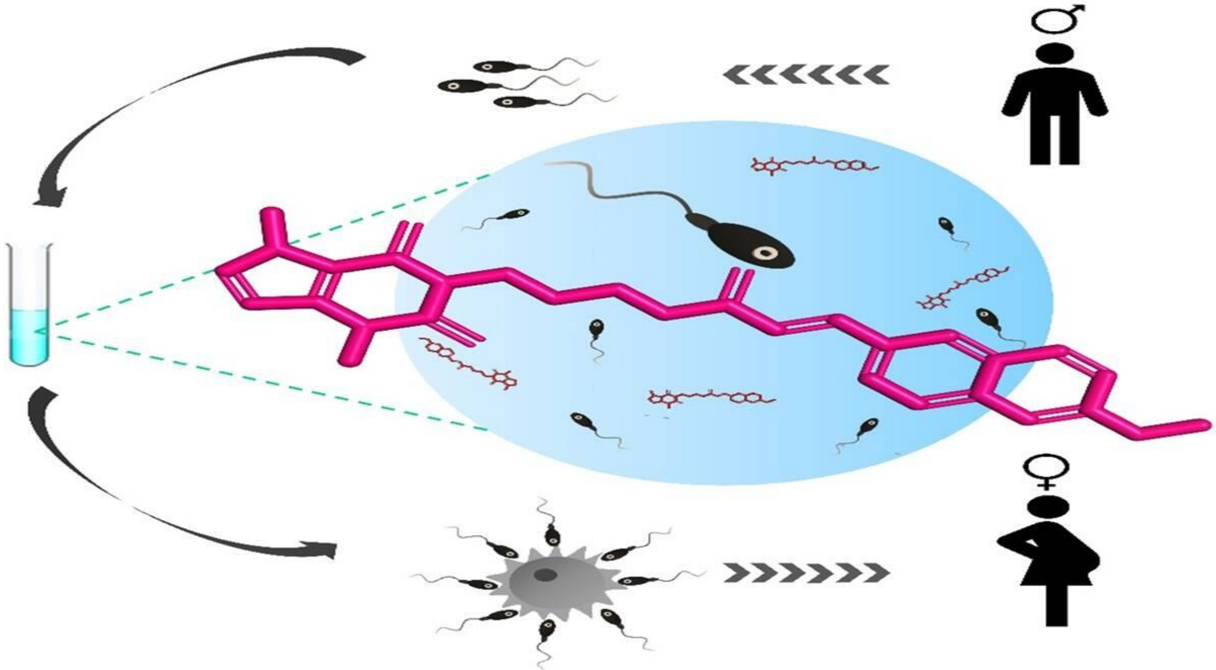

निःसंतान दंपत्तियों के लिए सहायक प्रजनन तकनीक आईवीएफ उम्मीद की एक किरण है, लेकिन इस तकनीक की सफलता की राह में कुछ चुनौतियां भी हैं। इसी को ध्यान में रखते हुए वैज्ञानिकों ने एमपीटीएक्स)mPTX) या एमपीटैक्स नाम का एक लघु कार्बनिक अणु का डिजाइन तैयार किया है जो इन विट्रो (स्मॉल आर्गेनिक मॉलिक्यूल) स्पर्म की क्षमताओ प्रक्रिया की सफलता में अहम भूमिका निभाने वाले (आईवीएफ) फर्टिलाइजेशनं को बेहतर बनाती है। इसे भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान राजाकुमारा .हैदराबाद में जैवप्रौद्योगिकी विभाग के डॉ (आईआईटी) ईरप्पा के समूह, मेंगलूर विश्वविद्यालय के डॉजगदीश प्रसाद दासप्पा के समूह और मणिपाल एकेडमी ऑफ हायर . साद कल्थूर के समूहगुरुप्र .एजुकेशन के प्रो ने मिलकर विकसित किया है।

इन समूहों के अध्ययन ने यही स्थापित किया है कि एक पेंटोक्सिफाइलाइन डेरिवेटिव के रूप में एमपीटैक्स स्पर्म की आवाजाही या सक्रियता को बढ़ाने, वाइट्रो स्पर्म को लंबे समय तक अक्षुण्ण बनाए रखने और स्पर्म फर्टिलाइजेशन संभावनाओं को बढ़ाने में सहायक सिद्ध होता है। यह भी उल्लेखनीय है कि एमपीटैक्स के माध्यम से आगे बढ़ने वाली इस प्रक्रिया के दुष्प्रभाव नगण्य हैं। फिलहाल आईवीएफ तकनीक में फार्माकॉलोजिकल एजेंट के रूप में जिस पेंटोक्सिफाइलिन का इस्तेमाल किया जाता है, उसकी तुलना में अपेक्षाकृत कम संकेंद्रण वाला एमपीटैक्स शरीर पर

कम दुष्प्रभाव दिखाता है। ऐसे में सहायक प्रजनन प्रक्रियाओं में जिन दवाओं का उपयोग किया जा रहा है उनके मुकाबले एमपीटैक्स को एक बेहतर विकल्प के रूप में देखा जा रहा है।

आईआईटी हैदराबाद के निदेशक प्रो कहते हैंबीएस मूर्ति ., 'मातृत्वपितृत्व के सुख को शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा - राजकुमारा के नेतृत्व में हुई यह खोज निःसंतान दंपत्तियों के लिए खुशियों की सौगात लाएगी .सकता। ऐसे में डॉ, क्योंकि इससे आईवीएफ में सफलता की संभावनाएं और बढ़ गई हैं। साथ ही यह खोज विभिन्न समूहों के साथ में काम करने के जबरदस्त प्रभाव को भी दर्शाती है।'

पुरुष शुक्राणुओं में गतिशीलता की कमी बांझपन की एक प्रमुख वजह मानी जाती है। गर्भधारण के लिए शुक्राणुओं का निशेचन स्थान तक पहुंचना आवश्यक होता है। माना जा रहा है कि यह नई तकनीक गर्भाधान और उसके आगे की प्रक्रियाओं को निर्विघ्न बनाने में सहायक सिद्ध होगी। विज्ञान और इंजीनियरिंग अनुसन्धान बोर्ड के द्वारा पोषित इस शोध अध्ययन कर निष्कर्ष 'नेचर साइंटिफिक रिपोर्ट्स में प्रकाशित किये गए हैं। (इंडिया साइंस वायर)

Top Indian News

आईवीएफ की सफलता दर को और बेहतर बनाएगी नई तकनीक

1 month ago

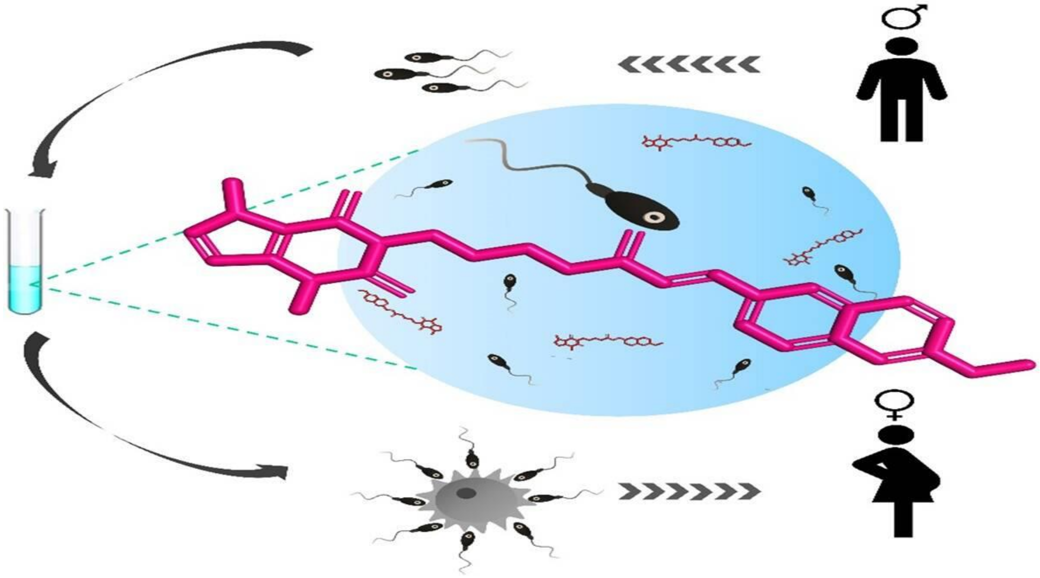

Hindi News | हेल्थ | आईवीएफ की सफलता दर को और बेहतर बनाएगी नई तकनीक

निःसंतान दंपत्तियों के लिए सहायक प्रजनन तकनीक आईवीएफ उम्मीद की एक किरण है, लेकिन इस तकनीक की सफलता की राह में कुछ चुनौतियां भी हैं।

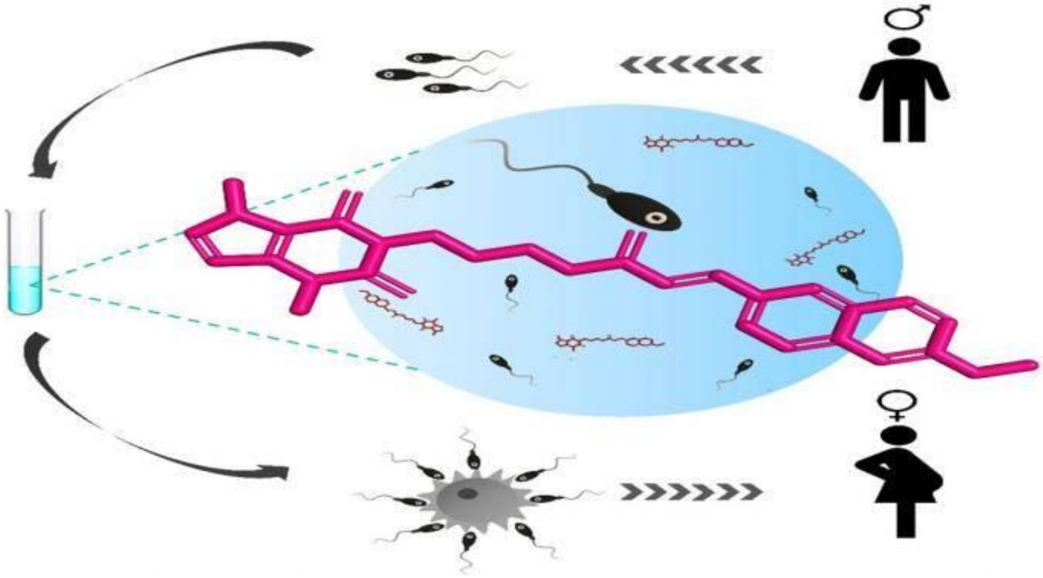

एमपीटीएक्स की कार्यविधि का ग्राफिक चित्रण!

निःसंतान दंपत्तियों के लिए सहायक प्रजनन तकनीक आईवीएफ उम्मीद की एक किरण है, लेकिन इस तकनीक की सफलता की राह में कुछ चुनौतियां भी हैं। इसी को ध्यान में रखते हुए वैज्ञानिकों ने एमपीटीएक्स)mPTX) या एमपीटैक्स नाम का एक लघु कार्बनिक अणु का डिज (क मॉलिक्यूलस्मॉल आर्गेनि)ाइन तैयार किया है जो इन विट्रो फर्टिलाइजेशन प्रक्रिया की सफलता में अहम भूमिका निभाने वाले स्पर्म की क्षमताओं को बेहतर बनाती है। इसे भारतीय (आईवीएफ) के समूह राजाकुमारा ईरप्पा .हैदराबाद में जैवप्रौद्योगिकी विभाग के डॉ (आईआईटी) प्रौद्योगिकी संस्थान, मेंगलूर विश्वविद्यालय के डॉगुरुप्रसाद .जगदीश प्रसाद दासप्पा के समूह और मणिपाल एकेडमी ऑफ हायर एजुकेशन के प्रो . कल्थूर के समूह ने मिलकर विकसित किया है।

इन समूहों के अध्ययन ने यही स्थापित किया है कि एक पेंटोक्सिफाइलाइन डेरिवेटिव के रूप में एमपीटैक्स स्पर्म की आवाजाही या सक्रियता को बढ़ाने, वाइट्रो स्पर्म को लंबे समय तक अक्षुण्ण बनाए रखने और स्पर्म फर्टिलाइजेशन संभावनाओं को बढ़ाने में सहायक सिद्ध होता है। यह भी उल्लेखनीय है कि एमपीटैक्स के माध्यम से आगे बढ़ने वाली इस प्रक्रिया के दुष्प्रभाव नगण्य हैं। फिलहाल आईवीएफ तकनीक में फार्माकॉलोजिकल एजेंट के रूप में जिस पेंटोक्सिफाइलिन का इस्तेमाल किया जाता है, उसकी तुलना में अपेक्षाकृत कम संकेंद्रण वाला एमपीटैक्स शरीर पर कम दुष्प्रभाव दिखाता है। ऐसे में सहायक प्रजनन प्रक्रियाओं में जिन दवाओं का उपयोग किया जा रहा है उनके मुकाबले एमपीटैक्स को एक बेहतर विकल्प के रूप में देखा जा रहा है।

आईआईटी हैदराबाद के निदेशक प्रोबीएस मूर्ति कहते हैं ., 'मातृत्वपितृत्व के सुख को शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा - यों के लिए खुशियोंराजकुमारा के नेतृत्व में हुई यह खोज निःसंतान दंपत्ति .सकता। ऐसे में डॉ की सौगात लाएगी, क्योंकि इससे आईवीएफ में सफलता की संभावनाएं और बढ़ गई हैं। साथ ही यह खोज विभिन्न समूहों के साथ में काम करने के जबरदस्त प्रभाव को भी दर्शाती है।'

पुरुष शुक्राणुओं में गतिशीलता की कमी बांझपन की एक प्रमुख वजह मानी जाती है। गर्भधारण के लिए शुक्राणुओं का निशेचन स्थान तक पहुंचना आवश्यक होता है। माना जा रहा है कि यह नई तकनीक गर्भाधान और उसके आगे की प्रक्रियाओं को निर्विघ्न बनाने में सहायक सिद्ध होगी। विज्ञान और इंजीनियरिंग अनुसन्धान बोर्ड के द्वारा पोषित इस शोध अध्ययन कर निष्कर्ष 'नेचर साइंटिफिक रिपोर्ट्स में प्रकाशित किये गए हैं। (इंडिया साइंस वायर)

फाड़ डालो डॉट कॉम
धाँसू ख़बरें और ख़बरों की चीर-फाड़

नि:संतान दंपत्तियों के लिए खुशियों की सौगात लाएगी यह खोज

हस्तक्षेप.com उनकी ख़बरें जो ख़बर नहीं बनते

By Ram Bharose

अगस्त 13, 2021 गर्भधारण

आईवीएफ की सफलता दर को और बेहतर बनाएगी नई तकनीक

नई दिल्ली, 13 अगस्त, (इंडिया साइंस वायरनि:संतान दंपत्तियों के लिए .(सहायक प्रजनन तकनीक आईवीएफ उम्मीद की एक किरण है, लेकिन इस तकनीक की सफलता की राह में कुछ चुनौतियां भी हैं। इसी को ध्यान में रखते हुए वैज्ञानिकों ने एमपीटीएक्स)mPTX) या एमपीटैक्स नाम का एक लघु कार्बनिक अणु स)्मॉल आर्गेनिक मॉलिक्यूलका डिजाइन तैयार किया है (जो इन विट्रो फर्टिलाइजेशन प्रक्रिया (आईवीएफ)

की सफलता में अहम भूमिका निभाने वाले स्पर्म की क्षमताओं को बेहतर बनाती है। इसे भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान हैदराबाद (आईआईटी) में जैवप्रौद्योगिकी विभाग के डॉराजाकुमारा ईरप्पा के समूह ., मेंगलूर विश्वविद्यालय के डॉ .जगदीश प्रसाद दासप्पा के समूह और मणिपाल एकेडमी ऑफ हायर एजुकेशन के प्रो . गुरुप्रसाद कल्थूर के समूह ने मिलकर विकसित किया है।

एक बेहतर विकल्प के रूप में देखा जा रहा है एमपीटैक्स

इन समूहों के अध्ययन ने यही स्थापित किया है कि एक पेंटोक्सिफाइलाइन डेरिवेटिव के रूप में एमपीटैक्स स्पर्म की आवाजाही या सक्रियता को बढ़ाने, वाइट्रो स्पर्म को लंबे समय तक अक्षुण्ण बनाए रखने और स्पर्म फर्टिलाइजेशन संभावनाओं को बढ़ाने में सहायक सिद्ध होता है। यह भी उल्लेखनीय है कि एमपीटैक्स के माध्यम से आगे बढ़ने वाली इस प्रक्रिया के दुष्प्रभाव नगण्य हैं। फिलहाल **आईवीएफ तकनीक में फार्माकॉलोजिकल एजेंट** के रूप में जिस पेंटोक्सिफाइलिन का इस्तेमाल किया जाता है, उसकी तुलना में अपेक्षाकृत कम संकेंद्रण वाला एमपीटैक्स शरीर पर कम दुष्प्रभाव दिखाता है। ऐसे में सहायक प्रजनन प्रक्रियाओं में जिन दवाओं का उपयोग किया जा रहा है उनके मुकाबले एमपीटैक्स को एक बेहतर विकल्प के रूप में देखा जा रहा है।

निःसंतान दंपत्तियों के लिए खुशियों की सौगात लाएगी यह खोज: प्रोबीएस . मूर्ति

आईआईटी हैदराबाद के निदेशक प्रोबीएस मूर्ति कहते हैं ., '**मातृत्वपितृत्व क-ठ सुख** को शब्दों में व्यक्त नहीं किया जा सकता। ऐसे में डॉराजकुमारा के नेतृत्व में हुई यह खोज निःसंतान दंपत्तियों के लिए खुशियों की . सौगात लाएगी, क्योंकि इससे आईवीएफ में सफलता की संभावनाएं और बढ़ गई हैं। साथ ही यह खोज विभिन्न समूहों के साथ में काम करने के जबरदस्त प्रभाव को भी दर्शाती है।'

पुरुष शुक्राणुओं में गतिशीलता की कमी बांझपन की एक प्रमुख वजह मानी जाती है। **गर्भधारण के लिए शुक्राणुओं का निशेचन स्थान तक पहुंचना** आवश्यक होता है। माना जा रहा है कि यह नई तकनीक गर्भाधान और उसके आगे की प्रक्रियाओं को निर्विघ्न बनाने में सहायक सिद्ध होगी। विज्ञान और इंजीनियरिंग अनुसन्धान बोर्ड के द्वारा पोषित इस शोध अध्ययन कस निष्कर्ष 'नेचर साइंटिफिक रिपोर्ट्स में प्रकाशित किये गए हैं।

प्रभासाक्षी

आईवीएफ की सफलता दर को और बेहतर बनाएगी नई तकनीक

इंडिया साइंस वायर Aug 13, 2021 14:47

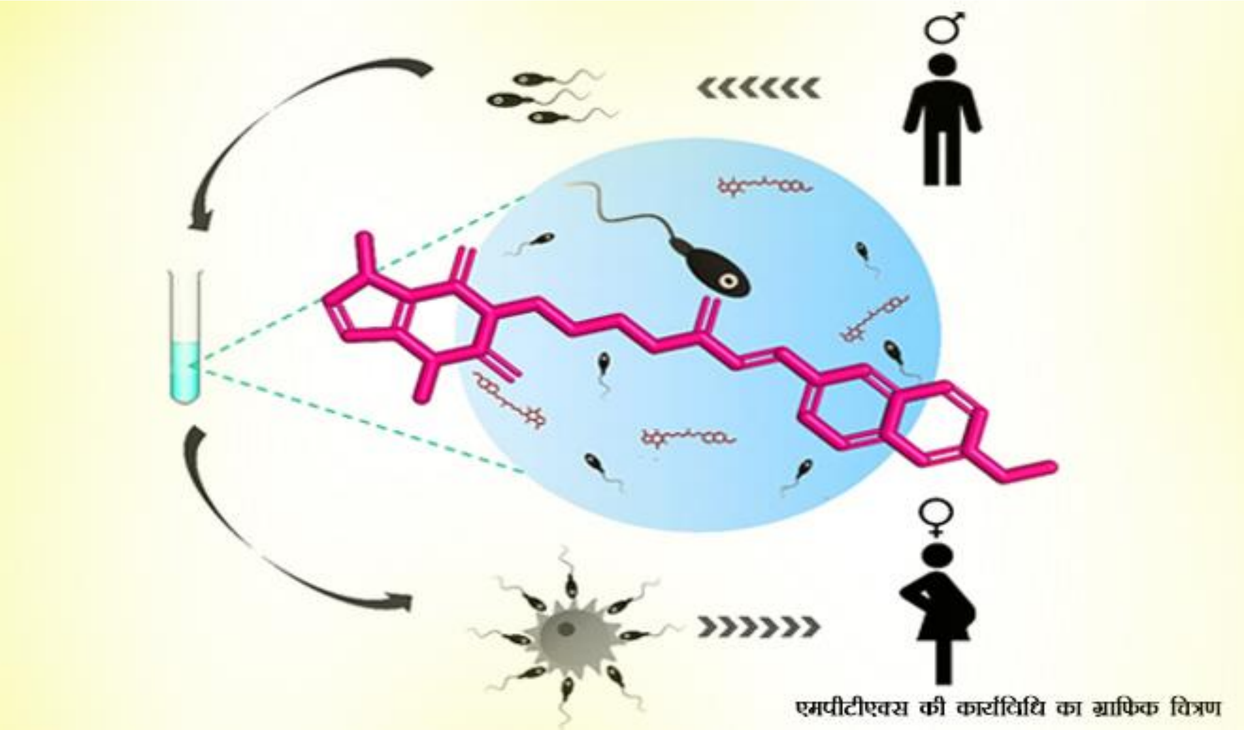

> *फिलहाल आईवीएफ तकनीक में फार्माकॉलोजिकल एजेंट के रूप में जिस पेंटोक्सिफाइलिन का इस्तेमाल किया जाता है, उसकी तुलना में अपेक्षाकृत कम संकेंद्रण वाला एमपीटैक्स शरीर पर कम दुष्प्रभाव दिखाता है।*

निःसंतान दंपत्तियों के लिए सहायक प्रजनन तकनीक आईवीएफ उम्मीद की एक किरण है, लेकिन इस तकनीक की सफलता की राह में कुछ चुनौतियां भी हैं। इसी को ध्यान में रखते हुए वैज्ञानिकों ने एमपीटीएक्स)mPTX) या एमपीटैक्स नाम का एक लघु कार्बनिक अणु इन तैयार किया है जो का डिजा (स्मॉल आर्गेनिक मॉलिक्यूल) प्रक्रिया की सफलता में अहम भूमिका निभाने वाले स्पर्म (आईवीएफ) इन विट्रो फर्टिलाइजेशनकी क्षमताओं को बेहतर बनाती है। इसे भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान .हैदराबाद में जैवप्रौद्योगिकी विभाग के डॉ (आईआईटी) राजाकुमारा ईरप्पा के समूह, मेंगलूर विश्वविद्यालय के डॉजगदीश प्रसाद दासप्पा के समूह और मणिपाल . गुरुप्रसाद कल्थ .एकेडमी ऑफ हायर एजुकेशन के प्रोर के समूह ने मिलकर विकसित किया है।

इन समूहों के अध्ययन ने यही स्थापित किया है कि एक पेंटोक्सिफाइलाइन डेरिवेटिव के रूप में एमपीटैक्स स्पर्म की आवाजाही या सक्रियता को बढ़ाने, वाइट्रो स्पर्म को लंबे समय तक अक्षुण्ण बनाए रखने और स्पर्म फर्टिलाइजेशन संभावनाओं को बढ़ाने में सहायक सिद्ध होता है। यह भी उल्लेखनीय है कि एमपीटैक्स के माध्यम से आगे बढ़ने वाली इस प्रक्रिया के दुष्प्रभाव नगण्य हैं। फिलहाल आईवीएफ तकनीक में फार्माकॉलोजिकल एजेंट के रूप में जिस पेंटोक्सिफाइलिन का इस्तेमाल किया जाता है, उसकी तुलना में अपेक्षाकृत कम संकेंद्रण वाला एमपीटैक्स शरीर पर कम दुष्प्रभाव दिखाता है। ऐसे में सहायक प्रजनन प्रक्रियाओं में जिन दवाओं का उपयोग किया जा रहा है उनके मुकाबले एमपीटैक्स को एक बेहतर विकल्प के रूप में देखा जा रहा है।

आईआईटी हैदराबाद के निदेशक प्रो बीएस मूर्ति कहते .हैं, 'मातृत्वपितृत्व के सुख को शब्दों में व्यक्त नहीं किया - की सौगात राजकुमारा के नेतृत्व में हुई यह खोज निःसंतान दंपत्तियों के लिए खुशियों .जा सकता। ऐसे में डॉ लाएगी, क्योंकि इससे आईवीएफ में सफलता की संभावनाएं और बढ़ गई हैं। साथ ही यह खोज विभिन्न समूहों के साथ में काम करने के जबरदस्त प्रभाव को भी दर्शाती है।'

पुरुष शुक्राणुओं में गतिशीलता की कमी बांझपन की एक प्रमुख वजह मानी जाती है। गर्भधारण के लिए शुक्राणुओं का निषेचन स्थान तक पहुंचना आवश्यक होता है। माना जा रहा है कि यह नई तकनीक गर्भाधान और उसके आगे की प्रक्रियाओं को निर्विघ्न बनाने में सहायक सिद्ध होगी।

विज्ञान और इंजीनियरिंग अनुसन्धान बोर्ड के द्वारा पोषित इस शोध अध्ययन कस निष्कर्ष ‘नेचर साइंटिफिक रिपोर्ट्स में प्रकाशित किये गए हैं।

इंडिया साइंस वायर

नई वायुशोधक तकनीक विकसित कर रहा है - आईआईटी मद्रास

कोरोना संक्रमण से होने वाले कोविड और टीबी जिसे तपेदिक या क्षय रोग भी कहा जाता है, इसमें एक समान बात यही है कि ये दोनों बीमारियां संक्रामक हैं।

Written By जनसत्ता ऑनलाइन

नई दिल्ली | August 13, 2021 5:46:23 am

सांकेतिक फोटो।

कोरोना संक्रमण से होने वाले कोविड और टीबी जिसे तपेदिक या क्षय रोग भी कहा जाता है, इसमें एक समान बात यही है कि ये दोनों बीमारियां संक्रामक हैं। दोनों बीमारियों का संक्रमण संक्रमित व्यक्ति के सीधे संपर्क में आने के अलावा हवा के माध्यम से भी फैलना संभव है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान मद्रास (आईआईटी), वेल्लोर इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी (वीआईटी), चेन्नई तथा क्वीन मैरी यूनिवर्सिटी ऑफ लंदन (क्यूएमयूएल), यूनाइटेड किंगडम ने साथ मिलकर एक ऐसी एयर

सेनिटाइजेशन टेक्नोलॉजी वायु स्वच्छत)ा तकनीकऔर गाइडलाइन विकसित करने कि योजना (बनायी है जो पूरी तरह भारत पर केंद्रित होगी। कोरोना वायरस और टीबी के प्रसार पर अंकुश ल का उद्देश्य कार्यालयों और अस्पताल जैसे बिना खुली हवा वाले लगाने के लिए हुई है। इस पह स्थानों को संक्रमण से सुरक्षित करने का है।

इस संयुक्त अनुसंधान का लक्ष्य अंदरूनी स्थानों पर वायु संक्रमण के कारण होने वाली बीमारियों से बचाव के लिए एक कम लागत वाला बायोयार करना है। इसमें एयरोसोल प्रोटेक्शन सिस्टम तै- अप मैग्नेटो क्लीनटेक की भी अहम भूमिका होगी जो ऐसी तकनी-दिल्ली स्थित एक प्रमुख स्टार्टकों पर पहले भी काम कर चुका है। इस विकसित होने वाली तकनीक को भारत के विभिन्न पर्यावरणीय परिवेश के आधार पर असल कसौटी पर कसा जाएगा।

कोविड -19 और टीबी जैसी बीमारियां भारत के लिए चुनौती हैं। इनकी भयावहता का अनुमान इसी तथ्य से लगाया जा सकता है कि कोविड -19 के कारण भारत में अब तक चार लाख से अधिक लोगों को जान गंवानी पड़ी है। वहीं वर्ष 2019 के दौरान देश में 4.45 लाख लोगों ने टीबी के कारण दम तोड़ दिया। टीबी उन शीर्ष दस बीमारियों में शामिल है, जिनसे विश्व में सबसे अधिक मौतें होती हैं। ऐसे में इस शोधअनुसंधान को बहुत म-हत्वपूर्ण माना जा रहा है।

इस परियोजना के अंतर्गत’अल्ट्रावायलेटसी-’ विकिरण के उपयोग से हवा को शुद्ध करने वाली तकनीक की व्यावहारिकता के मूल्यांकन के लिए एक प्रूफकांसेप्ट तैयार किया है। इस -ऑफ- तकनीक में वर्तमान उपलब्ध फिल्टरों की तुलना में हवा में मौजूद वायरसों को हटाने की कहीं अधिक प्रभावी क्षमता होगी।

इस परियोजना की वर्तमान स्थिति और भविष्य में इसके संभावित उपयोग पर आईआईटी मद्रास में महासागर आभियांत्रिकी विभाग के प्रोफेसर एवं इस परियोजना के समन्वयक प्रो अब्दुस समद बताते हैं, ‘सामाजिक समस्याओं के समाधान की दिशा में सहयोगपूर्ण शोधअनुसंधान के लिए - आईआईटी मद्रास सदैव प्रयासरत रहा है। गत वर्ष मार्च में कोविड संक्रमण की शुरुआत के समय खुली हवा वाली जगहों के लिए ऐसे शोध के लिए तुरंत प्रयास हम बहुत डर गए थे। ऐसे में कम आरंभ कर दिए।’

(इंडिया साइंस वायर(

प्रभासाक्षी

नई वायुशोध-क तकनीक विकसित कर रहा है आईआईटी मद्रास

इंडिया साइंस वायर Aug 19, 2021 17:41

> *कोविड-19 और टीबी जैसी बीमारियां भारत के लिए चुनौती हैं। इनकी भयावहता का अनुमान इसी तथ्य से लगाया जा सकता है कि कोविड-19 के कारण भारत में अब तक चार लाख से अधिक लोगों को जान गंवानी पड़ी। वहीं वर्ष 2019 के दौरान देश में 4.45 लाख लोगों ने टीबी के कारण दम तोड़ दिया।*

कोरोना संक्रमण से होने वाले कोविड और टीबी जिसे तपेदिक या क्षय रोग भी कहा जाता है, में एक समान बात यही है कि ये दोनों बीमारियां संक्रामक हैं। दोनों बीमारियों का संक्रमण संक्रमित व्यक्ति के सीधे संपर्क में आने के अलावा हवा के माध्यम से भी संभव है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान मद्रास (आईआईटी), वेल्लोर इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी (वीआईटी), चेन्नई तथा क्वीन मैरी यूनिवर्सिटी ऑफ लंदन(क्यूएमयूएल), यूनाइटेड किंगडम ने साथ मिलकर एक ऐसी एयर सैनिटाइजेशन टेक्नोलॉजी और गाइडलाइन विकसित (नीकवायु स्वच्छता तक)

करने कि योजना बनायी है जो पूरी तरह भारत पर केंद्रित होगी। कोरोना वायरस और टीबी के प्रसार पर अंकुश लगाने के लिए हुई। इस पहल का उद्देश्य कार्यालयों और अस्पताल जैसे बिना खुली हवा वाले स्थानों को संक्रमण से सुरक्षित करने का है।

इस संयुक्त अनुसंधान का लक्ष्य अंदरूनी स्थानों पर वायु संक्रमण के कारण होने वाली बीमारियों से बचाव के लिए एक कम लागत वाला बायोएयरोसोल प्रोटेक्शन सिस्टम तैयार करना है। इसमें दिल्ली स्थित एक प्रमुख - पहले भी काम कर चुका है। इस अप मैग्नेटो क्लीनटेक की भी अहम भूमिका होगी जो ऐसी तकनीकों पर-स्टार्ट विकसित होने वाली तकनीक को भारत के विभिन्न पर्यावरणीय परिवेश के आधार पर असलकसौटी पर कसा जाएगा।

कोविड-19 और टीबी जैसी बीमारियां भारत के लिए चुनौती हैं। इनकी भयावहता का अनुमान इसी तथ्य से लगाया जा सकता है कि कोविड-19 के कारण भारत में अब तक चार लाख से अधिक लोगों को जान गंवानी पड़ी। वहीं वर्ष 2019 के दौरान देश में 4.45 लाख लोगों ने टीबी के कारण दम तोड़ दिया। टीबी उन शीर्ष दस बीमारियों में शामिल है, जिनसे विश्व में सबसे अधिक मौतें होती हैं। ऐसे में इस शोधअनुसंधान को बहुत - माना जा रहा है। महत्वपूर्ण

इस परियोजना के अंतर्गत 'अल्ट्रावायलेटसी-' विकिरण के उपयोग से हवा को शुद्ध करने वाली तकनीक की व्यावहारिकता के मूल्यांकन के लिए एक प्रूफकांसेप्ट तैयार किया है। इस तकनीक में वर्तमान उपलब्ध -ऑफ-ने की कहीं अधिक प्रभावी क्षमता होगी।फिल्टरों की तुलना में हवा में मौजूद वायरसों को हटा

इस परियोजना की वर्तमान स्थिति और भविष्य में इसके संभावित उपयोग पर आईआईटी मद्रास में महासागर आभियांत्रिकी विभाग के प्रोफेसर एवं इस परियोजना के समन्वयक प्रो अब्दुस समद बताते हैं, 'सामाजिक समस्याओं के समाधान की दिशा में सहयोगपूर्ण शोधअनुसंधान के लिए आईआईटी मद्रास सदैव प्रयासरत रहा - है। गत वर्ष मार्च में कोविड संक्रमण कीशुरुआत के समय हम बहुत डर गए थे। ऐसे में कम खुली हवा वाली जगहों के लिए ऐसे शोध के लिए तुरंत प्रयास आरंभ कर दिए।'

इंडिया साइंस वायर

नई वायुकसित कर रहा है शोधक तकनीक वि-आईआईटी मद्रास

12/08/2021 V3news India

नई दिल्ली, 12 अगस्त, इंडिया साइंस वायरः कोरोना संक्रमण से होने वाले कोविड और टीबी जिसे तपेदिक या क्षय रोग भी कहा जाता है, में एक समान बात यही है कि ये दोनों बीमारियां संक्रामक हैं। दोनों बीमारियों का संक्रमण संक्रमित व्यक्ति के सीधे संपर्क में आने के अलावा हवा के माध्यम से भी संभव है । भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान मद्रास (आईआईटी), वेल्लोर इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी (वीआईटी), चेन्नई तथा क्वीन मैरी यूनिवर्सिटी ऑफ लंदन (क्यूएमयूएल),

यूनाइटेड किंगडम ने साथ मिलकर एक ऐसी एयर सैनिटाइजेशन टेक्नोलॉजी और गाइडलाइन विकसित (वायु स्वच्छता तकनीक) करने कि योजना बनायी है जो पूरी तरह भारत पर केंद्रित होगी। कोरोना वायरस और टीबी के प्रसार पर अंकुश लगाने के लिए हुई। इस पहल का उद्देश्य कार्यालयों और अस्पताल जैसे बिना खुली हवा वाले स्थानों को संक्रमण से सुरक्षित करने का है। इस संयुक्त अनुसंधान का लक्ष्य अंदरूनी स्थानों पर वायु संक्रमण के कारण होने वाली बीमारियों से बचाव के लिए एक कम लागत वाला बायोन सिस्टम तैयार करना है।एयरोसोल प्रोटेक्श-

इसमें दिल्ली स्थित एक प्रमुख स्टार्ट अप मैग्नेटो क्लीनटेक की भी अहम भूमिका-होगी जो ऐसी तकनीकों पर पहले भी काम कर चुका है। इस विकसित होने वाली तकनीक को भारत के विभिन्न पर्यावरणीय परिवेश के आधार पर असल कसौटी पर कसा जाएगा। कोविड -19 और टीबी जैसी बीमारियां भारत के लिए चुनौती हैं। इनकी भयावहता का अनुमान इसी तथ्य से लगाया जा सकता है कि कोविड -19 के कारण भारत में अब तक चार लाख से अधिक लोगों
को जान गंवानी पड़ी।

वहीं वर्ष 2019 के दौरान देश में 4.45 लाख लोगों ने टीबी के कारण दम तोड़ दिया। टीबी उन शीर्ष दस बीमारियों में शामिल है, जिनसे विश्व में सबसे अधिक मौतें होती हैं। ऐसे में इस शोधअनुसं-धान को बहुत महत्वपूर्ण माना जा रहा है। इस परियोजना के अंतर्गत 'अल्ट्रावायलेटसी-' विकिरण के उपयोग से हवा को शुद्ध करने वाली तकनीक की व्यावहारिकता के मूल्यांकन के लिए एक प्रूफकांसेप्ट तैयार किया है। इस तकनीक में वर्तमान उपलब्ध फिल्टरों की तुलना में हवा म-ऑफ-ेें मौजूद वायरसों को हटाने की कहीं अधिक प्रभावी क्षमता होगी।

इस परियोजना की वर्तमान स्थिति और भविष्य में इसके संभावित उपयोग पर आईआईटी मद्रास में महासागर आभियांत्रिकी विभाग के प्रोफेसर एवं इस परियोजना के समन्वयक प्रो अब्दुस समद बताते हैं, 'सामाजिक समस्याओं के समाधान की दिशा में सहयोगपूर्ण शोधअनुसंधान के लिए आईआईटी मद्रास सदैव प्रयासरत रहा है। गत वर्ष मार्च में कोविड संक्रमण की शुरुआत के - से में कम खुली हवा वाली जगहों के लिए ऐसे शोध के लिए तुरंत प्रयास आरंभ कर दिए।समय हम बहुत डर गए थे। ऐ'

IIT मद्रास नई वायु शोधक तकनीक विकसित कर रहा है

By **India Newes Team** - August 19, 2021

कोरोना संक्रमण के कारण होने वाले कोविड और टीबी, जिसे तपेदिक या तपेदिक के रूप में भी जाना जाता है, के बीच सामान्य बात यह है कि ये दोनों रोग संक्रामक हैं। दोनों बीमारियों का संक्रमण संक्रमित व्यक्ति के सीधे संपर्क में आने के अलावा हवा के जरिए भी संभव है। इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी)IIT) मद्रास, वेल्लोर इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी)VIT), चेन्नई और क्वीन मैरी यूनिवर्सिटी ऑफ लंदन)QMUL), यूनाइटेड किंगडम ने संयुक्त रूप से एक एयर सैनिटाइजेशन तकनीक और दिशानिर्देश विकसित करने की योजना बनाई है जो पूरी तरह से भारत पर केंद्रित होगा। कोरोना वायरस और टीबी के प्रसार को रोकने के लिए। इस पहल का उद्देश्य कार्यालयों और अस्पतालों जैसे गैरखुले स्-थानों को संक्रमण से बचाना है।

इस संयुक्त शोध का लक्ष्य इनडोर वायुजनित संक्रमणों के कारण होने वाली बीमारियों से बचाने के लिए एक कम लागत वाली जैवप्रणाली विकसित करना है। मैग्रेटो क्लीनटेक एरोसोल सुरक्षा-, दिल्ली का एक प्रमुख स्टार्टअप-, जिसने अतीत में ऐसी तकनीकों पर काम किया है, भी इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। भारत के विभिन्न पर्यावरण पर्यावरण के आधार पर इस विकसित हो रही तकनीक की वास्तविक परीक्षा होगी।

भारत के लिए कोविड-19 और टीबी जैसी बीमारियां एक चुनौती हैं। इनकी भयावहता का अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि भारत में अब तक कोविड-19 की वजह से चार लाख से ज्यादा लोगों की जान जा चुकी है . वहीं, वर्ष 2019 के दौरान देश में 4.45 लाख लोगों की टीबी से मौत हुई है। टीबी उन शीर्ष दस बीमारियों में शामिल है जो दुनिया में सबसे ज्यादा मौतों का कारण बनती हैं। ऐसे में यह शोधअनुसंधान काफी महत्वपूर्ण माना - जा रहा है।

इस परियोजना के तहत 'पराबैंगनीसी-' विकिरण का उपयोग कर वायु शोधन प्रौद्योगिकी की व्यवहार्यता का मूल्यांकन करने के लिए एक अवधारणा का सबूत तैयार किया गया है। इस तकनीक में वर्तमान में उपलब्ध फिल्टर की तुलना में हवा में मौजूद वायरस को दूर करने की अधिक प्रभावी क्षमता होगी।

इस परियोजना की वर्तमान स्थिति और भविष्य में इसके संभावित उपयोग पर, IIT मद्रास में महासागर इंजीनियरिंग विभाग के प्रोफेसर और इस परियोजना के समन्वयक प्रोफेसर अब्दुस समद कहते हैं, 'IIT मद्रास हमेशा सहयोगी अनुसंधान के लिए प्रयासरत रहा है और सामाजिक समस्याओं के समाधान की दिशा में अनुसंधान। है। पिछले साल मार्च में जब कोविड संक्रमण शुरू हुआ तो हम बहुत डरे हुए थे। ऐसे में कम खुली हवा वाले स्थानों के लिए इस तरह के शोध के लिए तुरंत प्रयास शुरू किए गए।

इंडिया साइंस वायर

नई वायुशोधक तकनीक विकसित कर रहा है - आईआईटी मद्रास

prabhasakshi.com - प्रभासाक्षी न्यूज नेटवर्क • 27d

कोरोना संक्रमण से होने वाले कोविड और टीबी जिसे तपेदिक या क्षय रोग भी कहा जाता है, में एक समान बात यही है कि ये दोनों बीमारियां संक्रामक हैं। दोनों ...

Read more on prabhasakshi.com

WEBDUNIA
हिंदी

हवा को शुद्ध करने की नई तकनीक तैयार कर रहा आईआईटी मद्रास

Last Updated: शनिवार, 14 अगस्त 2021 (13:30 IST)

नई दिल्ली, कोरोना संक्रमण से होने वाले कोविड और टीबी जिसे तपेदिक या क्षय रोग भी कहा जाता है, में एक समान बात यही है कि ये दोनों बीमारियां संक्रामक हैं।

दोनों बीमारियों का संक्रमण संक्रमित व्यक्ति के सीधे संपर्क में आने के अलावा हवा के माध्यम से भी संभव है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान मद्रास (आईआईटी), वेल्लोर इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी (वीआईटी), चेन्नई तथा क्वीन मैरी यूनिवर्सिटी ऑफ लंदन (क्यूएमयूएल), यूनाइटेड किंगडम ने साथ मिलकर एक ऐसी एयर सैनिटाइजेशन टेक्नोलॉजी वायु स्वच्छ)ता तकनीकऔर गाइडलाइन विकसित करने कि योजना बनायी है (, जो पूरी तरह भारत पर केंद्रित होगी।

कोरोना वायरस और टीबी के प्रसार पर अंकुश लगाने के लिए हुई। इस पहल का उद्देश्य कार्यालयों और अस्पताल जैसे बिना खुली हवा वाले स्थानों को संक्रमण से सुरक्षित करने का है।

इस संयुक्त अनुसंधान का लक्ष्य अंदरूनी स्थानों पर वायु संक्रमण के कारण होने वाली बीमारियों से बचाव के लिए एक कम लागत वाला बायो। इसमें दिल्ली स्थित एक प्रमुख एयरोसोल प्रोटेक्शन सिस्टम तैयार करना है-अप मैग्नेटो क्लीनटेक की भी अहम भूमिका होगी जो ऐसी तक-स्टार्टनीकों पर पहले भी काम कर चुका है। इस विकसित होने वाली तकनीक को भारत के विभिन्न पर्यावरणीय परिवेश के आधार पर असल कसौटी पर कसा जाएगा।

कोविड -19 और टीबी जैसी बीमारियां भारत के लिए चुनौती हैं। इनकी भयावहता का अनुमान इसी तथ्य से लगाया जा सकता है कि कोविड -19 के कारण भारत में अब तक चार लाख से अधिक लोगों को जान गंवानी पड़ी।
वहीं वर्ष 2019 के दौरान देश में 4.45 लाख लोगों ने टीबी के कारण दम तोड़ दिया। टीबी उन शीर्ष दस बीमारियों में शामिल है, जिनसे विश्व में सबसे अधिक मौतें होती हैं। ऐसे में इस शोधअनुसंधान को बहुत - महत्वपूर्ण माना जा रहा है।

इस परियोजना के अंतर्गत 'अल्ट्रावायलेटसी-' विकिरण के उपयोग से हवा को शुद्ध करने वाली तकनीक की व्यावहारिकता के मूल्यांकन के लिए एक प्रूफकांसेप्ट तैयार किया है। इस तकनीक में वर्तमान उपलब्ध -ऑफ-फिल्टरों की तुलना में हवा में मौजूद वायरसों को हटाने की कहीं अधिक प्रभावी क्षमता होगी।

इस परियोजना की वर्तमान स्थिति और भविष्य में इसके संभावित उपयोग पर आईआईटी मद्रास में महासागर आभियांत्रिकी विभाग के प्रोफेसर एवं इस परियोजना के समन्वयक प्रो अब्दुस समद बताते हैं, 'सामाजिक समस्याओं के समाधान की दिशा में सहयोगपूर्ण शोधअनुसंधान के लिए आईआईटी मद्रास सदैव प्रयासरत रहा - है।

गत वर्ष मार्च में कोविड संक्रमण की शुरुआत के समय हम बहुत डर गए थे। ऐसे में कम खुली हवा वाली जगहों के लिए ऐसे शोध के लिए तुरंत प्रयास आरंभ कर दिए।' ***(इंडिया साइंस वायर(***

msn

जनसत्ता

नई वायुशोधक तकनीक विकसित कर रहा है - आईआईटी मद्रास

Bishwa Jha 13-08-2021

© Jansatta द्वारा प्रदत्त

कोरोना संक्रमण से होने वाले कोविड और टीबी जिसे तपेदिक या क्षय रोग भी कहा जाता है, इसमें एक समान बात यही है कि ये दोनों बीमारियां संक्रामक हैं। दोनों बीमारियों का संक्रमण संक्रमित व्यक्ति के सीधे संपर्क में आने के अलावा हवा के माध्यम से भी फैलना संभव है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान मद्रास (आईआईटी), वेल्लोर इंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी (वीआईटी), चेन्नई तथा क्वीन मैरी यूनिवर्सिटी ऑफ लंदन (क्यूएमयूएल), यूनाइटेड किंगडम ने साथ मिलकर एक ऐसी एयर सेनिटाइजेशन टेक्नोलॉजी जना बनायी है जो पूरी और गाइडलाइन विकसित करने कि यो(वायु स्वच्छता तकनीक) तरह भारत पर केंद्रित होगी। कोरोना वायरस और टीबी के प्रसार पर अंकुश लगाने के लिए हुई है। इस पहल का उद्देश्य कार्यालयों और अस्पताल जैसे बिना खुली हवा वाले स्थानों को संक्रमण से सुरक्षित करने का है।

इस संयुक्त अनुसंधान का लक्ष्य अंदरूनी स्थानों पर वायु संक्रमण के कारण होने वाली बीमारियों से बचाव के लिए एक कम लागत वाला बायोएयरोसोल प्रोटेक्शन सिस्टम तैयार करना है। इसमें दिल्ली स्थित एक प्रमुख स्-टार्टअप मैग्नेटो -

सित होने वाली तकनीक क्लीनटेक की भी अहम भूमिका होगी जो ऐसी तकनीकों पर पहले भी काम कर चुका है। इस विक को भारत के विभिन्न पर्यावरणीय परिवेश के आधार पर असल कसौटी पर कसा जाएगा।

कोविड -19 और टीबी जैसी बीमारियां भारत के लिए चुनौती हैं। इनकी भयावहता का अनुमान इसी तथ्य से लगाया जा सकता है कि कोविड -19 के कारण भारत में अब तक चार लाख से अधिक लोगों को जान गंवानी पड़ी है। वहीं वर्ष 2019 के दौरान देश में 4.45 लाख लोगों ने टीबी के कारण दम तोड़ दिया। टीबी उन शीर्ष दस बीमारियों में शामिल है, जिनसे विश्व में सबसे अधिक मौतें होती हैं। ऐसे में इस शोधअनुसंधान को बहुत महत्वपूर्ण माना जा रहा है।-

इस परियोजना के अंतर्गत'अल्ट्रावायलेटसी-' विकिरण के उपयोग से हवा को शुद्ध करने वाली तकनीक की व्यावहारिकता के मूल्यांकन के लिए एक प्रूफ कांसेप्ट तैयार किया है। इस तकनीक-ऑफ-में वर्तमान उपलब्ध फिल्टरों की तुलना में हवा में मौजूद वायरसों को हटाने की कहीं अधिक प्रभावी क्षमता होगी।

इस परियोजना की वर्तमान स्थिति और भविष्य में इसके संभावित उपयोग पर आईआईटी मद्रास में महासागर आभियांत्रिकी विभाग के प्रोफेसर एवं इस परियोजना के समन्वयक प्रो अब्दुस समद बताते हैं, 'सामाजिक समस्याओं के समाधान की दिशा में सहयोगपूर्ण शोधआईआईटी मद्रास सदैव प्रयासरत रहा है। गत वर्ष मार्च में अनुसंधान के लिए-कोविड संक्रमण की शुरुआत के समय हम बहुत डर गए थे। ऐसे में कम खुली हवा वाली जगहों के लिए ऐसे शोध के लिए तुरंत प्रयास आरंभ कर दिए।'

(इंडिया साइंस वायर(

रिपब्लिक न्यूज़इंडिया

नई वायुशोधक तकनीक विकसित कर - सरहा है आईआईटी मद्रा

By **Rupesh Dharmik** - August 18, 2021

नई दिल्ली: कोरोना संक्रमण से होने वाले कोविडऔरटीबी जिसेतपेदिक या क्षय रोग भी कहा जाता है, में एक समान बात यही है कि ये दोनों बीमारियां संक्रामक हैं।दोनों बीमारियों का संक्रमण संक्रमित व्यक्ति के सीधे संपर्क में आने के अलावा हवा के माध्यम से भी संभव है।भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान मद्रास (आईआईटी),वेल्लोरइंस्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी (वीआईटी), चेन्नई तथा क्वीनमैरीयूनिवर्सिटी ऑफ लंदन (क्यूएमयूएल), यूनाइटेड किंगडमने साथ मिलकर एक ऐसी एयरसैनिटाइजेशनटेक्नोलॉजी वायु) और गाइडलाइन विकसित करने कि योजना बनायी हैजो पूरी तरह भारत परकेंद्रित (स्वच्छता तकनीक होगी।कोरोनावायरस और टीबी के प्रसार पर अंकुश लगाने के लिए हुई। इस पहल का उद्देश्य कार्यालयों और अस्पताल जैसे बिना खुली हवा वाले स्थानों को संक्रमण से सुरक्षित करने का है।

इस संयुक्त अनुसंधान का लक्ष्य अंदरूनी स्थानों पर वायु संक्रमण के कारण होने वाली बीमारियों से बचाव के लिए एक कम लागत वाला बायोएयरोसोलप्रोटेक्शनसिस्टम तैयार करना है। इसमें दिल्ली - अपमैग्नेटोक्लीनटेक की भी अहम भूमिका होगी जो ऐसी तकनीकों परपहले भी -र्टस्थित एक प्रमुख स्टा काम करचुका है। इस विकसित होने वाली तकनीक को भारत के विभिन्न पर्यावरणीय परिवेश के आधार पर असल कसौटी पर कसा जाएगा।

कोविड -19 और टीबी जैसी बीमारियां भारतके लिए चुनौती हैं। इनकी भयावहता का अनुमान इसी तथ्य से लगाया जा सकता है कि कोविड -19 के कारण भारत में अब तकचार लाख से अधिक लोगों को जान गंवानी पड़ी। वहीं वर्ष 2019 के दौरान देश में 4.45 लाख लोगों ने टीबी के कारण दम तोड़ दिया। टीबी उन शीर्ष दस बीमारियों में शामिल है, जिनसे विश्व में सबसे अधिक मौतें होती हैं। ऐसे में इस शोधअनुसंधान को बहुत महत्वपूर्ण माना जा रहा है।-

इस परियोजना के अंतर्गत 'अल्ट्रावायलेटसी-' विकिरण के उपयोग से हवा को शुद्ध करने वाली तकनीक की व्यावहारिकता के मूल्यांकन के लिए एक प्रूफकांसेप्टतैयार किया है। इस तकनीक में -ऑफ-न उपलब्ध फिल्टरों की तुलना में हवा में मौजूद वायरसों को हटाने की कहीं अधिक प्रभावी वर्तमा क्षमता होगी।

इस परियोजना की वर्तमान स्थिति और भविष्य में इसके संभावित उपयोग पर आईआईटी मद्रास में महासागर आभियांत्रिकी विभाग के प्रोफेसर एवं इस परियोजना के समन्वयक प्रो अब्दुससमदबताते हैं, 'सामाजिक समस्याओं के समाधान की दिशा में सहयोगपूर्ण शोधअनुसंधान के लिए आईआईटी मद्रास - सदैव प्रयासरत रहा है। गत वर्ष मार्च में कोविड संक्रमण की शुरुआत के समय हम बहुत डर गए थे। ऐसे में कम खुली हवा वाली जगहों के लिए ऐसे शोध के लिए तुरंत प्रयास आरंभ कर दिए।' (इंडिया साइंस वायर(

Telangana Today
FOR LOCAL TO GLOBAL NEWS

New study may help make spinach leaf look like lettuce

BY INDIA SCIENCE WIRE | PUBLISHED: 17TH AUG 2021 6:48 PM

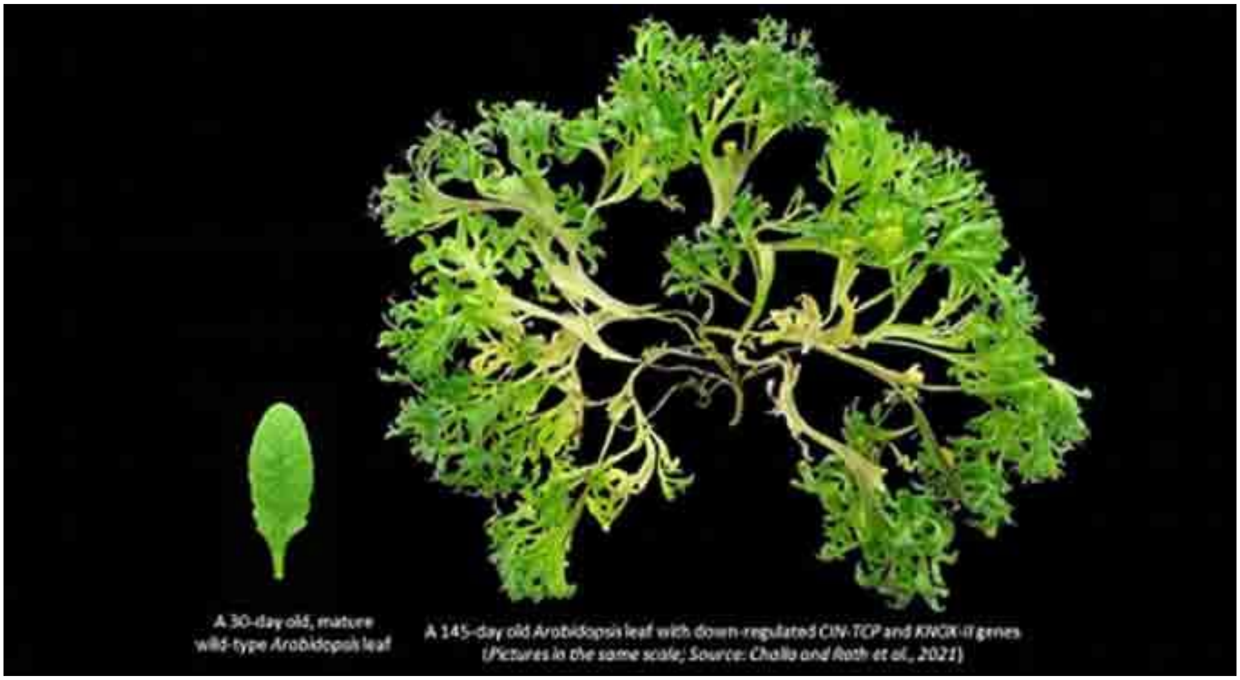

New Delhi: A new study could help introduce innovations in the food industry as it could help change the shape of the salad leaves as one desires.

Plants have either 'simple' or 'compound' leaves. A mango tree, for example, is considered to possess 'simple' leaves because they have a single, intact leaf blade. A Gulmohar tree, on the other hand, has 'compound' leaves where the leaf blade is dissected into multiple leaflets. Both types of leaves start out as rod-like structures budding out from the meristem, the tip of the stem where stem cells are present. But, they take different shapes as they grow. The question as to how this happens has been a subject of much investigation.

The new study was conducted to help unscramble the puzzle. It has shed light on how `simple' leaves develop in a plant. It has identified two gene families that regulate the development of `simple' leaves in a plant called *Arabidopsis thaliana* – a popular model organism in plant biology. These gene families – *CIN-TCP* and *KNOX-II* – encode proteins called transcription factors that suppress the formation of new leaflets at the margin, thereby giving rise to `simple' leaves.

The researchers simultaneously suppressed multiple members of the two gene families. This caused the `simple' leaves to become `super compound' leaves that gave rise to leaflets indefinitely. However, when they

independently suppressed either of the two gene families, the leaves did not turn into compound leaves. This suggests that the genes work in concert.

In addition, the mutant leaves continued to stay young and grow for as long as they had the necessary growing conditions. While *Arabidopsis* leaves typically mature in around 30 days and withers by 60 days, the leaves of these mutant plants with suppressed *CIN-TCP* and *KNOX-II* gene families grew for as long as the researchers followed them (175 days) – and could potentially go on for months or years given the necessary conditions.

The study was conducted by researchers from the Department of Microbiology and Cell Biology (MCB) at the Bengaluru-based Indian Institute of Science (IISc) and their collaborators from Shodhaka Life Sciences, Bengaluru.

"While other scientists have been able to convert compound leaves to simple leaves by manipulating the expression of certain genes, our report is the first one to go the other way around," Utpal Nath, Associate Professor at MCB and senior author of the paper, said, in an IISc press release.

The press release noted that the findings could initiate and nurture innovations in the food industry in the long run. Krishna Reddy Challa, a former Ph.D. student at MCB and co-lead author of the study, said, "One could use this technique to alter the shape of the salad leaves as one chooses or increase their biomass. For instance, you could change the shape of a spinach leaf to look like lettuce."

Monalisha Rath, a Ph.D. student at MCB and another co-lead author of the study, said "Since the leaves don't mature once the *CIN-TCP* and *KNOX-II* genes are suppressed, you can also control the longevity of the plant and thereby extend its shelf-life".

The study team included A.N.Sharma, A.K.Bajpai, S.Davuluri, and K.K.Acharya. They have published a report on their work in *Nature Plants.*

Voice of the Nation
ORGANISER

A new study may help make spinach leaf look like lettuce

WEBDESK Aug 18, 2021, 01:54 PM IST

Umashankar Mishra

The new study was conducted to help unscramble the puzzle and has shed light on how `simple' leaves develop in a plant.

New Delhi: A new study could help introduce innovations in the food industry as it could help change the shape of the salad leaves as one desires.

Plants have either `simple' or `compound' leaves. A mango tree, for example, is considered to possess `simple' leaves because they have a single, intact leaf blade. On the other hand, a Gulmohar tree has `compound' leaves, where the leaf blade is dissected into multiple leaflets. Both types of leaves start out as rod-like structures budding out from the meristem, the tip of the stem where stem cells are present. But they take different shapes as they grow. The question as to how this happens has been a subject of much investigation.

The new study was conducted to help unscramble the puzzle. It has shed light on how `simple' leaves develop in a plant. It has identified two gene families that regulate the development of `simple' leaves in a plant called Arabidopsis thaliana–a popular model organism in plant biology. These gene families–CIN-TCP and KNOX-II–encode proteins called transcription factors that suppress the formation of new leaflets at the margin, thereby giving rise to `simple' leaves.

The researchers simultaneously suppressed multiple members of the two gene families. This caused the `simple' leaves to become `super compound' leaves that gave rise to leaflets indefinitely. However, when they independently suppressed either of the two gene families, the leaves did not turn into compound leaves. This suggests that the genes work in concert.

In addition, the mutant leaves continued to stay young and grow for as long as they had the necessary growing conditions. While Arabidopsis leaves typically mature in around 30 days and withers by 60 days, the leaves of these mutant plants with suppressed CIN-TCP and KNOX-II gene families grew for as long as the researchers followed them (175 days)–and could potentially go on for months or years given the necessary conditions.

The study was conducted by researchers from the Department of Microbiology and Cell Biology (MCB) at the Bengaluru-based Indian Institute of Science (IISc) and their collaborators from Shodhaka Life Sciences, Bengaluru.

"While other scientists have been able to convert compound leaves to simple leaves by manipulating the expression of certain genes, our report is the first one to go the other way around," Utpal Nath, Associate Professor at MCB and senior author of the paper, said, in an IISc press release.

The press release noted that the findings could initiate and nurture innovations in the food industry in the long run. Krishna Reddy Challa, a former Ph.D. student at MCB and co-lead author of the study, said, "One could use this technique to alter the shape of the salad leaves as one chooses or increase their biomass. For instance, you could change the shape of a spinach leaf to look like lettuce."

Monalisha Rath, a Ph.D. student at MCB and another co-lead author of the study, said, "Since the leaves don't mature once the CIN-TCP and KNOX-II genes are suppressed, you can also control the longevity of the plant and thereby extend its shelf-life". The study team included A.N. Sharma, A.K. Bajpai, S. Davuluri, and K.K. Acharya. They have published a report on their work in Nature Plants.

Courtesy: India Science Wire

A new study may help make spinach leaf look like lettuce

TOPICS: Nature Plant Biology Protein

POSTED BY: HASTAKSHEP NEWS 17TH AUGUST 2021

New Delhi, Aug 17th, 2021: A new study could help introduce innovations in the **food industry** as it could help change the shape of the salad leaves as one desires.

Plants have either `simple' or `compound' leaves. A **mango tree**, for example, is considered to possess `simple' leaves because they have a single, intact leaf blade. A Gulmohar tree, on the other hand, has `compound' leaves where the leaf blade is dissected into multiple leaflets. Both types of leaves start out as rod-like structures budding out from the meristem, the tip of the stem where stem cells are present. But, they take different shapes as they grow. The question as to how this happens has been a subject of much investigation.

How do `simple' leaves develop in a plant?

The new study was conducted to help unscramble the puzzle. It has shed light on how `simple' leaves develop in a plant. It has identified two gene families that regulate the development of `simple' leaves in a plant called *Arabidopsis thaliana* – a popular model organism in plant biology. These gene families – *CIN-TCP* and *KNOX-II* – encode proteins called transcription factors that suppress the formation of new leaflets at the margin, thereby giving rise to `simple' leaves.

The researchers simultaneously suppressed multiple members of the two gene families. This caused the `simple' leaves to become `super compound' leaves that gave rise to leaflets indefinitely. However, when they independently suppressed either of the two gene families, the leaves did not turn into compound leaves.

This suggests that the genes work in concert.

In addition, the mutant leaves continued to stay young and grow for as long as they had the necessary growing conditions. While *Arabidopsis* leaves typically mature in around 30 days and withers by 60 days, the leaves of these mutant plants with suppressed *CIN-TCP* and *KNOX-II* gene families grew for as long as the researchers followed them (175 days) – and could potentially go on for months or years given the necessary conditions.

The study was conducted by researchers from the Department of Microbiology and Cell Biology (MCB) **at the Bengaluru-based Indian Institute of Science (IISc) and their collaborators from Shodhaka Life Sciences, Bengaluru.**

“While other scientists have been able to convert compound leaves to simple leaves by manipulating the expression of certain genes, our report is the first one to go the other way around,” Utpal Nath, Associate Professor at MCB and senior author of the paper, said, in an IISc press release.

The press release noted that the findings could initiate and nurture innovations in the food industry in the long run. **Krishna Reddy Challa**, a former PhD student at MCB and co-lead author of the study, said, “One could use this technique to alter the shape of the salad leaves as one chooses or increase their biomass. For instance, you could change the shape of a spinach leaf to look like lettuce.”

Monalisha Rath, a PhD student at MCB and another co-lead author of the study, said “Since the leaves don’t mature once the *CIN-TCP* and *KNOX-II* genes are suppressed, you can also control the longevity of the plant and thereby extend its shelf-life”.

The study team included A.N.Sharma, A.K.Bajpai, S.Davuluri, and K.K.Acharya. They have published a report on their work in Nature Plants.

(India Science Wire)

Republic NewsIndia

A new study may help make spinach leaf look like lettuce

By **Rupesh Dharmik** - August 18, 2021

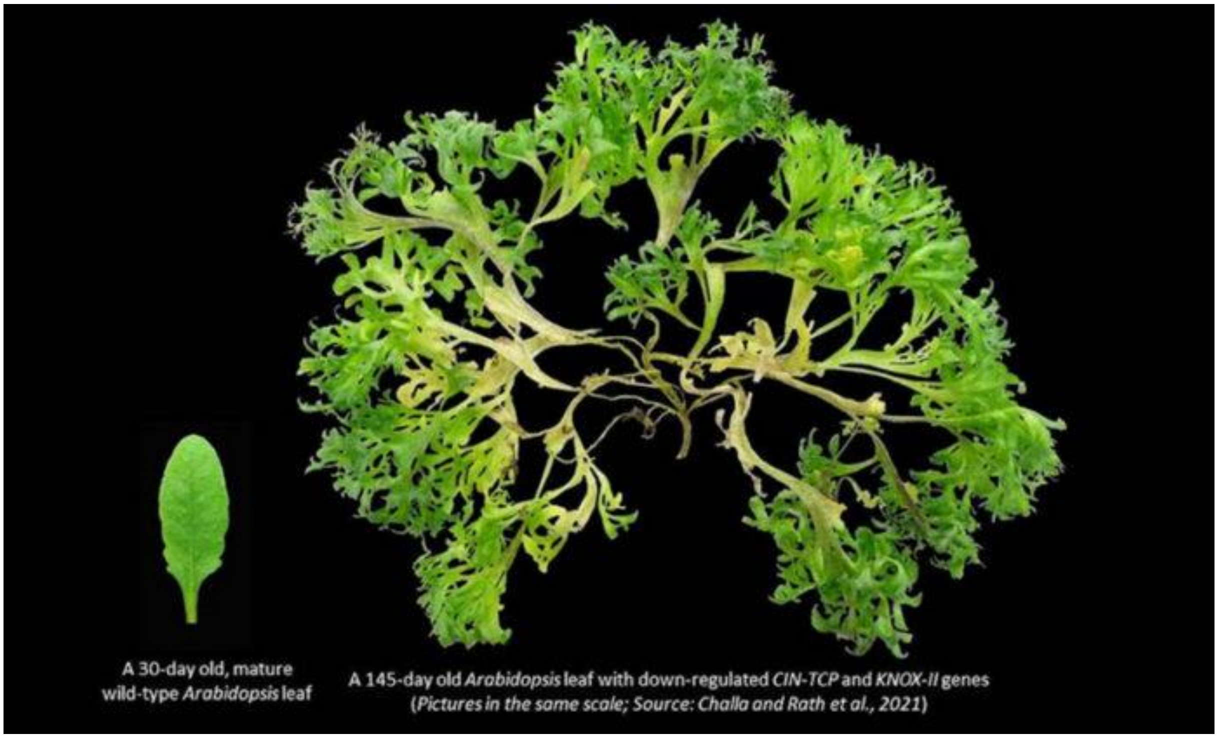

New Delhi: A new study could help introduce innovations in the food industry as it could help change the shape of the salad leaves as one desires.

Plants have either `simple' or `compound' leaves. A mango tree, for example, is considered to possess `simple' leaves because they have a single, intact leaf blade. A Gulmohar tree, on the other hand, has `compound' leaves where the leaf blade is dissected into multiple leaflets. Both types of leaves start out as rod-like structures budding out from the meristem, the tip of the stem where stem cells are present. But, they take different shapes as they grow. The question as to how this happens has been a subject of much investigation.

The new study was conducted to help unscramble the puzzle. It has shed light on how `simple' leaves develop in a plant. It has identified two gene families that regulate the development of `simple' leaves in a plant called *Arabidopsis thaliana* –

a popular model organism in plant biology. These gene families – *CIN-TCP* and *KNOX-II* – encode proteins called transcription factors that suppress the formation of new leaflets at the margin, thereby giving rise to `simple' leaves.

The researchers simultaneously suppressed multiple members of the two gene families. This caused the `simple' leaves to become `super compound' leaves that gave rise to leaflets indefinitely. However, when they independently suppressed either of the two gene families, the leaves did not turn into compound leaves. This suggests that the genes work in concert.

In addition, the mutant leaves continued to stay young and grow for as long as they had the necessary growing conditions. While *Arabidopsis* leaves typically mature in around 30 days and withers by 60 days, the leaves of these mutant plants with suppressed *CIN-TCP* and *KNOX-II* gene families grew for as long as the researchers followed them (175 days) – and could potentially go on for months or years given the necessary conditions.

The study was conducted by researchers from the Department of Microbiology and Cell Biology (MCB) at the Bengaluru-based Indian Institute of Science (IISc) and their collaborators from Shodhaka Life Sciences, Bengaluru.

"While other scientists have been able to convert compound leaves to simple leaves by manipulating the expression of certain genes, our report is the first one to go the other way around," UtpalNath, Associate Professor at MCB and senior author of the paper, said, in an IISc press release.

The press release noted that the findings could initiate and nurture innovations in the food industry in the long run. Krishna Reddy Challa, a former Ph.D. student at MCB and co-lead author of the study, said, "One could use this technique to alter the shape of the salad leaves as one chooses or increase their biomass. For instance, you could change the shape of a spinach leaf to look like lettuce."

MonalishaRath, a Ph.D. student at MCB and another co-lead author of the study, said "Since the leaves don't mature once the *CIN-TCP* and *KNOX-II* genes are suppressed, you can also control the longevity of the plant and thereby extend its shelf-life".

The study team included A.N.Sharma, A.K.Bajpai, S.Davuluri, and K.K.Acharya. They have published a report on their work in *Nature Plants.* (India Science Wire)

DownToEarth | डाउन टू अर्थ

Fifth edition of national bio-entrepreneurship competition launched

Over 30 industry and investment partners come forward to support bio-entrepreneurship in India through this competition

By India Science Wire
Published: Tuesday 17 August 2021

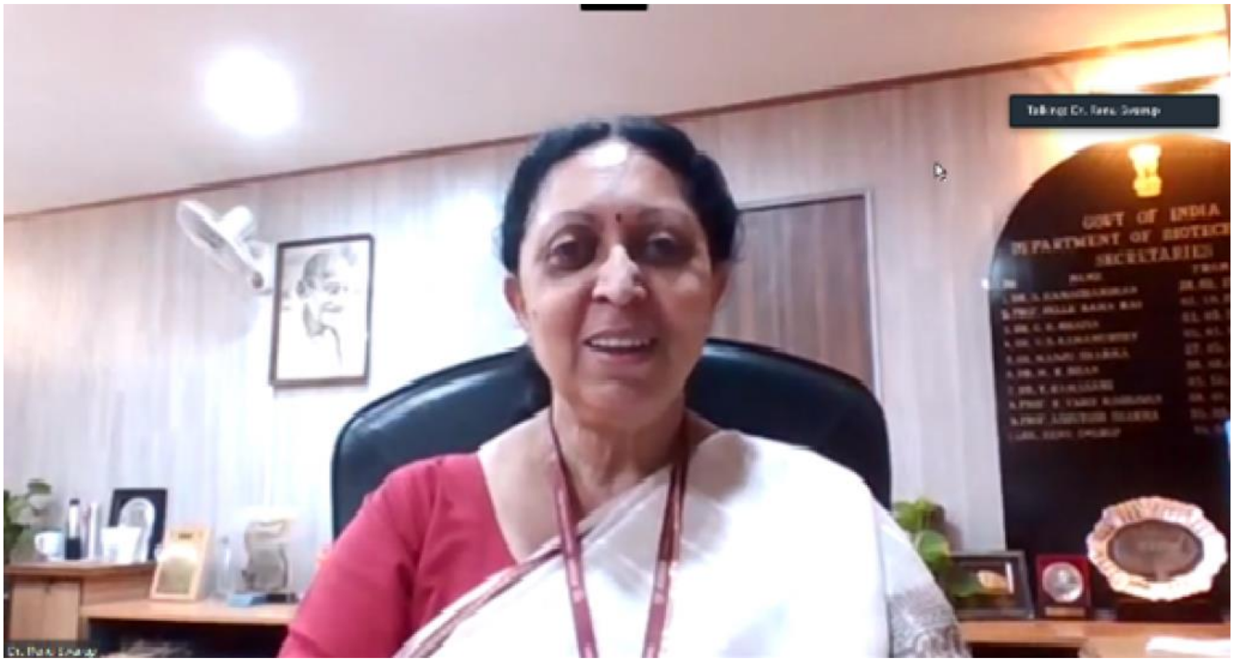

The fifth edition of the National Bio Entrepreneurship Competition (NBEC) organised by Bengaluru-based Centre for Cellular and Molecular Platforms (C-CAMP) was launched by Renu Swarup, secretary, Department of Biotechnology, Government of India August 17, 2021.

NBEC is India’s largest and most prestigious national competition for bio-entrepreneurs held annually to identify and nurture deep science-driven business ideas in the life sciences domain that has the potential to break new ground in addressing societal challenges.

NBEC, which is conducted as a part of the BIRAC Regional Entrepreneurship Centre, established at C-CAMP in partnership with Biotechnology Industry Research Assistance Council (BIRAC), gives an unprecedented sum of Rs 8.5 crore in cash prizes and investment opportunities this year for winners.

Over 30 industry and investment partners have come forward to encourage and support bio-entrepreneurship in India through this competition.

Kiran Mazumdar Shaw, executive chairperson, Biocon; Anju Bhalla, joint secretary, Department of Science and Technology, Government of India; and Manish Diwan, head of Strategic Partnership & Entrepreneurship Development (SPED), BIRAC joined Swarup in releasing the competition poster and opening the call for applications in the presence of several eminent national and international dignitaries from India's biotech ecosystem during the virtually conducted event.

"NBEC is a wonderful example of how all stakeholders can come together in mission mode to energise the ecosystem. Our innovators are the nation's global ambassadors. Beyond self-reliance, our start-ups now need to train their eyes on global markets with solutions that address local challenges from a global perspective. The ecosystem must scale and consolidate to enable this," said Swarup.

Shaw said: "NBEC is a very exciting competition because it unleashes new ideas and entrepreneurial potential of our young people year upon year. I urge you all to leverage this window of opportunity to pursue your bio entrepreneurship idea and join the Nation in showing the world our rich talent pool of innovators and start-ups."

NBEC in four years has created a repository of over 1,000 carefully vetted and expert hand-picked business ideas spanning all sub-domains of life Sciences, including healthcare, agriculture and environment, with a special focus on emerging areas like digital health, maternal & child health, antimicrobial resistance, water and sanitation, green chemistry, and personal care.

This has built a steady pipeline of innovative technologies with demonstrated commercial viability, to address some of India's most formidable challenges in healthcare, agriculture and the environment.

Bhalla emphasised the need to keep in account the issue of sustainability concerns.

"While it is impossible to know repercussions and footprint of new technology for environment, we must be actively cognisant of the connection between technology & sustainability as a pre facto exercise rather than post facto. I request all stakeholders of NBEC 2021— innovators, mentors, jury, industry partners to be mindful of this," she said.

DELHI POST
Politics | Democracy | Development

Fifth Edition of National Bio Entrepreneurship Competition Launched

By **ISW Desk** On **Aug 17, 2021**

Dr. Renu Swarup, Secretary, Department of Biotechnology, Govt. of India, launched on Tuesday the fifth edition of the National Bio Entrepreneurship Competition (NBEC) organised by Bengaluru-based Centre for Cellular and Molecular Platforms – C-CAMP.

Dr. Renu Swarup launching the fifth National Bio Entrepreneurship Competition

NBEC is India's largest and most prestigious national competition for bio entrepreneurs held annually to identify and nurture deep science-driven business ideas in the life sciences domain that has the potential to break new ground in addressing societal challenges.

NBEC, which is conducted as a part of the BIRAC Regional Entrepreneurship Centre, established at C-CAMP in partnership with Biotechnology Industry Research Assistance Council (BIRAC), gives an unprecedented sum of Rs. 8.5 crore in cash prizes and investment opportunities this year for winners. Over 30 Industry and Investment partners have come forward to encourage and support bio-entrepreneurship in India through this competition.

Dr Kiran Mazumdar Shaw, Executive Chairperson, Biocon, Mrs Anju Bhalla, Joint Secretary, Department of Science and Technology, Government of India, and Dr Manish Diwan, Head of Strategic Partnership & Entrepreneurship Development (SPED), BIRAC joined Dr Renu Swarup in releasing the competition poster and opening the call for applications in the presence of several eminent national and international dignitaries from India's biotech ecosystem during the virtually conducted event.

"NBEC is a wonderful example of how all stakeholders can come together in mission mode to energize the ecosystem. As the Hon'ble Prime Minister, Shri Narendra Modi said at India's 75th Independence Day celebrations, our innovators are the Nation's global ambassadors. Beyond Aatma Nirbhar Bharat and self-reliance, our startups now need to train their eyes on global markets with solutions that address local challenges from a global perspective. The ecosystem must scale and consolidate to enable this," said Dr Swarup in her address.

Dr Kiran Mazumdar Shaw, Executive Chairperson, Biocon, said "NBEC is a very exciting competition because it unleashes new ideas and entrepreneurial potential of our young people year upon year. I urge you all to leverage this window of opportunity to pursue your bio entrepreneurship idea and join the Nation in showing the world our rich talent pool of innovators and startups."

NBEC in four years has created a repository of over 1,000 carefully vetted and expert hand-picked business ideas spanning all sub-domains of life Sciences, including healthcare, agriculture and environment, with a special focus on emerging areas like digital health, maternal & child health, antimicrobial resistance, water and sanitation, green chemistry, and personal care. This has built a steady pipeline of innovative technologies with demonstrated commercial viability, to address some of India's most formidable challenges in healthcare, agriculture and the environment.

Mrs Bhalla emphasised the need to keep in account the issue of sustainability concerns. "While it is impossible to know repercussions and footprint of new technology for environment, we must be actively cognizant of the connection between technology & sustainability as a pre facto exercise rather than post facto. I request all stakeholders of NBEC 2021 – innovators, mentors, jury, industry partners to be mindful of this," she said.

DBT secretary launches 5th edition of C-CAMP's National Bio Entrepreneurship Competition

The competition now in its fifth year is a nationwide search for exceptional ideas in the life sciences domain with potential for both social impact and commercial success

By **BioVoice News Desk** - August 17, 2021

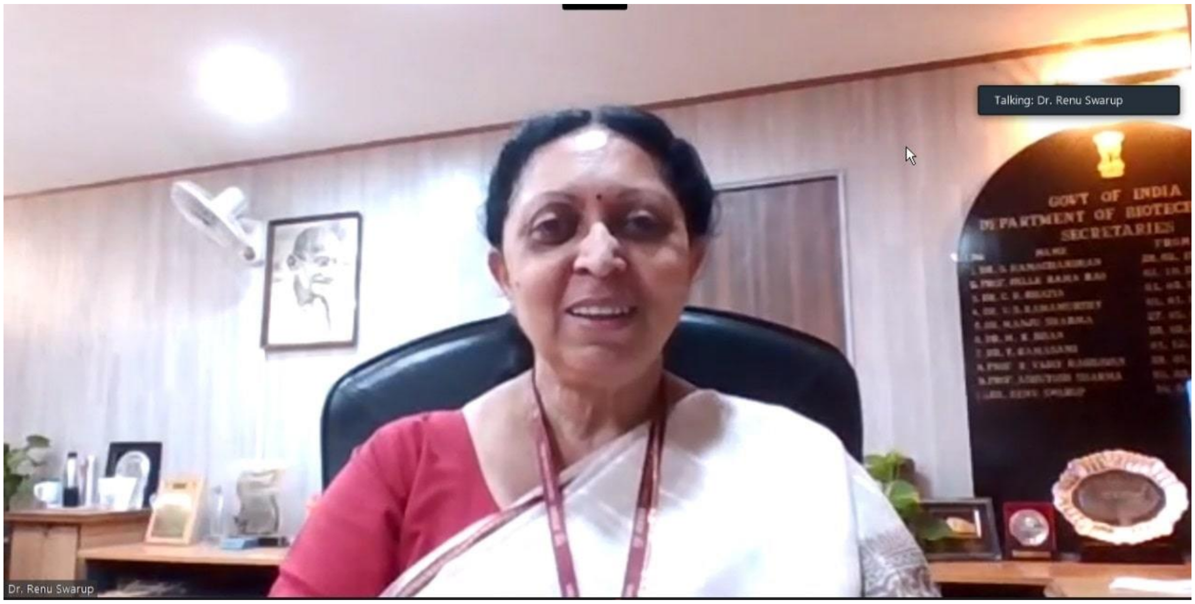

New Delhi: Dr. Renu Swarup, Secretary, Department of Biotechnology and Chairperson BIRAC officially announced the launch of the fifth edition of C-CAMP organized National Bio-Entrepreneurship Competition (NBEC) on 16th August, 2021.

NBEC, India's largest and most prestigious national competition for bio entrepreneurs is held by Centre for Cellular and Molecular Platforms – C-CAMP every year to attract, identify and nurture deep science driven business ideas that break new ground in addressing societal challenges.

The competition now in its fifth year is a nationwide search for exceptional ideas in the life sciences domain with potential for both social impact and commercial success.

Conducted as a part of BREC – the BIRAC Regional Entrepreneurship Centre, established at C-CAMP in partnership with BIRAC, NBEC 2021 has in store an unprecedented 8.5 Cr INR in cash prizes and investment opportunities this year for winners. 30+ Industry and Investment Partners have come forward to encourage and support bio-entrepreneurship in India through this competition.

About NBEC–More information about NBEC including application details can be obtained here.

In a bid to build a groundswell of entrepreneurs, inculcate and ignite an innovation-driven entrepreneurial spark in society, C-CAMP, for the second year in a row, has expanded NBEC eligibility beyond startups and entrepreneurs to include students. NBEC 2021 campaign calls for aspiring student teams, entrepreneurs, start-ups and established companies across India.

Along with Dr. Renu Swarup, the Executive Chairperson of Biocon, Kiran Mazumdar Shaw and Anju Bhalla, Joint Secretary (A), Department of Science and Technology, Government of India and MD, BIRAC alongside Dr Manish Diwan, Head, SPED, BIRAC formally released the competition poster and opened call for applications in presence of several eminent national and international dignitaries from India's biotech ecosystem in the virtually conducted event.

Dr Swarup in her address said "NBEC is a wonderful example of how all stakeholders can come together in mission mode to energize the ecosystem. As the Hon'ble PM, Shri Narendra Modi said at India's 75th Independence Day celebrations, our innovators are the Nation's global ambassadors. Beyond Aatma Nirbhar Bharat and self-reliance, our startups now need to train their eyes on global markets with solutions that address local challenges from a global perspective. The ecosystem must scale and consolidate to enable this."

Dr Kiran Mazumdar Shaw, Executive Chairperson, Biocon acknowledged NBEC's importance in Indian bio entrepreneurship sector in a recorded message saying "NBEC is a very exciting competition because it unleashes new ideas and entrepreneurial potential of our young people year upon year. COVID-19 has brought the spotlight firmly to biosciences and healthtech. I urge you all to leverage this narrow window of opportunity to pursue your bio entrepreneurship idea and join the Nation in showing the world our rich talent pool of innovators and startups."

With approximately 10,000 applications received from 34 States & UTs in the past 4 years, NBEC as a competition has established itself not only as India's biggest innovation showcase but also as a unique platform to magnify and democratize the spirit of science-led entrepreneurship among Tier II, Tier III cities.

NBEC in four years has created a go-to 1000+ strong repository of carefully vetted and expert hand-picked business ideas spanning all sub-domains of Life Sciences, including healthcare, agriculture and environment, with special focus on emerging areas like digital health, maternal & child health, Antimicrobial Resistance, water and sanitation, green chemistry, and personal care. This has built a steady pipeline of innovative technologies with demonstrated commercial viability, to address some of India's most formidable challenges in healthcare, agriculture and environment.

The fifth edition promises to be no different, having been joined by 33 national and international industry and investment partners.

Winners of The National Bio Entrepreneurship Competition 2021 can receive upto INR 8+ Cr in cash prizes and investment opportunities in the startup category. Student teams stand to win cash prizes of upto INR 15 lakhs. All winners will also get access to mentorship by key industry leaders. Shortlisted finalists in both startup and student tracks will participate in a specially crafted Entrepreneurship Development Boot Camp to provide an opportunity to learn important Entrepreneurship development skills from top-of-the-line industry and academic mentors.

C-CAMP CEO and Director Dr.Taslimarif Saiyed said, "NBEC is a platform literally for anybody. We have broken down walls to make the competition agnostic across demographies – students, startups, scientists, entrepreneurs, companies, BIRAC and non-BIRAC community – NBEC has something for everyone. We are very keen to take it forward with NBEC 2021 with support from our phenomenal industry partners."

Reminding the audience about the world's sustainability concerns, Smt Bhalla said, "While it is impossible to know repercussions and footprint of new technology for environment, we must be actively cognizant of the connect between technology & sustainability as a pre facto exercise rather than post facto. I request all stakeholders of NBEC 2021 – innovators, mentors, jury, industry partners to be mindful of this."

Dr Manish Diwan, speaking at the launch event today said, "NBEC is a huge opportunity to integrate both at the base of the pyramid, with innovations at the idea stage and at the apex, with mature startups looking to commercialize. Its success lies in providing mentorship and handholding support while also extending a platform for visibility and traction in front of industry leaders. This is what the ecosystem demanded and NBEC has delivered."

Voice of the Nation
ORGANISER

The fifth edition of the National Bio Entrepreneurship Competition launched

WEBDESKAug 18, 2021, 02:01 PM IST

Umashankar Mishra

NBEC is India's largest and most prestigious national competition for bio entrepreneurs held annually to identify and nurture deep science-driven business ideas.

New Delhi: Dr. Renu Swarup, Secretary, Department of Biotechnology, Govt. of India, launched on Tuesday the fifth edition of the National Bio Entrepreneurship Competition (NBEC) organised by Bengaluru-based Centre for Cellular and Molecular Platforms - C-CAMP.

NBEC is India's largest and most prestigious national competition for bio entrepreneurs held annually to identify and nurture deep science-driven business ideas in the life sciences domain that has the potential to break new ground in addressing societal challenges.

NBEC, which is conducted as a part of the BIRAC Regional Entrepreneurship Centre, established at C-CAMP in partnership with Biotechnology Industry Research Assistance Council

(BIRAC), gives an unprecedented sum of Rs. 8.5 crore in cash prizes and investment opportunities this year for winners. Over 30 Industry and Investment partners have come forward to encourage and support bio entrepreneurship in India through this competition.

Dr Kiran Mazumdar Shaw, Executive Chairperson, Biocon, Mrs Anju Bhalla, Joint Secretary, Department of Science and Technology, Government of India, and Dr Manish Diwan, Head of Strategic Partnership & Entrepreneurship Development (SPED), BIRAC joined Dr Renu Swarup in releasing the competition poster and opening the call for applications in the presence of several eminent national and international dignitaries from India’s biotech ecosystem during the virtually conducted event.

“NBEC is a wonderful example of how all stakeholders can come together in mission mode to energise the ecosystem. As the Hon'ble Prime Minister, Shri Narendra Modi, said at India’s 75th Independence Day celebrations, our innovators are the Nation's global ambassadors.

Beyond Aatma Nirbhar Bharat and self-reliance, our startups now need to train their eyes on global markets with solutions that address local challenges from a global perspective. The ecosystem must scale and consolidate to enable this,” said Dr Swarup in her address.

Dr Kiran Mazumdar Shaw, Executive Chairperson, Biocon, said, “NBEC is a very exciting competition because it unleashes new ideas and entrepreneurial potential of our young people year upon year. I urge you all to leverage this window of opportunity to pursue your bio entrepreneurship idea and join the Nation in showing the world our rich talent pool of innovators and startups.”

NBEC, in four years, has created a repository of over 1,000 carefully vetted and expert hand-picked business ideas spanning all sub-domains of life Sciences, including healthcare, agriculture and environment, with a special focus on emerging areas like digital health, maternal & child health, antimicrobial resistance, water and sanitation, green chemistry, and personal care. This has built a steady pipeline of innovative technologies with demonstrated commercial viability to address some of India’s most formidable challenges in healthcare, agriculture and the environment.

Mrs Bhalla emphasised the need to keep in account the issue of sustainability concerns. “While it is impossible to know repercussions and footprint of new technology for environment, we must be actively cognizant of the connection between technology & sustainability as a pre facto exercise rather than post facto. I request all stakeholders of NBEC 2021 - innovators, mentors, jury, industry partners to be mindful of this," she said.

Courtesy: India Science Wire

Fifth edition of National Bio Entrepreneurship Competition launched

By **India Science Wire** - August 17, 2021

Dr. Renu Swarup, Secretary, Department of Biotechnology, Govt. of India, launched on Tuesday the fifth edition of the National Bio Entrepreneurship Competition (NBEC) organised by Bengaluru-based Centre for Cellular and Molecular Platforms – C-CAMP.

NBEC is India’s largest and most prestigious national competition for bio entrepreneurs held annually to identify and nurture deep science-driven business ideas in the life sciences domain that has the potential to break new ground in addressing societal challenges.

NBEC, which is conducted as a part of the BIRAC Regional Entrepreneurship Centre, established at C-CAMP in partnership with Biotechnology Industry Research Assistance Council (BIRAC), gives an unprecedented sum of Rs. 8.5 crore in cash prizes and investment opportunities this year for winners. Over 30 Industry and Investment partners have come forward to encourage and support bio-entrepreneurship in India through this competition.

Dr Kiran Mazumdar Shaw, Executive Chairperson, Biocon, Mrs Anju Bhalla, Joint Secretary, Department of Science and Technology, Government of India, and Dr Manish Diwan, Head of Strategic Partnership & Entrepreneurship Development (SPED), BIRAC joined Dr Renu Swarup in releasing the competition poster and opening the call for applications in the presence of several eminent national and international dignitaries from India's biotech ecosystem during the virtually conducted event.

"NBEC is a wonderful example of how all stakeholders can come together in mission mode to energize the ecosystem. As the Hon'ble Prime Minister, Shri Narendra Modi said at India's 75th Independence Day celebrations, our innovators are the Nation's global ambassadors. Beyond Aatma Nirbhar Bharat and self-reliance, our startups now need to train their eyes on global markets with solutions that address local challenges from a global perspective. The ecosystem must scale and consolidate to enable this," said Dr Swarup in her address.

Dr Kiran Mazumdar Shaw, Executive Chairperson, Biocon, said "NBEC is a very exciting competition because it unleashes new ideas and entrepreneurial potential of our young people year upon year. I urge you all to leverage this window of opportunity to pursue your bio entrepreneurship idea and join the Nation in showing the world our rich talent pool of innovators and startups."

NBEC in four years has created a repository of over 1,000 carefully vetted and expert hand-picked business ideas spanning all sub-domains of life Sciences, including healthcare, agriculture and environment, with a special focus on emerging areas like digital health, maternal & child health, antimicrobial resistance, water and sanitation, green chemistry, and personal care. This has built a steady pipeline of innovative technologies with demonstrated commercial viability, to address some of India's most formidable challenges in healthcare, agriculture and the environment.

Mrs Bhalla emphasised the need to keep in account the issue of sustainability concerns. "While it is impossible to know repercussions and footprint of new technology for environment, we must be actively cognizant of the connection between technology & sustainability as a pre facto exercise rather than post facto. I request all stakeholders of NBEC 2021 – innovators, mentors, jury, industry partners to be mindful of this," she said.

हस्तक्षेप.com

MAKE THE WORLD A BETTER PLACE WITH HASTAKSHEP NEWS

The fifth edition of the National Bio Entrepreneurship Competition launched

TOPICS: Biotechnology Business Business News BUSINESSES Businesswoman

Dr. Renu Swarup launching the fifth National Bio Entrepreneurship Competition

Dr. Renu Swarup, Secretary, Department of Biotechnology, Govt. of India,

POSTED BY: HASTAKSHEP NEWS 17TH AUGUST 2021

New Delhi, Aug 17th, 2021: **Dr Renu Swarup**, Secretary, Department of Biotechnology, Govt. of India, launched on Tuesday the fifth edition of the National Bio Entrepreneurship Competition (NBEC) organised by Bengaluru-based Centre for Cellular and Molecular Platforms – C-CAMP.

NBEC is India's largest and most prestigious national competition for bio entrepreneurs held annually to identify and nurture deep science-driven business ideas in the life sciences domain that has the potential to break new ground in addressing societal challenges.

NBEC, which is conducted as a part of the BIRAC Regional Entrepreneurship Centre, established at **C-CAMP** in partnership with **Biotechnology** Industry Research Assistance Council (BIRAC), gives an unprecedented sum of Rs. 8.5 crore in cash prizes and investment

opportunities this year for winners. Over 30 Industry and Investment partners have come forward to encourage and support bio-entrepreneurship in India through this competition.

Dr Kiran Mazumdar Shaw, Executive Chairperson, Biocon, Mrs Anju Bhalla, Joint Secretary, Department of Science and Technology, Government of India, and Dr Manish Diwan, Head of Strategic Partnership & Entrepreneurship Development (SPED), BIRAC joined Dr Renu Swarup in releasing the competition poster and opening the call for applications in the presence of several eminent national and international dignitaries from India's biotech ecosystem during the virtually conducted event.

"NBEC is a wonderful example of how all stakeholders can come together in mission mode to energize the ecosystem. As the Hon'ble Prime Minister, Shri Narendra Modi said at India's 75^{th} Independence Day celebrations, our innovators are the Nation's global ambassadors. Beyond Aatma Nirbhar Bharat and self-reliance, our startups now need to train their eyes on global markets with solutions that address local challenges from a global perspective. The ecosystem must scale and consolidate to enable this," said Dr Swarup in her address.

Dr Kiran Mazumdar Shaw, Executive Chairperson, Biocon, said "NBEC is a very exciting competition because it unleashes new ideas and entrepreneurial potential of our young people year upon year. I urge you all to leverage this window of opportunity to pursue your bio entrepreneurship idea and join the Nation in showing the world our rich talent pool of innovators and startups."

NBEC in four years has created a repository of over 1,000 carefully vetted and expert hand-picked business ideas spanning all sub-domains of life Sciences, including healthcare, agriculture and environment, with a special focus on emerging areas like digital health, maternal & child health, antimicrobial resistance, water and sanitation, green chemistry, and personal care. This has built a steady pipeline of innovative technologies with demonstrated commercial viability, to address some of India's most formidable challenges in healthcare, agriculture and the environment.

Mrs Bhalla emphasised the need to keep in account the issue of sustainability concerns. "While it is impossible to know repercussions and footprint of new technology for environment, we must be actively cognizant of the connection between technology & sustainability as a pre facto exercise rather than post facto. I request all stakeholders of NBEC 2021 – innovators, mentors, jury, industry partners to be mindful of this," she said.

(India Science Wire)

GS Times

Fifth edition of National Bio Entrepreneurship Competition launched

August 17, 2021

India Science Wire

Dr. Renu Swarup, Secretary, Department of Biotechnology, Govt. of India, launched on Tuesday the fifth edition of the National Bio Entrepreneurship Competition (NBEC) organised by Bengaluru-based Centre for Cellular and Molecular Platforms – C-CAMP.

NBEC is India's largest and most prestigious national competition for bio entrepreneurs held annually to identify and nurture deep science-driven business ideas in the life sciences domain that has the potential to break new ground in addressing societal challenges.

NBEC, which is conducted as a part of the BIRAC Regional Entrepreneurship Centre, established at C-CAMP in partnership with Biotechnology Industry Research Assistance Council (BIRAC), gives an unprecedented sum of Rs. 8.5 crore in cash prizes and investment opportunities this year for winners. Over 30 Industry and Investment partners have come forward to encourage and support bio-entrepreneurship in India through this competition.

Dr Kiran Mazumdar Shaw, Executive Chairperson, Biocon, Mrs Anju Bhalla, Joint Secretary, Department of Science and Technology, Government of India, and Dr Manish Diwan, Head of Strategic Partnership & Entrepreneurship Development (SPED), BIRAC joined Dr Renu Swarup in releasing the competition poster and opening the call for applications in the presence of several eminent national and international dignitaries from India's biotech ecosystem during the virtually conducted event.

"NBEC is a wonderful example of how all stakeholders can come together in mission mode to energize the ecosystem. As the Hon'ble Prime Minister, ShriNarendraModi said at India's 75th Independence Day celebrations, our innovators are the Nation's global ambassadors. Beyond AatmaNirbhar Bharat and self-reliance, our startups now need to train their eyes on global markets with solutions that address local challenges from a global perspective. The ecosystem must scale and consolidate to enable this," said Dr Swarup in her address.

Dr KiranMazumdar Shaw, Executive Chairperson, Biocon, said "NBEC is a very exciting competition because it unleashes new ideas and entrepreneurial potential of our young people year upon year. I urge you all to leverage this window of opportunity to pursue

your bio entrepreneurship idea and join the Nation in showing the world our rich talent pool of innovators and startups.”

NBEC in four years has created a repository of over 1,000 carefully vetted and expert hand-picked business ideas spanning all sub-domains of life Sciences, including healthcare, agriculture and environment, with a special focus on emerging areas like digital health, maternal & child health, antimicrobial resistance, water and sanitation, green chemistry, and personal care. This has built a steady pipeline of innovative technologies with demonstrated commercial viability, to address some of India’s most formidable challenges in healthcare, agriculture and the environment.

Mrs Bhalla emphasised the need to keep in account the issue of sustainability concerns. “While it is impossible to know repercussions and footprint of new technology for environment, we must be actively cognizant of the connection between technology & sustainability as a pre facto exercise rather than post facto. I request all stakeholders of NBEC 2021 – innovators, mentors, jury, industry partners to be mindful of this,” she said.

Voice of the Nation
ORGANISER

Film festival highlighting the role of scientists in the Indian independence movement concludes

WEBDESK Aug 19, 2021, 09:14 AM IST

Umashankar Mishra

A three-day festival of films on the role of scientists and scientific institutions during the independence movement came to an end here on Sunday with the distribution of awards.

New Delhi: A three-day festival of films on the role of scientists and scientific institutions during the independence movement came to an end here on Sunday with the distribution of awards.

The event titled `Swantatrata Ka Vigyan Filmotsav' was organised by The Ministry of Science and Technology's Vigyan Prasar, Vijnana Bharati and Film Division, Mumbai, to celebrate the landmark 75th anniversary of India's independence. It is part of year-long and pan-India celebrations -`Swantatrata Ka Amrit Mahotsav'.

Two entries would share the first prize of Rs.1,50,000/- with a trophy and certificate. One film titled `seekers of the sun' focused on the history of solar studies from the pre-Independence period till date. It was produced by Enscitec and directed by Rakesh Rao. The other first prize-winning film titled `Sarkar' talks about Dr ML Sircar, who had promoted science during the pre-Independence era in a big way. It was produced and directed by Manoj Patel.

Two films also share the Second prize of Rs.1,00,000/- with trophy and certificate. One film titled `Haathkaagaj Sanstha Pune-Bharat ki ek Virasat' revolves around an indigenous handmade paper project. It was produced and directed by Dr. Balkrishna Digambar Damle. The other film, titled `Kamala: The Swadeshi Nutriindian', is based on one of the first Indian women scientists. She had worked in the area of nutrition. It was produced by EMMRC, Pune, and directed by Sameer Sahasrabudhe.

Three films share the third prize of Rs.75,000/- with a trophy and certificate. The first film, titled `His Experiments with Science', highlights Mahatma Gandhiji's experiments with various scientific processes such as health, modern medicine, and naturopathy. It was produced by Vibhore Video Vision and directed by Aditya Seth. The second film, titled `Ramanujan: The Man who knew Infinity' underlines the achievements of the eminent mathematician. It was produced by Paridhi Parmar and directed by Rahul Khadia. The third film, titled `Sciendependence', depicts the contributions of various Indian scientists during the freedom movement. It was produced by Suparno Pal and directed by Suman Banerjee.

National Organising Secretary of Vijnana Bharati, Jayant Sahasrabudhe, said the holding of the film festival on the specific theme of the role of scientists in the Independence movement was particularly important since a distinguishing feature of the British rule in India was that it sought to establish itself in the country with the help of science and technology and the people of the country needed to know how they did and how several Indian scientists fought against attempts to suppress them.

Vice-Chancellor of Makhanlal Chaturvedi National University of Journalism and Communication, Bhopal, K.G.Suresh, and Director General, Films Division of India, Ministry of Information and Broadcasting, Smita Vats Sharma, emphasised the need to encourage the use of popular media like films to create awareness about aspects like the role played by scientists in the independence movement.

The awards function followed a panel discussion, where jury members Mukesh Kumar of Narsee Monjee Institute of Management Studies (NMIMS), Mumbai, Dr. Chandramohan Nautiyal of Indian National Science Academy, Prof Danish Iqbal of Jamia Milia Islamia, and Rizwan Ahmed of Maulana Azad National Urdu University welcomed the effort made to hold a special film festival focused on the role of scientists in the independence movement and hoped more such initiatives would take place in coming times.

Courtesy: India Science Wire

The Indian Bulletin
www.theindianbulletin.com

Film festival highlighting role of scientists in Indian independence movement concludes

By **The Indian Bulletin Online** - August 20, 2021

Dr Nakul Parashar, Director, VigyanPrasar, Smita Vats Sharma, DG, Films Division of India, Dr Mukesh Sharma, Ex DG, Films Division, Ex ADG, Doordarshan Mumbai and Dean, School of Branding & Advertising, NMIMS University, Mumbai, Shri Jayant Sahasrabudhe, National Organising Secretary, Vijnana Bharati, Siddharth Kak, Sr. Filmmaker and Television Producer, Nimish Kapoor, Festival Convener and Scientist E, Vigyan Prasar

New Delhi: A three-day festival of films on the role of scientists and scientific institutions during the independence movement came to an end here on Sunday with the distribution of awards.

The event titled `Swantatrata Ka Vigyan Filmotsav' was organised by The Ministry of Science and Technology's VigyanPrasar, Vijnana Bharati and Film Division, Mumbai to celebrate the landmark 75th anniversary of India's independence. It is part of a year-long and pan-India celebrations -` Swantatrata Ka Amrit Mahotsav'.

The first prize of Rs.1,50,000/- with trophy and certificate is shared by two entries. One film titled `seekers of the sun' focused on the history of solar studies from the pre-Independence period till date. It was produced by Enscitec and directed by Rakesh Rao. The other first prize-winning film titled `Sarkar'talks about Dr ML

Sircar who had promoted science during the pre-Independence era in a big way. It was produced and directed by Manoj Patel.

The Second prize of Rs.1,00,000/- with trophy and certificate was also shared by two films. One film titled `HaathkaagajSanstha Pune-Bharat kiekVirasat'revolves around an indigenous handmade paper project. It was produced and directed by Dr. BalkrishnaDigambarDamle. The other film titled `Kamala: The Swadeshi Nutriindian'is based on one of the first Indian women scientists. She had worked in the area of nutrition. It was produced by EMMRC, Pune, and directed by Sameer Sahasrabudhe.

The third prize of Rs.75,000/- with trophy and certificate was shared by three films. The first film titled `His Experiments with Science' highlights Mahatma Gandhiji's experiments with various scientific processes such as health, modern medicine, and naturopathy. It was produced by Vibhore Video Vision and directed by Aditya Seth. The second film titled `Ramanujan: The Man who knew Infinity' underlines the achievements of the eminent mathematician. It was produced by ParidhiParmar and directed by Rahul Khadia. The third film titled `Sciendependence' depicts the contributions of various Indian scientists during the freedom movement. It was produced by Suparno Pal and directed by Suman Banerjee.

National Organising Secretary of VijnanaBharati, Jayant Sahasrabudhe, said the holding of the film festival on the specific theme of the role of scientists in the Independence movement was particularly important since a distinguishing feature of the British rule in India was that it sought to establish itself in the country with the help of science and technology and it was essential that the people of the country knew how they did and how several Indian scientists fought against attempts to suppress them.

Vice-Chancellor of MakhanlalChaturvedi National University of Journalism and Communication, Bhopal, K.G.Suresh, and Director General, Films Division of India, Ministry of Information and Broadcasting, Smita Vats Sharma, emphasised the need to encourage the use of popular media like films to create awareness about aspects like the role played by scientists in the independence movement.

The awards function followed a panel discussion, where jury members, Mukeshkumar of NarseeMonjee Institute of Management Studies (NMIMS), Mumbai, Dr. ChandramohanNautiyal of Indian National Science Academy, Prof Danish Iqbal of JamiaMiliaIslamia, and Rizwan Ahmed of Maulana Azad National Urdu University welcomed the effort made to hold a special film festival focused on the role of scientists in the independence movement and hoped more such initiatives would take place in coming times. (India Science Wire)

DownToEarth | डाउन टू अर्थ

Pineapple agroforestry can help tackle climate change, biodiversity loss: Study

Can be an alternative to jhum cultivation, which has become unsustainable due to a reduced fallow cycle, in northeast India

By India Science Wire
Published: Thursday 19 August 2021

Pineapple-based agroforestry, traditionally practiced by ethnic Hmar tribe in southern Assam, can be a sustainable alternative to *jhum* cultivation in northeast India.

This traditional practice can provide twin solutions for climate change and biodiversity loss, according to a new study. The study was carried out by the Department of Ecology and Environmental Science, Assam University, Silchar, with support from the Climate Change Program Division of the Department of Science and Technology (DST).

Researchers have been looking for agroforestry options that would also offer high carbon storage potential and tree diversity to couple this with solutions for challenges of climate change and biodiversity loss, the DST statement said.

Jhum cultivation, also called swidden agriculture, a dominant agricultural practice in the region, has become unsustainable due to the reduced fallow cycle resulting in depletion in soil fertility, severe soil erosion and low agronomic productivity.

Hence, northeast India and many south Asian countries are shifting to agroforestry and high-value cropping systems from traditional *jhum* practices over the past decades, which are considered sustainable and profitable alternatives.

The study assessed the tree diversity and ecosystem carbon storage through the traditional agroforestry system practiced by the local communities. It showed that the system they practice maintains a steady ecosystem carbon stock while reducing land-use-related carbon emission and providing additional co-benefits to the communities.

The research team, led by Arun Jyoti Nath, associate professor, Department of Ecology and Environmental Science, Assam University, conducted the study in the ethnic villages located in the Cachar district of Assam, part of the Himalayan foothills and the Indo-Burma, center of a global biodiversity hotspot.

They explored changes in tree diversity and transition of dominant tree species from swidden agriculture through different aged pineapple agroforestry systems (PAFS). The changes in the biomass carbon and ecosystem carbon storage in tree and pineapple components from swidden agriculture through different aged PAFS were also noted.

Researchers found that farmers apply traditional knowledge for tree selection through prior knowledge and long-term farming experience. Additionally, fruit trees such as Areca catechu and Musa species are planted on farm boundaries as live fences. The live fence reduces soil erosion and acts as a windbreak and shelterbelt.

A combination of economically important trees like Albiziaprocera, Parkiatimoriana, Aquilariamalaccensis, as well as fruit trees like papaya, lemon, guava, litchi and mango with pineapple caters for both home-consumption and selling all year round.

The upper canopy trees regulate light, enhance biomass inputs, and increase farm diversity, resulting in soil fertility and improved plant nutrition. The tree-related management practices promote the conservation of the farmers' favoured indigenous fruit trees. In the older pineapple agroforestry farms, farmers introduce rubber trees.

The research shows that the practice can be applied for the REDD+ mechanism to add to the carbon capturing and reducing deforestation by contributing to tree cover, which may further incentivise against the carbon credit to the poor farmers.

PAFS are dominant land use in the Indian Eastern Himalayas and other parts of Asia and are mostly grown in association with multipurpose trees. The ethnic Hmar tribe in southern Assam has been cultivating pineapple for centuries.

At present, they practice the indigenous PAFS for, both home consumption and boosting economic benefits. They have applied traditional knowledge to evolve a unique agroforestry system.

The study published in the *Journal of Environmental Management* recently, can provide information about emission factor for the indigenous agro-ecosystems in North East India for mitigation purposes, which may facilitate the formulation of incentives for the communities.

It could also equip forest managers with information for accounting the changes in carbon storage due to deforestation and *jhum* cultivation. **(India Science Wire)**

DELHI POST
Politics | Democracy | Development

Pineapple Agroforestry Could Help Tackle Climate Change and Biodiversity Loss

By **Team DP** On **Aug 19, 2021**

Pineapple-based agroforestry, traditionally practiced by ethnic “Hmar” tribe in southern Assam, can be a sustainable alternative to jhum cultivation for North East India. This traditional practice can provide twin solutions for climate change and biodiversity loss, according to a new study. This study was carried out by the Department of Ecology and Environmental Science, Assam University, Silchar with support from the Climate Change Program Division of the Department of Science & Technology (DST).

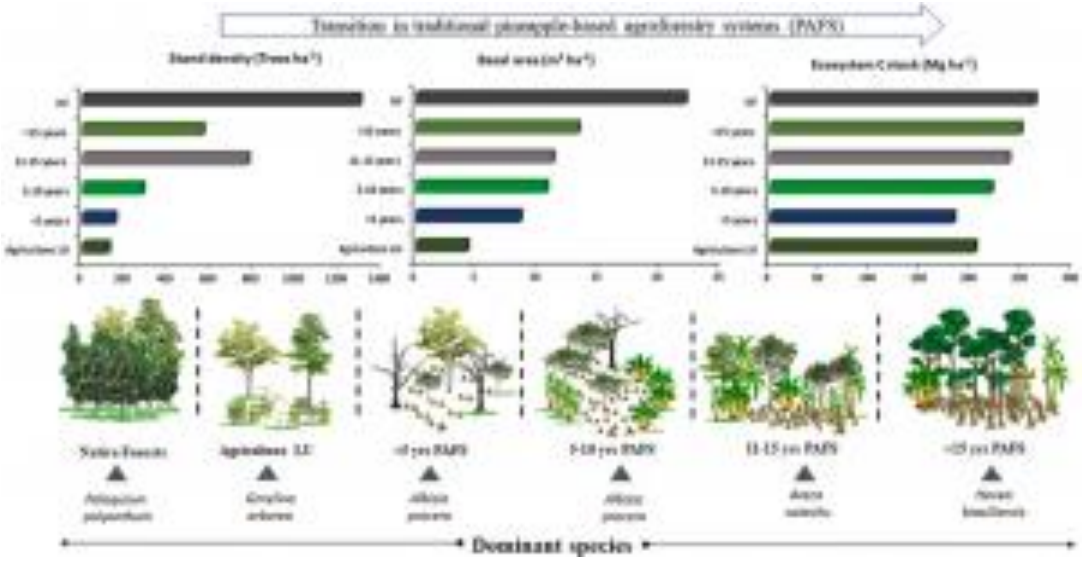

Researchers are looking for agroforestry options that would also offer high carbon storage potential and tree diversity to couple this with solutions for challenges of climate change and biodiversity loss, the DST statement said.

Jhum cultivation, also called swidden agriculture, the dominant agricultural practice in the region, has become unsustainable primarily due to the reduced fallow cycle resulting in depletion in soil fertility, severe soil erosion, and low agronomic productivity. Hence, North East India and many south Asian countries are shifting to agroforestry and high-

value cropping systems from traditional jhum practices over the past decades, which are considered sustainable and profitable alternatives.

The study assessed the tree diversity and ecosystem carbon storage through the traditional agroforestry system practiced by the local communities. It showed that the system they practice maintains a steady ecosystem carbon stock while reducing land-use-related carbon emission and providing additional co-benefits to the communities.

The research team, led by Arun Jyoti Nath, Associate Professor in the Department of Ecology and Environmental Science, Assam University conducted this study in the ethnic villages located in the Cachar district of Assam, part of the Himalayan foothills and the Indo-Burma, center of a global biodiversity hotspot. They explored changes in tree diversity and transition of dominant tree species from swidden agriculture through different aged PAFS. The changes in the biomass carbon and ecosystem carbon storage in tree and pineapple components from swidden agriculture through different aged PAFS were also noted.

Researchers found that farmers apply traditional knowledge for tree selection through prior knowledge and long-term farming experience. Additionally, fruit trees such as Areca catechu and Musa species are planted on farm boundaries as live fences. The live fence reduces soil erosion and acts as a windbreak and shelterbelt. A combination of economically important trees like Albiziaprocera, Parkiatimoriana, Aquilariamalaccensis, as well as fruit trees like papaya, lemon, guava, litchi, and mango with pineapple caters for both home-consumption and selling all year round. The upper canopy trees regulate light, enhance biomass inputs, and increase farm diversity, resulting in soil fertility and improved plant nutrition. The tree-related management practices promote the conservation of the farmers' favoured indigenous fruit trees. In the older pineapple agroforestry farms, farmers introduce rubber trees.

The research shows that the practice can be applied for the REDD+ mechanism to add to the carbon capturing and reducing deforestation by contributing to tree cover, which may further incentivise against the carbon credit to the poor farmers.

Pineapple agroforestry systems (PAFS) are dominant land use in the Indian Eastern Himalayas and other parts of Asia and are mostly grown in association with multipurpose trees. The ethnic "Hmar" tribe in southern Assam has been cultivating pineapple for centuries. At present, they practice the indigenous PAFS for, both home consumption and boosting economic benefits. They have applied traditional knowledge to evolve a unique agroforestry system.

The study published in the 'Journal of Environmental Management' recently, can provide information about emission factor for the indigenous agro-ecosystems in North East India for mitigation purposes, which may facilitate the formulation of incentives for the communities. It could also equip forest managers with information for accounting the changes in carbon storage due to deforestation and jhum cultivation. (India Science Wire)

The Weather Channel An IBM Business | THE TIMES OF INDIA

Can Pineapple-Based Agroforestry Meet the Climate Change Challenges?

By IANS | 19 August, 2021 | TWC India

Pineapples

(IANS)

Pineapple-based agroforestry, traditionally practised by the ethnic 'Hmar' community in southern Assam, can be a sustainable alternative to jhum cultivation for Northeast India, revealed a new study. It will provide twin solutions for climate change and biodiversity loss, it said.

Jhum cultivation, also called swidden agriculture, the dominant agricultural practice in the region, has become unsustainable. This is primarily due to the reduced fallow cycle resulting in depletion of soil fertility, severe soil erosion, and low agronomic productivity, a release said.

"Hence, Northeast India and many south Asian countries are shifting to agroforestry and high-value cropping systems from traditional jhum practices over the past decades, which are considered sustainable and profitable alternatives," the release added.

Researchers are looking for agroforestry options that would also offer better carbon storage potential and tree diversity to couple this with solutions for challenges of climate change and biodiversity loss.

Pineapple agroforestry systems (PAFS) are dominant forms of land use in the Indian Eastern Himalayas and other parts of Asia and are mostly grown in association with multipurpose trees. The ethnic "Hmar" tribe in southern Assam have been cultivating pineapple for centuries. "At present, they practice the indigenous PAFS for both home consumption and boosting economic benefits. They have applied traditional knowledge to evolve a unique agroforestry system," it said.

The recent study carried out by the Department of Ecology and Environmental Science, Assam University, Silchar, with support from the Climate Change Program Division of the Department of Science & Technology, GoI, assessed the tree diversity and ecosystem carbon storage through traditional agroforestry system practised by the local communities. It showed that the system they practice maintains a steady ecosystem carbon stock while reducing land-use related carbon emissions and providing communities with additional co-benefits.

The study by a research team led by Arun Jyoti Nath, Associate Professor in the Department of Ecology and Environmental Science, Assam University, Silchar, was conducted in the ethnic villages in the Cachar district, Assam, part of the Himalayan foothills and the Indo-Burma centre of a global biodiversity hotspot. They aimed to explore changes in tree diversity and transition of dominant tree species from swidden agriculture through different aged PAFS. The changes in the carbon biomass and ecosystem carbon storage in tree and pineapple components from swidden agriculture through different aged PAFS were also noted.

"It was found that farmers apply traditional knowledge for tree selection through prior knowledge and long-term farming experience. Additionally, fruit trees such as Areca catechu and Musa species are planted on farm boundaries as live fences. The live fence reduces soil erosion and acts as a windbreak and shelterbelt," the release said.

A combination of economically essential trees like Albiziaprocera, Parkiatimoriana, Aquilariamalaccensis, and fruit trees like papaya, lemon, guava, litchi, and mango with pineapple caters both domestic consumption and retail all year round.

The upper canopy trees regulate light, enhance biomass inputs, and increase farm diversity, resulting in soil fertility and improved plant nutrition. The tree-related management practices promote the conservation of the farmers' favoured indigenous fruit trees. In the older pineapple agroforestry farms, farmers introduce rubber trees.

**

The above article has been published from a wire agency with minimal modifications to the headline and text.

Voice of the Nation
ORGANISER

Pineapple agroforestry could help tackle climate change and biodiversity loss

WEBDESK Aug 19, 2021, 09:04 AM IST

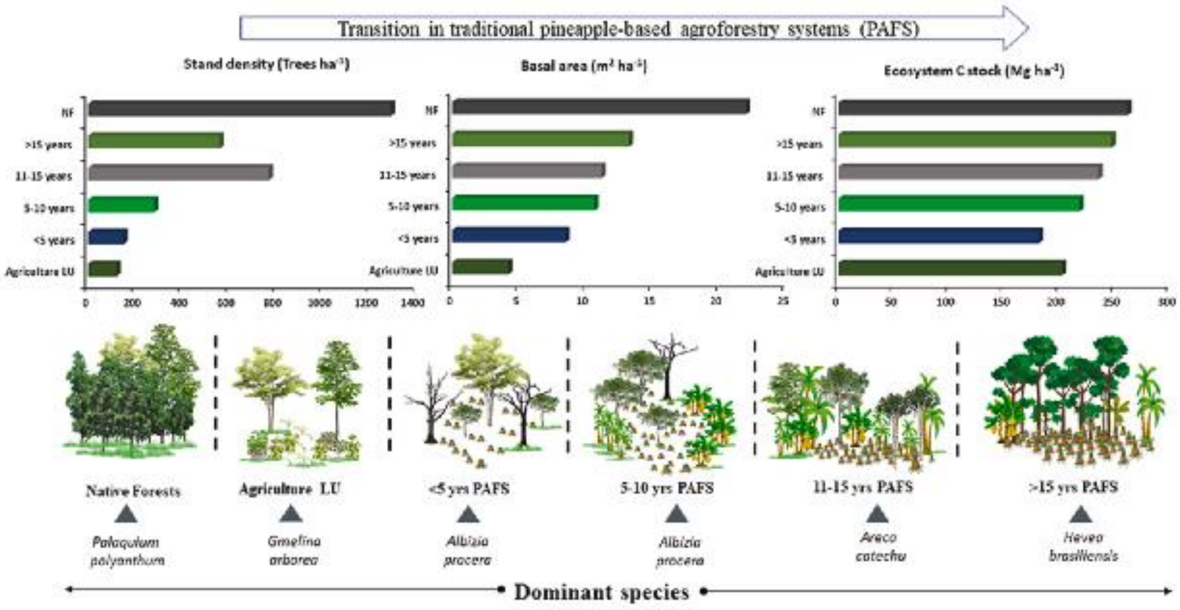

Umashankar Mishra

The study assessed the tree diversity and ecosystem carbon storage through the traditional agroforestry system practised by the local communities.

New Delhi: Pineapple-based agroforestry, traditionally practised by ethnic "Hmar" tribe in southern Assam, can be a sustainable alternative to jhum cultivation for North East India. According to a new study, this traditional practice can provide twin solutions for climate change and biodiversity loss. The Department of Ecology and Environmental Science, Assam University, Silchar, with support from the Climate Change Program Division of the Department of Science & Technology (DST) carried this study out.

Researchers are looking for agroforestry options that would also offer high carbon storage potential and tree diversity to couple this with solutions for challenges of climate change and biodiversity loss, the DST statement said.

Jhum cultivation, also called swidden agriculture, the dominant agricultural practice in the region, has become unsustainable primarily due to the reduced fallow cycle resulting in depletion in soil fertility, severe soil erosion, and low agronomic productivity. Hence, North East India and many south Asian countries are shifting to agroforestry and high-value cropping systems from traditional jhum practices, which are considered sustainable and profitable alternatives over the past decades.

The study assessed the tree diversity and ecosystem carbon storage through the traditional agroforestry system practised by the local communities. It showed that the system they practice maintains a steady ecosystem carbon stock while reducing land-use-related carbon emission and providing additional co-benefits to the communities.

The research team, led by Arun Jyoti Nath, Associate Professor in the Department of Ecology and Environmental Science, Assam University, conducted this study in the ethnic villages in the Cachar district of Assam part of the Himalayan foothills and the Indo-Burma, centre of a global biodiversity hotspot. They explored changes in tree diversity and transition of dominant tree species from swidden agriculture through different aged PAFS. The changes in the biomass carbon and ecosystem carbon storage in tree and pineapple components from swidden agriculture through different aged PAFS were also noted.

Researchers found that farmers apply traditional knowledge for tree selection through prior knowledge and long-term farming experience. Additionally, fruit trees such as Areca catechu and Musa species are planted on farm boundaries as live fences. The live fence reduces soil erosion and acts as a windbreak and shelterbelt. A combination of economically important trees like Albiziaprocera, Parkiatimoriana, Aquilariamalaccensis, and fruit trees like papaya, lemon, guava, litchi, and mango with pineapple caters for both home-consumption and selling all year round. The upper canopy trees regulate light, enhance biomass inputs, and increase farm diversity, resulting in soil fertility and improved plant nutrition. The tree-related management practices promote the conservation of the farmers favoured indigenous fruit trees. In the older pineapple agroforestry farms, farmers introduce rubber trees.

The research shows that the practice can be applied for the REDD+ mechanism to add to the carbon capturing and reducing deforestation by contributing to tree cover, which may further incentivise against the carbon credit to the poor farmers.

Pineapple agroforestry systems (PAFS) are dominant land use in the Indian Eastern Himalayas and other parts of Asia and are mostly grown in association with multipurpose trees. The ethnic “Hmar” tribe in southern Assam has been cultivating pineapple for centuries. At present, they practice the indigenous PAFS for both home consumption and boosting economic benefits.

They have applied traditional knowledge to evolve a unique agroforestry system. The study published in the ‘Journal of Environmental Management’ recently can provide information about emission factors for the indigenous agro-ecosystems in North East India for mitigation purposes, facilitating the formulation of incentives for the communities. It could also equip forest managers with information for accounting for the changes in carbon storage due to deforestation and jhum cultivation.

Courtesy: India Science Wire

THE FEDERAL

Pineapple agroforestry can tackle climate change and biodiversity loss: Study

Traditionally practiced by ethnic 'Hmar' tribe in southern Assam, this can be an alternative for jhum cultivation

India Science Wire
2:02 PM, 19 August, 2021

Pineapple agroforestry systems (PAFS) are dominant land use in the Indian Eastern Himalayas and other parts of Asia and are mostly grown in association with multipurpose trees

Pineapple-based agroforestry, traditionally practiced by ethnic ‘Hmar’ tribe in southern Assam, can be a sustainable alternative to shifting cultivation (jhum) in North East India, according to a recent study.

According to a study by the Department of Ecology and Environmental Science, Assam University, this traditional practice can provide twin solutions for climate change and biodiversity loss.This study was carried out by Assam University with support from the Climate Change Program Division of the Department of Science & Technology (DST).

“Researchers are looking for agroforestry options that would also offer high carbon storage potential and tree diversity to couple this with solutions for challenges of climate change and biodiversity loss,” a statement released by the DST said.

Jhum cultivation, also called swidden agriculture, the dominant agricultural practice in the region, has become unsustainable, primarily due to the reduced fallow cycle resulting in depletion in soil fertility, severe soil erosion, and low agronomic productivity. Hence, North East India and many south Asian countries are shifting to agroforestry and high-value cropping systems from traditional jhum practices over the past decades, which are considered sustainable and profitable alternatives.

The study assessed the tree diversity and ecosystem carbon storage through the traditional agroforestry system practiced by the local communities. It showed that the system they practice maintains a steady ecosystem carbon stock while reducing land-use-related carbon emission and providing additional co-benefits to the communities.

The research team, led by Arun Jyoti Nath, Associate Professor in the Department of Ecology and Environmental Science, Assam University conducted this study in the ethnic villages located in the Cachar district of Assam, which is the center of global biodiversity hotspot.

The team explored changes in tree diversity and transition of dominant tree species from swidden agriculture through different aged PAFS. The changes in the biomass carbon and ecosystem carbon storage in tree and pineapple components from swidden agriculture through different aged PAFS were also noted.

Researchers found that farmers apply traditional knowledge for tree selection through prior knowledge and long-term farming experience. Additionally, fruit trees such as Areca catechu and Musa species, are planted on farm boundaries as live fences.

The live fence reduces soil erosion and acts as a windbreak and shelterbelt. A combination of economically important trees like Albiziaprocera, Parkiatimoriana, Aquilariamalaccensis, as well as fruit trees like papaya, lemon, guava, litchi, and mango with pineapple, caters for both home-consumption and selling all year round.

The upper canopy trees regulate light, enhance biomass inputs, and increase farm diversity, resulting in soil fertility and improved plant nutrition. The tree-related management practices promote the conservation of the indigenous fruit trees, which are favoured by the farmers. Farmers introduce rubber trees in the older pineapple agroforestry farms.

The research shows that the practice can be applied for the REDD+ mechanism to add to the carbon capturing and reducing deforestation by contributing to tree cover, which may further incentivize against the carbon credit to the poor farmers.

Pineapple agroforestry systems (PAFS) are dominant land use in the Indian Eastern Himalayas and other parts of Asia and are mostly grown in association with multipurpose trees. The ethnic ‘Hmar’ tribe in southern Assam has been cultivating pineapple for centuries.

Currently, the ‘Hmars’ practice the indigenous PAFS for both home consumption and boosting economic benefits. They have applied traditional knowledge to evolve a unique agroforestry system.

The study, published in the Journal of Environmental Management, provides information about emission factor for the indigenous agro-ecosystems in North East India for mitigation purposes, which will help in the formulation of incentives for the communities. It also equips forest managers with information for accounting the changes in carbon storage due to deforestation and jhum cultivation.

भारत ने पार किया 50 करोड़ कोविड-19 नमूनों के परीक्षण का आंकड़ा

Last Updated: गुरुवार, 26 अगस्त 2021 (16:01 IST)

नई दिल्ली, भारत में कोविड-19 परीक्षण प्रोटोकॉल तैयार करने में अग्रणी भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद (आईसीएमआर) ने18 अगस्त, 2021 तक 50 करोड़ परीक्षण करके एक मील का पत्थर पार कर लिया है।
अगस्त महीने में 17 लाख से अधिक औसत दैनिक परीक्षण के साथ भारत ने अब तक देश भर में 50 करोड़ नमूनों का परीक्षण किया है।

आईसीएमआर द्वारा जारी एक ताजा बयान में कहा गया है कि भारत ने अंतिम दस करोड़ परीक्षण केवल पिछले 55 दिनों में किये हैं।

21 जुलाई 2021 तक भारत ने 45 करोड़ कोविड-19 नमूनों का परीक्षण किया था, जो 18 अगस्त, 2021 को 50 करोड़ अंक तक पहुंच गया है। देश भर में तेजी से परीक्षण के लिए जरूरी बुनियादी ढांचे और क्षमता को बढ़ाकर यह संभव हो सका है।

प्रभावी तकनीक और किफायती डायग्नोस्टिक किट को सुविधाजनक बनाकर परीक्षण क्षमता का विस्तार देशभर में किया जा रहा है। परीक्षण की पहुंच और उपलब्धता बढ़ाने के लिए इससे जुड़ी रणनीतियों को सावधानीपूर्वक अमल में लाया जाता है।

कोविड-19 नमूनों का परीक्षण
परीक्षणों की संख्या तारीख (करोड़)

50

18 अगस्त 2021
40

25 जून 2021
30

8 मई 2021
20

6 फरवरी 2021
10

23 अक्तूबर 2020
स्रोतः आईसीएमआर

प्रोफेसर बलराम भार्गव (.डॉ), महानिदेशक, आईसीएमआर बताते हैं -“हमने देखा है कि परीक्षण में तेज वृद्धि से कोविड-19 मामलों की शीघ्र पहचान, शीघ्र अलगाव और प्रभावी उपचार हुआ है।

यह परीक्षण मील का पत्थर इस तथ्य का प्रमाण है कि भारत 5T दृष्टिकोण टेस्टिंग", ट्रैक, ट्रेस, ट्रीटमेंट और टेक्नोलॉजी के उपयोगकी " रणनीति को कुशलतापूर्वक लागू करने में सफल रहा है, जो हमें महामारी के प्रसार को रोकने में सक्षम करेगा। इसके अलावा, डायग्नोस्टिक किट के बढ़े हुए उत्पादन ने भारत को आत्मनिर्भर बना दिया है, जिसके परिणामस्वरूप लागत में कमी आयी है और परीक्षण किट की उपलब्धता में सुधार हुआ है।''

परीक्षण को बढ़ाने और विविधता लाने की दिशा में आईसीएमआर के ठोस प्रयासों ने बुनियादी ढाँचा तैयार किया, जिससे कोविड-19 की दूसरी लहर के दौरान भारत की बढ़ी हुई परीक्षण आवश्यकताओं को पूरा करना संभव हो सका है। अभी भी कोविड-19 की उच्च संक्रमण दर वाले क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर परीक्षण जारी हैं। परीक्षणों में लगने वाले समय को कम करने की दिशा में भी प्रगति हुई है।

आईसीएमआर अत्याधुनिक प्रौद्योगिकी के उपयोग से किफायती डायग्नोस्टिक किट में नवाचार की सुविधा प्रदान करके देश भर में कोविड-19 परीक्षण क्षमता को और बढ़ा रहा है। कोविड-19 परीक्षण को सर्वसुलभ बनाने के लिए घर पर ही आसानी से परीक्षण के लिए सेल्फडायग्नोस्टिक किट विकसित और अ-नुमोदित की गई हैं।

आईसीएमआर ने कहा है कि यह सुनिश्चित किया गया है कि सामान्य परीक्षण)RT-PCR), उच्च) थ्रूपुट परीक्षण-COBAS), दूरस्थ स्थानों पर परीक्षण और प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों पर होने वाले परीक्षण)TrueNAT, CBNAAT), नियंत्रण क्षेत्रों रैपिड एंटीजन) परीक्षणके लिए एक विशिष्ट परीक्षण मंच उपलब्ध हो सके। आज देश में (पूल नमूना परीक्षण) और बड़ी संख्या में प्रवासी आबादी (नैदानिक प्रयोगशालाओं की कुल संख्या2876 तक पहुँच गई है। जिनमें पूरी तरह समर्पित 1322 सरकारी प्रयोगशालाएं शामिल हैं, जबकि निजी प्रयोगशालाओं की संख्या 1554 है। ***(इंडिया साइंस वायर(***

भारत ने पार किया 50 करोड़ कोविड-19 नमूनों के परीक्षण का आंकड़ा

इंडिया साइंस वायर Aug 20, 2021 17:15

> *आईसीएमआर द्वारा जारी एक ताजा बयान में कहा गया है कि भारत ने अंतिम दस करोड़ परीक्षण केवल पिछले 55 दिनों में किये हैं। 21 जुलाई 2021 तक भारत ने 45 करोड़ कोविड-19 नमूनों का परीक्षण किया था, जो 18 अगस्त, 2021 को 50 करोड़ अंक तक पहुँच गया है।*

भारत में कोविड-19 परीक्षण प्रोटोकॉल तैयार करने में अग्रणी भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद (आईसीएमआर) ने18 अगस्त, 2021 तक 50 करोड़ परीक्षण करके एक मील का पत्थर पार कर लिया है। अगस्त महीने में 17 लाख से अधिक औसत दैनिक परीक्षण के साथ भारत ने अब तक देश भर में 50 करोड़ नमूनों का परीक्षण किया है।

आईसीएमआर द्वारा जारी एक ताजा बयान में कहा गया है कि भारत ने अंतिम दस करोड़ परीक्षण केवल पिछले 55 दिनों में किये हैं। 21 जुलाई 2021 तक भारत ने 45 करोड़ कोविड-19 नमूनों का परीक्षण किया था, जो 18 अगस्त, 2021 को 50 करोड़ अंक तक पहुँच गया है। देश भर में तेजी से परीक्षण के लिए जरूरी बुनियादी ढांचे और क्षमता को बढ़ाकर यह संभव हो सका है। प्रभावी तकनीक और किफायती डायग्नोस्टिक किट को सुविधाजनक बनाकर परीक्षण

क्षमता का विस्तार देश भर में किया जा रहा है। परीक्षण की पहुँच और उपलब्धता बढ़ाने के लिए इससे जुड़ी रणनीतियों को सावधानीपूर्वक अमल में लाया जाता है।

कोविड-19 नमूनों का परीक्षण	
परीक्षणों की संख्या (करोड़)	तारीख
50	18 अगस्त 2021
40	25 जून 2021
30	8 मई 2021
20	6 फरवरी 2021
10	23 अक्तूबर 2020
	स्रोतः आईसीएमआर

प्रोफेसर बलराम भार्गव (.डॉ), महानिदेशक, आईसीएमआर बताते हैं -"हमने देखा है कि परीक्षण में तेज वृद्धि से कोविड-19 मामलों की शीघ्र पहचान, शीघ्र अलगाव और प्रभावी उपचार हुआ है। यह परीक्षण मील का पत्थर इस तथ्य का प्रमाण है कि भारत 5T दृष्टिकोण टेस्टिंग", ट्रैक, ट्रेस, ट्रीटमेंट और टेक्नोलॉजी के उपयोगकी रणनीति को कुशलतापूर्वक " लागू करने में सफल रहा है, जो हमें महामारी के प्रसार को रोकने में सक्षम करेगा। इसके अलावा, डायग्नोस्टिक किट के बढ़े हुए उत्पादन ने भारत को आत्मनिर्भर बना दिया है, जिसके परिणामस्वरूप लागत में कमी आयी है और परीक्षण किट की उपलब्धता में सुधार हुआ है।''

परीक्षण को बढ़ाने और विविधता लाने की दिशा में आईसीएमआर के ठोस प्रयासों ने बुनियादी ढाँचा तैयार किया, जिससे कोविड-19 की दूसरी लहर के दौरान भारत की बढ़ी हुई परीक्षण आवश्यकताओं को पूरा करना संभव हो सका है। अभी भी कोविड-19 की उच्च संक्रमण दर वाले क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर परीक्षण जारी हैं। परीक्षणों में लगने वाले समय को कम करने की दिशा में भी प्रगति हुई है। आईसीएमआर अत्याधुनिक प्रौद्योगिकी के उपयोग से किफायती डायग्नोस्टिक किट में नवाचार की सुविधा प्रदान करके देश भर में कोविड-19 परीक्षण क्षमता को और बढ़ा रहा है। कोविड-19 परीक्षण को सर्वसुलभ बनाने के लिए घर पर ही आसानी से परीक्षण के लिए सेल्फस्टिक किट विकसित और अनुमोदित की गई डायग्नो-हैं।

आईसीएमआर ने कहा है कि यह सुनिश्चित किया गया है कि सामान्य परीक्षण)RT-PCR), उच्च थ्रूपुट परीक्षण-)COBAS), दूरस्थ स्थानों पर परीक्षण और प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों पर होने वाले परीक्षण)TrueNAT, CBNAAT), नियंत्रण क्षेत्रों के लिए एक विशिष्ट (पूल नमूना परीक्षण) और बड़ी संख्या में प्रवासी आबादी (रैपिड एंटीजन परीक्षण) परीक्षण मंच उपलब्ध हो सके। आज देश में नैदानिक प्रयोगशालाओं की कुल संख्या2876 तक पहुँच गई है। जिनमें पूरी तरह समर्पित 1322 सरकारी प्रयोगशालाएं शामिल हैं, जबकि निजी प्रयोगशालाओं की संख्या 1554 है।

(इंडिया साइंस वायर(

भारत ने पार किया 50 करोड़ कोविड-19 नमूनों के परीक्षण का आंकड़ा

20/08/2021 V3news India

(इंडिया साइंस वायर-डभारत में कोवि :(19 परीक्षण प्रोटोकॉल तैयार करने में अग्रणी भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद ने (आईसीएमआर)18 अगस्त, 2021 तक 50 करोड़ परीक्षण करके एक मील का पत्थर पार कर लिया है। अगस्त महीने में 17 लाख से अधिक औसत दैनिक परीक्षण के साथ भारत ने अब तक देश भर में 50 करोड़ नमूनों का परीक्षण किया है।

आईसीएमआर द्वारा जारी एक ताजा बयान में कहा गया है कि भारत ने अंतिम दस करोड़ परीक्षण केवल पिछले 55 दिनों में किये हैं। 21 जुलाई 2021 तक भारत ने 45 करोड़ कोविड-19 नमूनों का परीक्षण किया था, जो 18 अगस्त, 2021 को 50 करोड़ अंक तक पहुँच गया है। देश भर में तेजी से परीक्षण के लिए जरूरी बुनियादी ढांचे और क्षमता को बढ़ाकर यह संभव हो सका है।

प्रभावी तकनीक और किफायती डायग्नोस्टिक किट को सुविधाजनक बनाकर परीक्षण क्षमता का विस्तार देश भर में किया जा रहा है। परीक्षण की पहुँच और उपलब्धता बढ़ाने के लिए इससे जुड़ी रणनीतियों को सावधानीपूर्वक अमल में लाया जाता है।

कोविड-19 नमूनों का परीक्षण

परीक्षणों की संख्या (करोड़)	तारीख
50	18 अगस्त 2021
40	25 जून 2021
30	8 मई 2021
20	6 फरवरी 2021
10	23 अक्तूबर 2020
स्रोतः आईसीएमआर	

प्रोफेसर भार्गव बलराम (.डॉ), महानिदेशक, आईसीएमआर बताते हैं -"हमने देखा है कि परीक्षण में तेज वृद्धि से कोविड-19 मामलों की शीघ्र पहचान, शीघ्र अलगाव और प्रभावी उपचार हुआ है। यह परीक्षण मील का पत्थर इस तथ्य का प्रमाण है कि भारत 5T दृष्टिकोण "टेस्टिंग, ट्रैक, ट्रेस, ट्रीटमेंट और टेक्नोलॉजी के उपयोग" की रणनीति को कुशलतापूर्वक लागू करने में सफल रहा है, जो हमें महामारी के प्रसार को रोकने में सक्षम करेगा।

इसके अलावा, डायग्नोस्टिक किट के बढ़े हुए उत्पादन ने भारत को आत्मनिर्भर बना दिया है, जिसके परिणामस्वरूप लागत में कमी आयी है और परीक्षण किट की उपलब्धता में सुधार हुआ है। "परीक्षण को बढ़ाने और विविधता लाने की दिशा में आईसीएमआर के ठोस प्रयासों ने बुनियादी ढाँचा तैयार किया, जिससे कोविड-19 की दूसरी लहर के दौरान भारत की बढ़ी हुई परीक्षण आवश्यकताओं को पूरा करना संभव हो सका है।

अभी भी कोविड-19 की उच्च संक्रमण दर वाले क्षेत्रों में बड़े पैमाने पर परीक्षण जारी हैं। परीक्षणों में लगने वाले समय को कम करने की दिशा में भी प्रगति हुई है। आईसीएमआर अत्याधुनिक प्रौद्योगिकी के उपयोग से किफायती डायग्नोस्टिक किट में नवाचार की सुविधा प्रदान करके देश भर में कोविड-19 परीक्षण क्षमता को और बढ़ा रहा है।

कोविड-19 परीक्षण को सर्वसुलभ बनाने के लिए घर पर ही आसानी से परीक्षण के लिए सेल्फडायग्नोस्टिक किट विकसित और -) अनुमोदित की गई हैं। आईसीएमआर ने कहा है कि यह सुनिश्चित किया गया है कि सामान्य परीक्षणRT-PCR), उच्चट थ्रूपु-) परीक्षणCOBAS), दूरस्थ स्थानों पर परीक्षण और प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों पर होने वाले परीक्षण)TrueNAT, CBNAAT),

नियंत्रण क्षेत्रों के लिए एक विशिष्ट परीक्ष (पूल नमूना परीक्षण) और बड़ी संख्या में प्रवासी आबादी (रैपिड एंटीजन परीक्षण)ण मंच उपलब्ध हो सके। आज देश में नैदानिक प्रयोगशालाओं की कुल संख्या 2876 तक पहुँच गई है। जिनमें पूरी तरह समर्पित 1322 सरकारी प्रयोगशालाएं शामिल हैं, जबकि निजी प्रयोगशालाओं की संख्या 1554 है।

Voice of the Nation
ORGANISER

Research paves the way for better drugs for breast cancer

WEBDESK Aug 24, 2021, 12:00 AM IST

Umashankar Mishra

New Delhi: In a study that could help design better drugs for breast cancer researchers at the Indian Institute of Science Education and Research (IISER)-Bhopal have identified the mechanism by which breast cancer cells proliferate and spread.

The team studied the regulation of a gene called ‘ESRP1’ in breast cancer. They found that there is a difference in the expression of the ESRP1 gene between normal and tumour tissues of breast cancer patients. The gene was expressed more in breast tumour tissues than normal tissues. They then explored the regulatory mechanism behind this.

The expression of a gene goes through many steps, the first of which is transcription. The 'message' encoded in the DNA of the gene is transcribed into RNA signals by proteins called transcription factors. The team found that in tumour tissues, a transcription factor called E2F1 that regulates transcription of ESRP1 gets up-regulated, thereby increasing its expression and eventually leading to excessive growth of breast cancer cells.

The team also found the mechanistic aspects of cancer spread to other parts of the body or what is technically called metastasis. Cancerous tumours create regions of reduced oxygen due to poor blood circulation. It has been known that such oxygen-deprived regions instigate metastasis. The IISER researchers have unravelled the mechanism behind this also.

They have shown that the transcription factor E2F1 fails to bind the ESRP1 promoter in oxygen-deprived breast cancer cells, thereby downregulating the expression of ESRP1. This downregulation may cause the cancerous cells to break free from primary cancer and join the bloodstream to be carried to other parts of the body, thereby resulting in metastasis.

The study was led by Dr. Sanjeev Shukla, Associate Professor and DBT/Wellcome Trust India Alliance Fellow in the Department of Biological Sciences at IISER-Bhopal. The work was supported by the DBT/Wellcome Trust India Alliance Fellowship Grant.

Speaking to India Science Wire, Dr. Shukla said, "Our research, for the first time, shows the reason behind an elevated expression of a key gene, ESRP1, in breast tumor tissue supporting tumor progression. Another important part of the discovery was a novel epigenetic regulatory mechanism that governs ESRP1 downregulation in hypoxic tumor tissue, which might help the cancer cells to evade the surrounding tissue and enter the bloodstream. Clearly, there is an orchestrated activation of ESRP1 in breast cancer, depending on the tumour microenvironment. Under regular oxygen conditions, cancer cells upregulate ESRP1 to help them multiply in the primary cancerous zone, but under oxygen deficiency, ESRP1 is downregulated, leading to the break-up of the cancer cells from the primary region and spread to other parts of the body. Understanding this orchestration of ESRP1 by breast cancer cells can help in devising strategic therapeutic interventions, which the IISER team continues to work towards".

In India, breast cancer accounted for 11.1 per cent of cancer deaths in 2020, necessitating the need for aggressive research into understanding and treating this malady. In cancers, it is known that some genes are activated or 'upregulated,' resulting in abnormal growth and proliferation of diseased cells. Cancer Epigenetics - the study of changes in gene expression that are associated with cancer – has thus assumed centre-stage in the area of cancer research in recent decades.

A report on the work has been published in the Nature group's research journal, Oncogenesis. The paper was co-authored by Ms. Neha Ahuja, Dr. Ashok Cheemala, and Mr. Subhashis Natua, besides Dr. Shukla.

Courtesy: India Science Wire

DELHI POST
Politics | Democracy | Development

Research Paves Way for Better Drugs for Breast Cancer

By **Team DP** On **Aug 24, 2021**

In a study that could help design better drugs for breast cancer, researchers at the Indian Institute of Science Education and Research (IISER)-Bhopal have identified the mechanism by which breast cancer cells proliferate and spread.

The team studied the regulation of a gene called 'ESRP1' in breast cancer. They found that there is a difference in the expression of the ESRP1 gene between normal and tumour tissues of breast cancer patients. The gene was expressed more in breast tumour tissues than normal tissues. They then explored the regulatory mechanism behind this.

The expression of a gene goes through many steps, the first of which is transcription. The 'message' encoded in the DNA of the gene is transcribed into RNA signals by proteins called transcription factors. The team found that in tumour tissues, a transcription factor called E2F1 that regulates transcription of ESRP1 gets up-regulated, thereby increasing its expression and eventually leading to excessive growth of breast cancer cells.

The team also found the mechanistic aspects of cancer spread to other parts of the body or what is technically called metastasis. Cancerous tumors create regions of reduced oxygen due to poor blood circulation. It has been known that such oxygen-deprived regions instigate metastasis. The IISER researchers have unraveled the mechanism behind this also. They have shown that the transcription factor E2F1 fails to bind the ESRP1 promoter in oxygen-deprived breast cancer cells, thereby downregulating the expression of ESRP1. This downregulation may cause the cancerous cells to break free from primary cancer and join the bloodstream to be carried to other parts of the body, thereby resulting in metastasis.

The study was led by Dr. Sanjeev Shukla, Associate Professor, and DBT/Wellcome Trust India Alliance Fellow in the Department of Biological Sciences at IISER-Bhopal. The work was supported by the DBT/Wellcome Trust India Alliance Fellowship Grant.

Speaking to India Science Wire, Dr. Shukla said, "Our research, for the first time, shows the reason behind an elevated expression of a key gene, ESRP1, in breast tumor tissue supporting tumor progression. Another important part of the discovery was a novel epigenetic regulatory mechanism that governs ESRP1 downregulation in hypoxic tumor tissue, which might help the cancer cells to evade the surrounding tissue and enter the bloodstream. Clearly, there is an orchestrated activation of ESRP1 in breast cancer, depending on the tumour microenvironment. Under regular oxygen conditions, cancer cells upregulate ESRP1 to help them multiply in the primary cancerous zone, but under oxygen deficiency, ESRP1 is downregulated, leading to the break-up of the cancer cells from the primary region and spread to other parts of the body. Understanding this orchestration of ESRP1 by breast cancer cells can help in devising strategic therapeutic interventions, which the IISER team continues to work towards".

In India, breast cancer accounted for 11.1 percent of cancer deaths in 2020, necessitating the need for aggressive research into understanding and treating this malady. In cancers, it is known that some genes are activated or 'upregulated,' resulting in abnormal growth and proliferation of diseased cells. Cancer Epigenetics – the study of changes in gene expression that are associated with cancer – has thus assumed centre-stage in the area of cancer research in recent decades.

A report on the work has been published in the Nature group's research journal, Oncogenesis. The paper was co-authored by Ms. Neha Ahuja, Dr. Ashok Cheemala, and Mr. Subhashis Natua, besides Dr. Shukla. (Indian Science Wire)

Research paves way for better drugs for breast cancer

By **India Science Wire** - August 23, 2021

In a study that could help design better drugs for breast cancer, researchers at the Indian Institute of Science Education and Research (IISER)-Bhopal have identified the mechanism by which breast cancer cells proliferate and spread.

The team studied the regulation of a gene called 'ESRP1' in breast cancer. They found that there is a difference in the expression of the ESRP1 gene between normal and tumour tissues of breast cancer patients. The gene was expressed more in breast tumour tissues than normal tissues. They then explored the regulatory mechanism behind this.

The expression of a gene goes through many steps, the first of which is transcription. The 'message' encoded in the DNA of the gene is transcribed into RNA signals by proteins called transcription factors. The team found that in tumour tissues, a transcription factor called

E2F1 that regulates transcription of ESRP1 gets up-regulated, thereby increasing its expression and eventually leading to excessive growth of breast cancer cells.

The team also found the mechanistic aspects of cancer spread to other parts of the body or what is technically called metastasis. Cancerous tumors create regions of reduced oxygen due to poor blood circulation. It has been known that such oxygen-deprived regions instigate metastasis. The IISER researchers have unraveled the mechanism behind this also. They have shown that the transcription factor E2F1 fails to bind the ESRP1 promoter in oxygen-deprived breast cancer cells, thereby downregulating the expression of ESRP1. This downregulation may cause the cancerous cells to break free from primary cancer and join the bloodstream to be carried to other parts of the body, thereby resulting in metastasis.

The study was led by Dr. Sanjeev Shukla, Associate Professor, and DBT/Wellcome Trust India Alliance Fellow in the Department of Biological Sciences at IISER-Bhopal. The work was supported by the DBT/Wellcome Trust India Alliance Fellowship Grant.

Speaking to India Science Wire, Dr. Shukla said, "Our research, for the first time, shows the reason behind an elevated expression of a key gene, ESRP1, in breast tumor tissue supporting tumor progression. Another important part of the discovery was a novel epigenetic regulatory mechanism that governs ESRP1 downregulation in hypoxic tumor tissue, which might help the cancer cells to evade the surrounding tissue and enter the bloodstream. Clearly, there is an orchestrated activation of ESRP1 in breast cancer, depending on the tumour microenvironment. Under regular oxygen conditions, cancer cells upregulate ESRP1 to help them multiply in the primary cancerous zone, but under oxygen deficiency, ESRP1 is downregulated, leading to the break-up of the cancer cells from the primary region and spread to other parts of the body. Understanding this orchestration of ESRP1 by breast cancer cells can help in devising strategic therapeutic interventions, which the IISER team continues to work towards".

In India, breast cancer accounted for 11.1 percent of cancer deaths in 2020, necessitating the need for aggressive research into understanding and treating this malady. In cancers, it is known that some genes are activated or 'upregulated,' resulting in abnormal growth and proliferation of diseased cells. Cancer Epigenetics – the study of changes in gene expression that are associated with cancer – has thus assumed centre-stage in the area of cancer research in recent decades.

A report on the work has been published in the Nature group's research journal, Oncogenesis. The paper was co-authored by Ms. Neha Ahuja, Dr. Ashok Cheemala, and Mr. Subhashis Natua, besides Dr. Shukla.

DELHI POST
Politics | Democracy | Development

Researchers Develop Modified Cotton Fabric Against Harmful Air Pollutants

By **ISW Desk** On **Aug 24, 2021**

Air pollution resulting from the rising levels of particulate matter, nitrous oxides, sulfur oxides, carbon oxides, and other toxic volatile organic compounds (VOCs) is a major concern. Long-term exposure to even a few parts per million of these chemicals takes a toll on health and can cause asthma, eye, and throat irritations, etc.

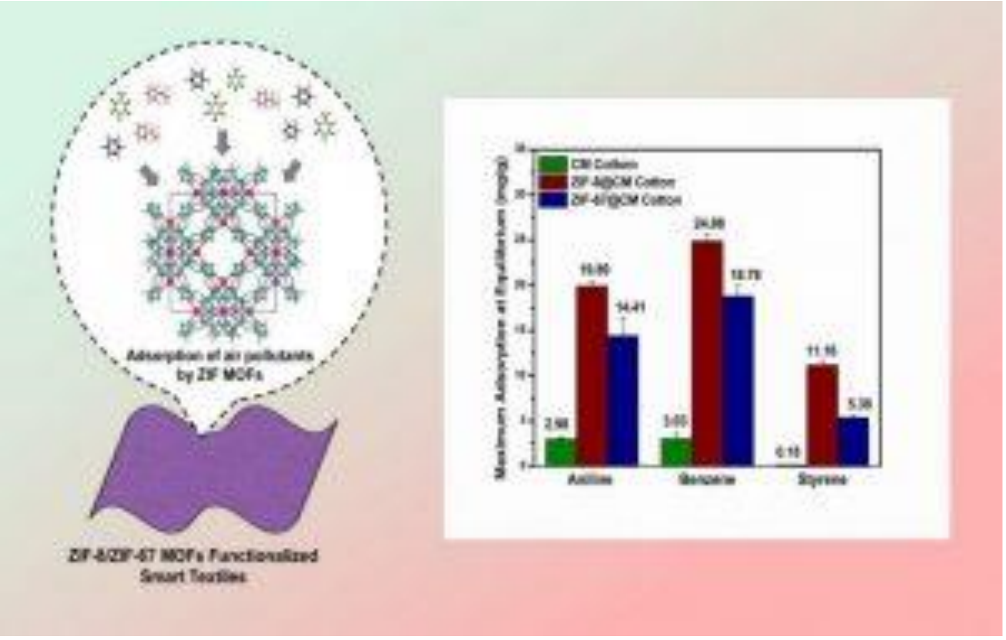

With this challenge in mind, researchers at the Indian Institute of Technology (IIT) Delhi have developed a modified cotton fabric that is found to capable of adsorbing harmful pollutants from the air. ZIF-8@CM Cotton and ZIF-67@CM Cotton, as they are called, are Zeolite Imidazolate Framework (ZIF)-modified functionalized fabrics, which adsorb high levels of organic air pollutants like benzene, aniline, and styrene from the ambient air, IIT Delhi statement said.

The research team led by Prof. Ashwini K. Agrawal and Prof. Manjeet Jassal at the SMITA Research Lab in the Department of Textile and Fibre Engineering, and Prof. Saswata Bhattacharya at the Department of Physics, IIT Delhi, has developed this modified cotton fabric after an extensive study.

Speaking of the modified cotton fabric, Prof. Ashwini Agrawal, Textile and Fibre Engineering Department, IIT Delhi said, "In this study, we have shown the functionalization of cotton fabric by ZIF MOFs (ZIF-8 and ZIF-67) using a rapid, facile, eco-friendly, and scalable approach. The ZIF functionalized textiles possess a huge potential for applications as protective garments and in controlling indoor air pollution. These fabrics may be used as upholstery for controlling gaseous pollutants that cannot be filtered out using filter media. In particular, these can be used within closed spaces, such as homes, offices, theatres, aeroplanes, and other transport vehicles."

Using a technique known as in-situ growth of ZIF-8 and ZIF-67 nanocrystals on the carboxymethylated cotton fabric using a rapid water-based textile finishing approach, the researchers at IIT Delhi have successfully developed a low-cost cotton fabric capable of adsorbing 400-600% more VOCs than ordinary cotton fabrics.

Furthermore, these fabrics are robust and can withstand even the harsh conditions of washing. They can be used repeatedly and in designing functional filters and pollution controlling upholstery fabrics among others.

The ZIF-8 functionalized fabric was found to adsorb a maximum of 19.89 mg/g of aniline, 24.88 mg/g of benzene, and 11.16 mg/g of styrene on the weight of the fabric. These fabrics could be easily regenerated by heating the fabrics at 120 °C and reused without any decrease in their adsorption capacity for several cycles.

According to research scholar, Hardeep Singh, who carried out detailed experiments to develop these fabrics, porous materials such as activated carbon, zeolites, and Metal-Organic Frameworks (MOFs) are capable of adsorbing VOCs from the air. The MOFs can be tweaked to create textiles that have antimicrobial, biomedical, particulate matter filtering, fuel filtering, chemical warfare protecting and UV radiation absorbing properties. The ZIFs specifically are more suited to Indian conditions.

Voice of the Nation
ORGANISER

Researchers develop modified cotton fabric against harmful air pollutants

WEBDESK Aug 24, 2021, 12:00 AM IST

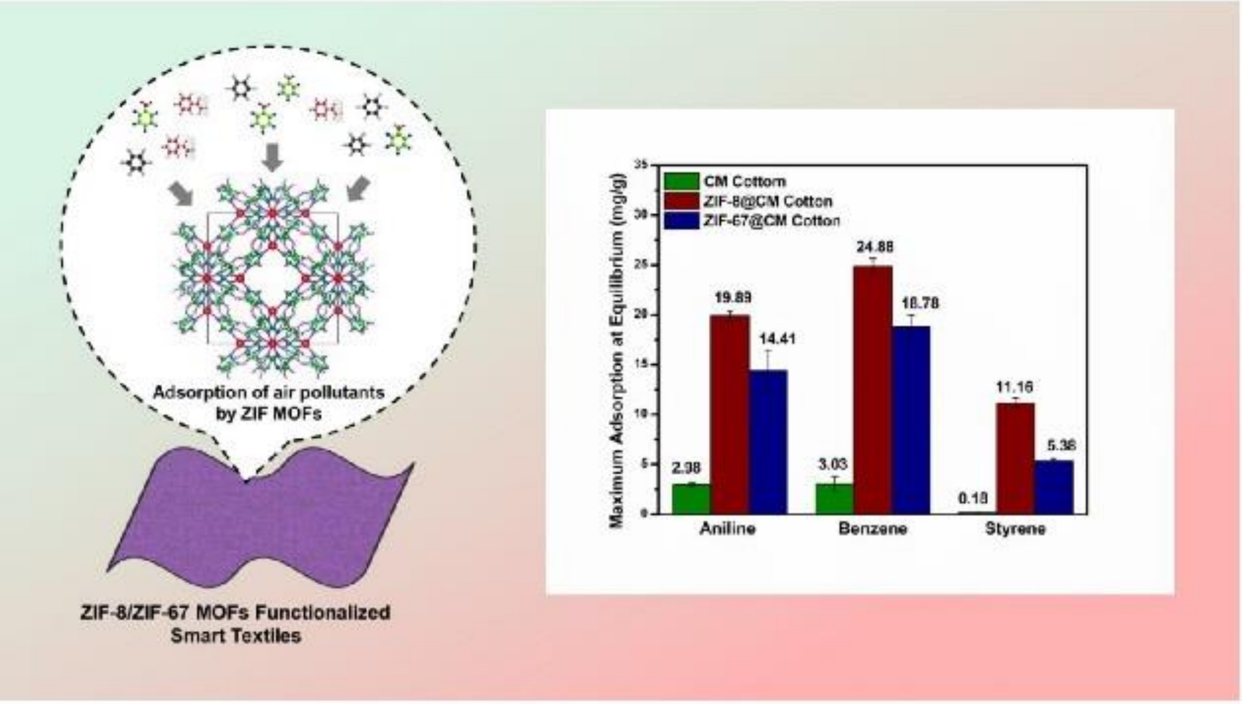

Umashankar Mishra

The research team has developed a modified cotton fabric against harmful air pollutants after an extensive study.

New Delhi: Air pollution resulting from the rising levels of particulate matter, nitrous oxides, sulfur oxides, carbon oxides, and other toxic volatile organic compounds (VOCs) is a major concern. Long-term exposure to even a few parts per million of these chemicals takes a toll on health and can cause asthma, eye, and throat irritations, etc.

With this challenge in mind, researchers at the Indian Institute of Technology (IIT) Delhi have developed a modified cotton fabric that is found to be capable of adsorbing harmful pollutants from the air. ZIF-8@CM Cotton and ZIF-67@CM Cotton are called Zeolite Imidazolate

Framework (ZIF)-modified functionalized fabrics, which adsorb high levels of organic air pollutants like benzene, aniline, and styrene from the ambient air, IIT Delhi statement said.

The research team led by Prof. Ashwini K. Agrawal and Prof. Manjeet Jassal at the SMITA Research Lab in the Department of Textile and Fibre Engineering, and Prof. Saswata Bhattacharya at the Department of Physics, IIT Delhi, has developed this modified cotton fabric after an extensive study.

Speaking of the modified cotton fabric, Prof. Ashwini Agrawal, Textile and Fibre Engineering Department, IIT Delhi, said, "In this study, we have shown the functionalization of cotton fabric by ZIF MOFs (ZIF-8 and ZIF-67) using a rapid, facile, eco-friendly, and scalable approach. The ZIF functionalized textiles possess a huge potential for applications as protective garments and in controlling indoor air pollution. These fabrics may be used as upholstery for controlling gaseous pollutants that cannot be filtered out using filter media. In particular, these can be used within closed spaces, such as homes, offices, theatres, aeroplanes, and other transport vehicles."

Using a technique known as in-situ growth of ZIF-8 and ZIF-67 nanocrystals on the carboxymethylated cotton fabric using a rapid water-based textile finishing approach, the researchers at IIT Delhi have successfully developed a low-cost cotton fabric capable of adsorbing 400-600% more VOCs than ordinary cotton fabrics.

Furthermore, these fabrics are robust and can withstand even the harsh conditions of washing. They can be used repeatedly and in designing functional filters and pollution controlling upholstery fabrics, among others.

The ZIF-8 functionalized fabric was found to adsorb a maximum of 19.89 mg/g of aniline, 24.88 mg/g of benzene, and 11.16 mg/g of styrene on the weight of the fabric. These fabrics could be easily regenerated by heating the fabrics at 120 °C and reused without any decrease in their adsorption capacity for several cycles.

According to research scholar Hardeep Singh, who carried out detailed experiments to develop these fabrics, porous materials such as activated carbon, zeolites, and Metal-Organic Frameworks (MOFs) are capable of adsorbing VOCs from the air. The MOFs can be tweaked to create textiles that have antimicrobial, biomedical, particulate matter filtering, fuel filtering, chemical warfare protecting and UV radiation absorbing properties. The ZIFs specifically are more suited to Indian conditions.

Courtesy: India Science Wire

Indus Scrolls
Indian to the core

Researchers develop modified cotton fabric against harmful air pollutants

By **India Science Wire** - August 23, 2021

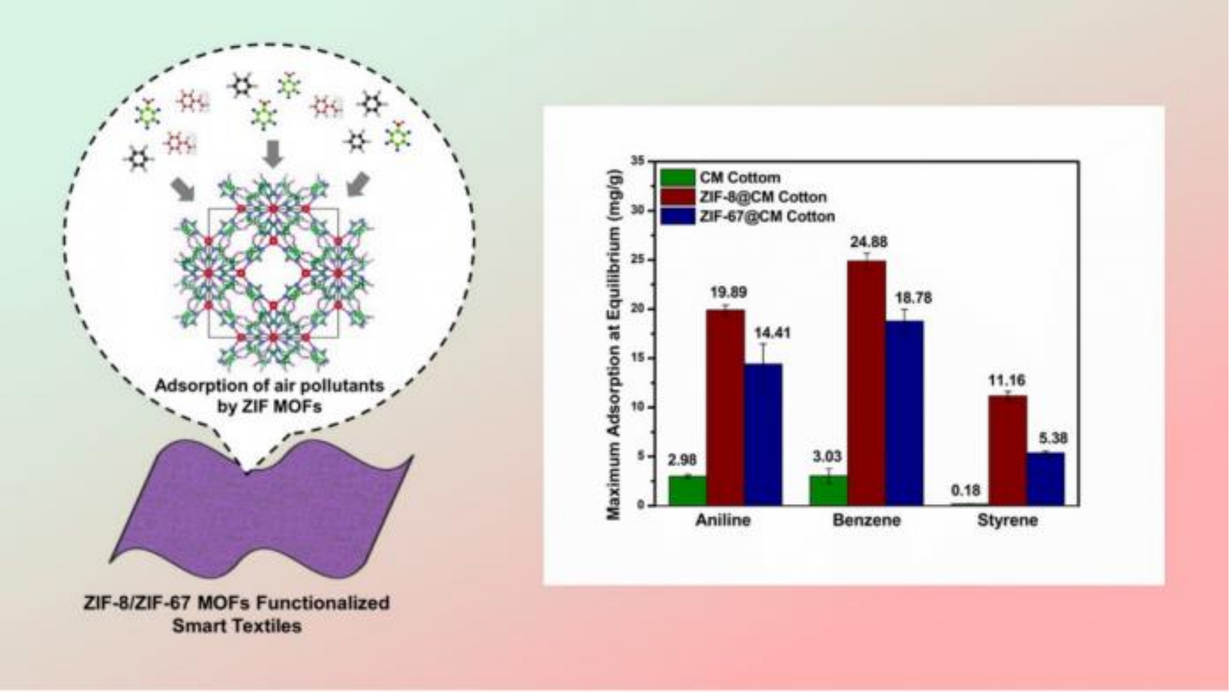

Air pollution resulting from the rising levels of particulate matter, nitrous oxides, sulfur oxides, carbon oxides, and other toxic volatile organic compounds (VOCs) is a major concern. Long-term exposure to even a few parts per million of these chemicals takes a toll on health and can cause asthma, eye, and throat irritations, etc.

With this challenge in mind, researchers at the Indian Institute of Technology (IIT) Delhi have developed a modified cotton fabric that is found to capable of adsorbing harmful pollutants from the air. Cotton and Cotton, as they are called, are Zeolite Imidazolate Framework (ZIF)-modified functionalized fabrics, which adsorb high levels of organic air pollutants like benzene, aniline, and styrene from the ambient air, IIT Delhi statement said.

The research team led by Prof. Ashwini K. Agrawal and Prof. Manjeet Jassal at the SMITA Research Lab in the Department of Textile and Fibre Engineering,

and Prof. Saswata Bhattacharya at the Department of Physics, IIT Delhi, has developed this modified cotton fabric after an extensive study.

Speaking of the modified cotton fabric, Prof. Ashwini Agrawal, Textile and Fibre Engineering Department, IIT Delhi said, “In this study, we have shown the functionalization of cotton fabric by ZIF MOFs (ZIF-8 and ZIF-67) using a rapid, facile, eco-friendly, and scalable approach. The ZIF functionalized textiles possess a huge potential for applications as protective garments and in controlling indoor air pollution. These fabrics may be used as upholstery for controlling gaseous pollutants that cannot be filtered out using filter media. In particular, these can be used within closed spaces, such as homes, offices, theatres, aeroplanes, and other transport vehicles.”

Using a technique known as in-situ growth of ZIF-8 and ZIF-67 nanocrystals on the carboxymethylated cotton fabric using a rapid water-based textile finishing approach, the researchers at IIT Delhi have successfully developed a low-cost cotton fabric capable of adsorbing 400-600% more VOCs than ordinary cotton fabrics.

Furthermore, these fabrics are robust and can withstand even the harsh conditions of washing. They can be used repeatedly and in designing functional filters and pollution controlling upholstery fabrics among others.

The ZIF-8 functionalized fabric was found to adsorb a maximum of 19.89 mg/g of aniline, 24.88 mg/g of benzene, and 11.16 mg/g of styrene on the weight of the fabric. These fabrics could be easily regenerated by heating the fabrics at 120 °C and reused without any decrease in their adsorption capacity for several cycles.

According to research scholar, Hardeep Singh, who carried out detailed experiments to develop these fabrics, porous materials such as activated carbon, zeolites, and Metal-Organic Frameworks (MOFs) are capable of adsorbing VOCs from the air. The MOFs can be tweaked to create textiles that have antimicrobial, biomedical, particulate matter filtering, fuel filtering, chemical warfare protecting and UV radiation absorbing properties. The ZIFs specifically are more suited to Indian conditions.

Researchers develop modified cotton fabric against harmful air pollutants

TOPICS: Air Pollution Asthma Cotton Wool Health IIT Delhi India Science Wire

POSTED BY: HASTAKSHEP NEWS 23RD AUGUST 2021

New Delhi, Aug. 23: **Air pollution** resulting from the rising levels of particulate matter, nitrous oxides, sulfur oxides, carbon oxides, and other toxic volatile organic compounds (VOCs) is a major concern. Long-term exposure to even a few parts per million of these chemicals takes a toll on health and can cause **asthma**, eye, and throat irritations, etc.

With this challenge in mind, researchers at the Indian Institute of Technology (IIT) Delhi have developed a modified cotton fabric that is found to be capable of adsorbing harmful pollutants from the air. **** Cotton and **** Cotton, as they are called, are Zeolite Imidazolate Framework (ZIF)-modified functionalized fabrics, which adsorb high levels of organic air pollutants like benzene, aniline, and styrene from the ambient air, IIT Delhi statement said.

The research team led by Prof. Ashwini K. Agrawal and Prof. Manjeet Jassal at the SMITA Research Lab in the Department of Textile and Fibre Engineering, and Prof. Saswata Bhattacharya at the Department of Physics, IIT Delhi, has developed this modified cotton fabric after an extensive study.

Speaking of the modified cotton fabric, Prof. Ashwini Agrawal, Textile and Fibre Engineering Department, IIT Delhi said, "In this study, we have shown the functionalization of cotton fabric by ZIF MOFs (ZIF-8 and ZIF-67) using a rapid, facile, eco-friendly, and scalable approach. The ZIF functionalized textiles possess a huge potential for applications as protective garments and in controlling indoor air pollution. These fabrics may be used as upholstery for controlling gaseous pollutants that cannot be filtered out using filter media. In particular, these can be used within closed spaces, such as homes, offices, theatres, aeroplanes, and other transport vehicles."

Using a technique known as in-situ growth of ZIF-8 and ZIF-67 nanocrystals on the carboxymethylated cotton fabric using a rapid water-based textile finishing approach, the researchers at IIT Delhi have successfully developed a low-cost cotton fabric capable of adsorbing 400-600% more VOCs than ordinary cotton fabrics.

Furthermore, these fabrics are robust and can withstand even the harsh conditions of washing. They can be used repeatedly and in designing functional filters and pollution controlling upholstery fabrics among others.

The ZIF-8 functionalized fabric was found to adsorb a maximum of 19.89 mg/g of aniline, 24.88 mg/g of benzene, and 11.16 mg/g of styrene on the weight of the fabric. These fabrics could be easily regenerated by heating the fabrics at 120 °C and reused without any decrease in their adsorption capacity for several cycles.

According to research scholar, Hardeep Singh, who carried out detailed experiments to develop these fabrics, porous materials such as activated carbon, zeolites, and Metal-Organic Frameworks (MOFs) are capable of adsorbing VOCs from the air. The MOFs can be tweaked to create textiles that have antimicrobial, biomedical, particulate matter filtering, fuel filtering, chemical warfare protecting, and UV radiation absorbing properties. The ZIFs specifically are more suited to Indian conditions.

(India Science Wire)

airvibe

Researchers develop modified cotton fabric against harmful air pollutants

Editor | Aug 24, 2021 - 10:15

Air pollution is a major concern as particulate matter, nitrous oxides, sulphur oxides, carbon oxides, and other hazardous volatile organic compounds (VOCs) levels continue to rise. Long-term exposure to even a few parts per million of these compounds has a detrimental effect on health, including asthma, eye, and throat irritations, and other problems.

To address this issue, researchers from the Indian Institute of Technology (IIT) Delhi produced a modified cotton fabric that has been shown to be capable of adsorbing dangerous pollutants from the air. ZIF-8@CM Cotton and ZIF-67@CM Cotton, as they are named, are functionalized fabrics modified with the Zeolite Imidazolate Framework (ZIF), which adsorb high quantities of organic air pollutants such as benzene, aniline, and styrene from the ambient air, according to an IIT Delhi release.

After considerable investigation, a research team led by Profs. Ashwini K. Agrawal and Manjeet Jassal at the SMITA Research Lab in the Department of Textile and Fibre Engineering, and Prof. Saswata Bhattacharya of IIT Delhi's Department of Physics, created this modified cotton fabric.

Prof. Ashwini Agrawal, Textile and Fibre Engineering Department, IIT Delhi, commented on the modified cotton fabric, saying, "In this study, we demonstrated the functionalization of cotton fabric utilising ZIF MOFs (ZIF-8 and ZIF-67) in a quick, simple, eco-friendly, and scalable manner." The ZIF functionalized textiles have a tremendous amount of promise for use as protective clothing and in reducing indoor air pollution. These fabrics can be used as upholstery to control gaseous contaminants that cannot be removed using filter media. These are particularly useful in enclosed environments such as houses, offices, theatres, aeroplanes, and other modes of transport."

Using an in-situ growth technique for ZIF-8 and ZIF-67 nanocrystals on carboxymethylated cotton fabric and a quick water-based textile finishing approach, researchers at IIT Delhi have produced a low-cost cotton fabric capable of adsorbing 400–600% more VOCs than conventional cotton fabrics.

Additionally, these textiles are durable and can survive even the most rigorous washing conditions. They are reusable and can be utilised to create effective filters and pollution-controlling upholstery fabrics, among other things.

On the basis of the fabric's weight, the ZIF-8 functionalized fabric adsorbs a maximum of 19.89 mg/g aniline, 24.88 mg/g benzene, and 11.16 mg/g styrene. These textiles could be easily regenerated by heating them to 120 °C and reused for numerous cycles without losing their adsorption capability.

According to Hardeep Singh, a researcher who conducted extensive studies to produce these fabrics, porous elements such as activated carbon, zeolites, and Metal-Organic Frameworks (MOFs) are capable of adsorbing volatile organic compounds (VOCs) from the air. The MOFs can be modified to produce fabrics with antimicrobial, biomedical, particulate matter filtering, fuel filtering, chemical warfare protection, and UV radiation absorption capabilities. ZIFs, in particular, are more adapted to Indian climates.

उद्योग, स्टार्टअप और अकादमिक जगत को सशक्त करेंगे 'साथी' केंद्र

डीएसटी ने चार वर्षों तक हर साल पाँच 'साथी' केंद्रों की स्थापना की योजना बनायी है। इन केंद्रों द्वारा महंगे उपकरणों की पहुँच, उनके रखरखाव, संसाधनों के समुचित उपयोग को सुनिश्चित करने के साथसाथ दोहराव जैसी समस्याओं का - समाधान हो सकेगा।

India Science Wire 25 Aug 2021

सगंध तेलों में मिलावट की समस्या के समाधान और अरोमा इंडस्ट्री की जरूरतों पर चर्चा के लिए कन्नौज स्थित 'सुगंध और सुरस विकास केंद्र'के निदेशक एस-शुक्ला ने हाल में बीएचयू स्थित डीएसटी .वी.'साथी' कार्यक्रम की आईआरएमएस सुविधा का दौरा किया

देश में विज्ञान और प्रौद्योगिकी आधारित नवाचार को बढ़ावा देने के लिए भारत सरकार द्वारा कई तरह के प्रयास किए जा रहे हैं। ऐसी ही एक पहल है साथी केंद्र।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्रालय के अधीन कार्यरत विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग द्वारा शुरू की गई (डीएसटी) "Sophisticated Analytical & Technical Help Institutes (SATHI)" योजना इस पहल में शामिल है।

परिष्कृत विश्लेषणात्मक और तकनीकी सहायता संस्थान)'साथी') योजना के अंतर्गत देश के अलगअलग हिस्सों में शुरू - होने वाले विभिन्न'साथी' केंद्रों में हाई ग उपकरण स्थापित किए जा रहे हैं।ऐंड एनालिटिकल टेस्टिं-'साथी' केंद्र उद्योगों, मैन्यूफैक्चरिंग इकाइयों, शोध एवं विकास प्रयोगशालाओं, स्टार्टअप; सूक्ष्म,लघु एवं मध्यम उद्यमों और अकादमिक संस्थानों को उत्कृष्ट ढांचा उपलब्ध कराने के लिए स्थापित किए जा रहे हैं।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभागके सचिव प्रोफेसर आशुतोष शर्मा ने हाल में अपने एक ट्वीट में बताया है (डीएसटी), "उद्योगों, स्टार्टअप कंपनियों; सूक्ष्म,लघु एवं मध्यम उद्यमों और अकादमिक संस्थानों की विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी आधारित आवश्यकता को पूरा करने और उनकी मदद के लिए प्रत्येक 'साथी' केंद्रलगभग 125 करोड़ रुपये के निवेश से स्थापित किया जा रहा है।"

डीएसटी ने चार वर्षों तक हर साल पाँच 'साथी' केंद्रों की स्थापना की योजना बनायी है। इन केंद्रों द्वारा महंगे उपकरणों की पहुँच, उनके रखरखाव, संसाधनों के समुचित उपयोग को सुनिश्चित करने के साथसाथ दोहराव जैसी समस्याओं का - साथ सीमित अवसंरचना वाले संस्थानों तक प्रभावी संसाधनों की पहुँच को सुन-समाधान हो सकेगा। इसी के साथिश्चित करने के प्रयासों को मजबूती भी मिल सकेगी।

इस प्रकार के तीन केंद्र 375 करोड़ रुपये की लागत से आईआईटी खड़गपुर, आईआटी दिल्ली और बीएचयू में स्थापित किए गए हैं।'साथी'केंद्रों को 24 घंटे और सप्ताह के सातों दिन पूरे वर्ष निरंतर कार्य करने के उद्देश्य के साथ स्थापित किया जा रहा है। ऐसे में,शैक्षणिक संस्थानों तथा स्टार्टअप्स को इन केंद्रों का विशेष लाभ मिलसकता है। इसका उद्देश्य वैश्विक नेतृत्व के लक्ष्य से विज्ञान और प्रौद्योगिकी के अत्याधुनिक क्षेत्रों में क्षमता बढ़ाना है।

आईआईटी दिल्ली का'साथी' केंद्र विशेषज्ञ सलाह प्रदान करने के साथसाथ नवाचार-, प्रोटोटाइप एवं उत्पाद विकास की दिशा में उद्यमिता विकास, लघु वमध्यम उद्योगों को मदद तथा प्रोत्साहन देने के लिए निर्माण, परीक्षण व परिष्कृत विश्लेषणात्मक सुविधाएं प्रदान कर रहा है। 'साथी'योजना के अंतर्गत दी जाने वाली ये सभी सुविधाएंआईआईटी दिल्ली के सोनीपत परिसर में मिल सकेंगी।

आईआईटी खड़गपुर के सुविधा केंद्र से जुड़े रबीब्रत मुखर्जी ने कहा है, "आईआईटी खड़गपुर देश में विज्ञान आधारित उद्यमिता और स्टार्टअप की संस्कृति को बढ़ावा देने के लिए साथी केंद्र को अपने सामाजिक वैज्ञानिक उत्तरदायित्व आईआईटी खड़गपुर केएक वक्तव्य में कुछ समय पूर्वबताया गया है कि अन्य "कार्यक्रम के रूप में मानता है। (एसएसआर)

क संस्थानोंशैक्षणि, राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं, स्टार्टअप कंपनियों, उद्यमियों और उद्योगों समेत बाहरी उपयोगकर्ताओं के लिए'साथी'केंद्र में उपकरणों के उपयोग हेतु कम से कम 70 प्रतिशत समय आरक्षित होगा।इस सुविधा में विज्ञान और प्रौद्योगिकी आधारित कन्वर्जेंस के कई प्रमुख क्षेत्र जैसेचिकित्सा विज्ञान -, सॉफ्ट मैटेरियल्स, संरचनात्मक और सुरक्षा इंजीनियरिंग, क्वांटम फोटोनिक्स, उन्नत संचार और नैनो प्रौद्योगिकी शामिल हैं।

बीएचयू स्थित डीएसटी समर्थित 'साथी' केंद्र में भी शिक्षाविदों, शोधकर्ताओं, वैज्ञानिकों, छात्रों, स्टार्टअप, विनिर्माण इकाइयों, उद्योगों और अनुसंधान एवं विकास प्रयोगशालाओं की वैज्ञानिक और विश्लेषणात्मक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए एक ही छत के नीचे उच्च स्तरीय सुविधाएं उपलब्ध करायी जाएंगी। 'साथी'-बीएचयू केंद्र अभिनव और प्रभावी अनुसंधान आउटपुट के लिए विशेषज्ञता प्रदान करेगा। यह केंद्र मुख्य रूप से फूड टेस्टिंग, न्यूट्रास्यूटिकल्स, ड्रग्स, जीएलपी प्रमाणीकरण एवं एनएबीएल मान्यता के तहत दवाओं, जैविक सामग्री एवं मैटेरियल्स के परीक्षण से संबंधित विश्व स्तरीय विश्लेषणात्मक सेवाएं प्रदान करके भारतीय उद्योग की जरूरतों को पूरा करेगा।

इस पहल के बारे में माना जा रहा है कि इससे शोध व विकास, नवाचारों और विशेषज्ञता का लाभ उठाने के लिए विभिन्न संस्थानों के बीच सहयोग की एक मजबूत संस्कृति को बढ़ावा मिल सकता है।

"उद्योग, स्टार्टअप और अकादमिक जगत को सशक्त करेंगे 'साथी' केंद्र"

24/08/2021 V3news India

नई दिल्ली, 24 अगस्त देश में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी आधारित नवाचार को बढ़ावा देने के लिए :(इंडिया साइंस वायर) न और प्रौद्योगिकी मंत्रालय के अधीन कार्यरत विज्ञान एवं भारत सरकार द्वारा कई तरह के प्रयास किए जा रहे हैं। विज्ञा द्वारा शुरू की गई (डीएसटी) प्रौद्योगिकी विभाग"Sophisticated Analytical & Technical Help Institutes (SATHI)" योजना इस पहल में शामिल है।

परिष्कृत विश्लेषणात्मक और तकनीकी सहायता संस्थान)'साथी') योजना के अंतर्गत देश के अलगअलग हिस्सों में शुरू होने - वाले विभिन्न'साथी' केंद्रों में हाईऐंड एनालिटिकल टेस्टि-ंग उपकरण स्थापित किए जा रहे हैं। 'साथी' केंद्र उद्योगों, मैन्यफैक्चरिंग इकाइयों, शोध एवं विकास प्रयोगशालाओं, स्टार्टअप; सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों और अकादमिक संस्थानों को उत्कृष्ट ढांचा उपलब्ध कराने के लिए स्थापित किए जा रहे हैं।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के सचिव प्रोफेसर आशुतोष शर्मा ने हाल में अपने एक ट्वीट में बताया है कि (डीएसटी) "उद्योगों, स्टार्टअप कंपनियों; सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों और अकादमिक संस्थानों की विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी आधारित

आवश्यकता को पूरा करने और उनकी मदद के लिए प्रत्येक 'साथी' केंद्र लगभग 125 करोड़ रुपये के निवेश से स्थापित किया जा रहा है।"

डीएसटी ने चार वर्षों तक हर साल पाँच 'साथी' केंद्रों की स्थापना की योजना बनायी है। इन केंद्रों द्वारा महंगे उपकरणों की पहुँच, उनके रखरखाव, संसाधनों के समुचित उपयोग को सुनिश्चित करने के साथसाथ दोहराव जैसी समस्याओं का समाधान - साथ सीमित अवसंरचना वाले संस्थानों तक प्रभावी संसाधनों की पहुँच को सुनिश्चित करने के प्रयासों-हो सकेगा। इसी के साथ को मजबूती भी मिल सकेगी।

इस प्रकार के तीन केंद्र 375 करोड़ रुपये की लागत से आईआईटी खड़गपुर, आईआटी दिल्ली तथा बीएचयू में स्थापित किए गए हैं। 'साथी' केंद्रों को 24 घंटे और सप्ताह के सातों दिन पूरे वर्ष निरंतर कार्य करने के उद्देश्य के साथ स्थापित किया जा रहा है। ऐसे में, शैक्षणिक संस्थानों तथा स्टार्टअप्स को इन केंद्रों का विशेष लाभ मिल सकता है। इसका उद्देश्य वैश्विक नेतृत्व के लक्ष्य से विज्ञान और प्रौद्योगिकी के अत्याधुनिक क्षेत्रों में क्षमता बढ़ाना है।

आईआईटी दिल्ली का 'साथी' केंद्र विशेषज्ञ सलाह प्रदान करने के साथसाथ नवाचार-, प्रोटोटाइप एवं उत्पाद विकास की दिशा में उद्यमिता विकास, लघु व मध्यम उद्योगों को मदद तथा प्रोत्साहन देने के लिए निर्माण, परीक्षण व परिष्कृत विश्लेषणात्मक सुविधाएं प्रदान कर रहा है। 'साथी' योजना के अंतर्गत दी जाने वाली ये सभी सुविधाएं आईआईटी दिल्ली के सोनीपत परिसर में मिल सकेंगी।

आईआईटी खड़गपुर के सुविधा केंद्र से जुड़े रबीब्रत मुखर्जी ने कहा है, "आईआईटी खड़गपुर देश में विज्ञान आधारित उद्यमिता और स्टार्टअप की संस्कृति को बढ़ावा देने के लिए साथी केंद्र को अपने सामाजिक वैज्ञानिक उत्तरदायित्व कार्यक्रम (एसएसआर) के रूप में मानता है।" आईआईटी खड़गपुर के एक वक्तव्य में कुछ समय पूर्व बताया गया है कि अन्य शैक्षणिक संस्थानों, राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं, स्टार्टअप कंपनियों, उद्यमियों और उद्योगों समेत बाहरी उपयोगकर्ताओं के लिए 'साथी' केंद्र में उपकरणों के उपयोग हेतु कम से कम 70 प्रतिशत समय आरक्षित होगा।

इस सुविधा में विज्ञान और प्रौद्योगिकी आधारित कन्वर्जेंस के कई प्रमुख क्षेत्र जैसेचिकित्सा विज्ञान -, सॉफ्ट मैटेरियल्स, संरचनात्मक और सुरक्षा इंजीनियरिंग, क्वांटम फोटोनिक्स, उन्नत संचार और नैनो प्रौद्योगिकी शामिल हैं। बीएचयू स्थित डीएसटी समर्थित 'साथी' केंद्र में भी शिक्षाविदों, शोधकर्ताओं, वैज्ञानिकों, छात्रों, स्टार्टअप, विनिर्माण इकाइयों, उद्योगों और अनुसंधान एवं विकास प्रयोगशालाओं की वैज्ञानिक और विश्लेषणात्मक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए एक ही छत के नीचे उच्च स्तरीय सुविधाएं उपलब्ध करायी जाएंगी।

'साथी'-बीएचयू केंद्र अभिनव और प्रभावी अनुसंधान आउटपुट के लिए विशेषज्ञता प्रदान करेगा। यह केंद्र मुख्य रूप से फूड टेस्टिंग, न्यूट्रास्यूटिकल्स, ड्रग्स, जीएलपी प्रमाणीकरण एवं एनएबीएल मान्यता के तहत दवाओं, जैविक सामग्री एवं मैटेरियल्स के परीक्षण से संबंधित विश्व स्तरीय विश्लेषणात्मक सेवाएं प्रदान करके भारतीय उद्योग की जरूरतों को पूरा करेगा। इस पहल के बारे में माना जा रहा है कि इससे शोध एवं विकास, नवाचारों और विशेषज्ञता का लाभ उठाने के लिए विभिन्न संस्थानों के बीच सहयोग की एक मजबूत संस्कृति को बढ़ावा मिल सकता है।

दी इंडियन बुलेटिन

“उद्योग, स्टार्टअप और अकादमिक जगत को सशक्त करेंगे ‘साथी’ केंद्र”

3 weeks ago

सगंध तेलों में मिलावट की समस्या के समाधान और अरोमा इंडस्ट्री की जरूरतों पर चर्चा के लिए कन्नौज स्थित ‘सुगंध और सुरस विकास केंद्र’के निदेशक एस .वी. -शुक्ला ने हाल में बीएचयू स्थित डीएसटी‘साथी’ कार्यक्रम की आईआरएमएस सुविधा का दौरा किया

नई दिल्ली: देश में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी आधारित नवाचार को बढ़ावा देने के लिए भारत सरकार द्वारा कई तरह के प्रयास किए जा रहे हैं। विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्रालय के अधीन कार्यरत विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग गई की शुरू द्वारा (डीएसटी) “Sophisticated Analytical & Technical Help Institutes (SATHI)” योजना इस पहल में शामिल है। परिष्कृत विश्लेषणात्मक और तकनीकी सहायता संस्थान)‘साथी’) योजना के अंतर्गत देश के अलग विभिन्न वाले होने शुरू में हिस्सों अलग-‘साथी’ केंद्रों में हाई-रहे जा किए स्थापित उपकरण टेस्टिंग एनालिटिकल ऐंड हैं। ‘साथी’ केंद्र उद्योगों, मैन्यफैक्चरिंग इकाइयों, शोध एवं विकास प्रयोगशालाओं, स्टार्टअप; सूक्ष्म,लघु एवं मध्यम उद्यमों और अकादमिक संस्थानों को उत्कृष्ट ढांचा उपलब्ध कराने के लिए स्थापित किए जा रहे हैं।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभागप्र सचिव के (डीएसटी)ोफेसर आशुतोष शर्मा ने हाल में अपने एक ट्वीट में बताया है कि “उद्योगों, स्टार्टअप कंपनियों; सूक्ष्म,लघु एवं मध्यम उद्यमों और अकादमिक संस्थानों की विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी आधारित आवश्यकता को पूरा करने और उनकी मदद के लिए प्रत्येक ‘साथी’ केंद्रलगभग 125 करोड़ रुपये के निवेश से स्थापित किया जा रहा है।”

डीएसटीने चार वर्षों तक हर साल पाँच ‘साथी’केंद्रों की स्थापना की योजना बनायी है। इन केंद्रों द्वारा महंगे उपकरणों की पहुँच, उनके रखरखाव, संसाधनों के समुचित उपयोग को सुनिश्चित करने के साथ का समस्याओं जैसी दोहराव साथ-समाधान हो सकेगा। इसी के साथ लमि भी मजबूती को प्रयासों के करने सुनिश्चित को पहुँच की संसाधनों प्रभावी तक संस्थानों वाले अवसंरचना सीमित साथ- तीनकेंद्र के प्रकार इस सकेगी।375 करोड़ रुपये की लागत से आईआईटीखड़गपुर, आईआटी दिल्ली तथा बीएचयू में स्थापित किए गए हैं।‘साथी’केंद्रों को 24 घंटे और सप्ताह के सातों दिन पूरेवर्ष निरंतरकार्य करने के उद्देश्य के साथ स्थापित किया जा रहा है। ऐसे में,शैक्षणिक संस्थानों तथा स्टार्टअप्स को इन केंद्रों का विशेष लाभ मिलसकता है। इसका उद्देश्य वैश्विक नेतृत्व के लक्ष्य से विज्ञान और प्रौद्योगिकी के अत्याधुनिक क्षेत्रों में क्षमता बढ़ाना है।

आईआईटीदिल्ली का‘साथी’ केंद्र विशेषज्ञ सलाह प्रदान करने के साथनवाचार साथ-, प्रोटोटाइप एवं उत्पाद विकास की दिशा में उद्यमिता विकास, लघु वमध्यम उद्योगों को मदद तथा प्रोत्साहन देने के लिए निर्माण, परीक्षण व परिष्कृत विश्लेषणात्मक सुविधाएं प्रदान कर रहा है। ‘साथी’योजना के अंतर्गत दी जाने वाली ये सभी सुविधाएंआईआईटी दिल्ली के सोनीपत परिसर में मिल सकेंगी।

आईआईटी खड़गपुर के सुविधा केंद्र से जुड़े रबीब्रत मुखर्जी ने कहा है, “आईआईटी खड़गपुर देश में विज्ञान आधारित उद्यमिता और स्टार्टअप की संस्कृति को बढ़ावा देने के लिए साथी केंद्र को अपने सामाजिक वैज्ञानिक उत्तरदायित्व में रूप के कार्यक्रम (एसएसआर) है। मानता”आईआईटी खड़गपुर केएक वक्तव्य में कुछ समय पूर्वबताया गया है कि अन्य शैक्षणिक संस्थानों, राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं, स्टार्टअप कंपनियों, उद्यमियों और उद्योगों समेत बाहरी उपयोगकर्ताओं के लिए‘साथी’केंद्र में उपकरणों के उपयोग हेतु कम से कम 70 प्रतिशत समय आरक्षित होगा।इस सुविधा में विज्ञान और प्रौद्योगिकी आधारित कन्वर्जेंस के कई प्रमुख क्षेत्र जैसेविज्ञान चिकित्सा -, सॉफ्ट मैटेरियल्स, संरचनात्मक और सुरक्षा इंजीनियरिंग, क्वांटम फोटोनिक्स, उन्नत संचार और नैनो प्रौद्योगिकी शामिल हैं।

बीएचयू स्थित डीएसटी समर्थित ‘साथी’ केंद्र में भी शिक्षाविदों, शोधकर्ताओं, वैज्ञानिकों, छात्रों, स्टार्टअप, विनिर्माण इकाइयों, उद्योगों और अनुसंधान एवं विकास प्रयोगशालाओं की वैज्ञानिक और विश्लेषणात्मक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए एक ही छत के नीचे उच्च स्तरीय सुविधाएं उपलब्ध करायी जाएंगी। ‘साथी’-बीएचयू केंद्र अभिनव और प्रभावी अनुसंधान आउटपुट के लिए विशेषज्ञता प्रदान करेगा। यह केंद्र मुख्य रूप से फूड टेस्टिंग, न्यूट्रास्यूटिकल्स, ड्रग्स, जीएलपी प्रमाणीकरण एवं एनएबीएल मान्यता के तहत दवाओं, जैविक सामग्री एवं मैटेरियल्स के परीक्षण से संबंधित विश्व स्तरीय विश्लेषणात्मक सेवाएं प्रदान करके भारतीय उद्योग की जरूरतों को पूरा करेगा।

इस पहल के बारे में माना जा रहा है कि इससे शोध एवं विकास, नवाचारों और विशेषज्ञता का लाभ उठाने के लिए विभिन्न संस्थानों के बीच सहयोग की एक मजबूत संस्कृति को बढ़ावा मिल सकता है। (वायर साइंस इंडिया)

राष्ट्रीय रक्षक

“उद्योग, स्टार्टअप और अकादमिक जगत को सशक्त करेंगे ‘साथी’ केंद्र”

लेखक: Snigdha Verma - अगस्त 24, 2021

गंध तेलों में मिलावट की समस्या के समाधान और अरोमा इंडस्ट्री की जरूरतों पर चर्चा के लिए कन्नौज स्थित 'सुगंध और सुरस विकास केंद्र' के निदेशक डा.वी. शुक्ला ने हाल में बीएचयू स्थित डीएसटी-'साथी' कार्यक्रम की आईआरएमएस सुविधा का दौरा किया

नई दिल्ली देश में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी आधारित नवाचार को बढ़ावा देने के लिए भारत सरकार द्वारा कई तरह : जा रहे हैं। विज्ञान और प् के प्रयास किएरौद्योगिकी मंत्रालय के अधीन कार्यरत विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग द्वारा शुरू की गई (डीएसटी)“Sophisticated Analytical & Technical Help Institutes (SATHI)” योजना इस पहल में शामिल है। परिष्कृत विश्लेषणात्मक और तकनीकी सहायता संस्थान)‘साथी’) योजना के अंतर्गत देश के अलग अलग हिस्सों में शुरू होने वाले विभिन्न-‘साथी’ केंद्रों में हाईऐंड एनालिटिकल टेस्टिंग उपकरण स्थापित किए - जा रहे हैं।‘साथी’ केंद्र उद्योगों, मैन्यफैक्चरिंग इकाइयों, शोध एवं विकास प्रयोगशालाओं, स्टार्टअप; सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों और अकादमिक संस्थानों को उत्कृष्ट ढांचा उपलब्ध कराने के लिए स्थापित किए जा रहे हैं।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के सचिव प्रोफेसर आशुतोष शर्मा ने हाल में अपने एक ट्वीट में बताया है (डीएसटी) कि“उद्योगों, स्टार्टअप कंपनियों; सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम उद्यमों और अकादमिक संस्थानों की विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी आधारित आवश्यकता को पूरा करने और उनकी मदद के लिए प्रत्येक ‘साथी’ केंद्र लगभग 125 करोड़ रुपये के निवेश से स्थापित किया जा रहा है।”

डीएसटी ने चार वर्षों तक हर साल पाँच ‘साथी’ केंद्रों की स्थापना की योजना बनायी है। इन केंद्रों द्वारा महंगे उपकरणों की पहुँच, उनके रखरखाव, संसाधनों के समुचित उपयोग को सुनिश्चित करने के साथसाथ दोहराव जैसी - साथ सीमित अवसंरचना वाले संस्थानों तक प्रभावी संसाधनों की -समस्याओं का समाधान हो सकेगा। इसी के साथ त करने कपहुँच को सुनिश्चि े प्रयासों को मजबूती भी मिल सकेगी। इस प्रकार के तीन केंद्र 375 करोड़ रुपये की लागत से आईआईटी खड़गपुर, आईआटी दिल्ली तथा बीएचयू में स्थापित किए गए हैं। ‘साथी’ केंद्रों को 24 घंटे और सप्ताह के सातों दिन पूरे वर्ष निरंतर कार्य करने के उद्देश्य के साथ स्थापित किया जा रहा है। ऐसे में, शैक्षणिक

संस्थानों तथा स्टार्टअप्स को इन केंद्रों का विशेष लाभ मिल सकता है। इसका उद्देश्य वैश्विक नेतृत्व के लक्ष्य से विज्ञान और प्रौद्योगिकी के अत्याधुनिक क्षेत्रों में क्षमता बढ़ाना है।

आईआईटी दिल्ली का 'साथी' केंद्र विशेषज्ञ सलाह प्रदान करने के साथसाथ नवाचार-, प्रोटोटाइप एवं उत्पाद विकास की दिशा में उद्यमिता विकास, लघु व मध्यम उद्योगों को मदद तथा प्रोत्साहन देने के लिए निर्माण, परीक्षण व परिष्कृत विश्लेषणात्मक सुविधाएं प्रदान कर रहा है। 'साथी' योजना के अंतर्गत दी जाने वाली ये सभी सुविधाएं आईआईटी दिल्ली के सोनीपत परिसर में मिल सकेंगी।

आईआईटी खड़गपुर के सुविधा केंद्र से जुड़े रबीब्रत मुखर्जी ने कहा है, "आईआईटी खड़गपुर देश में विज्ञान आधारित उद्यमिता और स्टार्टअप की संस्कृति को बढ़ावा देने के लिए साथी केंद्र को अपने सामाजिक वैज्ञानिक उत्तरदायित्व आईआईटी खड़गपुर के एक वक्तव्य में कुछ समय पूर्व बताया गया है कि "कार्यक्रम के रूप में मानता है। (एसएसआर) अन्य शैक्षणिक संस्थानों, राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं, स्टार्टअप कंपनियों, उद्यमियों और उद्योगों समेत बाहरी उपयोगकर्ताओं के लिए 'साथी' केंद्र में उपकरणों के उपयोग हेतु कम से कम 70 प्रतिशत समय आरक्षित होगा। इस सुविधा में विज्ञान और प्रौद्योगिकी आधारित कन्वर्जेंस के कई प्रमुख क्षेत्र जैसेचिकित्सा विज्ञान -, सॉफ्ट मैटेरियल्स, संरचनात्मक और सुरक्षा इंजीनियरिंग, क्वांटम फोटोनिक्स, उन्नत संचार और नैनो प्रौद्योगिकी शामिल हैं।

बीएचयू स्थित डीएसटी समर्थित 'साथी' केंद्र में भी शिक्षाविदों, शोधकर्ताओं, वैज्ञानिकों, छात्रों, स्टार्टअप, विनिर्माण इकाइयों, उद्योगों और अनुसंधान एवं विकास प्रयोगशालाओं की वैज्ञानिक और विश्लेषणात्मक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए एक ही छत के नीचे उच्च स्तरीय सुविधाएं उपलब्ध करायी जाएंगी। 'साथी'-बीएचयू केंद्र अभिनव और प्रभावी अनुसंधान आउटपुट के लिए विशेषज्ञता प्रदान करेगा। यह केंद्र मुख्य रूप से फूड टेस्टिंग, न्यूट्रास्यूटिकल्स, ड्रग्स, जीएलपी प्रमाणीकरण एवं एनएबीएल मान्यता के तहत दवाओं, जैविक सामग्री एवं मैटेरियल्स के परीक्षण से संबंधित विश्व स्तरीय विश्लेषणात्मक सेवाएं प्रदान करके भारतीय उद्योग की जरूरतों को पूरा करेगा।

इस पहल के बारे में माना जा रहा है कि इससे शोध एवं विकास, नवाचारों और विशेषज्ञता का लाभ उठाने के लिए विभिन्न संस्थानों के बीच सहयोग की एक मजबूत संस्कृति को बढ़ावा मिल सकता है। (इंडिया साइंस वायर)

रिपब्लिक न्यूज़इंडिया

"उद्योग, स्टार्टअप और अकादमिक जगत को सशक्त करेंगे 'साथी' केंद्र"

By **Rupesh Dharmik** - August 25, 2021

सगंध तेलों में मिलावट की समस्या के समाधान और अरोमा इंडस्ट्री की जरूरतों पर चर्चा के लिए कन्नौज स्थित 'सुगंध और सुरस विकास केंद्र'के निदेशक एस-शुक्ला ने हाल में बीएचयू स्थित डीएसटी .वी.'साथी' कार्यक्रम की आईआरएमएस सुविधा का दौरा किया

नई दिल्ली: देश में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी आधारित नवाचार को बढ़ावा देने के लिए भारत सरकार द्वारा कई तरह के प्रयास किए जा रहे हैं। विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्रालय के अधीन कार्यरत विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग द्वारा शुरू की गई (डीएसटी)"Sophisticated Analytical & Technical Help Institutes (SATHI)" योजना इस पहल में शामिल है। परिष्कृत विश्लेषणात्मक और तकनीकी सहायता संस्थान)'साथी') योजना के अंतर्गत देश के अलग अलग हिस्सों में शुरू होने वाले विभिन्न-'साथी' केंद्रों में हाईऐंड एनालिटिकल टेस्टिंग - उपकरण स्थापित किए जा रहे हैं। 'साथी' केंद्र उद्योगों, मैन्यफैक्चरिंग इकाइयों, शोध एवं विकास प्रयोगशालाओं, स्टार्टअप; सूक्ष्म,लघु एवं मध्यम उद्यमों और अकादमिक संस्थानों को उत्कृष्ट ढांचा उपलब्ध कराने के लिए स्थापित किए जा रहे हैं।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग के (डीएसटी)सचिव प्रोफेसर आशुतोष शर्मा ने हाल में अपने एक ट्वीट में बताया है कि "उद्योगों, स्टार्टअप कंपनियों; सूक्ष्म,लघु एवं मध्यम उद्यमों और अकादमिक संस्थानों की विज्ञान

एवं प्रौद्योगिकी आधारित आवश्यकता को पूरा करने और उनकी मदद के लिए प्रत्येक ‘साथी’ केंद्रलगभग 125 करोड़ रुपये के निवेश से स्थापित किया जा रहा है।”

डीएसटीने चार वर्षों तक हर साल पाँच ‘साथी’केंद्रों की स्थापना की योजना बनायी है। इन केंद्रों द्वारा महंगे उपकरणों की पहुँच, उनके रखरखाव, संसाधनों के समुचित उपयोग को सुनिश्चित करने के साथसाथ दोहराव - जैसी समस्याओं का समाधान हो सकेगा। इसी के साथसाथ सीमित अवसंरचना वाले संस्थानों तक प्रभावी - संसाधनों की पहुँच को सुनिश्चित करने के प्रयासों को मजबूती भी मिल सकेगी। इस प्रकार के तीनकेंद्र375 करोड़ रुपये की लागत से आईआईटीखड़गपुर, आईआटी दिल्ली तथा बीएचयू में स्थापित किए गए हैं।‘साथी’केंद्रों को 24 घंटे और सप्ताह के सातों दिन पूरेवर्ष निरंतरकार्य करने के उद्देश्य के साथ स्थापित किया जा रहा है। ऐसे में,शैक्षणिक संस्थानों तथा स्टार्टअप्स को इन केंद्रों का विशेष लाभ मिलसकता है। इसका उद्देश्य वैश्विक नेतृत्व के लक्ष्य से विज्ञान और प्रौद्योगिकी के अत्याधुनिक क्षेत्रों में क्षमता बढ़ाना है।

आईआईटीदिल्ली का‘साथी’ केंद्र विशेषज्ञ सलाह प्रदान करने के साथसाथ नवाचार-, प्रोटोटाइप एवं उत्पाद विकास की दिशा में उद्यमिता विकास, लघु वमध्यम उद्योगों को मदद तथा प्रोत्साहन देने के लिए निर्माण, परीक्षण व परिष्कृत विश्लेषणात्मक सुविधाएं प्रदान कर रहा है। ‘साथी’योजना के अंतर्गत दी जाने वाली ये सभी सुविधाएंआईआईटी दिल्ली के सोनीपत परिसर में मिल सकेंगी।

आईआईटी खड़गपुर के सुविधा केंद्र से जुड़े रबीब्रत मुखर्जी ने कहा है, “आईआईटी खड़गपुर देश में विज्ञान आधारित उद्यमिता और स्टार्टअप की संस्कृति को बढ़ावा देने के लिए साथी केंद्र को अपने सामाजिक वैज्ञानिक उत्तरदायित्व कार्यक्रम के रूप में मानता है। (एसएसआर)”आईआईटी खड़गपुर केएक वक्तव्य में कुछ समय पूर्वबताया गया है कि अन्य शैक्षणिक संस्थानों, राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं, स्टार्टअप कंपनियों, उद्यमियों और उद्योगों समेत बाहरी उपयोगकर्ताओं के लिए‘साथी’केंद्र में उपकरणों के उपयोग हेतु कम से कम 70 प्रतिशत समय आरक्षित होगा।इस सुविधा में विज्ञान और प्रौद्योगिकी आधारित कन्वर्जेंस के कई प्रमुख क्षेत्र जैसे - चिकित्सा विज्ञ◌ान, सॉफ्ट मैटेरियल्स, संरचनात्मक और सुरक्षा इंजीनियरिंग, क्वांटम फोटोनिक्स, उन्नत संचार और नैनो प्रौद्योगिकी शामिल हैं।

बीएचयू स्थित डीएसटी समर्थित ‘साथी’ केंद्र में भी शिक्षाविदों, शोधकर्ताओं, वैज्ञानिकों, छात्रों, स्टार्टअप, विनिर्माण इकाइयों, उद्योगों और अनुसंधान एवं विकास प्रयोगशालाओं की वैज्ञानिक और विश्लेषणात्मक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए एक ही छत के नीचे उच्च स्तरीय सुविधाएं उपलब्ध करायी जाएंगी। ‘साथी’-बीएचयू केंद्र अभिनव और प्रभावी अनुसंधान आउटपुट के लिए विशेषज्ञता प्रदान करेगा। यह केंद्र मुख्य रूप से फूड टेस्टिंग, न्यूट्रास्यूटिकल्स, ड्रग्स, जीएलपी प्रमाणीकरण एवं एनएबीएल मान्यता के तहत दवाओं, जैविक सामग्री एवं मैटेरियल्स के परीक्षण से संबंधित विश्व स्तरीय विश्लेषणात्मक सेवाएं प्रदान करके भारतीय उद्योग की जरूरतों को पूरा करेगा।

इस पहल के बारे में माना जा रहा है कि इससे शोध एवं विकास, नवाचारों और विशेषज्ञता का लाभ उठाने के लिए विभिन्न संस्थानों के बीच सहयोग की एक मजबूत संस्कृति को बढ़ावा मिल सकता है। इंडिया साइंस)
(वायर

"उद्योग, स्टार्टअप और अकादमिक जगत को सशक्त करेंगे 'साथी' केंद्र"

By RD Times Hindi | August 25, 2021

सगंध तेलों में मिलावट की समस्या के समाधान और अरोमा इंडस्ट्री की जरूरतों पर चर्चा के लिए कन्नौज स्थित 'सुगंध और सुरस विकास केंद्र'के निदेशक एस शुक्ला ने हाल .वी.में बीएचयू स्थित डीएसटी-'साथी' कार्यक्रम की आईआरएमएस सुविधा का दौरा किया

नई दिल्ली: देश में विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी आधारित नवाचार को बढ़ावा देने के लिए भारत सरकार द्वारा कई तरह के प्रयास किए जा रहे हैं। विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्रालय के अधीन कार्यरत विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभाग द्वारा शुरू की गई (डीएसटी)"Sophisticated Analytical & Technical Help Institutes (SATHI)" योजना इस पहल में शामिल है। परिष्कृत विश्लेषणात्मक और तकनीकी सहायता संस्थान)'साथी') योजना के अंतर्गत देश के अलग अलग हिस्सों में शुरू होने-वाले विभिन्न 'साथी' केंद्रों में हाईऐंड एनालिटिकल टेस्टिंग - उपकरण स्थापित किए जा रहे हैं।'साथी' केंद्र उद्योगों, मैन्यफैक्चरिंग इकाइयों, शोध एवं विकास प्रयोगशालाओं, स्टार्टअप; सूक्ष्म,लघु एवं मध्यम उद्यमों और अकादमिक संस्थानों को उत्कृष्ट ढांचा उपलब्ध कराने के लिए स्थापित किए जा रहे हैं।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी विभागके सचिव प्रोफेसर आशुतोष शर्मा ने हाल में अपने एक ट्वीट में (डीएसटी) बताया है कि"उद्योगों, स्टार्टअप कंपनियों; सूक्ष्म,लघु एवं मध्यम उद्यमों और अकादमिक संस्थानों की विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी आधारित आवश्यकता को पूरा करने और उनकी मदद के लिए प्रत्येक 'साथी' केंद्रलगभग 125 करोड़ रुपये के निवेश से स्थापित किया जा रहा है।"

डीएसटीने चार वर्षों तक हर साल पाँच ‘साथी’केंद्रों की स्थापना की योजना बनायी है। इन केंद्रों द्वारा महंगे उपकरणों की पहुँच, उनके रखरखाव, संसाधनों के समुचित उपयोग को सुनिश्चित करने के साथसाथ दोहराव -साथ सीमित अवसंरचना वाले संस्थानों तक प्रभावी -जैसी समस्याओं का समाधान हो सकेगा। इसी के साथ संसाधनों की पहुँच को सुनिश्‌चित करने के प्रयासों को मजबूती भी मिल सकेगी। इस प्रकार के तीनकेंद्र 375 करोड़ रुपये की लागत से आईआईटीखड़गपुर, आईआटी दिल्ली तथा बीएचयू में स्थापित किए गए हैं।‘साथी’केंद्रों को 24 घंटे और सप्ताह के सातों दिन पूरेवर्ष निरंतरकार्य करने के उद्देश्य के साथ स्थापित किया जा रहा है। ऐसे में,शैक्षणिक संस्थानों तथा स्टार्टअप्स को इन केंद्रों का विशेष लाभ मिलसकता है। इसका उद्देश्य वैश्विक नेतृत्व के लक्ष्य से विज्ञान और प्रौद्योगिकी के अत्याधुनिक क्षेत्रों में क्षमता बढ़ाना है।

आईआईटीदिल्ली का‘साथी’ केंद्र विशेषज्ञ सलाह प्रदान करने के साथसाथ नवाचार-, प्रोटोटाइप एवं उत्पाद विकास की दिशा में उद्यमिता विकास, लघु वमध्यम उद्योगों को मदद तथा प्रोत्साहन देने के लिए निर्माण, परीक्षण व परिष्कृत विश्लेषणात्मक सुविधाएं प्रदान कर रहा है। ‘साथी’योजना के अंतर्गत दी जाने वाली ये सभी सुविधाएंआईआईटी दिल्ली के सोनीपत परिसर में मिल सकेंगी।

आईआईटी खड़गपुर के सुविधा केंद्र से जुड़े रबीब्रत मुखर्जी ने कहा है, “आईआईटी खड़गपुर देश में विज्ञान आधारित उद्यमिता और स्टार्टअप की संस्कृति को बढ़ावा देने के लिए साथी केंद्र को अपने सामाजिक वैज्ञानिक उत्तरदायित्व कार्यक्रम के रूप में मानता है। (एसएसआर)”आईआईटी खड़गपुर केएक वक्तव्य में कुछ समय पूर्वबताया गया है कि अन्य शैक्षणिक संस्थानों, राष्ट्रीय प्रयोगशालाओं, स्टार्टअप कंपनियों, उद्यमियों और उद्योगों समेत बाहरी उपयोगकर्ताओं के लिए‘साथी’केंद्र में उपकरणों के उपयोग हेतु कम से कम 70 प्रतिशत समय आरक्षित होगा।इस सुविधा में विज्ञान और प्रौद्योगिकी आधारित कन्वर्जेंस के कई प्रमुख क्षेत्र जैसे -चिकित्सा विज्ञान, सॉफ्ट मैटेरियल्स, संरचनात्मक और सुरक्षा इंजीनियरिंग, क्वांटम फोटोनिक्स, उन्नत संचार और नैनो प्रौद्योगिकी शामिल हैं।

बीएचयू स्थित डीएसटी समर्थित ‘साथी’ केंद्र में भी शिक्षाविदों, शोधकर्ताओं, वैज्ञानिकों, छात्रों, स्टार्टअप, विनिर्माण इकाइयों, उद्योगों और अनुसंधान एवं विकास प्रयोगशालाओं की वैज्ञानिक और विश्लेषणात्मक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए एक ही छत के नीचे उच्च स्तरीय सुविधाएं उपलब्ध करायी जाएंगी। ‘साथी’-बीएचयू केंद्र अभिनव और प्रभावी अनुसंधान आउटपुट के लिए विशेषज्ञता प्रदान करेगा। यह केंद्र मुख्य रूप से फूड टेस्टिंग, न्यूट्रास्यूटिकल्स, ड्रग्स, जीएलपी प्रमाणीकरण एवं एनएबीएल मान्यता के तहत दवाओं, जैविक सामग्री एवं मैटेरियल्स के परीक्षण से संबंधित विश्व स्तरीय विश्लेषणात्मक सेवाएं प्रदान करके भारतीय उद्योग की जरूरतों को पूरा करेगा।

इस पहल के बारे में माना जा रहा है कि इससे शोध एवं विकास, नवाचारों और विशेषज्ञता का लाभ उठाने के लिए विभिन्न संस्थानों के बीच सहयोग की एक मजबूत संस्कृति को बढ़ावा मिल सकता है। इंडिया साइंस)
(वायर

Voice of the Nation
ORGANISER

First mRNA-based COVID 19 vaccine gets a nod for phase II/III trial

WEBDESK Aug 25, 2021, 12:00 AM IST

Umashankar Mishra

New Delhi: The fight against the ongoing epidemic of COVID-19 is all set to get stronger. The office of the Drug Controller General of India has approved a proposal of the Pune-based Gennova Biopharmaceuticals Ltd. to go in for phase II / III trial of the country’s first mRNA-based vaccine for COVID-19 called HGCO19.

The company had submitted the interim clinical data of the Phase I study to the Central Drugs Standard Control Organisation (CDSCO), the Government of India's National Regulatory Authority (NRA). The Vaccine Subject Expert Committee (SEC) reviewed the data and found that the vaccine was safe, tolerable, and immunogenic in the participants of the study.

Consequently, the proposal for Phase II and Phase III study for "A prospective, multicentre, randomized, active-controlled, observer-blind, phase II study seamlessly followed by a phase III study to evaluate the safety, tolerability, and immunogenicity of the candidate HGCO19 (covid-19 vaccine) in healthy subjects” was submitted that has now been approved.

The study will be conducted within India at 10-15 sites in Phase II and 22-27 sites in Phase III. Gennova plans to use the DBT-ICMR clinical trial network sites for this study.

The vaccine development program was partly funded by the Department of Biotechnology (DBT), Govt. of India under Ind CEPI, in June 2020. Later on, the DBT further supported the program under the Mission COVID Suraksha - The Indian COVID-19 Vaccine Development Mission, implemented by BIRAC.

“It is a matter of great pride that Nation’s first mRNA-based vaccine is found to be safe and the Drugs Controller General of India DCG(I) has approved Phase II/III trial. We are confident that this will be an important vaccine for both India and the world. This is an important milestone in our Indigenous Vaccine Development Mission and positions India on the Global Map for Novel Vaccine Development,” said Dr. Renu Swarup, Secretary, DBT, and Chairperson, Biotechnology Industry Research Assistance Council (BIRAC) Dr. Sanjay Singh, CEO of Gennova Biopharmaceuticals Ltd., said that “After establishing the safety of our mRNA-based COVID-19 vaccine candidate HGCO19 in Phase I clinical trial, Gennova’s focus is to start Phase II/III pivotal clinical trial. In parallel, Gennova is investing in scaling up its manufacturing capacity to cater to the nation's vaccine requirement”.

Courtesy: India Science Wire

Indus Scrolls
Indian to the core

First mRNA-based COVID 19 vaccine gets nod for phase II/III trial

By **India Science Wire** - August 24, 2021

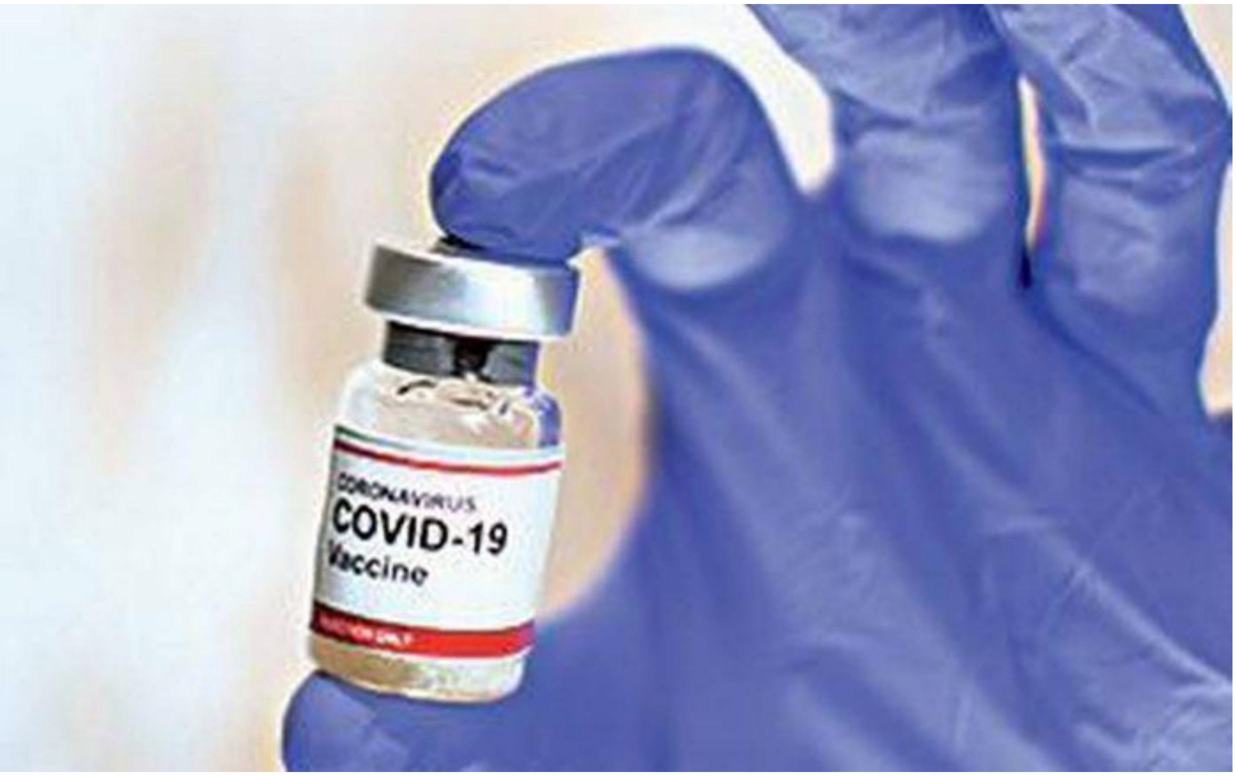

The fight against the ongoing epidemic of COVID-19 is all set to get stronger. The office of the Drug Controller General of India has approved a proposal of the Pune-based Gennova Biopharmaceuticals Ltd., to go in for phase II / III trial of the country's first mRNA-based vaccine for COVID-19 called HGCO19.

The company had submitted the interim clinical data of the Phase I study to the Central Drugs Standard Control Organisation (CDSCO), the Government of India's National Regulatory Authority (NRA). The Vaccine Subject Expert Committee (SEC) reviewed the data and found that the vaccine was safe, tolerable, and immunogenic in the participants of the study.

Consequently, the proposal for Phase II and Phase III study for "A prospective, multicentre, randomized, active-controlled, observer-blind, phase II study seamlessly followed by a phase III study to evaluate the safety, tolerability, and

immunogenicity of the candidate HGCO19 (covid-19 vaccine) in healthy subjects" was submitted that has now been approved.

The study will be conducted within India in 10-15 sites in Phase II and 22-27 sites in Phase III. Gennova plans to use the DBT-ICMR clinical trial network sites for this study.

The vaccine development program was partly funded by the Department of Biotechnology (DBT), Govt. of India under Ind CEPI, in June 2020. Later on, the DBT further supported the program under the Mission COVID Suraksha – The Indian COVID-19 Vaccine Development Mission, implemented by BIRAC.

"It is a matter of great pride that Nation's first mRNA-based vaccine is found to be safe and the Drugs Controller General of India DCG(I) has approved Phase II/III trial. We are confident that this will be an important vaccine for both India and the world. This is an important milestone in our Indigenous Vaccine Development Mission and positions India on the Global Map for Novel Vaccine Development," said Dr. Renu Swarup, Secretary, DBT, and Chairperson, Biotechnology Industry Research Assistance Council (BIRAC)

Dr. Sanjay Singh, CEO of Gennova Biopharmaceuticals Ltd., said that "After establishing the safety of our mRNA-based COVID-19 vaccine candidate HGCO19 in Phase I clinical trial, Gennova's focus is to start Phase II/III pivotal clinical trial. In parallel, Gennova is investing in scaling up its manufacturing capacity to cater to the nation's vaccine requirement".

The Weather Channel An IBM Business | THE TIMES OF INDIA

India's Indigenously Developed DNA-Based Vaccine Hailed as Potential Game-Changer in COVID-19 Fight

By India Science Wire | 26 August, 2021 | TWC India

Representational image.

(IANS)

A new chapter in the fight against the ongoing epidemic of COVID-19 has begun with the Drug Controller General of India (DCGI) giving the approval for Emergency Use Authorization (EUA) for the world's first and India's indigenously developed DNA-based COVID-19 vaccine to be administered in adults and children 12 years and above.

Developed by Ahmedabad-based pharma major ZydusCadila in partnership with the Government of India's Department of Biotechnology (DBT) under its 'Mission COVID Suraksha', the three-dose vaccine produces the spike protein of the SARS-CoV-2 virus and elicits an immune response, which plays a vital role in protection from disease as well as viral clearance.

Interim results from Phase-III Clinical Trials, in over 28,000 volunteers, showed primary efficacy of 66.6% for symptomatic RT-PCR positive cases. This has been the most prominent vaccine trial so far in India for COVID-19. The vaccine exhibited robust immunogenicity, tolerability, and

safety profile in the adaptive Phase I/II clinical trials. The Phase I/II and Phase III clinical trials have been monitored by an independent Data Safety Monitoring Board (DSMB).

Zydus group's Vaccine Technology Centre (VTC) and Translational Health Science and Technology Institute (THSTI), an autonomous institute of the Department of Biotechnology, played a vital role in this success story.

Named ZyCoV-D, the vaccine uses a section of genetic material from the virus that gives instructions to make the specific protein that the immune system recognises and responds to. The platform on which the vaccine has been developed is in the form of a rapid plug-and-play technology and can thus be easily adapted to deal with mutations in the virus.

It is a game-changer as it is an intradermal vaccine and will help those hesitant to take an injection. It will be given using PharmaJet — a needle-free applicator. Also, the vaccine can be stored at 2°C-8°C and has shown good stability at 25°C for at least three months. This makes it easy to store and transport supplies to remote locations.

It is India's first COVID-19 vaccine for adolescents (12-18 age group) and sixth in the pack of vaccines for adults. It is also the second indigenous one after Bharat Biotech-ICMR's Covaxin. The three-dose vaccine will be given at intervals of 28 days.

Reacting to the approval, Renu Swarup, Secretary, DBT, said, "It is a matter of great pride that today we have the EUA for the world's first DNA COVID-19 vaccine ZyCoV-D by Zydus developed in partnership with the Department of Biotechnology and supported through Mission COVID Suraksha. The Indian Vaccine Mission COVID Suraksha was launched under the AtmaNirbhar Bharat package 3.0, being implemented by BIRAC, aimed at developing safe and efficacious COVID-19 vaccines for public health. We are confident that this will be an important vaccine for both India and the world. This is an important milestone in our Indigenous Vaccine Development Mission and positions India on the Global Map for Novel Vaccine Development".

Chairman of the Zydus Group, Mr Pankaj R. Patel, said, "We are extremely happy that our efforts to put out a safe, well-tolerated, and efficacious vaccine to fight COVID-19 have become a reality with ZyCoV-D. To create the world's first DNA vaccine at such a crucial juncture and despite all the challenges, is a tribute to the Indian research scientists and their spirit of innovation. I'd like to thank the Department of Biotechnology, Government of India for their support in this mission of AtmaNirbhar Bharat and Indian Vaccine Mission COVID Suraksha."

Zyvox-D becomes the sixth in the COVID-19 vaccine pack to be made available in the Indian market, after Covishield from Serum Institute of India (SII), Covaxin from Bharat Biotech, Sputnik from Russia's Gamaleya Institute, Moderna's vaccine, and the most recent Johnson and Johnson's one-dose vaccine. India has set a target of vaccinating at least 90 lakh people a day, and the Zydus vaccine will help in the process. Zydus is also planning to seek approval for a two-dose regimen of the vaccine.

Vaccination primarily involves stimulating the immune system with an infectious agent, or components of an infectious agent, modified so that no harm or disease is caused. At the same time, ensuring that when the host is confronted with it, the immune system can adequately neutralise it before it causes any ill effect.

For over a hundred years, vaccination has been affected by one of the following two approaches: introducing specific antigens against which the immune system reacts directly, or introducing live attenuated infectious agents that replicate within the host without causing disease and synthesise the antigens that subsequently prime the immune system.

DNA vaccination marks a radically new approach. It involves the direct introduction into appropriate tissues of a plasmid containing the DNA sequence encoding the antigen(s) against which an immune response is sought and relies on in situ production of the target antigen. This approach offers many advantages over traditional methods, including improved vaccine stability, the absence of any infectious agent, and relatively easier large-scale production.

**

The above article has been published from a wire agency with minimal modifications to the headline and text.

Voice of the Nation

ORGANISER

Potential game-changer Indian vaccine for COVID-19

WEBDESK Aug 25, 2021, 12:00 AM IST

Umashankar Mishra

The three-dose vaccine produces the spike protein of the SARS-CoV-2 virus and elicits an immune response, which plays a vital role in protection from disease as well as viral clearance.

New Delhi: A new chapter in the fight against the ongoing epidemic of COVID-19 has begun with the Drug Controller General of India (DCGI) giving the approval for Emergency Use Authorization (EUA) for the world's first and India's indigenously developed DNA-based COVID-19 vaccine to be administered in adults and children 12 years and above.

Developed by Ahmedabad-based pharma major Zydus Cadila in partnership with the Government of India's Department of Biotechnology (DBT) under its 'Mission COVID Suraksha', the three-dose vaccine produces the spike protein of the SARS-CoV-2 virus and elicits an immune response, which plays a vital role in protection from disease as well as viral clearance.

Interim results from Phase-III Clinical Trials, in over 28,000 volunteers, showed primary efficacy of 66.6 per cent for symptomatic RT-PCR positive cases. This has been the largest vaccine trial so far in India for COVID-19. The vaccine had already exhibited robust immunogenicity and tolerability, and safety profile in the adaptive Phase I/II clinical trials. The Phase I/II and Phase III clinical trials have been monitored by an independent Data Safety Monitoring Board (DSMB).

Zydus group’s Vaccine Technology Centre (VTC) and Translational Health Science and Technology Institute (THSTI), an autonomous institute of the Department of Biotechnology, played a vital role in this success story.

Named ZyCoV-D, the vaccine uses a section of genetic material from the virus that gives instructions to make the specific protein that the immune system recognises and responds to. The platform on which the vaccine has been developed is in the form of a rapid plug-and-play technology and can thus be easily adapted to deal with mutations in the virus.

It is sort of a game-changer, as it is an intradermal vaccine and will help those hesitant to take an injection. It will be given using PharmaJet — a needle-free applicator. Also, the vaccine can be stored at 2-8 degrees Celsius and has shown good stability at 25-degrees C for at least three months. This makes it easy to store and transport supplies to remote locations.

It is India’s first COVID-19 vaccine for adolescents in the 12-18 age group and sixth in the pack of vaccines for adults. It is also the second indigenous one after Bharat Biotech-ICMR’s Covaxin. The three-dose vaccine will be given at intervals of 28 days.

Reacting to the approval, Renu Swarup, Secretary, DBT, said, “It is a matter of great pride that today we have the EUA for the world’s first DNA COVID-19 vaccine ZyCoV-D by Zydus developed in partnership with the Department of Biotechnology and supported through Mission COVID Suraksha. The Indian Vaccine Mission COVID Suraksha was launched under the Atma Nirbhar Bharat package 3.0, being implemented by BIRAC, is aimed at the development of safe and efficacious COVID-19 vaccines for public health. We are confident that this will be an important vaccine for both India and the world. This is an important milestone in our Indigenous Vaccine Development Mission and positions India on the Global Map for Novel Vaccine Development”.

Chairman of the Zydus Group, Mr. Pankaj R. Patel, said, “We are extremely happy that our efforts to put out a safe, well-tolerated, and efficacious vaccine to fight COVID-19 have become a reality with ZyCoV-D. To create the world’s first DNA vaccine at such a crucial juncture and despite all the challenges, is a tribute to the Indian research scientists and their spirit of innovation. I’d like to thank the Department of Biotechnology, Government of India for their support in this mission of Atma Nirbhar Bharat and Indian Vaccine Mission COVID Suraksha.”

ZyCoV-D becomes the sixth in the COVID-19 vaccine pack to be made available in the Indian market, after Covishield from Serum Institute of India (SII), Covaxin from Bharat Biotech, Sputnik from Russia’s Gamaleya Institute, Moderna’s vaccine, and the most recent Johnson and Johnson’s one-dose vaccine. India has set a target of vaccinating at least 90 lakh people a day,

and the Zydus vaccine will help in the process. Zydus is also planning to seek approval for a two-dose regimen of the vaccine.

Vaccination primarily involves stimulating the immune system with an infectious agent, or components of an infectious agent, modified in such a manner that no harm or disease is caused, but ensuring that when the host is confronted with it, the immune system can adequately neutralise it before it causes any ill effect.

For over a hundred years, vaccination has been affected by one of two approaches: either introducing specific antigens against which the immune system reacts directly; or introducing live attenuated infectious agents that replicate within the host without causing disease and synthesise the antigens that subsequently prime the immune system.

DNA vaccination marks a radically new approach. It involves the direct introduction into appropriate tissues of a plasmid containing the DNA sequence encoding the antigen(s) against which an immune response is sought and relies on in situ production of the target antigen. This approach offers many potential advantages over traditional approaches, including improved vaccine stability, the absence of any infectious agent, and relatively easier large-scale production.

Courtesy: India Science Wire

Indus Scrolls
Indian to the core

Potential game-changer Indian vaccine for COVID-19

By **India Science Wire** - August 24, 2021

(Photo: Creative Commons)

A new chapter in the fight against the ongoing epidemic of COVID-19 has begun with the Drug Controller General of India (DCGI) giving the approval for Emergency Use Authorization (EUA) for the world's first and India's indigenously developed DNA-based COVID-19 vaccine to be administered in adults and children 12 years and above.

Developed by Ahmedabad-based pharma major Zydus Cadila in partnership with the Government of India's Department of Biotechnology (DBT) under its 'Mission COVID Suraksha', the three-dose vaccine produces the spike protein of the SARS-CoV-2 virus and elicits an immune response, which plays a vital role in protection from disease as well as viral clearance.

Interim results from Phase-III Clinical Trials, in over 28,000 volunteers, showed primary efficacy of 66.6 percent for symptomatic RT-PCR positive cases. This has been the largest vaccine trial so far in India for COVID-19. The vaccine had already exhibited robust immunogenicity and tolerability and safety profile in

the adaptive Phase I/II clinical trials. The Phase I/II and Phase III clinical trials have been monitored by an independent Data Safety Monitoring Board (DSMB).

Zydus group's Vaccine Technology Centre (VTC), and Translational Health Science and Technology Institute (THSTI), an autonomous institute of the Department of Biotechnology played a vital role in this success story.

Named ZyCoV-D, the vaccine uses a section of genetic material from the virus that gives instructions to make the specific protein that the immune system recognises and responds to. The platform on which the vaccine has been developed is in the form of a rapid plug-and-play technology and can thus be easily adapted to deal with mutations in the virus.

It is sort of a game-changer, as it is an intradermal vaccine and will help those hesitant to take an injection. It will be given using PharmaJet — a needle-free applicator. Also, the vaccine can be stored at 2-8 degrees Celsius and has shown good stability at 25-degrees C for at least three months. This makes it easy to store and transport supplies to remote locations.

It is India's first COVID-19 vaccine for adolescents in the 12-18 age groups, and sixth in the pack of vaccines for adults. It is also the second indigenous one after Bharat Biotech-ICMR's Covaxin. The three-dose vaccine will be given at intervals of 28 days.

Reacting to the approval, Renu Swarup, Secretary, DBT, said, "It is a matter of great pride that today we have the EUA for the world's first DNA COVID-19 vaccine ZyCoV-D by Zydus developed in partnership with the Department of Biotechnology and supported through Mission COVID Suraksha. The Indian Vaccine Mission COVID Suraksha was launched under the Atma Nirbhar Bharat package 3.0 being implemented by BIRAC, is aimed at the development of safe and efficacious COVID-19 vaccines for public health. We are confident that this will be an important vaccine for both India and the world. This is an important milestone in our Indigenous Vaccine Development Mission and positions India on the Global Map for Novel Vaccine Development".

Chairman of the Zydus Group, Mr. Pankaj R. Patel said, "We are extremely happy that our efforts to put out a safe, well-tolerated, and efficacious vaccine to fight COVID-19 have become a reality with ZyCoV-D. To create the world's first DNA vaccine at such a crucial juncture and despite all the challenges, is a tribute to the Indian research scientists and their spirit of innovation. I'd like to thank the Department of Biotechnology, Government of India for their support in this mission of Atma Nirbhar Bharat and Indian Vaccine Mission COVID Suraksha."

ZyCoV-D becomes the sixth in the COVID-19 vaccine pack to be made available in the Indian market, after Covishield from Serum Institute of India (SII), Covaxin from Bharat Biotech, Sputnik from Russia's Gamaleya Institute, Moderna's vaccine, and the most recent Johnson and Johnson's one-dose vaccine. India has set a target of vaccinating at least 90 lakh people a day and the Zydus vaccine will help in the process. Zydus is also planning to seek approval for a two-dose regimen of the vaccine.

Vaccination primarily involves stimulating the immune system with an infectious agent, or components of an infectious agent, modified in such a manner that no harm or disease is caused, but ensuring that when the host is confronted with it, the immune system can adequately neutralize it before it causes any ill effect.

For over a hundred years, vaccination has been effected by one of two approaches: either introducing specific antigens against which the immune system reacts directly; or introducing live attenuated infectious agents that replicate within the host without causing disease and synthesize the antigens that subsequently prime the immune system.DNA vaccination marks a radically new approach. It involves the direct introduction into appropriate tissues of a plasmid containing the DNA sequence encoding the antigen(s) against which an immune response is sought, and relies on in situ production of the target antigen. This approach offers many potential advantages over traditional approaches, including improved vaccine stability, the absence of any infectious agent, and relatively easier large-scale production

Voice of the Nation
ORGANISER

New algorithm boosts the energy efficiency of wireless network

WEBDESK Aug 26, 2021, 12:00 AM IST

New Delhi: A team of researchers from the Indian Institute of Technology (IIT) Bombay and Monash University, Australia has developed a new algorithm that identifies the right amount of power level, enhancing the energy efficiency of a Radio Frequency (RF)-energy harvesting network.

The algorithm, in this study, uses a statistical tool called the multi-armed bandit method that does not depend on channel state information parameters and the source identifies the optimal power output, IIT Bombay statement said. The performance results of the algorithm are presented in the journal IEEE Wireless Communications Letters.

Radio Frequency (RF) signals are electromagnetic radiations used in wireless communication. RF signals transmit information and carry an inherent small electrical energy component. Emerging technology harvests this electrical energy and powers many wireless devices (called nodes) over a wide area, such as medical implants or IoTs.

The Department of Science & Technology (DST) funds the project; and Science and Engineering Research Board (SERB), Govt of India, through the Innovation in Science Pursuit for Inspired Research (INSPIRE) Faculty Fellowship and Early Career Research Award (ECRA); and the Australian Research Councils Discovery Early Career Researcher Award (DECRA) Scheme.

"An actual transmission system is a complex network with several receivers spread over a region receiving different amounts of energy for harvesting. Also, they will require different amounts of energy for successfully transmitting the information," says Prof Manjesh Hanawal, lead author of the study. As the environment is uncertain, reinforcing the algorithms with sequential decision making can quickly ascertain the status of the harvested energy, thereby improving the system's energy efficiency, he adds. However, traditional optimisation techniques drastically increase computation costs as they require information on the channel state parameters.

To overcome this hurdle, the team used a sequential optimisation method in the algorithm called the Multi-Armed Bandit technique that
relies only on detecting if a receiver's feedback signal was successfully decoded or not (a yes-no status). This technique is akin to exploring multiple levers and playing the best lever of a slot machine (gambling devices) at a given time. First, the player risks a few losses by exploring the levers; then, sequentially pulling the levers, the player learns the lever that maximises the overall reward after some trials.

The source selects a power level in the harvesting network to transmit the energy at a given time slot. The nodes harvest this energy, and they send back information to the three sources using this energy. If the nodes could harvest enough energy, they will be able to transfer the information higher than a certain rate; otherwise, no information transfer will occur.

"The rate at which nodes could transmit the information is treated as the reward and is directly coupled with the amount of energy
harvested," explains Ms Debamita Ghosh, first author of the study.

In traditional optimisation methods, as the source power increases, the rate of transmission also increases. However, receivers cannot harness the energy indefinitely due to physical limitations, and the rate of information saturates, leading to transmission losses, thereby compromising the network's energy efficiency.

So, the team considered the rate of information per unit of power, i.e. bits/second/Joules, instead of the rate of information from the nodes.

"Since there could be multiple nodes in the network, we consider the total rate of information of all the nodes per unit power as the
performance metric," says Ms Ghosh. The source selects the transmit power in each time slot to transmit energy such that it receives the maximum possible bits at the source per unit of power spent, she adds.

Also, the algorithm estimates an upper limit of the mean of the total rate of information per unit power for each power level. It uses the power level with the highest estimated bound level.

Thus, though there are few initial losses for not playing the best power level, the accumulated losses are minimised due to the sequential learning. In addition, the team performed simulations of algorithm outputs to establish that it helps the source optimise the power output, thereby improving the system's energy efficiency compared to current computation methods.

Courtesy: India Science Wire

DELHI POST
Politics | Democracy | Development

New Algorithm Boosts Energy Efficiency of Wireless Network

By ISW Desk On Aug 26, 2021

A team of researchers from the Indian Institute of Technology (IIT) Bombay and Monash University, Australia, has developed a new algorithm that identifies the right amount of power level, enhancing the energy efficiency of a Radio Frequency (RF)-energy harvesting network.

The algorithm, in this study, uses a statistical tool called the multi-armed bandit method that does not depend on channel state information parameters, and the source identifies the optimal power output, IIT Bombay statement said. The performance results of the algorithm are presented in the journal IEEE Wireless Communications Letters.

Radio Frequency (RF) signals are electromagnetic radiations used in wireless communication. RF signals transmit information and carry an inherent small electrical energy component. Emerging technology harvests this electrical energy and powers many wireless devices (called nodes) over a wide area, such as medical implants or IoTs.

The project is funded by the Department of Science & Technology (DST) and Science and Engineering Research Board (SERB), Govt of India, through the Innovation in Science Pursuit

for Inspired Research (INSPIRE) Faculty Fellowship and Early Career Research Award (ECRA); and the Australian Research Councils Discovery Early Career Researcher Award (DECRA) Scheme.

“An actual transmission system is a complex network with several receivers spread over a region receiving different amounts of energy for harvesting. Also, they will require different amounts of energy for successfully transmitting the information,” says Prof Manjesh Hanawal, lead author of the study. As the environment is uncertain, reinforcing the algorithms with sequential decision making can quickly ascertain the status of the harvested energy, thereby improving the system’s energy efficiency, he adds. However, traditional optimisation techniques drastically increase computation costs as they require information on the channel state parameters.

To overcome this hurdle, the team used a sequential optimisation method in the algorithm called the Multi-Armed Bandit technique that relies only on detecting if a receiver’s feedback signal was successfully decoded or not (a yes-no status). This technique is akin to exploring multiple levers and playing the best lever of a slot machine (gambling devices) at a given time. First, the player risks a few losses by exploring the levers; then, sequentially pulling the levers, the player learns the lever that maximises the overall reward after some trials.

The source selects a power level in the harvesting network to transmit energy at a given time slot. The nodes harvest this energy, and using this energy, they send back information to the 3 sources. If the nodes could harvest enough energy, they will be able to transfer the information higher than a certain rate; otherwise, no information transfer will occur.

“The rate at which nodes could transmit the information is treated as the reward and is directly coupled with the amount of energy harvested,” explains Ms Debamita Ghosh, first author of the study.

In traditional optimisation methods, as the source power increases, the rate of transmission also increases. However, receivers cannot harness the energy indefinitely due to physical limitations, and the rate of information saturates, leading to transmission losses, thereby compromising the network’s energy efficiency.

So, the team considered the rate of information per unit of power, i.e. bits/second/Joules, instead of the rate of information from the nodes. “Since there could be multiple nodes in the network, we consider the total rate of information of all the nodes per unit power as the performance metric,” says Ms Ghosh. The source selects the transmit power in each time slot to transmit energy such that it receives the maximum possible bits at the source per unit of power spent, she adds. Also, the algorithm estimates an upper limit of the mean of the total rate of information per unit power for each power level and uses the power level with the highest estimated bound level.

Thus, though there are few initial losses for not playing the best power level, overall, the accumulated losses are minimised due to the sequential learning. In addition, the team performed simulations of algorithm outputs to establish that it helps the source optimise the power output, thereby improving the system’s energy efficiency compared to current computation methods. (India Science Wire)

Republic NewsIndia

New algorithm boosts energy efficiency of wireless network

By **Rupesh Dharmik** - August 25, 2021

(Image: IIT Bombay)

New Delhi: A team of researchers from the Indian Institute of Technology (IIT) Bombay and Monash University, Australia, has developed a new algorithm that identifies the right amount of power level, enhancing the energy efficiency of a Radio Frequency (RF)-energy harvesting network.

The algorithm, in this study, uses a statistical tool called the multi-armed bandit method that does not depend on channel state information parameters, and the source identifies the optimal power output, IIT Bombay statement said. The performance results of the algorithm are presented in the journal IEEE Wireless Communications Letters.

Radio Frequency (RF) signals are electromagnetic radiations used in wireless communication. RF signals transmit information and carry an inherent small

electrical energy component. Emerging technology harvests this electrical energy and powers many wireless devices (called nodes) over a wide area, such as medical implants or IoTs.

The project is funded by the Department of Science & Technology (DST) and Science and Engineering Research Board (SERB), Govt of India, through the Innovation in Science Pursuit for Inspired Research (INSPIRE) Faculty Fellowship and Early Career Research Award (ECRA); and the Australian Research Councils Discovery Early Career Researcher Award (DECRA) Scheme.

“An actual transmission system is a complex network with several receivers spread over a region receiving different amounts of energy for harvesting. Also, they will require different amounts of energy for successfully transmitting the information,” says Prof ManjeshHanawal, lead author of the study. As the environment is uncertain, reinforcing the algorithms with sequential decision making can quickly ascertain the status of the harvested energy, thereby improving the system’s energy efficiency, he adds. However, traditional optimisation techniques drastically increase computation costs as they require information on the channel state parameters.

To overcome this hurdle, the team used a sequential optimisation method in the algorithm called the Multi-Armed Bandit technique that relies only on detecting if a receiver’s feedback signal was successfully decoded or not (a yes-no status). This technique is akin to exploring multiple levers and playing the best lever of a slot machine (gambling devices) at a given time. First, the player risks a few losses by exploring the levers; then, sequentially pulling the levers, the player learns the lever that maximises the overall reward after some trials.

The source selects a power level in the harvesting network to transmit energy at a given time slot. The nodes harvest this energy, and using this energy, they send back information to the 3 sources. If the nodes could harvest enough energy, they will be able to transfer the information higher than a certain rate; otherwise, no information transfer will occur.

“The rate at which nodes could transmit the information is treated as the reward and is directly coupled with the amount of energy harvested,” explains MsDebamita Ghosh, first author of the study.

In traditional optimisation methods, as the source power increases, the rate of transmission also increases. However, receivers cannot harness the energy indefinitely due to physical limitations, and the rate of information saturates, leading to transmission losses, thereby compromising the network's energy efficiency.

So, the team considered the rate of information per unit of power, i.e. bits/second/Joules, instead of the rate of information from the nodes. "Since there could be multiple nodes in the network, we consider the total rate of information of all the nodes per unit power as the performance metric," says Ms Ghosh. The source selects the transmit power in each time slot to transmit energy such that it receives the maximum possible bits at the source per unit of power spent, she adds. Also, the algorithm estimates an upper limit of the mean of the total rate of information per unit power for each power level and uses the power level with the highest estimated bound level.

Thus, though there are few initial losses for not playing the best power level, overall, the accumulated losses are minimised due to the sequential learning. In addition, the team performed simulations of algorithm outputs to establish that it helps the source optimise the power output, thereby improving the system's energy efficiency compared to current computation methods. (India Science Wire)

प्रभासाक्षी

आईआईटी मद्रास ने विकसित की उन्नत मोटर चालित व्हीलचेयर

इंडिया साइंस वायर Aug 25, 2021 18:21

> *व्हीलचेयर को नियोबोल्ट नाम दिया गया है। यह मोटर चालित व्हीलचेयर 25 किमी प्रति घंटा तक की तेजी से चल सकती है। एक चार्ज पर इससे 25 किमी की दूरी तय की जा सकती है। इसमें प्रयुक्त मोटर लिथियमआयन - बैटरी से संचालित होता है।*

दिव्यांग और अशक्त लोगों के लिए बाहर निकलना, कहीं आनाजाना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। इस दिशा में मोटर चालित - व्हीलचेयर को उसकी अपनी सीमाओं के बावजूद एक कारगर विकल्प माना जाता है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान मद्रास के एक नवाचार ने मोटर चालित व्हीलचेयर का एक अपेक्षित सुविधाजनक और परिष्कृत स्वरूप (आईआईटी) विकसित किया है।

आईआईटी मद्रास द्वारा विकसित इस व्हीलचेयर की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि यह भारत में विकसित पहले स्वदेशी मोटर से संचालित होने वाली व्हीलचेयर है। यह उबड़खाबड़ रास्तों पर भी सुविधापुर्वक चलने में सक्षम है। इस उत्पाद -

मद्रास के-के विकास की प्रक्रिया में आईआईटी शोधकर्ताओं ने चलनेफिरने में अशक्तता से पीड़ित लोगों के लिए कार्यरत - पूरा सहयोग लिया है। संगठनों और अस्पतालों का

इस व्हीलचेयर को नियोबोल्ट नाम दिया गया है। यह मोटर चालित व्हीलचेयर 25 किमी प्रति घंटा तक की तेजी से चल सकती है। एक चार्ज पर इससे 25 किमी की दूरी तय की जा सकती है। इसमें प्रयुक्त मोटर लिथियमआयन बैटरी से - ने वालों के लिए यह कारसंचालित होता है। व्हीलचेयर पर चल, ऑटोरिक्शा या मोडिफाइड स्कूटर की तुलना में आवागमन का कहीं अधिक सुविधाजनक, सुरक्षित और किफायती साधन है।

इसे विकसित करने वाली टीम का नेतृत्व आईआईटी मद्रास में मैकनेनिकल इंजीनियरिंग विभाग की प्रमुख प्रोसुजाता . न अब नियोमोशन नाम के स्टार्टअप के साथ मिलकर इसके व्यावसायिक उपयोग की श्रीनिवासन ने किया। संस्था संस्थापक इस स्टार्टअप से भी जुड़ी हैं।-सुजाता श्रीनिवासन बतौर सह .संभावनाएं तलाश रहा है। प्रोवहीं आईआईटी मद्रास के पूर्व छात्र स्वास्तिक सौरव नियोमेशन के सीईओ हैं। उल्लेखनीय है कि प्रोश्रीनिवासन भारत के पहले स्वदेशी . डिजाइन के स्टैंडिंग व्हीलचेयर'अराइज' विकसित करने वाली टीम की प्रमुख भी हैं।

प्रोसुजाता श्रीनिवासनआईआईटी मद्रास स्थित टीटीके सेंट .र फॉर रिहैबिलिटेशन रिसर्च एंड डिवाइस डेवलपमेंट आर)2डी2) की शिक्षा प्रमुख भी हैं। 'हमारे केंद्र का उद्देश्य दिव्यांगों के जीवन में सकारात्मक परिवर्तन लाना है। इसके लिए हम उपयोगी साधनों का विकास करते हैं जो किफायती भी हों। आप कितनी बार किसी स्कूल, कार्यालय, दुकान या थिएटर में व्हीलचेयर पर किसी को आते देखते हैं? दरअसल व्हीलचेयर पर इंसान आमतौर पर घर की चारदीवारी में सिमट कर रह जाता है। वह समुदाय से अलगथलग हो जाता है और अर्थव्यवस्था में योगदान देने की उसकी क्षमता बहुत - कम हो जाती है,' प्रोश्रीनिवासन बताती हैं। . उन्होंने आगे कहा, 'नियोमोशन स्टार्टअप की शुरुआत आर-2डी2 से की गई जिसे आईआईटी मद्रास ने इनक्युबेट किया। यह व्हीलचेयर भारत और पूरी दुनिया को ध्यान में रखकर विकसित की गई है।'

नियोबोल्ट जैसे फीचर वाले उत्पाद विश्व बाजार में फिल्हाल तीन से पाँच गुना अधिक कीमतों पर उपलब्ध हैं।

स्टार्टअप ने नियोफ्लाई नाम से एक पर्सनलाइज्ड व्हीलचेयर भी डिजाइन की है। इसे व्यावसायिक स्तर पर भी पेश किया जा रहा है। यह स्वास्थ्य और जीवन शैली को ध्यान में रखकर ही विकसित की गई है। इसे 18 प्रकार से कस्टमाइज किया जा सकता है, जो यह दर्शाता है कि यह उपभोक्ता के लिए कितनी सुविधाजनक हो सकती है। नियोफ्लाई की कीमत 39000 रुपये है जबकि नियोबोल्ट मैकेनिज्म के साथ यह 55000 रुपये में आती है। इसे 1000 रुपये के पंजीकरण शुल्क के साथ आसान किस्तों पर भी खरीदा जा सकता है।इसके बारे में नियोमोशन के सहसंस्थाप-क और सीईओ स्वास्तिक सौरव दास कहते हैं, 'वर्तमान में भारत के 28 राज्यों के 600 से अधिक लोग नियोफ्लाई और नियोबोल्ट का उपयोग कर रहे हैं। इनके बारे में उनकी राय बहुत सकारात्मक रही है। इसकी डेमो यूनिट पूरे भारत के प्रमुख शहरों में 15 डीलर आउटलेट और चार पुनर्वास केंद्रों में उपलब्ध हैं। इसमें यूनिक नियोफिट सिस्टम के साथ रिमोट कस्टमाइजेशन की सुविधा है ताकि नियोफ्लाई सही तरह से फिट हो कर उपयोगकर्ता के दरवाजे पर पहुंचे।'

नियोफ्लाई और नियोबोल्ट को कुछ खास विशेषताओं के साथ तैयार किया गया है। नियोफ्लाई व्हीलचेयर में मजबूत फ्रेम डिजाईन के साथ एंगल, फुटरेस्ट और बैकरेस्ट की ऊंचाई बदलने की विशेषताएं शामिल हैं। साथ ही इसके टायर पंचर नहीं होंगे। इसी क्रम में नियोबेल्ट को डिजिटल डैशबोर्ड, रिवर्स फंक्शन, 4 घंटे के रिचार्ज वाली लीथियम आयन बैटरी, हेडलाइट, साइड इंडिकेटर, हॉर्न, मिरर और खास डिजाइन के आसानी से उपयोग होने वाले अटैचमेंट जैसी विशेषताओं के साथ तैयार किया गया है।

RD TIMES.in हिंदी

आईआईटी मद्रास ने विकसित की उन्नत मोटर चालित व्हीलचेयर

By RD Times Hindi | August 25, 2021

नियोबोल्ट पर चेन्नई के जेराई एंथनी

नई दिल्ली: दिव्यांग और अशक्त लोगों के लिए बाहर निकलना, कहीं आनाजाना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। इस दिशा में - मोटर चालित व्हीलचेयर को उसकी अपनी सीमाओं के बावजूद एक कारगर विकल्प माना जाता है। भारतीय प्रौद्योगिकी आई) संस्थानआईटीमद्रास के एक नवाचार ने मोटर चालित व्हीलचेयर का एक अपेक्षित सुविधाजनक और परिष्कृत (विकसित किया है। स्वरूप

आईआईटी मद्रास द्वारा विकसित इस व्हीलचेयर की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि यह भारत में विकसित पहले स्वदेशी मोटर से संचालित होने वाली व्हीलचेयर है। यह उबड़खाबड़ रास्तों पर भी सुविधापुर्वक चलने में सक्षम है। इस उत्पाद - फिरने में अशक्तता से पीड़ित लोगों के लिए कार्यरत -मद्रास के शोधकर्ताओं ने चलने-आईआईटी के विकास की प्रक्रिया में संगठनों और अस्पतालों का पूरा सहयोग लिया है।

इस व्हीलचेयर को नियोबोल्ट नाम दिया गया है। यह मोटर चालित व्हीलचेयर 25 किमी प्रति घंटा तक की तेजी से चल सकती है। एक चार्ज पर इससे 25 किमी की दूरी तय की जा सकती है। इसमें प्रयुक्तमोटरलिथियमआयन बैटरी से -

संचालित होता है। व्हीलचेयर पर चलने वालों के लिए यह कार, ऑटोरिक्शा या मोडिफाइड स्कूटर की तुलना में आवागमन का कहीं अधिक सुविधाजनक, सुरक्षित और किफायती साधन है।

नियोफ्लाई का उपयोग करतीं बैंगलोर की डॉ राजलक्ष्मी

इसे विकसित करने वाली टीम का नेतृत्व आईआईटी मद्रास में मैकनेनिकल इंजीनियरिंग विभाग की प्रमुख प्रोसुजा .ता श्रीनिवासन ने किया। संस्थान अब नियोमोशन नाम के स्टार्टअप के साथ मिलकर इसके व्यावसायिक उपयोग की संभावनाएं तलाश रहा है। प्रोसंस्थापक इस स्टार्टअप से भी जुड़ी हैं। वहीं आईआईटी -सुजाता श्रीनिवासन बतौर सह . मद्रास के पूर्व छात्र स्वास्तिक सौरव नियोमेशन के सीईओ हैं। उल्लेखनीय है कि प्रोश्रीनिवासन भारत के पहले स्वदेशी . डिजाइन के स्टैंडिंग व्हीलचेयर'अराइज' विकसित करने वाली टीम की प्रमुख भी हैं।

प्रो सुजाता श्रीनिवासनआईआईटी मद्रास स्थित टीटीके सेंटर फॉर रिहैबिलिटेशन रिसर्च एंड डिवाइस डेवलपमेंट . आर)2डी2)की शिक्षा प्रमुख भी हैं।'हमारे केंद्र का उद्देश्य दिव्यांगों के जीवन में सकारात्मक परिवर्तन लाना है। इसके लिए हम उपयोगी साधनों का विकास करते हैं जो किफायती भी हों। आप कितनी बार किसी स्कूल, कार्यालय, दुकान या थिएटर में व्हीलचेयर पर किसी को आते देखते हैं? दरअसल व्हीलचेयर पर इंसान आमतौर पर घर की चारदीवारी में सिमट कर रह जाता है। वह समुदाय से अलगकी उसकी क्षमता बहुत थलग हो जाता है और अर्थव्यवस्था में योगदान देने- कम हो जाती है,' प्रोश्रीनिवासन बताती हैं। उन्होंने आगे कहा., 'नियोमोशन स्टार्टअप की शुरुआत आर-2डी2 से की गई जिसे आईआईटी मद्रास ने इनक्युबेट किया। यह व्हीलचेयर भारत और पूरी दुनिया को ध्यान में रखकर विकसित की गई है।'

नियोफ्लाई और नियोबोल्ट को विकसित करने वाली टीम

नियोबोल्ट जैसे फीचर वाले उत्पाद विश्व बाजार में फिल्हाल तीन से पाँच गुना अधिक कीमतों पर उपलब्ध हैं।

स्टार्टअप ने नियोफ्लाई नाम से एक पर्सनलाइज्ड व्हीलचेयर भी डिजाइन की है। इसे व्यावसायिक स्तर पर भी पेश किया जा रहा है। यह स्वास्थ्य और जीवन शैली को ध्यान में रखकर ही विकसित की गई है। इसे 18 प्रकार से कस्टमाइज किया जा सकता है, जो यह दर्शाता है कि यह उपभोक्ता के लिए कितनी सुविधाजनक हो सकती है। नियोफ्लाई की कीमत 39000 रुपये है जबकि नियोबोल्ट मैकेनिज्म के साथ यह 55000 रुपये में आती है। इसे 1000 रुपये के पंजीकरण शुल्क के साथ आसान किस्तों पर भी खरीदा जा सकता है।इसके बारे में नियोमोशन के सहसंस्थापक और सीईओ स्वास्तिक- सौरव दास कहते हैं, 'वर्तमान में भारत के 28 राज्यों के 600 से अधिक लोग नियोफ्लाई और नियोबोल्ट का उपयोग कर रहे हैं। इनके बारे में उनकी राय बहुत सकारात्मक रही है।इसकी डेमो यूनिट पूरे भारत के प्रमुख शहरों में 15 डीलर आउटलेट और चार पुनर्वास केंद्रों में उपलब्ध हैं। इसमें यूनिक नियोफिट सिस्टम के साथ रिमोट कस्टमाइजेशन की सुविधा है ताकि नियोफ्लाई सही तरह से फिट हो कर उपयोगकर्ता के दरवाजे पर पहुंचे।'

नियोफ्लाई और नियोबोल्ट को कुछ खास विशेषताओं के साथ तैयार किया गया है। नियोफ्लाई व्हीलचेयर में मजबूत फ्रेम डिजाईन के साथ एंगल, फुटरेस्ट और बैकरेस्ट की ऊंचाई बदलने की विशेषताएं शामिल हैं। साथ ही इसके टायर पंचर नहीं होंगे। इसी क्रम में नियोबेल्ट को डिजिटल डैशबोर्ड, रिवर्स फंक्शन, 4 घंटे के रिचार्ज वाली लीथियम आयन बैटरी, हेडलाइट, साइड इंडिकेटर, हॉर्न, मिरर और खास डिजाइन के आसानी से उपयोग होने वाले अटैचमेंट जैसी विशेषताओं के साथ तैयार किया गया है। (इंडिया साइंस वायर)

आईआईटी मद्रास ने विकसित की उन्नत मोटर चालित व्हीलचेयर

prabhasakshi.com - प्रभासाक्षी न्यूज नेटवर्क • 22d

दिव्यांग और अशक्त लोगों के लिए बाहर निकलना, कहीं आनाजाना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। इस - दिशा में मोटर चालित व्हीलचेयर को उसकी अपनी सीमाओं के बावजूद एक...

Read more on prabhasakshi.com

आईआईटी मद्रास ने विकसित की उन्नत मोटर चालित व्हीलचेयर

25/08/2021 V3news India

नई दिल्ली, 25 अगस्त दिव्यांग और अशक्त लोगों के लिए बाहर निकलना :(इंडिया साइंस वायर), कहीं आनाजाना एक - चुनौतीपूर्ण कार्य है। इस दिशा में मोटर चालित व्हीलचेयर को उसकी अपनी सीमाओं के बावजूद एक कारगर विकल्प माना आ) भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान जाता है।ईआईटीमद्रास के एक नवाचार ने मोटर चालित व्हीलचेयर का एक अपेक्षित (सुविधाजनक और परिष्कृत स्वरूप विकसित किया है।

आईआईटी मद्रास द्वारा विकसित इस व्हीलचेयर की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि यह भारत में विकसित पहले स्वदेशी मोटर से संचालित होने वाली व्हीलचेयर है। यह उबड़खाबड़ रास्तों पर भी सुविधापुर्वक चलने में सक्षम है। इस उत्पाद के विकास की - फिरने में अशक्तता से पीड़ित लोगों के लिए कार्यरत संगठनों और -मद्रास के शोधकर्ताओं ने चलने-प्रक्रिया में आईआईटी अस्पतालों का पूरा सहयोग लिया है।

इस व्हीलचेयर को नियोबोल्ट नाम दिया गया है। यह मोटर चालित व्हीलचेयर 25 किमी प्रति घंटा तक की तेजी से चल सकती है। एक चार्ज पर इससे 25 किमी की दूरी तय की जा सकती है। इसमें प्रयुक्त मोटर लिथियमआयन बैटरी से संचालित - होता है। व्हीलचेयर पर चलने वालों के लिए यह कार, ऑटोरिक्शा या मोडिफाइड स्कूटर की तुलना में आवागमन का कहीं अधिक सुविधाजनक, सुरक्षित और किफायती साधन है।

इसे विकसित करने वाली टीम का नेतृत्व आईआईटी मद्रास में मैकनेनिकल इंजीनियरिंग विभाग की प्रमुख प्रोसुजाता . र्टअप के साथ मिलकर इसके व्यश्रीनिवासन ने किया। संस्थान अब नियोमोशन नाम के स्टा ावसायिक उपयोग की संभावनाएं तलाश रहा है। प्रोसंस्थापक इस स्टार्टअप से भी जुड़ी हैं। वहीं आईआईटी मद्रास के पूर्व छात्र -सुजाता श्रीनिवासन बतौर सह . स्वास्तिक सौरव नियोमेशन के सीईओ हैं।

उल्लेखनीय है कि प्रो स्वदेशी डिजाइन के स्टैंडिंग श्रीनिवासन भारत के पहले .व्हीलचेयर 'अराइज' विकसित करने वाली टीम की प्रमुख भी हैं। प्रोसुजाता श्रीनिवासनआईआईटी मद्रास स्थित टीटीके सेंटर फॉर रिहैबिलिटेशन रिसर्च एंड . डिवाइस डेवलपमेंट आर)2डी2)की शिक्षा प्रमुख भी हैं। 'हमारे केंद्र का उद्देश्य दिव्यांगों के जीवन में सकारात्मक परिवर्तन लाना है। इसके लिए हम उपयोगी साधनों का विकास करते हैं जो किफायती भी हों।

आप कितनी बार किसी स्कूल, कार्यालय, दुकान या थिएटर में व्हीलचेयर पर किसी को आते देखते हैं? दरअसल व्हीलचेयर पर इंसान आमतौर पर घर की चारदीवारी में सिमट कर रह जाता है। वह समुदाय से अलग-थलग हो जाता है और अर्थव्यवस्था में योगदान देने की उसकी क्षमता बहुत कम हो जाती है,' प्रोश्रीनिवासन बताती हैं। उन्होंने आगे कहा ., 'नियोमोशन स्टार्टअप - की शुरुआत आर2डी2 से की गई जिसे आईआईटी मद्रास ने इनक्युबेट किया।

यह व्हीलचेयर भारत और पूरी दुनिया को ध्यान में रखकर विकसित की गई है।' नियोबोल्ट जैसे फीचर वाले उत्पाद विश्व बाजार में फिल्हाल तीन से पाँच गुना अधिक कीमतों पर उपलब्ध हैं। स्टार्टअप ने नियोफ्लाई नाम से एक पर्सनलाइज्ड व्हीलचेयर भी डिजाइन की है। इसे व्यावसायिक स्तर पर भी पेश किया जा रहा है। यह स्वास्थ्य और जीवन शैली को ध्यान में रखकर ही विकसित की गई है। इसे 18 प्रकार से कस्टमाइज किया जा सकता है, जो यह दर्शाता है कि यह उपभोक्ता के लिए कितनी सुविधाजनक हो सकती है।

नियोफ्लाई की कीमत 39000 रुपये है जबकि नियोबोल्ट मैकेनिज्म के साथ यह 55000 रुपये में आती है। इसे 1000 रुपये के पंजीकरण शुल्क के साथ आसान किस्तों पर भी खरीदा जा सकता है।इसके बारे में नियोमोशन के सहसंस्थापक और सीईओ - स्वास्तिक सौरव दास कहते हैं, 'वर्तमान में भारत के 28 राज्यों के 600 से अधिक लोग नियोफ्लाई और नियोबोल्ट का उपयोग कर रहे हैं। इनके बारे में उनकी राय बहुत सकारात्मक रही है।

इसकी डेमो यूनिट पूरे भारत के प्रमुख शहरों में 15 डीलर आउटलेट और चार पुनर्वास केंद्रों में उपलब्ध हैं। इसमें यूनिक नियोफिट सिस्टम के साथ रिमोट कस्टमाइजेशन की सुविधा है ताकि नियोफ्लाई सही तरह से फिट हो कर उपयोगकर्ता के दरवाजे पर पहुंचे।' नियोफ्लाई और नियोबोल्ट को कुछ खास विशेषताओं के साथ तैयार किया गया है। नियोफ्लाई व्हीलचेयर में मजबूत फ्रेम डिजाईन के साथ एंगल,

फुटरेस्ट और बैकरेस्ट की ऊंचाई बदलने की विशेषताएं शामिल हैं। साथ ही इसके टायर पंचर नहीं होंगे। इसी क्रम में नियोबेल्ट को डिजिटल डैशबोर्ड, रिवर्स फंक्शन, 4 घंटे के रिचार्ज वाली लीथियम आयन बैटरी, हेडलाइट, साइड इंडिकेटर, हॉर्न, मिरर और खास डिजाइन के आसानी से उपयोग होने वाले अटैचमेंट जैसी विशेषताओं के साथ तैयार किया गया है।

राष्ट्रीय रक्षक

आईआईटी मद्रास ने विकसित की उन्नत मोटर चालित व्हीलचेयर

लेखक: Snigdha Verma - अगस्त 25, 2021

नियोफ्लाई और नियोबोल्ट को विकसित करने वाली टीम

नियोबोल्ट पर पेरई के जोसई एंथनी

नई दिल्लीदिव्यांग और अशक्त लोगों के लिए बाहर निकलना :(इंडिया साइंस वायर), कहीं आनाजाना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। इस - दिशा में मोटर चालितव्हीलचेयर को उसकी अपनी सीमाओं के बावजूद एक कारगर विकल्प माना जाता है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान मद्रास के एक नवाचार ने मोटर चालित व्हीलचेयर का एक अपेक्षित सुविधाजनक और परिष्कृत स्वरूप (आईआईटी) विकसित किया है।

आईआईटी मद्रास द्वारा विकसित इस व्हीलचेयर की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि यह भारत में विकसित पहले स्वदेशी मोटर से संचालित होने वाली व्हीलचेयर है। यह उबड़खाबड़ रास्तों पर भी सुविधापुर्वक चलने में सक्षम है। इस उत्पाद के विकास की प्रक्रिया - फिरने में अशक्तता से पी -मद्रास के शोधकर्ताओं ने चलने-में आईआईटीड़ित लोगों के लिए कार्यरत संगठनों और अस्पतालों का पूरा सहयोग लिया है।

इस व्हीलचेयर को नियोबोल्ट नाम दिया गया है। यह मोटर चालित व्हीलचेयर 25 किमी प्रति घंटा तक की तेजी से चल सकती है। एक चार्ज पर इससे 25 किमी की दूरी तय की जा सकती है। इसमें प्रयुक्त मोटर लिथियमआयन बैटरी से संचालित होता है। - र चलने वालों के लिए यह कारव्हीलचेयर प, ऑटोरिक्शा या मोडिफाइड स्कूटर की तुलना में आवागमन का कहीं अधिक सुविधाजनक, सुरक्षित और किफायती साधन है।

इसे विकसित करने वाली टीम का नेतृत्व आईआईटी मद्रास में मैकनेनिकल इंजीनियरिंग विभाग की प्रमुख प्रोसुजाता श्रीनिवासन ने . .संस्थान अब नियोमोशन नाम के स्टार्टअप के साथ मिलकर इसके व्यावसायिक उपयोग की संभावनाएं तलाश रहा है। प्रो किया। संस्थापक इस स्टार्टअप से भी जुड़ी हैं। वहीं आईआईटी मद्रास के पूर्व छात्र स्वास्तिक-सुजाता श्रीनिवासन बतौर सह सौरव नियोमेशन के सीईओ हैं। उल्लेखनीय है कि प्रो श्रीनिवासन भारत के पहले स्वदेशी डिजाइन के स्टैंडिंग व्हीलचेयर .'अराइज' विकसित करने वाली टीम की प्रमुख भी हैं।

प्रोसुजाता श्रीनिवासनआईआईटी मद्रास स्थित टीटीके सेंटर फॉर रिहैबिलिटेशन रिसर्च एंड डिवाइस डेवलपम .ेंट आर)2डी2)की शिक्षा प्रमुख भी हैं। 'हमारे केंद्र का उद्देश्य दिव्यांगों के जीवन में सकारात्मक परिवर्तन लाना है। इसके लिए हम उपयोगी साधनों का विकास करते हैं जो किफायती भी हों। आप कितनी बार किसी स्कूल, कार्यालय, दुकान या थिएटर में व्हीलचेयर पर किसी को आते देखते हैं? दरअसल व्हीलचेयर पर इंसान आमतौर पर घर की चारदीवारी में सिमट कर रह जाता है। वह समुदाय से अलगथलग हो - जाता है और अर्थव्यवस्था में योगदान देने की उसकी क्षमता बहुत कम हो जाती है,' प्रोश्रीनिवासन बताती हैं। उन्होंने आगे कहा ., 'नियोमोशन स्टार्टअप की श-ुरुआत आर2डी2 से की गई जिसे आईआईटी मद्रास ने इनक्युबेट किया। यह व्हीलचेयर भारत और पूरी दुनिया को ध्यान में रखकर विकसित की गई है।'

नियोबोल्ट जैसे फीचर वाले उत्पाद विश्व बाजार में फिल्हाल तीन से पाँच गुना अधिक कीमतों पर उपलब्ध हैं।

स्टार्टअप ने नियोफ्लाई नाम से एक पर्सनलाइज्ड व्हीलचेयर भी डिजाइन की है। इसे व्यावसायिक स्तर पर भी पेश किया जा रहा है। यह स्वास्थ्य और जीवन शैली को ध्यान में रखकर ही विकसित की गई है। इसे 18 प्रकार से कस्टमाइज किया जा सकता है, जो यह दर्शाता है कि यह उपभोक्ता के लिए कितनी सुविधाजनक हो सकती है। नियोफ्लाई की कीमत 39000 रुपये है जबकि नियोबोल्ट मैकेनिज्म के साथ यह 55000 रुपये में आती है। इसे 1000 रुपये के पंजीकरण शुल्क के साथ आसान किस्तों पर भी खरीदा जा सकता है।इसके बारे में नियोमोशन के सहसंस्थापक और सीईओ स्वास्तिक सौरव दास कहते हैं-, 'वर्तमान में भारत के 28 राज्यों के 600 से अधिक लोग नियोफ्लाई और नियोबोल्ट का उपयोग कर रहे हैं। इनके बारे में उनकी राय बहुत सकारात्मक रही है।इसकी डेमो यूनिट पूरे भारत के प्रमुख शहरों में 15 डीलर आउटलेट और चार पुनर्वास केंद्रों में उपलब्ध हैं। इसमें यूनिक नियोफिट सिस्टम के साथ रिमोट कस्टमाइजेशन की सुविधा है ताकि नियोफ्लाई सही तरह से फिट हो कर उपयोगकर्ता के दरवाजे पर पहुंचे।'

नियोफ्लाई और नियोबोल्ट को कुछ खास विशेषताओं के साथ तैयार किया गया है। नियोफ्लाई व्हीलचेयर में मजबूत फ्रेम डिजाईन के साथ एंगल, फुटरेस्ट और बैकरेस्ट की ऊंचाई बदलने की विशेषताएं शामिल हैं। साथ ही इसके टायर पंचर नहीं होंगे। इसी क्रम में नियोबेल्ट को डिजिटल डैशबोर्ड, रिवर्स फंक्शन, 4 घंटे के रिचार्ज वाली लीथियम आयन बैटरी, हेडलाइट, साइड इंडिकेटर, हॉर्न, मिरर और खास डिजाइन के आसानी से उपयोग होने वाले अटैचमेंट जैसी विशेषताओं के साथ तैयार किया गया है।

रिपब्लिक न्यूज़ इंडिया

आईआईटी मद्रास ने विकसित की उन्नत मोटर चालित व्हीलचेयर

By **Rupesh Dharmik** - August 25, 2021

नियोबोल्ट पर चेन्नई के जेरार्ड एंथनी

नई दिल्ली: दिव्यांग और अशक्त लोगों के लिए बाहर निकलना, कहीं आनाजाना एक चुनौतीपूर्ण कार्य है। इस दिशा में - मोटर चालित व्हीलचेयर को उसकी अपनी सीमाओं के बावजूद एक कारगर विकल्प माना जाता है। भारतीय प्रौद्योगिकी मद्रास के एक नवाचार ने (आईआईटी) संस्थानमोटर चालित व्हीलचेयर का एक अपेक्षित सुविधाजनक और परिष्कृत स्वरूप विकसित किया है।

आईआईटी मद्रास द्वारा विकसित इस व्हीलचेयर की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि यह भारत में विकसित पहले स्वदेशी मोटर से संचालित होने वाली व्हीलचेयर है। यह उबड़खाबड़ रास्तों पर भी सुव-िधापुर्वक चलने में सक्षम है। इस उत्पाद के विकास की प्रक्रिया में आईआईटीफिरने में अशक्तता से पीड़ित लोगों के लिए कार्यरत -मद्रास के शोधकर्ताओं ने चलने-संगठनों और अस्पतालों का पूरा सहयोग लिया है।

इस व्हीलचेयर को नियोबोल्ट नाम दिया गया है। यह मोटर चालित व्हीलचेयर 25 किमी प्रति घंटा तक की तेजी से चल सकती है। एक चार्ज पर इससे 25 किमी की दूरी तय की जा सकती है। इसमें प्रयुक्तमोटरलिथियमआयन बैटरी से -

संचालित होता है। व्हीलचेयर पर चलने वालों के लिए यह कार, ऑटोरिक्शा या मोडिफाइड स्कूटर की तुलना में आवागमन का कहीं अधिक सुविधाजनक, सुरक्षित और किफायती साधन है।

नियोफ्लाई का उपयोग करतीं बैंगलोर की डॉ राजलक्ष्मी

इसे विकसित करने वाली टीम का नेतृत्व आईआईटी मद्रास में मैकनेनिकल इंजीनियरिंग विभाग की प्रमुख प्रोसुजाता . श्रीनिवासन ने किया। संस्थान अब नियोमोशन नाम के स्टार्टअप के साथ मिलकर इसके व्यावसायिक उपयोग की संभावनाएं तलाश रहा है। प्रोसंस्थापक इस स्टार्टअप से भी जुड़ी हैं। वहीं आईआईटी -सुजाता श्रीनिवासन बतौर सह . श्रीनिवासन भारत के पहले स्वदेशी .मद्रास के पूर्व छात्र स्वास्तिक सौरव नियोमेशन के सीईओ हैं। उल्लेखनीय है कि प्रो डिजाइन के स्टैंडिंग व्हीलचेयर ‘अराइज‘ विकसित करने वाली टीम की प्रमुख भी हैं।

प्रो सुजाता श्रीनिवासनआईआईटी मद्रास स्थित टीटीके सेंटर फॉर रिहैबिलिटेशन रिसर्च एंड डिवाइस डेवलपमेंट . आर)2डी2)की शिक्षा प्रमुख भी हैं।‘हमारे केंद्र का उद्देश्य दिव्यांगों के जीवन में सकारात्मक परिवर्तन लाना है। इसके लिए हम उपयोगी साधनों का विकास करते हैं जो किफायती भी हों। आप कितनी बार किसी स्कूल, कार्यालय, दुकान या थिएटर में व्हीलचेयर पर किसी को आते देखते हैं? दरअसल व्हीलचेयर पर इंसान आमतौर पर घर की चारदीवारी में सिमट कर रह जाता है। वह समुदाय से अलगयोगदान देने की उसकी क्षमता बहुत थलग हो जाता है और अर्थव्यवस्था में-कम हो जाती है,’ प्रोश्रीनिवासन बताती हैं। उन्होंने आगे कहा., ‘नियोमोशन स्टार्टअप की शुरुआत आर-2डी2 से की गई जिसे आईआईटी मद्रास ने इनक्युबेट किया। यह व्हीलचेयर भारत और पूरी दुनिया को ध्यान में रखकर विकसित की गई है।’

नियोफ्लाई और नियोबोल्ट को विकसित करने वाली टीम

नियोबोल्ट जैसे फीचर वाले उत्पाद विश्व बाजार में फिल्हाल तीन से पाँच गुना अधिक कीमतों पर उपलब्ध हैं।

स्टार्टअप ने नियोफ्लाई नाम से एक पर्सनलाइज्ड व्हीलचेयर भी डिजाइन की है। इसे व्यावसायिक स्तर पर भी पेश किया जा रहा है। यह स्वास्थ्य और जीवन शैली को ध्यान में रखकर ही विकसित की गई है। इसे 18 प्रकार से कस्टमाइज किया जा सकता है, जो यह दर्शाता है कि यह उपभोक्ता के लिए कितनी सुविधाजनक हो सकती है। नियोफ्लाई की कीमत 39000 रुपये है जबकि नियोबोल्ट मैकेनिज्म के साथ यह 55000 रुपये में आती है। इसे 1000 रुपये के पंजीकरण शुल्क के साथ आसान किस्तों पर भी खरीदा जा सकता है।इसके बारे में नियोमोशन के सहसंस्थापक और सीईओ स्वास्त-िक सौरव दास कहते हैं, 'वर्तमान में भारत के 28 राज्यों के 600 से अधिक लोग नियोफ्लाई और नियोबोल्ट का उपयोग कर रहे हैं। इनके बारे में उनकी राय बहुत सकारात्मक रही है।इसकी डेमो यूनिट पूरे भारत के प्रमुख शहरों में 15 डीलर आउटलेट और चार पुनर्वास केंद्रों में उपलब्ध हैं। इसमें यूनिक नियोफिट सिस्टम के साथ रिमोट कस्टमाइजेशन की सुविधा है ताकि नियोफ्लाई सही तरह से फिट हो कर उपयोगकर्ता के दरवाजे पर पहुंचे।'

नियोफ्लाई और नियोबोल्ट को कुछ खास विशेषताओं के साथ तैयार किया गया है। नियोफ्लाई व्हीलचेयर में मजबूत फ्रेम डिजाईन के साथ एंगल, फुटरेस्ट और बैकरेस्ट की ऊंचाई बदलने की विशेषताएं शामिल हैं। साथ ही इसके टायर पंचर नहीं होंगे। इसी क्रम में नियोबेल्ट को डिजिटल डैशबोर्ड, रिवर्स फंक्शन, 4 घंटे के रिचार्ज वाली लीथियम आयन बैटरी, हेडलाइट, साइड इंडिकेटर, हॉर्न, मिरर और खास डिजाइन के आसानी से उपयोग होने वाले अटैचमेंट जैसी विशेषताओं के साथ तैयार किया गया है। (इंडिया साइंस वायर)

दी इंडियन बुलेटिन

आईआईटी मद्रास ने विकसित की उन्नत मोटर चालित व्हीलचेयर

3 weeks ago

नियोबोल्ट पर चेन्नई के जेरार्ड एंथनी

नई दिल्ली: दिव्यांग और अशक्त लोगों के लिए बाहर निकलना, कहीं आना में दिशा इस है। कार्य चुनौतीपूर्ण एक जाना - प्रौद्योगिकी भारतीय है। जाता माना विकल्प कारगर एक बावजूद के सीमाओं अपनी उसकी को व्हीलचेयर चालित मोटर परिष्क और सुविधाजनक अपेक्षित एक का व्हीलचेयर चालित मोटर ने नवाचार एक के मद्रास (आईआईटी) संस्थानृत स्वरूप विकसित किया है।

आईआईटी मद्रास द्वारा विकसित इस व्हीलचेयर की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि यह भारत में विकसित पहले स्वदेशी मोटर से संचालित होने वाली व्हीलचेयर है। यह उबड़ उत्पाद इस है। सक्षम में चलने सुविधापुर्वक भी पर रास्तों खाबड़-प्रक की विकास के्रिया में आईआईटी लिए के लोगों पीड़ित से अशक्तता में फिरने -चलने ने शोधकर्ताओं के मद्रास-है। लिया सहयोग पूरा का अस्पतालों और संगठनों कार्यरत

इस व्हीलचेयर को नियोबोल्ट नाम दिया गया है। यह मोटर चालित व्हीलचेयर 25 किमी प्रति घंटा तक की तेजी से चल सकती है। एक चार्ज पर इससे 25 किमी की दूरी तय की जा सकती है। इसमें प्रयुक्तमोटरलिथियम से बैटरी आयन-कार यह लिए के वालों चलने पर व्हीलचेयर है। होता संचालित, ऑटोरिक्शा या मोडिफाइड स्कूटर की तुलना में आवागमन का कहीं अधिक सुविधाजनक, सुरक्षित और किफायती साधन है।

नियोफ्लाई का उपयोग करतीं बैंगलोर की डॉ राजलक्ष्मी

इसे विकसित करने वाली टीम का नेतृत्व आईआईटी मद्रास में मैकनेनिकल इंजीनियरिंग विभाग की प्रमुख प्रो सुजाता . की उपयोग व्यावसायिक इसके मिलकर साथ के स्टार्टअप के नाम नियोमोशन अब संस्थान किया। ने श्रीनिवासन रहा तलाश संभावनाएंहै। प्रो आईआईटी वहीं हैं। जुड़ी भी से स्टार्टअप इस संस्थापक-सह बतौर श्रीनिवासन सुजाता . स्वदेशी पहले के भारत श्रीनिवासन .प्रो कि है उल्लेखनीय हैं। सीईओ के नियोमेशन सौरव स्वास्तिक छात्र पूर्व के मद्रास व्हीलचेयर स्टैंडिंग के डिजाइन'अराइज' विकसित करने वाली टीम की प्रमुख भी हैं।

प्रो टडेवलपमें डिवाइस एंड रिसर्च रिहैबिलिटेशन फॉर सेंटर टीटीके स्थित मद्रास श्रीनिवासनआईआईटी सुजाता . आर)2डी2)की शिक्षा प्रमुख भी हैं।'हमारे केंद्र का उद्देश्य दिव्यांगों के जीवन में सकारात्मक परिवर्तन लाना है। इसके लिए हम उपयोगी साधनों का विकास करते हैं जो किफायती भी हों। आप कितनी बार किसी स्कूल, कार्यालय, दुकान या थिएटर में व्हीलचेयर पर किसी को आते देखते हैं? दरअसल व्हीलचेयर पर इंसान आमतौर पर घर की चारदीवारी में सिमट कर रह जाता है। वह समुदाय से अलगयो में अर्थव्यवस्था और है जाता हो थलग-गदान देने की उसकी क्षमता बहुत कम हो जाती है,' प्रोकहा आगे उन्होंने हैं। बताती श्रीनिवासन., 'नियोमोशन स्टार्टआर आतशुरु की अप-2डी2 से की गई जिसे आईआईटी मद्रास ने इनक्युबेट किया। यह व्हीलचेयर भारत और पूरी दुनिया को ध्यान में रखकर विकसित की गई है।'

नियोफ्लाई और नियोबोल्ट को विकसित करने वाली टीम

नियोबोल्ट जैसे फीचर वाले उत्पाद विश्व बाजार में फिल्हाल तीन से पाँच गुना अधिक कीमतों पर उपलब्ध हैं।

स्टार्टअप ने नियोफ्लाई नाम से एक पर्सनलाइज्ड व्हीलचेयर भी डिजाइन की है। इसे व्यावसायिक स्तर पर भी पेश किया जा रहा है। यह स्वास्थ्य और जीवन शैली को ध्यान में रखकर ही विकसित की गई है। इसे 18 प्रकार से कस्टमाइज किया जा सकता है, जो यह दर्शाता है कि यह उपभोक्ता के लिए कितनी सुविधाजनक हो सकती है। नियोफ्लाई की कीमत 39000 रुपये है जबकि नियोबोल्ट मैकेनिज्म के साथ यह 55000 रुपये में आती है। इसे 1000 रुपये के पंजीकरण शुल्क के साथ आसान किस्तों पर भी खरीदा जा सकता है।इसके बारे में नियोमोशन के सह सौरव स्वास्तिक सीईओ और पकसंस्था-हैं कहते दास, 'वर्तमान में भारत के 28 राज्यों के 600 से अधिक लोग नियोफ्लाई और नियोबोल्ट का उपयोग कर रहे हैं। इनके बारे में उनकी राय बहुत सकारात्मक रही है।इसकी डेमो यूनिट पूरे भारत के प्रमुख शहरों में 15 डीलर आउटलेट और चार पुनर्वास केंद्रों में उपलब्ध हैं। इसमें यूनिक नियोफिट सिस्टम के साथ रिमोट कस्टमाइजेशन की सुविधा है ताकि नियोफ्लाई सही तरह से फिट हो कर उपयोगकर्ता के दरवाजे पर पहुंचे।'

नियोफ्लाई और नियोबोल्ट को कुछ खास विशेषताओं के साथ तैयार किया गया है। नियोफ्लाई व्हीलचेयर में मजबूत फ्रेम डिजाईन के साथ एंगल, फुटरेस्ट और बैकरेस्ट की ऊंचाई बदलने की विशेषताएं शामिल हैं। साथ ही इसके टायर पंचर नहीं होंगे। इसी क्रम में नियोबेल्ट को डिजिटल डैशबोर्ड, रिवर्स फंक्शन, 4 घंटे के रिचार्ज वाली लीथियम आयन बैटरी, हेडलाइट, साइड इंडिकेटर, हॉर्न, मिरर और खास डिजाइन के आसानी से उपयोग होने वाले अटैचमेंट जैसी विशेषताओं के साथ तैयार किया गया है। (वायर साइंस इंडिया)

आईआईटी मद्रास ने विकसित की उन्नत मोटर चालित व्हीलचेयर

3 weeks ago

नियोबोल्ट पर चेन्नई के जेरार्ड एंथनी

नई दिल्ली: दिव्यांग और अशक्त लोगों के लिए बाहर निकलना, कहीं आना में दिशा इस है। कार्य चुनौतीपूर्ण एक जाना - मोटर चालित व्हीलचेयर को उसकी अपनी सीमाओं के बावजूद एक कारगर विकल्प माना जाता है। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान परिष्कृत और धाजनकसुवि अपेक्षित एक का व्हीलचेयर चालित मोटर ने नवाचार एक के मद्रास (आईआईटी) है। किया विकसित स्वरूप

आईआईटी मद्रास द्वारा विकसित इस व्हीलचेयर की सबसे बड़ी विशेषता यही है कि यह भारत में विकसित पहले स्वदेशी मोटर से संचालित होने वाली व्हीलचेयर है। यह उबड़ उत्पाद इस है। सक्षम में चलने सुविधापुर्वक भी पर रास्तों खाबड़-अशक्तता में फिरने -चलने ने शोधकर्ताओं के मद्रास-आईआईटी में प्रक्रिया की विकास के से पीड़ित लोगों के लिए कार्यरत संगठनों और अस्पतालों का पूरा सहयोग लिया है।

इस व्हीलचेयर को नियोबोल्ट नाम दिया गया है। यह मोटर चालित व्हीलचेयर 25 किमी प्रति घंटा तक की तेजी से चल सकती है। एक चार्ज पर इससे 25 किमी की दूरी तय की जा सकती है। इसमें प्रयुक्तमोटरलिथियम से बैटरी आयन-कार यह लिए के वालों चलने पर व्हीलचेयर है। होता संचालित, ऑटोरिक्शा या मोडिफाइड स्कूटर की तुलना में आवागमन का कहीं अधिक सुविधाजनक, सुरक्षित और किफायती साधन है।

नियोफ्लाई का उपयोग करतीं बैंगलोर की डॉ राजलक्ष्मी

इसे विकसित करने वाली टीम का नेतृत्व आईआईटी मद्रास में मैकनेनिकल इंजीनियरिंग विभाग की प्रमुख प्रो सुजाता . की उपयोग व्यावसायिक इसके मिलकर साथ के स्टार्टअप के नाम नियोमोशन अब संस्थान किया। ने श्रीनिवासन स-सह बतौर श्रीनिवासन सुजाता .प्रो है। रहा तलाश वनाएंसंभा ंस्थापक इस स्टार्टअप से भी जुड़ी हैं। वहीं आईआईटी मद्रास के पूर्व छात्र स्वास्तिक सौरव नियोमेशन के सीईओ हैं। उल्लेखनीय है कि प्रो स्वदेशी पहले के भारत श्रीनिवासन . व्हीलचेयर स्टैंडिंग के डिजाइन'अराइज' विकसित करने वाली टीम की प्रमुख भी हैं।

प्रोश्र सुजाता .ीनिवासनआईआईटी मद्रास स्थित टीटीके सेंटर फॉर रिहैबिलिटेशन रिसर्च एंड डिवाइस डेवलपमेंट आर)2डी2)की शिक्षा प्रमुख भी हैं।'हमारे केंद्र का उद्देश्य दिव्यांगों के जीवन में सकारात्मक परिवर्तन लाना है। इसके लिए हम उपयोगी साधनों का विकास करते हैं जो किफायती भी हों। आप कितनी बार किसी स्कूल, कार्यालय, दुकान या थिएटर में व्हीलचेयर पर किसी को आते देखते हैं? दरअसल व्हीलचेयर पर इंसान आमतौर पर घर की चारदीवारी में सिमट कर रह जाता है। वह समुदाय से अलग बहुत क्षमता उसकी की देने योगदान में व्यवस्थाअर्थ और है जाता हो थलग-ज हो कम ाती है,' प्रोकहा आगे उन्होंने हैं। बताती श्रीनिवासन., 'नियोमोशन स्टार्टआर शुरुआत की अप-2डी2 से की गई जिसे आईआईटी मद्रास ने इनक्युबेट किया। यह व्हीलचेयर भारत और पूरी दुनिया को ध्यान में रखकर विकसित की गई है।'

नियोफ्लाई और नियोबोल्ट को विकसित करने वाली टीम

नियोबोल्ट जैसे फीचर वाले उत्पाद विश्व बाजार में फिल्हाल तीन से पाँच गुना अधिक कीमतों पर उपलब्ध हैं।

स्टार्टअप ने नियोफ्लाई नाम से एक पर्सनलाइज्ड व्हीलचेयर भी डिजाइन की है। इसे व्यावसायिक स्तर पर भी पेश किया जा रहा है। यह स्वास्थ्य और जीवन शैली को ध्यान में रखकर ही विकसित की गई है। इसे 18 प्रकार से कस्टमाइज किया जा सकता है, जो यह दर्शाता है कि यह उपभोक्ता के लिए कितनी सुविधाजनक हो सकती है। नियोफ्लाई की कीमत 39000 रुपये है जबकि नियोबोल्ट मैकेनिज्म के साथ यह 55000 रुपये में आती है। इसे 1000 रुपये के पंजीकरण शुल्क के साथ आसान किस्तों पर भी खरीदा जा सकता है।इसके बारे में नियोमोशन के सह सौरव स्वास्तिक सीईओ और संस्थापक-हैं कहते दास, 'वर्तमान में भारत के 28 राज्यों के 600 से अधिक लोग नियोफ्लाई और नियोबोल्ट का उपयोग कर रहे हैं। इनके बारे में उनकी राय बहुत सकारात्मक रही है।इसकी डेमो यूनिट पूरे भारत के प्रमुख शहरों में 15 डीलर आउटलेट और चार पुनर्वास केंद्रों में उपलब्ध हैं। इसमें यूनिक नियोफिट सिस्टम के साथ रिमोट कस्टमाइजेशन की सुविधा है ताकि नियोफ्लाई सही तरह से फिट हो कर उपयोगकर्ता के दरवाजे पर पहुंचे।'

नियोफ्लाई और नियोबोल्ट को कुछ खास विशेषताओं के साथ तैयार किया गया है। नियोफ्लाई व्हीलचेयर में मजबूत फ्रेम डिजाईन के साथ एंगल, फुटरेस्ट और बैकरेस्ट की ऊंचाई बदलने की विशेषताएं शामिल हैं। साथ ही इसके टायर पंचर नहीं होंगे। इसी क्रम में नियोबेल्ट को डिजिटल डैशबोर्ड, रिवर्स फंक्शन, 4 घंटे के रिचार्ज वाली लीथियम आयन बैटरी, हेडलाइट, साइड इंडिकेटर, हॉर्न, मिरर और खास डिजाइन के आसानी से उपयोग होने वाले अटैचमेंट जैसी विशेषताओं के साथ तैयार किया गया है। (वायर साइंस इंडिया)

Voice of the Nation
ORGANISER

Government incentive in offing for 75 start-ups in telemedicine, artificial intelligence, and digital health

WEBDESK Aug 27, 2021, 12:00 AM IST

New Delhi: The Government of India will soon launch a special incentives scheme to support 75 start-ups in areas of telemedicine, digital health, and artificial intelligence (AI) to coincide with the 'Azadi ka Amrit Mahotsav' being celebrated in the country from August 15.

The scheme will be launched by the Biotechnology Industry Research Assistance Council (BIRAC), a public sector enterprise under the Department of Biotechnology, Government of India.

This was announced by the Union Minister of State (Independent Charge) Science & Technology, Minister of State (Independent Charge) Earth Sciences, and MoS PMO, Personnel, Public Grievances, Pensions, Atomic Energy and Space, Dr Jitendra Singh. He said that instructions to this effect had been conveyed to the members of BIRAC led by its

Chairperson, Dr. Renu Swarup, who is also Secretary, Department of Biotechnology (DBT), Ministry of Science and Technology.

Interacting with the Board of Directors of BIRAC, the Minister said the grand challenge to identify the top 75 innovations is the most appropriate task in the 75th Year of India’s Independence that will promote R&D in the health sector at a time when humanity the world over is dealing with the challenges posed by the COVID-19 pandemic.

He exhorted the senior officers to make efforts to reduce the turnaround time while supporting the startups to retain the edge over the private sector. He also called upon the Board of Directors of BIRAC to give startup applicants particular themes to focus on different aspects of tackling Covid-19.

BIRAC has been promoting and supporting new ventures under the Startup India and Make in India programmes in the areas of biotechnology ecosystem growth. The BIRAC has lent funding support of over Rs.2128 crore to more than 1,500 startups, enterprises, and SMEs. From supporting less than 50 biotechnology startups in 2012 with funding of less than Rs. 10 crores, the BIRAC is now funding over 5,000 biotech startups with over Rs. 2500 crore. By the year 2024, the BIRAC targets to support more than 10,000 biotech startups.

Earlier, Dr Jitendra Singh launched the e-office of BIRAC, and the BIRAC e-Office software was made live today. BIRAC e-Office Lite software has been deployed on NICSI server in testing mode from 1 st August 2021. The Union Minister of State said that the Digital India Mission is an ambitious project that will promote the country's prosperity by encouraging transparency and good governance.

BIRAC has an in-house BIRAC 3i portal to its credit, where all the applications and proposals are submitted online. This portal was launched in February 2010 and is a dynamic, robust, scalable application for science and innovative research fund management wherein various stakeholders like companies, institutes, and individuals submit their proposals online.

Ms. Anju Bhalla, Joint Secretary, DST, and Managing Director, BIRAC, and senior officers of BIRAC and DBT were also present at this event.

Courtesy: Indian Science Wire

Government Incentives in the Offing for Telemedicine, AI, and Digital Health Start-ups

Article By : India Science Wire

Category : AI | 2021-09-07

The Government of India will soon launch a special incentives scheme to support 75 start-ups in areas of telemedicine, digital health, and AI.

The Government of India will soon launch a special incentives scheme to support 75 start-ups in areas of telemedicine, digital health, and artificial intelligence (AI) to coincide with the 'Azadi ka Amrit Mahotsav' being celebrated in the country from August 15.

The scheme will be launched by the Biotechnology Industry Research Assistance Council (BIRAC), a public sector enterprise under the Department of Biotechnology, Government of India.

This was announced by the Union Minister of State (Independent Charge) Science & Technology, Minister of State (Independent Charge) Earth Sciences, and MoS PMO, Personnel, Public Grievances, Pensions, Atomic Energy and Space, Dr. Jitendra Singh. He said that instructions to this effect had

been conveyed to the members of BIRAC led by its Chairperson Dr. Renu Swarup, who is also Secretary, Department of Biotechnology (DBT), Ministry of Science and Technology.

Interacting with the Board of Directors of BIRAC, the Minister said the grand challenge to identify the top 75 innovations is the most appropriate task in the 75th Year of India's Independence that will promote R&D in the health sector at a time when humanity the world over is dealing with the challenges posed by the COVID-19 pandemic.

He exhorted the senior officers to make efforts to reduce the turnaround time while supporting the startups to retain the edge over the private sector. He also called upon the Board of Directors of BIRAC to give startup applicants particular themes to focus on different aspects of tackling Covid-19.

BIRAC has been promoting and supporting new ventures under the Startup India and Make in India program in the areas of biotechnology ecosystem growth. The BIRAC has lent funding support of over Rs.2128 crore to more than 1,500 startups, enterprises, and SMEs. From supporting less than 50 biotechnology startups in 2012 with funding of less than Rs. 10 crore, the BIRAC is now funding over 5,000 biotech startups with over Rs. 2500 crore. By the year 2024, the BIRAC targets to support more than 10,000 biotech startups.

Earlier, Dr. Singh launched the e-office of BIRAC. BIRAC e-Office Lite software has been deployed on NICSI server in testing mode from August 1, 2021. The Union Minister of State said that the Digital India Mission is an ambitious project that will promote the country's prosperity by encouraging transparency and good governance.

BIRAC has an in-house BIRAC 3i portal to its credit, where all the applications and proposals are submitted online. This portal was launched in February 2010 and is a dynamic, robust, scalable application for science and innovative research fund management wherein various stakeholders like companies, institutes and individuals submit their proposals online.

Anju Bhalla, Joint Secretary, DST, and Managing Director, BIRAC, and senior officers of BIRAC and DBT were also present at this event.

DELHI POST
Politics | Democracy | Development

Start Ups in Telemedicine and Artificial Intelligence

Government incentive in offing for 75 start-ups in telemedicine, artificial intelligence, and digital health.

By **Team DP** On **Aug 30, 2021**

The Government of India will soon launch a special incentives scheme to support 75 start-ups in areas of telemedicine, digital health, and artificial intelligence (AI) to coincide with the 'Azadika Amrit Mahotsav' being celebrated in the country from August 15.

The scheme will be launched by the Biotechnology Industry Research Assistance Council (BIRAC), a public sector enterprise under the Department of Biotechnology, Government of India.

This was announced by the Union Minister of State (Independent Charge) Science & Technology, Minister of State (Independent Charge) Earth Sciences, and MoS PMO, Personnel, Public Grievances, Pensions, Atomic Energy and Space, Dr Jitendra Singh. He said that instructions to this effect had been conveyed to the members of BIRAC led

by its Chairperson Dr. Renu Swarup, who is also Secretary, Department of Biotechnology (DBT), Ministry of Science and Technology.

Interacting with the Board of Directors of BIRAC, the Minister said the grand challenge to identify the top 75 innovations is the most appropriate task in the 75^{th} Year of India's Independence that will promote R&D in the health sector at a time when humanity the world over is dealing with the challenges posed by the COVID-19 pandemic.

He exhorted the senior officers to make efforts to reduce the turnaround time while supporting the startups to retain the edge over the private sector. He also called upon the Board of Directors of BIRAC to give startup applicants particular themes to focus on different aspects of tackling Covid-19.

BIRAC has been promoting and supporting new ventures under the Startup India and Make in India programmes in the areas of biotechnology ecosystem growth. The BIRAC has lent funding support of over Rs.2128 crore to more than 1,500 startups, enterprises, and SMEs. From supporting less than 50 biotechnology startups in 2012 with funding of less than Rs. 10 crore, the BIRAC is now funding over 5,000 biotech startups with over Rs. 2500 crore. By the year 2024, the BIRAC targets to support more than 10,000 biotech startups.

Earlier, DrJitendra Singh launched the e-office of BIRAC, and the BIRAC e-Office software was made live today. BIRAC e-Office Lite software has been deployed on NICSI server in testing mode from 1^{st} August 2021. The Union Minister of State said that the Digital India Mission is an ambitious project that will promote the country's prosperity by encouraging transparency and good governance.

BIRAC has an in-house BIRAC 3i portal to its credit, where all the applications and proposals are submitted online. This portal was launched in February 2010 and is a dynamic, robust, scalable application for science and innovative research fund management wherein various stakeholders like companies, institutes and individuals submit their proposals online.

Ms. Anju Bhalla, Joint Secretary, DST, and Managing Director, BIRAC, and senior officers of BIRAC and DBT were also present at this event. (India Science Wire)

Government incentive in offing for 75 start-ups in telemedicine, artificial intelligence, and digital health

Editor | Aug 29, 2021 - 15:51

The Indian government will shortly launch a special incentive programme to help 75 start-ups in the fields of telemedicine, digital health, and artificial intelligence (AI) to coincide with the country's August 15 'Azadi ka Amrit Mahotsav'.

The Biotechnology Industry Research Assistance Council (BIRAC), a public sector business under the Department of Biotechnology of the Government of India, will begin the scheme.

This was declared by Dr Jitendra Singh, Union Minister of State (Independent Charge) for Science and Technology, Minister of State (Independent Charge) for Earth Sciences, and Union Minister of State (Independent Charge) for Personnel, Public Grievances, Pensions, Atomic Energy, and Space. He stated that orders to this effect had been sent to the members of BIRAC, led by its Chairperson Dr. Renu Swarup, who is also the Secretary of the Ministry of Science and Technology's Department of Biotechnology (DBT).

Interacting with the BIRAC Board of Directors, the Minister stated that the grand challenge to identify the top 75 innovations is the most appropriate task for the 75th Anniversary of India's Independence because it will promote research and development in the health sector at a time when humanity is grappling with the COVID-19 pandemic.

He urged top officials to make efforts to shorten response times while assisting startups in maintaining an advantage over the private sector. He also urged the BIRAC Board of Directors to provide startup applicants specific themes to focus on certain aspects of combating Covid-19.

BIRAC has been promoting and assisting new ventures in the biotechnology ecosystem through the Startup India and Make in India programmes. The BIRAC has granted over Rs.2128 crore in capital to over 1,500 startups, companies, and SMEs. From less than 50 biotechnology businesses in 2012 with less than Rs. 10 crore in investment, the BIRAC today supports over 5,000 biotechnology startups with over Rs. 2500 crore in funding. By 2024, the BIRAC hopes to have supported over 10,000 biotech businesses.

Dr Jitendra Singh previously announced BIRAC's e-office, and the BIRAC e-Office software became online today. From August 1, 2021, BIRAC e-Office Lite software has been installed in testing mode on NICSI servers. According to the Union Minister of State, the Digital India Mission is a bold initiative that would advance the country's wealth by promoting transparency and good governance.

BIRAC boasts an in-house BIRAC 3i platform through which all applications and proposals are filed electronically. This site, which started in February 2010, is a dynamic, robust, and scalable tool for managing science and innovative research funds, allowing multiple stakeholders such as businesses, institutes, and individuals to submit proposals online.

Ms. Anju Bhalla, Joint Secretary, Department of Science and Technology, and Managing Director, BIRAC, as well as top officers from BIRAC and DBT, were also in attendance at this event.

Hindustan Saga

Government incentive in offing for 75 start-ups in telemedicine, artificial intelligence, and digital health

Hindustan Saga | 4 weeks ago

The Minister Interacting with the Board of Directors of BIRAC

New Delhi, Aug 26: The Government of India will soon launch a special incentives scheme to support 75 start-ups in areas of telemedicine, digital health, and artificial intelligence (AI) to coincide with the 'AzadikaAmritMahotsav' being celebrated in the country from August 15.

The scheme will be launched by the Biotechnology Industry Research Assistance Council (BIRAC), a public sector enterprise under the Department of Biotechnology, Government of India.

This was announced by the Union Minister of State (Independent Charge) Science & Technology, Minister of State (Independent Charge) Earth Sciences, and MoS PMO, Personnel, Public Grievances, Pensions, Atomic Energy and Space, DrJitendra Singh. He said that instructions to this effect had been conveyed to the members of BIRAC led by its Chairperson Dr. RenuSwarup, who is also Secretary, Department of Biotechnology (DBT), Ministry of Science and Technology.

Interacting with the Board of Directors of BIRAC, the Minister said the grand challenge to identify the top 75 innovations is the most appropriate task in the 75th Year of India's Independence that will promote R&D in the health sector at a time when humanity the world over is dealing with the challenges posed by the COVID-19 pandemic.

He exhorted the senior officers to make efforts to reduce the turnaround time while supporting the startups to retain the edge over the private sector. He also called upon the Board of Directors of BIRAC to give startup applicants particular themes to focus on different aspects of tackling Covid-19.

BIRAC has been promoting and supporting new ventures under the Startup India and Make in India programmes in the areas of biotechnology ecosystem growth. The BIRAC has lent funding support of over Rs.2128 crore to more than 1,500 startups, enterprises, and SMEs. From supporting less than 50 biotechnology startups in 2012 with funding of less than Rs. 10 crore, the BIRAC is now funding over 5,000 biotech startups with over Rs. 2500 crore. By the year 2024, the BIRAC targets to support more than 10,000 biotech startups.

Earlier, DrJitendra Singh launched the e-office of BIRAC, and the BIRAC e-Office software was made live today. BIRAC e-Office Lite software has been deployed on NICSI server in testing mode from 1st August 2021. The Union Minister of State said that the Digital India Mission is an ambitious project that will promote the country’s prosperity by encouraging transparency and good governance.

BIRAC has an in-house BIRAC 3i portal to its credit, where all the applications and proposals are submitted online. This portal was launched in February 2010 and is a dynamic, robust, scalable application for science and innovative research fund management wherein various stakeholders like companies, institutes and individuals submit their proposals online.

Ms. Anju Bhalla, Joint Secretary, DST, and Managing Director, BIRAC, and senior officers of BIRAC and DBT were also present at this event. (India Science Wire)

DELHI POST
Politics | Democracy | Development

Planet of Possibilities-MARS

By **ISW Desk** On **Aug 31, 2021**

Mars is the fourth planet of the solar system from the Sun outwards. Popularly known as the 'Red Planet', Mars is half the size of the Earth, and with the temperature dropping down to minus 80 degrees Fahrenheit it is considered to be one of the coldest planets. It has one-third of the gravity of Earth and is full of canyons, volcanoes, and craters. Yet, studies conducted through satellites and robots have indicated that Mars is a planet of many possibilities.

Earth keeps getting rocks of different shapes and sizes from Mars. One of the most controversial was 'Allen Hills 84001', a Martian meteorite that struck the Earth in 1996. It was found to contain shapes resembling small fossils. The study attracted a lot of media attention but nothing came out of it. In 2018, again there was a flurry of activities when another study found another meteorite rock to be carrying signs of organic molecules. It was speculated that the molecules may have formed on Mars through chemical reactions.

After a lot of unsuccessful attempts, in 1996, two crafts launched by the United States of America's NASA – Mars Global Surveyor,and Mars Pathfinder successfully reached the planet. Mars Pathfinder carried a small robot onboard named Sojourner. It was the first wheeled rover to explore a planet's surface. NASA then launched Mars Odyssey in 2001 which discovered a vast amount of ice beneath the surface of the Red Planet, indicating the possibility for life on the planet. This accelerated the study on Mars and one after the other NASA kept sending crafts to it.

In 2003, Mars passed closest to Earth in 60,000 years. NASA took the opportunity to launch two rovers, nicknamed Spirit and Opportunity, which studied different regions of the Martian surface. Both rovers discovered signs that water once flowed on the planet's surface. In 2008, NASA launched the mission 'Phoenix' in search of water and succeeded. Several space research organizations in other parts of the world have also sent their spacecraft and have gathered a pile of evidence that indicates the possibility for life on Mars.

India launched its first mission to Mars in November 2013 and it entered Mars' orbit in September 2014. It was India's first attempt to reach another planet and it was highly successful. The mission cost Rs 450 crore, making it one of the least expensive missions to Mars to date. The cost was lower than the money put into making the science fiction film, 'Gravity'.

While the mission was designed to work for a period of six months, it is now in its seventh year running. It has returned thousands of pictures of the Red Planet adding up to over two terabytes. The Indian Space Research Organisation (ISRO) is now working on a second Mars mission. It has asked the scientific community for suggestions for experiments that may be carried out and is in the process of receiving these inputs. "Once we get these suggestions, we will prepare a project report. Then we will go to Space Commission," ISRO Chairman, Dr. K.Sivan said.

All these research activities over the past several years have captivated the imagination of the world and have led to the generation of a dream of human colonization of planet Red in the future. However, it is currently just an idea. Evidence found till now suggests that there was a time when Mars had a livable habitat. Scientists and researchers are looking for the future possibilities of sustainable life on Mars.

The idea to colonize Mars is directly connected to the benefits for humankind. It may enable the growth of humans as a species as it could enable economic benefits. A colonised Mars may also help if anything apocalyptic were to happen in the future that would demand the immediate evacuation of human species from earth. However, there are some risks involved with it. (Indian Science Wire)

(Slider Image: Regional dust storm activities over Northern Hemisphere of Mars – captured by Mars Colour Camera (MCC) onboard India's Mars Orbiter Spacecraft Source: ISRO)

Voice of the Nation
ORGANISER

Planet of possibilities-MARS

WEBDESK Aug 27, 2021, 12:00 AM IST

New Delhi: Mars is the fourth planet of the solar system from the Sun outwards. Popularly known as the ‘Red Planet’, Mars is half the size of the Earth, and with the temperature dropping down to minus 80 degrees Fahrenheit it is considered to be one of the coldest planets. It has one-third of the gravity of Earth and is full of canyons, volcanoes, and craters. Yet, studies conducted through satellites and robots have indicated that Mars is a planet of many possibilities.

Earth keeps getting rocks of different shapes and sizes from Mars. One of the most controversial was ‘Allen Hills 84001’, a Martian meteorite that struck the Earth in 1996. It was found to contain shapes resembling small fossils. The study attracted a lot of media attention, but nothing came out of it. In 2018,

again, there was a flurry of activities when another study found another meteorite rock to be carrying signs of organic molecules. It was speculated that the molecules might have formed on Mars through chemical reactions.

After a lot of unsuccessful attempts, in 1996, two crafts launched by the United States of America's NASA - Mars Global Surveyor and Mars Pathfinder successfully reached the planet.

Mars Pathfinder carried a small robot onboard named Sojourner. It was the first wheeled rover to explore a planet's surface. NASA then launched Mars Odyssey in 2001, which discovered a vast amount of ice beneath the surface of the Red Planet, indicating the possibility for life on the planet. This accelerated the study on Mars, and one after the other, NASA kept sending crafts to it.

In 2003, Mars passed closest to Earth in 60,000 years. NASA took the opportunity to launch two rovers, nicknamed Spirit and Opportunity, which studied different regions of the Martian surface. Both rovers discovered signs that water once flowed on the planet's surface. In 2008, NASA launched the mission 'Phoenix' in search of water and succeeded. Several space research organisations in other parts of the world have also sent their spacecraft and have gathered a pile of evidence that indicates the possibility for life on Mars.

India launched its first mission to Mars in November 2013, and it entered Mars' orbit in September 2014.

It was India's first attempt to reach another planet, and it was highly successful. The mission cost Rs 450 crore, making it one of the least expensive missions to Mars to date. The cost was lower than the money put into making the science fiction film, 'Gravity'.

While the mission was designed to work for a period of six months, it is now in its seventh year running.

It has returned thousands of pictures of the Red Planet, adding up to over two terabytes. The Indian Space Research Organisation (ISRO) is now working on a second Mars mission. It has asked the scientific community for suggestions for experiments that may be carried out and is in the process of receiving these inputs. "Once we get these suggestions, we will prepare a project report. Then we will go to Space Commission," ISRO Chairman Dr. K.Sivan said.

All these research activities over the past several years have captivated the imagination of the world and have led to the generation of a dream of human colonisation of planet Red in the future. However, it is currently just an idea. Evidence found till now suggests that there was a time when Mars had a livable habitat. Scientists and researchers are looking for the future possibilities of sustainable life on Mars.

The idea to colonise Mars is directly connected to the benefits for humankind. It may enable the growth of humans as a species as it could enable economic benefits. A colonised Mars may also help if anything apocalyptic were to happen in the future that would demand the immediate evacuation of human species from earth. However, there are some risks involved with it.

Courtesy: Indian Science Wire

Voice of the Nation
ORGANISER

Vaccine against Chikungunya in making

WEBDESK Aug 27, 2021, 12:00 AM IST

New Delhi: A new weapon against the debilitating infection of Chikungunya could soon be in the offing. A multi-country Phase II/III clinical trial of a vaccine led by the International Vaccine Institute (IVI) in partnership with Bharat Biotech International Ltd (BBIL) began in Costa Rica on Tuesday. It is funded by the Coalition for Epidemic Preparedness Innovations (CEPI) with support from the Ind-CEPI mission of the Department of Biotechnology (DBT), India.

IVI is advancing the vaccine's clinical development named BBV87 through Phase II/III randomized, controlled trial to evaluate the safety and immunogenicity of a 2-dose regimen in healthy adults at nine clinical trial sites across five countries with endemic Chikungunya.

The Global Chikungunya vaccine Clinical Development Programme (GCCDP) seeks to develop and manufacture an affordable Chikungunya vaccine to achieve WHO prequalification to enable its distribution in low- and middle-income countries, consistent with CEPI’s core commitment to equitable access, affordability, and sustainability.

As needed, CEPI or Bharat Biotech International Ltd may propose a third-party for manufacturing of a stockpile of the investigational product to be used for further clinical trials in outbreak conditions to advance vaccine development, or under an emergency use authorization in emergencies, based on national or international guidance (such as by the WHO).

Dr. Krishna Ella, Chairman and Managing Director of Bharat Biotech, said: “The vaccine candidate is an ingenious, well-researched vaccine. The human trial has begun an important trial phase in furthering the evaluation of safety and immunogenicity.”

Dr. Sushant Sahastrabuddhe, acting Associate Director-General at IVI and Principal Investigator of GCCDP, said: “The start of this trial in Costa Rica is a significant milestone in the effort to make available a safe, effective, and affordable Chikungunya vaccine for the one billion people around the world at risk of Chikungunya virus infection.”

The launch of the trial furthers CEPI’s US dollars 3.5billion plan, launched in March 2021, to tackle future epidemics and pandemics. CEPI first partnered with IVI and BBIL in June 2020, providing up to US dollars 14.1 million for vaccine manufacturing and clinical development of the BBV87 vaccine candidate.

The funding is supported by the European Union’s (EU’s) Horizon 2020 programme. The consortium was also supported with a grant of up to US dollar 2.0 million from the Indian Government’s Ind-CEPI initiative to fund the set-up of GMP manufacturing facilities for the vaccine in India and subsequent manufacture of clinical trial materials.

“It is very encouraging to witness the commencement of Phase II/III study of BBV87 in Costa Rica. This milestone is a first step towards developing a promising vaccine candidate against Chikungunya, an exhausting disease,” said Dr. Renu Swarup, Secretary, DBT.

BBV87 vaccine is an inactivated whole virion vaccine based on a strain derived from an East, Central, South African (ECSA) genotype.

Inactivated virions technology has a safety profile that potentially makes this vaccine accessible to special populations, such as the immunocompromised and pregnant women, that some other technologies cannot reach.

Courtesy: India Science Wire

DownToEarth | डाउन टू अर्थ

The world may soon get a vaccine against Chikungunya

A multi-country Phase II / III clinical trial of a vaccine led by the International Vaccine Institute in partnership with Bharat Biotech International Ltd began in Costa Rica August 24

By India Science Wire
Published: Thursday 26 August 2021

A new weapon against the debilitating infection of Chikungunya could soon be in the offing. A multi-country Phase II / III clinical trial of a vaccine led by the International Vaccine Institute (IVI) in partnership with Bharat Biotech International Ltd (BBIL) began in Costa Rica August 24, 2021.

It is funded by the Coalition for Epidemic Preparedness Innovations (CEPI) with support from the Ind-CEPI mission of the Department of Biotechnology (DBT), India.

IVI is advancing the clinical development of the vaccine named BBV87 through Phase II / III randomised, controlled trial to evaluate the safety and immunogenicity of a 2-dose regimen in healthy adults at nine clinical trial sites across five countries with endemic Chikungunya.

The Global Chikungunya Vaccine Clinical Development Programme (GCCDP) seeks to develop and manufacture an affordable Chikungunya vaccine to achieve WHO prequalification to enable its distribution in low- and middle-income countries, consistent with CEPI's core commitment to equitable access, affordability, and sustainability.

As needed, CEPI or Bharat Biotech International Ltd may propose a third-party for manufacturing of a stockpile of the investigational product to be used for further clinical trials in outbreak conditions to advance vaccine development, or under an emergency use authorization in emergencies, based on national or international guidance (such as by the WHO).

Krishna Ella, chairman and managing director, Bharat Biotech, said: "The vaccine candidate is an ingenious, well-researched vaccine. The human trial has begun an important trial phase in furthering the evaluation of safety and immunogenicity."

Sushant Sahastrabuddhe, acting associate director general at IVI and principal investigator of GCCDP, said: "The start of this trial in Costa Rica is a significant milestone in the effort to make available a safe, effective, and affordable Chikungunya vaccine for the one billion people around the world at risk of Chikungunya virus infection."

The launch of the trial furthers CEPI's $3.5billion plan, launched in March 2021, to tackle future epidemics and pandemics. CEPI first partnered with IVI and BBIL in June 2020, providing up to $14.1 million for vaccine manufacturing and clinical development of the BBV87 vaccine candidate.

The funding is supported by the European Union's Horizon 2020 programme. The consortium was also supported with a grant of up to $2.0 million from the Indian Government's Ind-CEPI initiative to fund the set-up of GMP manufacturing facilities for the vaccine in India and subsequent manufacture of clinical trial materials.

"It is very encouraging to witness the commencement of Phase II / III study of BBV87 in Costa Rica. This milestone is a first step towards developing a promising vaccine candidate against Chikungunya, an exhausting disease," said Renu Swarup, secretary, DBT.

BBV87 vaccine is an inactivated whole virion vaccine based on a strain derived from an East, Central and South African genotype. Inactivated virions technology has a safety profile that potentially makes this vaccine accessible to special populations, such as the immunocompromised and pregnant women, that some other technologies cannot reach.

DELHI POST
Politics | Democracy | Development

Vaccine Against Chikungunya in Making

By ISW Desk On Aug 27, 2021

A new weapon against the debilitating infection of Chikungunya could soon be in the offing. A multi-country Phase II/III clinical trial of a vaccine led by the International Vaccine Institute (IVI) in partnership with Bharat Biotech International Ltd (BBIL) began in Costa Rica on Tuesday. It is funded by the Coalition for Epidemic Preparedness Innovations (CEPI) with support from the Ind-CEPI mission of the Department of Biotechnology (DBT), India.

IVI is advancing the clinical development of the vaccine named BBV87 through Phase II/III randomized, controlled trial to evaluate the safety and immunogenicity of a 2-dose regimen in healthy adults at nine clinical trial sites across five countries with endemic Chikungunya.
The Global Chikungunya vaccine Clinical Development Programme (GCCDP) seeks to develop and manufacture an affordable Chikungunya vaccine to achieve WHO prequalification to enable its distribution in low- and middle-income countries, consistent with CEPI's core commitment to equitable access, affordability, and sustainability.

As needed, CEPI or Bharat Biotech International Ltd may propose a third-party for manufacturing of a stockpile of the investigational product to be used for further clinical trials in outbreak conditions to advance vaccine development, or under an emergency use authorization in emergencies, based on national or international guidance (such as by the WHO).

Dr. Krishna Ella, Chairman and Managing Director of Bharat Biotech, said: “The vaccine candidate is an ingenious, well-researched vaccine. The human trial has begun an important trial phase in furthering the evaluation of safety and immunogenicity.”

Dr. Sushant Sahastrabuddhe, acting Associate Director General at IVI and Principal Investigator of GCCDP, said: “The start of this trial in Costa Rica is a significant milestone in the effort to make available a safe, effective, and affordable Chikungunya vaccine for the one billion people around the world at risk of Chikungunya virus infection.”

The launch of the trial furthers CEPI’s US dollars 3.5billion plan, launched in March 2021, to tackle future epidemics and pandemics. CEPI first partnered with IVI and BBIL in June 2020, providing up to US dollars 14.1 million for vaccine manufacturing and clinical development of the BBV87 vaccine candidate.

The funding is supported by the European Union’s (EU’s) Horizon 2020 programme. The consortium was also supported with a grant of up to US dollar 2.0 million from the Indian Government’s Ind-CEPI initiative to fund the set-up of GMP manufacturing facilities for the vaccine in India and subsequent manufacture of clinical trial materials.

“It is very encouraging to witness the commencement of Phase II/III study of BBV87 in Costa Rica. This milestone is a first step towards developing a promising vaccine candidate against Chikungunya, an exhausting disease,” said Dr. Renu Swarup, Secretary, DBT.

BBV87 vaccine is an inactivated whole virion vaccine based on a strain derived from an East, Central, South African (ECSA) genotype. Inactivated virions technology has a safety profile that potentially makes this vaccine accessible to special populations, such as the immunocompromised and pregnant women, that some other technologies cannot reach.

हस्तक्षेप.com

उनकी खबरें जो खबर नहीं बनतीं

आईआईटी गुवहाटी ने विकसित किया उन्नत ऊर्जा-भंडारण उपकरणों के लिए हाइड्रोजेल आधारित इलेक्ट्रोड्स

हाइड्रोजेल के निर्माण में शोधकर्ताओं ने ग्रेफीन और मैक्सीन नामक दो नैनोशीट्स का इस्तेमाल किया है जो दो भिन्न प्रक्रियाओं द्वारा चार्जिंग को संचित करते हैं।

By amalendu upadhyay | Fri, 27 Aug 2021

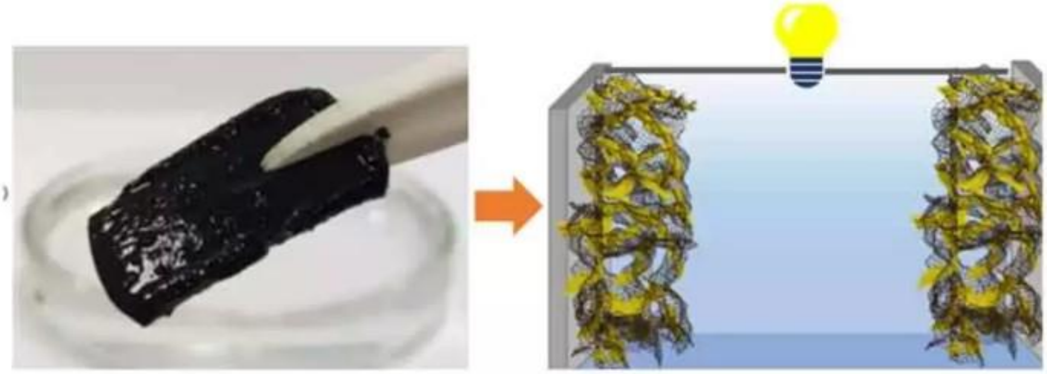

IIT Guwahati develops hydrogel based electrodes for advanced energy-storage devices

नई दिल्ली, 26 अगस्त, 2021: एनर्जी स्टोर करने वाली डिवाइसों की क्षमताएं बढ़ाने की दिशा में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी) गुवाहाटी के शोधार्थियों को एक बड़ी सफलता मिली है। शोधकर्ताओं ने हाइड्रोजेल आधारित इलेक्ट्रोड्स विकसित किए हैं जो ऊर्जा संचित करने वाले उपकरणों की कुशलता बढ़ाने में उपयोगी हो सकते हैं।

हाइड्रोजेल क्या होते हैं

हाइड्रोजेल असल में इंटरकनेक्टेड मैटीरियल्स का एक छिद्रयुक्त ढांचा होता है जिसके छिद्रों में जमा पानी बाहर नहीं निकल सकता। हाइड्रोजेल के निर्माण में शोधकर्ताओं ने ग्रेफीन और मैक्सीन नामक दो नैनोशीट्स का इस्तेमाल किया है जो दो भिन्न प्रक्रियओं द्वारा चार्जिंग को संचित करते हैं।

क्या है इस परियोजना का लक्ष्य

आईआईटी गुवाहाटी के भौतिकी विभाग में इस शोध का नेतृत्व डॉ. उदय नारायण मैती ने किया। इसमें उन्हें आईआईटी गुवाहाटी के प्रो. शुभ्रादीप घोष और भाभा एटॉमिक रिसर्च सेंट (बीएआरसी) में भौतिकी समूह की डॉ. एन पद्मा का भी सहयोग मिला। इस परियोजना का लक्ष्य सुपरकैपिसिटर डिवाइसों में एनर्जी स्टोरेज के प्रदर्शन को सुधारना है।

इस शोध की विशिष्टताओं को रेखांकित करते हुए आईआईटी गुवाहाटी में भौतिकी विभाग से जुड़े डॉ. उदय नारायण मैती ने कहा, 'इसका सबसे उल्लेखनीय पहलू इसकी व्यापक सरलता में निहित है। इसकी व्यापकता और रूम टेंपरेचर पर संचालित होने वाली इसकी प्रक्रिया तापमान को लेकर संवेदनशील मैक्सीन नैनोशीट को अपना गुणधर्म बदलने से रोकती है, जिससे डिवाइस का बेहतर प्रदर्शन सुनिश्चित होता है।'

हाइड्रोजेल इलेक्ट्रोड्स में ग्रेफीन और मैक्सीन एक जलीय माध्यम में डूबी धात्विक प्लेटों से स्वयं को एक साथ जोड़ लेती हैं। इसमें सिंगल एटम थिन कार्बन शीट वाली ग्रेफीन भौतिक अवशोषण के माध्यम से चार्जिंग को अपनी सरफेस (तल) पर संग्रहित करती है। वहीं टाइटेनियम कार्बाइड की नैनोशीट्स मैक्सीन अपनी सरफेस पर इलेक्ट्रिकल डबल लेयर मैकेनिज्म (ईएलडीसी) और रासायनिक अभिक्रियाओं दोनों के माध्यम से चार्जिंग को संग्रहित करता है।

सुपरकैपेसिटर्स में दो इलेक्ट्रोड्स (एनोड और कैथोड) होते हैं। ये इलेक्ट्रोलाइट सॉल्यूशंस में डूबे रहते हैं। इसमें ऊर्जा चार्जिंग के माध्यम से इलेक्ट्रोड्स सरफेस पर संग्रहित होती है। एटॉमिक-थिन शीट जैसे मैटीरियल सुपरकैपेसिटर्स के लिए सबसे उत्तम विकल्प माने जा रहे हैं। इन्हें नैनोशीट्स भी कहा जाता है। हालांकि माइक्रोस्कोपिक अल्ट्रा-स्मॉल नैनोशीट्स को उपयोग योग्य माइक्रोस्कोपिक स्केल के साथ एकीकृत करना बहुत चुनौतीपूर्ण कार्य है।

शोधार्थियों ने अपने इस प्रयोग को व्यापक स्तर पर परखा भी है। उन्होंने 10,000 से अधिक बार इसमें चार्जिंग-डिस्चार्जिंग करके उसकी गहन पड़ताल की है, जिसमें प्रदर्शन में मामूली उतार-चढ़ाव ही देखने को मिला।

उन्होंने इलेक्ट्रोड मैटीरियल की 1.13 केजी पावर डेन्सिटी का उच्चतम स्तर तक हासिल किया, जो वर्तमान में उपलब्ध लीथियम-आयन बैटरियों की क्षमता से लगभग दोगुना अधिक है। यह शोध हाल में 'इलेक्ट्रोचिमिका एक्टा' और 'कार्बन' में प्रकाशित भी हुआ है।

(इंडिया साइंस वायर)

FLIPBOARD

आईआईटी गुवहाटी ने विकसित किया उन्नत ऊर्जा-भंडारण उपकरणों के लिए हाइड्रोजेल आधारित इलेक्ट्रोड्स

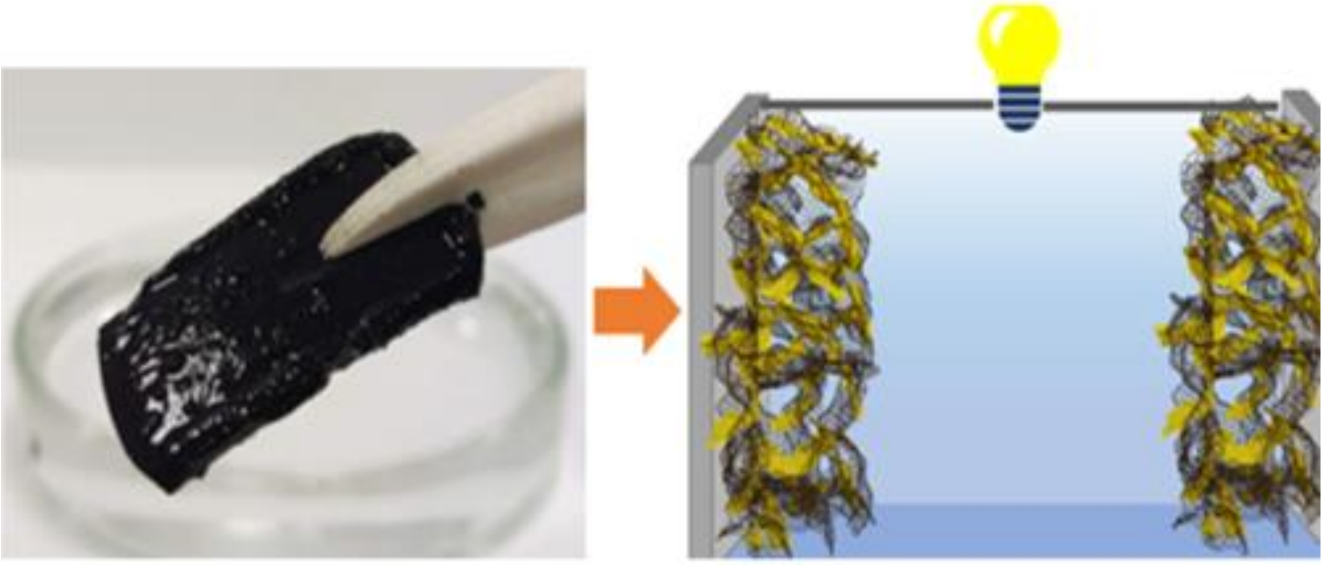

[prabhasakshi.com - प्रभासाक्षी न्यूज नेटवर्क • 23d]

एनर्जी स्टोर करने वाली डिवाइसों की क्षमताएं बढ़ाने की दिशा में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी) गुवाहाटी के शोधार्थियों को एक बड़ी सफलता मिली है। ...

Read more on prabhasakshi.com

प्रभासाक्षी

आईआईटी गुवहाटी ने विकसित किया उन्नत ऊर्जा-भंडारण उपकरणों के लिए हाइड्रोजेल आधारित इलेक्ट्रोड्स

इंडिया साइंस वायर Aug 27, 2021 16:48

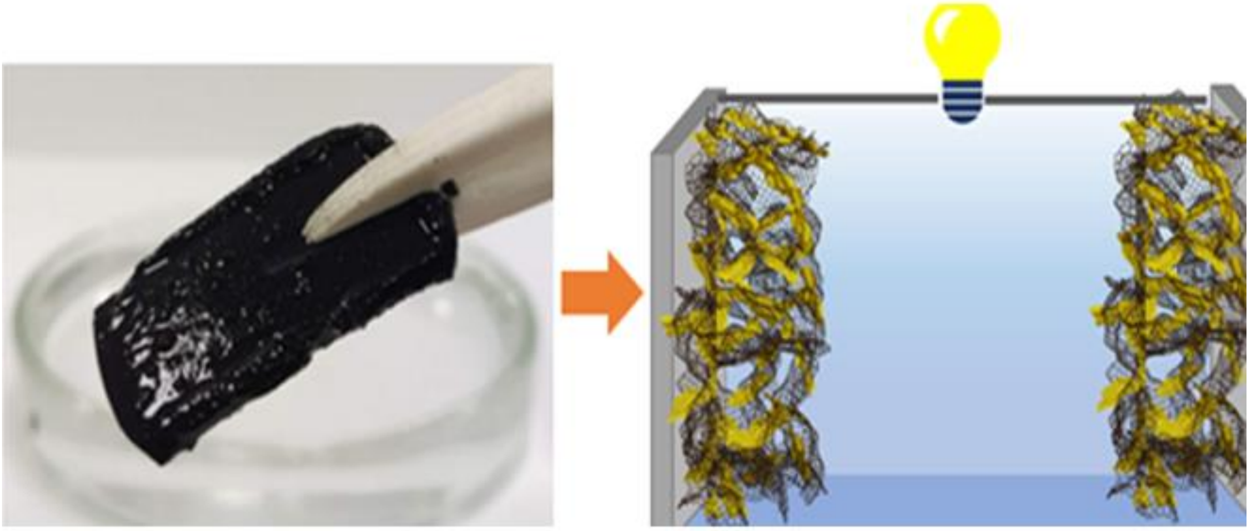

> *आईआईटी गुवाहाटी के भौतिकी विभाग में इस शोध का नेतृत्व डॉ. उदय नारायण मैती ने किया। इसमें उन्हें आईआईटी गुवाहाटी के प्रो. शुभ्रादीप घोष और भाभा एटॉमिक रिसर्च सेंट (बीएआरसी) में भौतिकी समूह की डॉ. एन पद्मा का भी सहयोग मिला।*

एनर्जी स्टोर करने वाली डिवाइसों की क्षमताएं बढ़ाने की दिशा में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी) गुवाहाटी के शोधार्थियों को एक बड़ी सफलता मिली है। शोधकर्ताओं ने हाइड्रोजेल आधारित इलेक्ट्रोड्स विकसित किए हैं जो ऊर्जा संचित करने वाले उपकरणों की कुशलता बढ़ाने में उपयोगी हो सकते हैं। हाइड्रोजेल असल में इंटरकनेक्टेड मैटीरियल्स का एक छिद्रयुक्त ढांचा होता है जिसके छिद्रों में जमा पानी बाहर नहीं निकल सकता। हाइड्रोजेल के निर्माण में शोधकर्ताओं ने ग्रेफीन और मैक्सीन नामक दो नैनोशीट्स का इस्तेमाल किया है जो दो भिन्न प्रक्रियाओं द्वारा चार्जिंग को संचित करते हैं।

आईआईटी गुवाहाटी के भौतिकी विभाग में इस शोध का नेतृत्व डॉ. उदय नारायण मैती ने किया। इसमें उन्हें आईआईटी गुवाहाटी के प्रो. शुभ्रादीप घोष और भाभा एटॉमिक रिसर्च सेंट (बीएआरसी) में भौतिकी समूह की डॉ. एन पद्मा का भी सहयोग मिला। इस परियोजना का लक्ष्य सुपरकैपिसिटर डिवाइसों में एनर्जी स्टोरेज के प्रदर्शन को सुधारना है।

इस शोध की विशिष्टताओं को रेखांकित करते हुए आईआईटी गुवाहाटी में भौतिकी विभाग से जुड़े डॉ. उदय नारायण मैती ने कहा, 'इसका सबसे उल्लेखनीय पहलू इसकी व्यापक सरलता में निहित है। इसकी व्यापकता और रूम टेंपरेचर पर संचालित होने वाली इसकी प्रक्रिया तापमान को लेकर संवेदनशील मैक्सीन नैनोशीट को अपना गुणधर्म बदलने से रोकती है, जिससे डिवाइस का बेहतर प्रदर्शन सुनिश्चित होता है।'

हाइड्रोजेल इलेक्ट्रोड्स में ग्रेफीन और मैक्सीन एक जलीय माध्यम में डूबी धात्विक प्लेटों से स्वयं को एक साथ जोड़ लेती हैं। इसमें सिंगल एटम थिन कार्बन शीट वाली ग्रेफीन भौतिक अवशोषण के माध्यम से चार्जिंग को अपनी सरफेस (तल) पर संग्रहित करती है। वहीं टाइटेनियम कार्बाइड की नैनोशीट्स मैक्सीन अपनी सरफेस पर इलेक्ट्रिकल डबल लेयर मैकेनिज्म (ईएलडीसी) और रासायनिक अभिक्रियाओं दोनों के माध्यम से चार्जिंग को संग्रहित करता है।

सुपरकैपेसिटर्स में दो इलेक्ट्रोड्स (एनोड और कैथोड) होते हैं। ये इलेक्ट्रोलाइट सॉल्यूशंस में डूबे रहते हैं। इसमें ऊर्जा चार्जिंग के माध्यम से इलेक्ट्रोड्स सरफेस पर संग्रहित होती है। एटॉमिक-थिन शीट जैसे मैटीरियल सुपरकैपेसिटर्स के लिए सबसे उत्तम विकल्प माने जा रहे हैं। इन्हें नैनोशीट्स भी कहा जाता है। हालांकि माइक्रोस्कोपिक अल्ट्रा-स्मॉल नैनोशीट्स को उपयोग योग्य माइक्रोस्कोपिक स्केल के साथ एकीकृत करना बहुत चुनौतीपूर्ण कार्य है।

शोधार्थियों ने अपने इस प्रयोग को व्यापक स्तर पर परखा भी है। उन्होंने 10,000 से अधिक बार इसमें चार्जिंग-डिस्चार्जिंग करके उसकी गहन पड़ताल की है, जिसमें प्रदर्शन में मामूली उतार-चढ़ाव ही देखने को मिला। उन्होंने इलेक्ट्रोड मैटीरियल की 1.13 केजी पावर डेन्सिटी का उच्चतम स्तर तक हासिल किया, जो वर्तमान में उपलब्ध लीथियम-आयन बैटरियों की क्षमता से लगभग दोगुना अधिक है। यह शोध हाल में 'इलेक्ट्रोचिमिका एक्टा' और 'कार्बन' में प्रकाशित भी हुआ है।

इंडिया साइंस वायर

भारत हेराल्ड

आईआईटी गुवहाटी ने विकसित किया उन्नत ऊर्जा-भंडारण उपकरणों के लिए हाइड्रोजेल आधारित इलेक्ट्रोड्स

4 weeks ago

नई दिल्ली: एनर्जी स्टोर करने वाली डिवाइसों की क्षमताएं बढ़ाने की दिशा में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी) गुवाहाटी के शोधार्थियों को एक बड़ी सफलता मिली है। शोधकर्ताओं ने हाइड्रोजेल आधारित इलेक्ट्रोड्स विकसित किए हैं जो ऊर्जा संचित करने वाले उपकरणों की कुशलता बढ़ाने में उपयोगी होसकते हैं। हाइड्रोजेल असल में इंटरकनेक्टेड मैटीरियल्स का एक छिद्रयुक्त ढांचा होता है जिसके छिद्रों में जमा पानी बाहर नहीं निकल सकता। हाइड्रोजेल के निर्माण में शोधकर्ताओं ने ग्रेफीन और मैक्सीन नामक दो नैनोशीट्स का इस्तेमाल किया है जो दो भिन्न प्रक्रियओं द्वारा चार्जिंग को संचित करते हैं।
आईआईटी गुवाहाटी के भौतिकी विभाग में इस शोध का नेतृत्व डॉ. उदय नारायण मैती ने किया। इसमें उन्हें आईआईटी गुवाहाटी के प्रो. शुभ्रादीप घोष और भाभा एटॉमिक रिसर्च सेंट (बीएआरसी) में भौतिकी समूह की डॉ. एन पद्मा का भी सहयोग मिला। इस परियोजना का लक्ष्य सुपरकैपिसिटर डिवाइसों में एनर्जी स्टोरेज के प्रदर्शन को सुधारना है।

इस शोध की विशिष्टताओं को रेखांकित करते हुए आईआईटी गुवाहाटी में भौतिकी विभाग से जुड़े डॉ. उदय नारायण मैती ने कहा, 'इसका सबसे उल्लेखनीय पहलू इसकी व्यापक सरलता में निहित है। इसकी व्यापकता और रूम टेंपरेचर पर संचालित होने वाली इसकी प्रक्रिया तापमान को लेकर संवेदनशील मैक्सीन नैनोशीटको अपना गुणधर्म बदलने से रोकती है, जिससे डिवाइस का बेहतर प्रदर्शन सुनिश्चित होता है।'

हाइड्रोजेल इलेक्ट्रोड्स में ग्रेफीन और मैक्सीन एक जलीय माध्यम में डूबी धात्विक प्लेटों से स्वयं को एक साथ जोड़ लेती हैं। इसमें सिंगल एटम थिन कार्बन शीट वाली ग्रेफीन भौतिक अवशोषण के माध्यम से चार्जिंग को अपनी सरफेस (तल) पर संग्रहित करती है। वहीं टाइटेनियम कार्बाइड की नैनोशीट्स मैक्सीन अपनी सरफेस पर इलेक्ट्रिकल डबल लेयर मैकेनिज्म (ईएलडीसी) और रासायनिक अभिक्रियाओं दोनों के माध्यम से चार्जिंग को संग्रहित करता है।

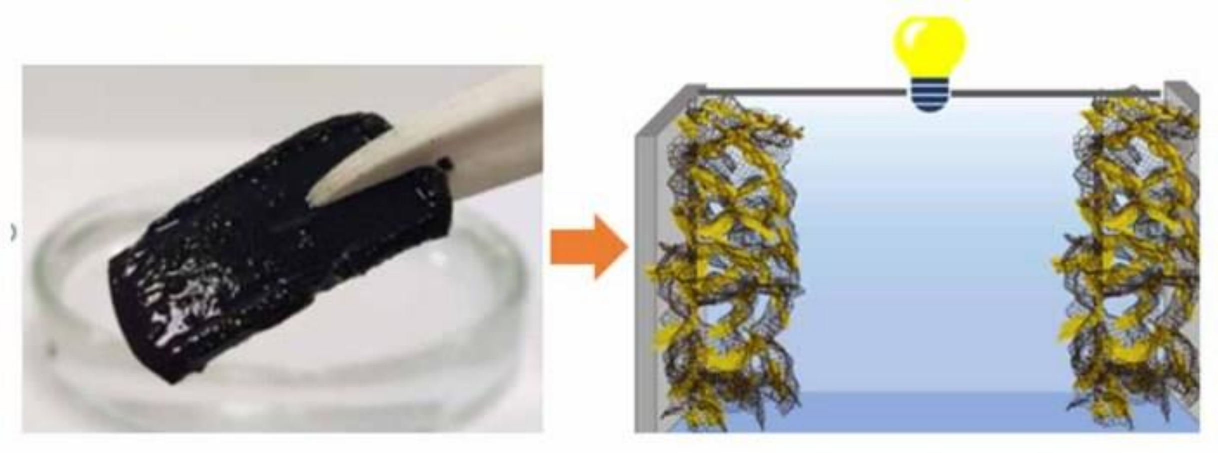

हाइड्रोजेल और सुपरकैपेसिटर की डिजिटल तस्वीर

सुपरकैपेसिटर्स में दो इलेक्ट्रोड्स (एनोड और कैथोड) होते हैं। ये इलेक्ट्रोलाइट सॉल्यूशंस में डूबे रहते हैं। इसमें ऊर्जा चार्जिंग के माध्यम से इलेक्ट्रोड्स सरफेस पर संग्रहित होती है। एटॉमिक-थिन शीट जैसे मैटीरियल सुपरकैपेसिटर्स के लिए सबसे उत्तम विकल्प माने जा रहे हैं। इन्हें नैनोशीट्स भी कहा जाता है। हालांकि माइक्रोस्कोपिक अल्ट्रा-स्मॉल नैनोशीट्स को उपयोग योग्य माइक्रोस्कोपिक स्केल के साथ एकीकृत करना बहुत चुनौतीपूर्ण कार्य है।

शोधार्थियों ने अपने इस प्रयोग को व्यापक स्तर पर परखा भी है। उन्होंने 10,000 से अधिक बार इसमें चार्जिंग-डिस्चार्जिंग करके उसकी गहन पड़ताल की है, जिसमें प्रदर्शन में मामूली उतार-चढ़ाव ही देखने को मिला। उन्होंने इलेक्ट्रोड मैटीरियल की 1.13 केजी पावर डेन्सिटी का उच्चतम स्तर तक हासिल किया, जो वर्तमान में उपलब्ध लीथियम-आयन बैटरियों की क्षमता से लगभग दोगुना अधिक है। यह शोध हाल में 'इलेक्ट्रोचिमिका एक्टा' और 'कार्बन' में प्रकाशित भी हुआ है। (इंडिया साइंस वायर)

गाँव कनेक्शन

आईआईटी गुवाहाटी ने विकसित किया उन्नत ऊर्जा-भंडारण उपकरणों के लिए हाइड्रोजेल आधारित इलेक्ट्रोड्स

शोधार्थियों ने अपने इस प्रयोग को व्यापक स्तर पर परखा भी है। उन्होंने 10,000 से अधिक बार इसमें चार्जिंग-डिस्चार्जिंग करके उसकी गहन पड़ताल की है, जिसमें प्रदर्शन में मामूली उतार-चढ़ाव ही देखने को मिला।

India Science Wire   26 Aug 2021

एनर्जी स्टोर करने वाली डिवाइसों की क्षमताएं बढ़ाने की दिशा में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी) गुवाहाटी के शोधार्थियों को एक बड़ी सफलता मिली है। शोधकर्ताओं ने हाइड्रोजेल आधारित इलेक्ट्रोड्स विकसित किए हैं जो ऊर्जा संचित करने वाले उपकरणों की कुशलता बढ़ाने में उपयोगी हो सकते हैं।

हाइड्रोजेल असल में इंटरकनेक्टेड मैटीरियल्स का एक छिद्रयुक्त ढांचा होता है जिसके छिद्रों में जमा पानी बाहर नहीं निकल सकता। हाइड्रोजेल के निर्माण में शोधकर्ताओं ने ग्रेफीन और मैक्सीन नामक दो नैनोशीट्स का इस्तेमाल किया है जो दो भिन्न प्रक्रियाओं द्वारा चार्जिंग को संचित करते हैं।

इस शोध की विशिष्टताओं को रेखांकित करते हुए आईआईटी गुवाहाटी में भौतिकी विभाग से जुड़े डॉ. उदय नारायण मैती ने कहा, "इसका सबसे उल्लेखनीय पहलू इसकी व्यापक सरलता में निहित है। इसकी व्यापकता

और रूम टेंपरेचर पर संचालित होने वाली इसकी प्रक्रिया तापमान को लेकर संवेदनशील मैक्सीन नैनोशीट को अपना गुणधर्म बदलने से रोकती है, जिससे डिवाइस का बेहतर प्रदर्शन सुनिश्चित होता है।"

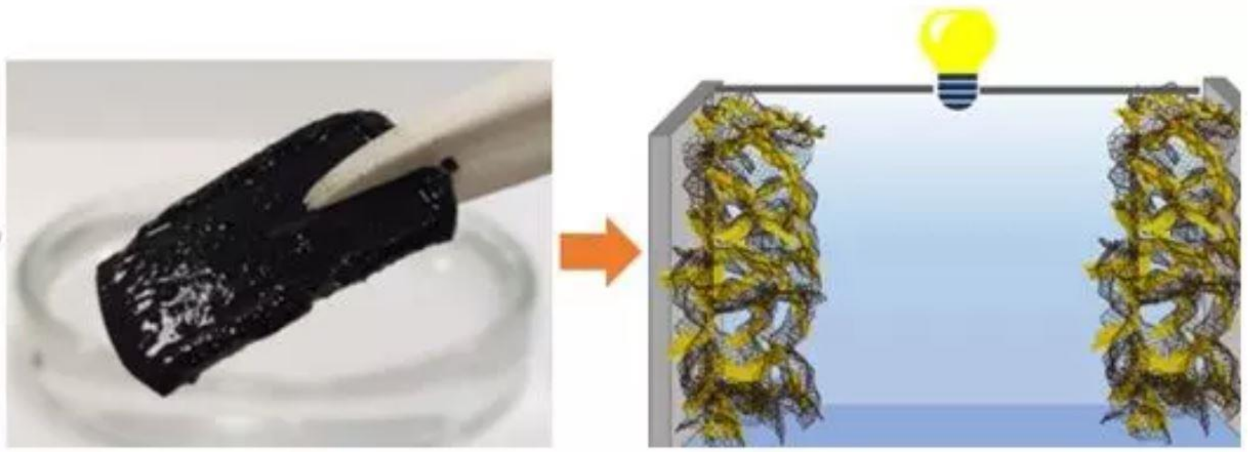

हाइड्रोजेल और सुपरकैपेसिटर की डिजिटल तस्वीर

हाइड्रोजेल इलेक्ट्रोड्स में ग्रेफीन और मैक्सीन एक जलीय माध्यम में डूबी धात्विक प्लेटों से स्वयं को एक साथ जोड़ लेती हैं। इसमें सिंगल एटम थिन कार्बन शीट वाली ग्रेफीन भौतिक अवशोषण के माध्यम से चार्जिंग को अपनी सरफेस (तल) पर संग्रहित करती है। वहीं टाइटेनियम कार्बाइड की नैनोशीट्स मैक्सीन अपनी सरफेस पर इलेक्ट्रिकल डबल लेयर मैकेनिज्म (ईएलडीसी) और रासायनिक अभिक्रियाओं दोनों के माध्यम से चार्जिंग को संग्रहित करता है।

आईआईटी गुवाहाटी के भौतिकी विभाग में इस शोध का नेतृत्व डॉ. उदय नारायण मैती ने किया। इसमें उन्हें आईआईटी गुवाहाटी के प्रो. शुभ्रादीप घोष और भाभा एटॉमिक रिसर्च सेंट (बीएआरसी) में भौतिकी समूह की डॉ. एन पद्मा का भी सहयोग मिला। इस परियोजना का लक्ष्य सुपरकैपिसिटर डिवाइसों में एनर्जी स्टोरेज के प्रदर्शन को सुधारना है।

सुपरकैपेसिटर्स में दो इलेक्ट्रोड्स (एनोड और कैथोड) होते हैं। ये इलेक्ट्रोलाइट सॉल्यूशंस में डूबे रहते हैं। इसमें ऊर्जा चार्जिंग के माध्यम से इलेक्ट्रोड्स सरफेस पर संग्रहित होती है। एटॉमिक-थिन शीट जैसे मैटीरियल सुपरकैपेसिटर्स के लिए सबसे उत्तम विकल्प माने जा रहे हैं। इन्हें नैनोशीट्स भी कहा जाता है। हालांकि माइक्रोस्कोपिक अल्ट्रा-स्मॉल नैनोशीट्स को उपयोग योग्य माइक्रोस्कोपिक स्केल के साथ एकीकृत करना बहुत चुनौतीपूर्ण कार्य है।

शोधार्थियों ने अपने इस प्रयोग को व्यापक स्तर पर परखा भी है। उन्होंने 10,000 से अधिक बार इसमें चार्जिंग-डिस्चार्जिंग करके उसकी गहन पड़ताल की है, जिसमें प्रदर्शन में मामूली उतार-चढ़ाव ही देखने को मिला। उन्होंने इलेक्ट्रोड मैटीरियल की 1.13 केजी पावर डेन्सिटी का उच्चतम स्तर तक हासिल किया, जो वर्तमान में उपलब्ध लीथियम-आयन बैटरियों की क्षमता से लगभग दोगुना अधिक है। यह शोध हाल में 'इलेक्ट्रोचिमिका एक्टा' और 'कार्बन' में प्रकाशित भी हुआ है।

रिपब्लिक न्यूज़ इंडिया

आईआईटी गुवहाटी ने विकसित किया उन्नत ऊर्जा-भंडारण उपकरणों के लिए हाइड्रोजेल आधारित इलेक्ट्रोड्स

By **Rupesh Dharmik** - August 26, 2021

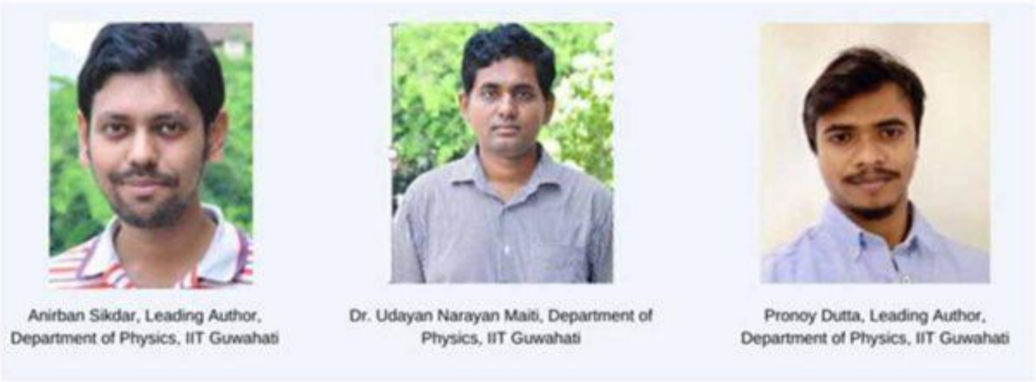

नई दिल्ली: एनर्जी स्टोर करने वाली डिवाइसों की क्षमताएं बढ़ाने की दिशा में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आईआईटी) गुवाहाटी के शोधार्थियों को एक बड़ी सफलता मिली है। शोधकर्ताओं ने हाइड्रोजेल आधारित इलेक्ट्रोड्स विकसित किए हैं जो ऊर्जा संचित करने वाले उपकरणों की कुशलता बढ़ाने में उपयोगी होसकते हैं। हाइड्रोजेल असल में इंटरकनेक्टेड मैटीरियल्स का एक छिद्रयुक्त ढांचा होता है जिसके छिद्रों में जमा पानी बाहर नहीं निकल सकता। हाइड्रोजेल के निर्माण में शोधकर्ताओं ने ग्रेफीन और मैक्सीन नामक दो नैनोशीट्स का इस्तेमाल किया है जो दो भिन्न प्रक्रियओं द्वारा चार्जिंग को संचित करते हैं।

आईआईटी गुवाहाटी के भौतिकी विभाग में इस शोध का नेतृत्व डॉ. उदय नारायण मैती ने किया। इसमें उन्हें आईआईटी गुवाहाटी के प्रो. शुभ्रादीप घोष और भाभा एटॉमिक रिसर्च सेंट (बीएआरसी) में भौतिकी समूह की डॉ. एन पद्मा का भी सहयोग मिला। इस परियोजना का लक्ष्य सुपरकैपिसिटर डिवाइसों में एनर्जी स्टोरेज के प्रदर्शन को सुधारना है।

इस शोध की विशिष्टताओं को रेखांकित करते हुए आईआईटी गुवाहाटी में भौतिकी विभाग से जुड़े डॉ. उदय नारायण मैती ने कहा, 'इसका सबसे उल्लेखनीय पहलू इसकी व्यापक सरलता में निहित है। इसकी व्यापकता और रूम टेंपरेचर पर संचालित होने वाली इसकी प्रक्रिया तापमान को लेकर संवेदनशील मैक्सीन नैनोशीटको अपना गुणधर्म बदलने से रोकती है, जिससे डिवाइस का बेहतर प्रदर्शन सुनिश्चित होता है।'

हाइड्रोजेल इलेक्ट्रोड्स में ग्रेफीन और मैक्सीन एक जलीय माध्यम में डूबी धात्विक प्लेटों से स्वयं को एक साथ जोड़ लेती हैं। इसमें सिंगल एटम थिन कार्बन शीट वाली ग्रेफीन भौतिक अवशोषण के माध्यम से चार्जिंग को अपनी सरफेस (तल) पर संग्रहित करती है। वहीं टाइटेनियम कार्बाइड की नैनोशीट्स मैक्सीन अपनी सरफेस पर इलेक्ट्रिकल डबल लेयर मैकेनिज्म (ईएलडीसी) और रासायनिक अभिक्रियाओं दोनों के माध्यम से चार्जिंग को संग्रहित करता है।

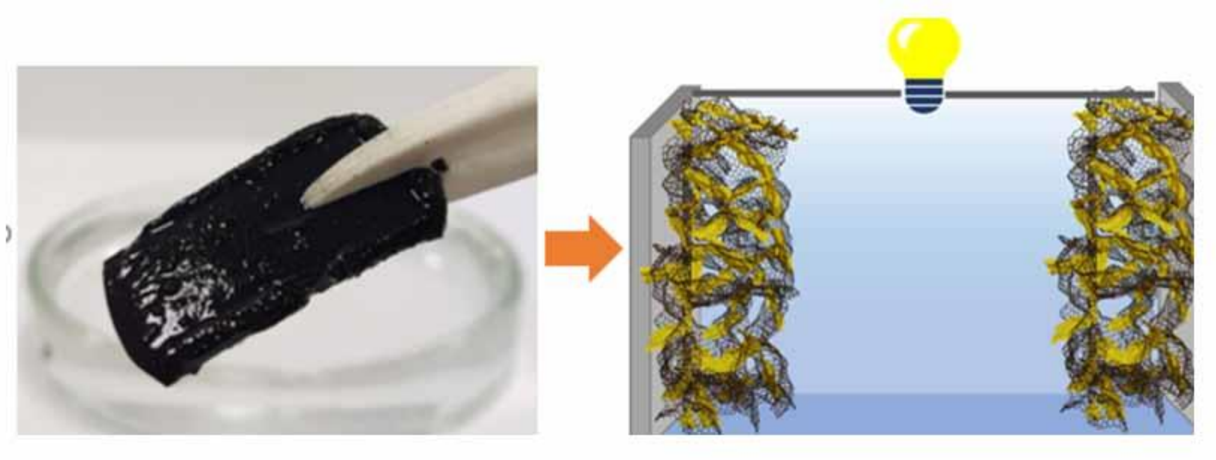

हाइड्रोजेल और सुपरकैपेसिटर की डिजिटल तस्वीर

सुपरकैपेसिटर्स में दो इलेक्ट्रोड्स (एनोड और कैथोड) होते हैं। ये इलेक्ट्रोलाइट सॉल्यूशंस में डूबे रहते हैं। इसमें ऊर्जा चार्जिंग के माध्यम से इलेक्ट्रोड्स सरफेस पर संग्रहित होती है। एटॉमिक-थिन शीट जैसे मैटीरियल सुपरकैपेसिटर्स के लिए सबसे उत्तम विकल्प माने जा रहे हैं। इन्हें नैनोशीट्स भी कहा जाता है। हालांकि माइक्रोस्कोपिक अल्ट्रा-स्मॉल नैनोशीट्स को उपयोग योग्य माइक्रोस्कोपिक स्केल के साथ एकीकृत करना बहुत चुनौतीपूर्ण कार्य है।

शोधार्थियों ने अपने इस प्रयोग को व्यापक स्तर पर परखा भी है। उन्होंने 10,000 से अधिक बार इसमें चार्जिंग-डिस्चार्जिंग करके उसकी गहन पड़ताल की है, जिसमें प्रदर्शन में मामूली उतार-चढ़ाव ही देखने को मिला। उन्होंने इलेक्ट्रोड मैटीरियल की 1.13 केजी पावर डेन्सिटी का उच्चतम स्तर तक हासिल किया, जो वर्तमान में उपलब्ध लीथियम-आयन बैटरियों की क्षमता से लगभग दोगुना अधिक है। यह शोध हाल में 'इलेक्ट्रोचिमिका एक्टा' और 'कार्बन' में प्रकाशित भी हुआ है। (इंडिया साइंस वायर)

DELHI POST
Politics | Democracy | Development

Early Lineage of Roman Catholics in India

Roman Catholics of India's western coast genetically close to Gaud Saraswat Brahmins: Study.

By **ISW Desk** On **Aug 31, 2021**

The west coast of India harbours a rich diversity of various ethno-linguistic human population groups. The Roman Catholic is one such distinct group, whose origin is much debated. Some historians and anthropologists relate them to the ancient group of Gaud Saraswat. Others believe they are members of the Jewish Lost Tribes during first-century migration to India.

A recent study conducted by CSIR-Centre for Cellular and Molecular Biology (CCMB), and DST-Birbal Sahni Institute of Palaeosciences (BSIP), Lucknow, in collaboration with Mangalore University, Canadian Institute for Jewish Research, and Institute of Advanced Materials, Sweden, has come out with some new insights on the debate.

Researchers analysed the DNA of 110 individuals from the Roman Catholic community of Goa, Kumta, and Mangalore. They compared the genetic information of the Roman Catholic group with previously published DNA data from India and West Eurasia. They correlated the information with archaeological, linguistic and historical records. The exercise has helped fill in many of the key details about the demographic changes and history of the Roman Catholic population of South West of India since the Iron Age (until around 2,500 years ago), and how they relate to the contemporary Indian population.

The researchers have concluded that the Roman Catholics of Goa, Kumta, and Mangalore regions are the remnants of very early lineages of a Brahmin community of India, majorly with Indo-European-specific genetic composition. This study also found the consequences of the Portuguese inquisition in Goa on the population history of Roman Catholics and some indication of the Jewish component. The findings have been published as a research paper in the scientific journal, *"Human Genetics"*.

"Our genetic study revealed that majority of the Roman Catholics are genetically close to an early lineage of Gaud Saraswat community", said Dr. Kumarasamy Thangaraj, Chief Scientist, CSIR-CCMB, & Director, Centre for DNA Fingerprinting and Diagnostics, Hyderabad, and senior author of the study.

He further added, "More than 40 percent of their paternally inherited Y chromosomes can be grouped under R1a haplo group. Such a genetic signal is prevalent among populations of north India, the Middle East and Europe and unique to this population in Konkan region".

Dr Niraj Rai, Senior Scientist, DST-BSIP, Lucknow, the co-corresponding author of the paper, said, "This study strongly suggests profound cultural transformations in ancient South West of India. This has mostly happened due to continuous migration and mixing events since last 2500 years".

"The origins of many population groups in India like the Jews and Parsis are not well-understood. These are gradually unfolding with advances in modern and ancient population genetics. Roman Catholics are one of them with much-debated history of origin based on inferences of anthropologists and historians," said Lomous Kumar, first author of the paper.

"This multi-disciplinary study using history, anthropology, and genetics information has helped us understand the population history of Roman Catholics from one of the most diverse and multi-cultural regions of our country", said Dr Vinay K Nandikoori, Director, Centre for Cellular and Molecular Biology, Hyderabad. (Indian Science Wire)

Indus Scrolls
Indian to the core

Roman Catholics of India's western coast genetically close to Gaud Saraswat Brahmins: Study

By **India Science Wire** - August 27, 2021

The west coast of India harbours a rich diversity of various ethnolinguistic human population groups. The Roman Catholic is one such distinct group, whose origin is much debated. Some historians and anthropologists relate them to the ancient group of Gaud Saraswat. Others believe they are members of the Jewish Lost Tribes during first-century migration to India.

A recent study conducted by CSIR-Centre for Cellular and Molecular Biology (CCMB), and DST-Birbal Sahni Institute of Palaeosciences (BSIP), Lucknow, in collaboration with Mangalore University, Canadian Institute for Jewish Research, and Institute of Advanced Materials, Sweden, has come out with some new insights on the debate.

Researchers analysed the DNA of 110 individuals from the Roman Catholic community of Goa, Kumta, and Mangalore. They compared the genetic information of the Roman Catholic group with previously published DNA data from India and West Eurasia. They correlated the information with archaeological, linguistic and historical records. The exercise has helped fill in many of the key details about the demographic changes and history of the Roman Catholic population of South West of India since the Iron Age (until around 2,500 years ago), and how they relate to the contemporary Indian population.

The researchers have concluded that the Roman Catholics of Goa, Kumta, and Mangalore regions are the remnants of very early lineages of a Brahmin community of India, majorly with Indo-European-specific geneticcomposition. This study also found the consequences of the Portuguese inquisition in Goa on the population history of Roman Catholics and some indication of the Jewish component. The findings have been published as a research paper in the scientific journal, *"Human Genetics".*

"Our genetic study revealed that majority of the Roman Catholics are genetically close to an early lineage of Gaud Saraswat community", said Dr. Kumarasamy Thangaraj, Chief Scientist, CSIR-CCMB, & Director, Centre for DNA Fingerprinting and Diagnostics, Hyderabad, and senior author of the study.

He further added, "More than 40 percent of their paternally inherited Y chromosomes can be grouped under R1a haplogroup. Such a genetic signal is prevalent among populations of north India, the Middle East and Europe, and unique to this population in Konkan region".

Dr Niraj Rai, Senior Scientist, DST-BSIP, Lucknow, the co-corresponding author of the paper, said, "This study strongly suggests profound cultural transformations in ancient South West of India. This has mostly happened due to continuous migration and mixing events since last 2500 years".

"The origins of many population groups in India like the Jews and Parsis are not well-understood. These are gradually unfolding with advances in modern and ancient population genetics. Roman Catholics are one of them with much-debated history of origin based on inferences of anthropologists and historians," said Lomous Kumar, first author of the paper.

"This multi-disciplinary study using history, anthropology, and genetics information has helped us understand the population history of Roman Catholics from one of the most diverse and multi-cultural regions of our country", said Dr Vinay K Nandikoori, Director, Centre for Cellular and Molecular Biology, Hyderabad.

Voice of the Nation
ORGANISER

Roman Catholics of India's western coast genetically close to Gaud Saraswat Brahmins: Study

WEBDESK Aug 28, 2021, 12:00 AM IST

The researchers have concluded that the Roman Catholics of Goa, Kumta, and Mangalore regions are the remnants of very early lineages of a Brahmin community of India, majorly with Indo-European-specific genetic composition.

New Delhi: The west coast of India harbours a rich diversity of various ethnolinguistic human population groups. The Roman Catholic is one such distinct group whose origin is much debated. Some historians and anthropologists relate them to the ancient group of Gaud Saraswat. Others believe they are members of the Jewish Lost Tribes during first-century migration to India.

A recent study conducted by CSIR-Centre for Cellular and Molecular Biology (CCMB), and DST-Birbal Sahni Institute of Palaeosciences (BSIP), Lucknow, in collaboration with Mangalore University, Canadian Institute for Jewish Research, and Institute of Advanced Materials, Sweden, has come out with some new insights on the debate.

Researchers analysed the DNA of 110 individuals from the Roman Catholic community of Goa, Kumta, and Mangalore. They compared the genetic information of the Roman Catholic group with previously published DNA data from India and West Eurasia. They correlated the information with archaeological, linguistic and historical records. The exercise has helped fill in many of the key details about the demographic changes and history of the Roman Catholic population of South West of India since the Iron Age (until around 2,500 years ago) and how they relate to the contemporary Indian population.

The researchers have concluded that the Roman Catholics of Goa, Kumta, and Mangalore regions are the remnants of very early lineages of a Brahmin community of India, majorly with Indo-European-specific genetic composition. This study also found the consequences of the Portuguese inquisition in Goa on the population history of Roman Catholics and some indication of the Jewish component. The findings have been published as a research paper in the scientific journal "Human Genetics".

"Our genetic study revealed that majority of the Roman Catholics are genetically close to an early lineage of Gaud Saraswat community", said Dr. Kumarasamy Thangaraj, Chief Scientist, CSIR-CCMB, & Director, Centre for DNA Fingerprinting and Diagnostics, Hyderabad, and senior author of the study.

He further added, "More than 40 percent of their paternally inherited Y chromosomes can be grouped under R1a haplogroup. Such a genetic signal is prevalent among populations of north India, the Middle East and Europe, and unique to this population in Konkan region."

Dr Niraj Rai, Senior Scientist, DST-BSIP, Lucknow, the co-corresponding author of the paper, said, "This study strongly suggests profound cultural transformations in ancient South West of India. This has mostly happened due to continuous migration and mixing events since last 2500 years".

"The origins of many population groups in India like the Jews and Parsis are not well-understood. These are gradually unfolding with advances in modern and ancient population genetics. Roman Catholics are one of them with much-debated history of origin based on inferences of anthropologists and historians," said Lomous Kumar, first author of the paper.

"This multi-disciplinary study using history, anthropology, and genetics information has helped us understand the population history of Roman Catholics from one of the most diverse and multi-cultural regions of our country", said Dr Vinay K Nandikoori, Director, Centre for Cellular and Molecular Biology, Hyderabad.

Courtesy: India Science Wire

हस्तक्षेप.com

MAKE THE WORLD A BETTER PLACE WITH HASTAKSHEP NEWS

Roman Catholics of India's western coast genetically close to Gaud Saraswat Brahmins: Study

TOPICS:CSIRIndia

POSTED BY: HASTAKSHEP NEWS 27TH AUGUST 2021

New Delhi, Aug 27: The west coast of India harbours a rich diversity of various ethnolinguistic human population groups. The Roman Catholic is one such distinct group, whose origin is much debated. Some historians and anthropologists relate them to the ancient group of Gaud Saraswat. Others believe they are members of the Jewish Lost Tribes during first-century migration to India.

A recent study conducted by CSIR-Centre for Cellular and Molecular Biology (CCMB), and DST-Birbal Sahni Institute of Palaeosciences (BSIP), Lucknow, in collaboration with Mangalore University, Canadian Institute for Jewish Research, and Institute of Advanced Materials, Sweden, has come out with some new insights on the debate.

Researchers analysed the DNA of 110 individuals from the Roman Catholic community of Goa, Kumta, and Mangalore. They compared the genetic information of the Roman Catholic group with previously published DNA data from India and West Eurasia. They correlated the information with archaeological, linguistic and historical records. The exercise has helped fill in many of the key details about the demographic changes and history of the Roman Catholic population of South West of India since the Iron Age (until around 2,500 years ago), and how they relate to the contemporary Indian population.

The researchers have concluded that the Roman Catholics of Goa, Kumta, and Mangalore regions are the remnants of very early lineages of a Brahmin community of India, majorly with Indo-European-specific genetic composition. This study also found the consequences of the Portuguese inquisition in Goa on the population history of Roman Catholics and some indication of the Jewish component. The findings have been published as a research paper in the scientific journal, *"Human Genetics"*.

"Our genetic study revealed that majority of the Roman Catholics are genetically close to an early lineage of Gaud Saraswat community", said Dr Kumarasamy Thangaraj, Chief Scientist, CSIR-CCMB, & Director, Centre for DNA Fingerprinting and Diagnostics, Hyderabad, and senior author of the study.

He further added, "More than 40 per cent of their paternally inherited Y chromosomes can be grouped under R1a haplogroup. Such a genetic signal is prevalent among populations of north India, the Middle East and Europe, and unique to this population in Konkan region".

Dr Niraj Rai, Senior Scientist, DST-BSIP, Lucknow, the co-corresponding author of the paper, said, "This study strongly suggests profound cultural transformations in ancient South West of India. This has mostly happened due to continuous migration and mixing events since last 2500 years".

"The origins of many population groups in India like the Jews and Parsis are not well-understood. These are gradually unfolding with advances in modern and ancient population genetics. Roman Catholics are one of them with much-debated history of origin based on inferences of anthropologists and historians," said Lomous Kumar, first author of the paper.

"This multi-disciplinary study using history, anthropology, and genetics information has helped us understand the population history of Roman Catholics from one of the most diverse and multi-cultural regions of our country", said Dr Vinay K Nandikoori, Director, Centre for Cellular and Molecular Biology, Hyderabad.

(India Science Wire)

Study Paves Way for Better Energy Storage Devices

Article By : India Science Wire

Category : Market News | 2021-09-01

A group of researchers has developed a new material that promises to improve the efficiency of electrodes used in supercapacitor devices.

A group of researchers from the Indian Institute of Technology (IIT)-Guwahati and the Bhabha Atomic Research Centre (BARC), Mumbai has developed a new material that promises to improve the efficiency of electrodes used in supercapacitor devices.

The researchers have shown that supercapacitors based on electrodes made with the new material can be repeatedly charged and discharged over 10,000 times, with only minimal performance degradation, as compared to conventional batteries that typically wear out within 300-500 charging-discharging cycles. They could also be charged in seconds to their full capacity and store as much energy as 30 Wh (Watt hour) per kilogram of the materials. It further delivered the energy at a very

fast rate. The delivery of energy is presented in terms of power density. The supercapacitors achieved the highest power density of 1.13 kW per kg of electrode material which is almost twice the power offered by current Li-ion batteries.

Speaking to *India Science Wire*, the scientists said the supercapacitors can be engineered to be compact enough to fit the extremely tight spaces of modern portable electronic equipment.

In supercapacitors, two electrodes (anode and cathode) are immersed in an electrolyte solution, and energy is stored by charge accumulation on the electrode surfaces. Atomic-thin nanosheets are considered the best choice for supercapacitor electrodes as they can offer a large area to store charge. However, integrating the microscopic ultra-small nanosheets into a usable macroscopic scale electrode is highly challenging.

The researchers have developed their hydrogels electrodes by a simple room-temperature process in which graphene and MXene nanosheets spontaneously assemble themselves over a metal plate within a water medium. Graphene sheets, which are made of single-atom carbon, store the charge on their surface via physical adsorption, known as electrical double layer mechanism (EDLC), while MXene sheets, made of titanium carbide, store the charge via both EDLC and a chemical reaction on its surface, known as pseudo-capacitance.

The study was led by Dr Uday Narayan Maiti, and Prof. Subhradip Ghosh of IIT Guwahati, and Dr N. Padma of Bhabha Atomic Research Centre (BARC), Mumbai, under a project of the Department of Atomic Energy's Board of Research in Nuclear Science (BRNS). The scientists have published a report on their work in scientific journals "Electrochimica Acta" and "Carbon".

Voice of the Nation
ORGANISER

Study paves way for better energy storage devices

WEBDESK Aug 28, 2021, 12:00 AM IST

The supercapacitors could be engineered to be compact enough to fit the extremely tight spaces of modern portable electronic equipment.

New Delhi: A group of researchers from the Indian Institute of Technology (IIT)-Guwahati and the Bhabha Atomic Research Centre (BARC), Mumbai, has developed a new material that promises to improve the efficiency of electrodes used in supercapacitor devices.

The researchers have shown that supercapacitors based on electrodes made with the new material can be repeatedly charged and discharged over 10,000 times, with only minimal performance degradation, as compared to conventional batteries that typically wear out within 300-500 charging-discharging cycles. They could also be charged in seconds to their full capacity and store as much energy as 30 Wh (Watt-hour) per kilogram of the materials. It further delivered the energy at a very fast rate. The delivery of energy is presented in terms of power density. The

supercapacitors achieved the highest power density of 1.13 kW per kg of electrode material, almost twice the power offered by current Li-ion batteries.

Speaking to India Science Wire, the scientists said the supercapacitors could be engineered to be compact enough to fit the extremely tight spaces of modern portable electronic equipment.

In Supercapacitors, two electrodes (anode and cathode) are immersed in an electrolyte solution, and energy is stored by charge accumulation on the electrode surfaces. Atomic-thin nanosheets are considered the best choice for supercapacitor electrodes as they can offer a large area to store charge. However, integrating the microscopic ultra-small nanosheets into a usable macroscopic scale electrode is highly challenging.

The researchers have developed their hydrogels electrodes by a simple room-temperature process in which graphene and MXene nanosheets spontaneously assemble themselves over a metal plate within a water medium. Graphene sheets, which are made of single-atom carbon, store the charge on their surface via physical adsorption, known as electrical double layer mechanism (EDLC), while MXene sheets, made of titanium carbide, store the charge via both EDLC and a chemical reaction on its surface, known as pseudo-capacitance.

The study was led by Dr Uday Narayan Maiti, and Prof. Subhradip Ghosh of IIT Guwahati, and Dr N. Padma of Bhabha Atomic Research Centre (BARC) Mumbai, under a project of the Department of Atomic Energy's Board of Research in Nuclear Science (BRNS). The scientists have published a report on their work in scientific journals "Electrochimica Acta" and "Carbon".

Courtesy: India Science Wire

DELHI POST
Politics | Democracy | Development

Study Paves Way for Better Energy Storage Devices

By **Team DP** On **Sep 3, 2021**

A group of researchers from the Indian Institute of Technology (IIT)-Guwahati and the Bhabha Atomic Research Centre (BARC), Mumbai has developed a new material that promises to improve the efficiency of electrodes used in supercapacitor devices.

The researchers have shown that supercapacitors based on electrodes made with the new material can be repeatedly charged and discharged over 10,000 times, with only minimal performance degradation, as compared to conventional batteries that typically wear out within 300-500 charging-discharging cycles. They could also be charged in seconds to their full capacity and store as much energy as 30 Wh (Watt hour) per kilogram of the materials. It further delivered the energy at a very fast rate. The delivery

of energy is presented in terms of power density. The supercapacitors achieved the highest power density of 1.13 kW per kg of electrode material which is almost twice the power offered by current Li-ion batteries.

Speaking to India Science Wire, the scientists said the supercapacitors can be engineered to be compact enough to fit the extremely tight spaces of modern portable electronic equipment.

In Supercapacitors two electrodes (anode and cathode)are immersed in an electrolyte solution, and energy is stored by charge accumulation on the electrode surfaces. Atomic-thin nano sheets are considered the best choice for supercapacitor electrodes as they can offer a large area to store charge. However, integrating the microscopic ultra-small nano sheets into a usable macroscopic scale electrode is highly challenging.

The researchers have developed their hydrogels electrodes by a simple room-temperature process in which graphene and MXene nano sheets spontaneously assemble themselves over a metal plate within a water medium. Graphene sheets, which are made of single-atom carbon, store the charge on their surface via physical adsorption, known as electrical double layer mechanism (EDLC), while MXene sheets, made of titanium carbide, store the charge via both EDLC and a chemical reaction on its surface, known as pseudo-capacitance.

The study was led by Dr Uday Narayan Maiti, and Prof. Subhradip Ghosh of IIT Guwahati, and Dr N. Padma of Bhabha Atomic Research Centre (BARC), Mumbai, under a project of the Department of Atomic Energy’s Board of Research in Nuclear Science (BRNS). The scientists have published a report on their work in scientific journals “Electrochimica Acta” and “Carbon”. (Indian Science Wire)

RD TIMES.in हिंदी

पूर्वोत्तर में 'वैज्ञानिक सामाजिक उत्तरदायित्व' का वाहक बना सीएसआईआर संस्थान

By RD Times Hindi | August 27, 2021

नई दिल्ली, 27 अगस्त (इंडिया साइंस वायर): नॉर्थ ईस्ट इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस ऐंड टेक्नोलॉजी (एनईआईएसटी), जोरहाट भारत के प्रमुख अनुसंधान एवं विकास संगठन वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद (सीएसआईआर) की एक घटक प्रयोगशाला है। सीएसआईआर-एनईआईएसटी विशेष रूप से देश के पूर्वोत्तर क्षेत्र के लिए प्रासंगिक तथा बहु-विषयक अनुसंधान एवं विकास कार्य में लगा हुआ है। संस्थान के वैज्ञानिक, प्रयोगशाला के बाहर भी अपना सामाजिक योगदान दे रहे हैं। सीएसआईआर-एनईआईएसटी प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नये भारत के दृष्टिकोण और वैज्ञानिक बिरादरी एवं विज्ञान से जुड़े संस्थानों के वैज्ञानिक सामाजिक उत्तरदायित्व (एसएसआर) का अनुसरण करते हुए कार्य कर रहा है।

सामाजिक विकास के लक्ष्य को केंद्र में रखकर अपनी मातृ-संस्था सीएसआईआर द्वारा शुरू की गई विभिन्न गतिविधियों एवं योजनाओं से जनसामान्य को जोड़ने का उल्लेखनीय कार्य सीएसआईआर-एनईआईएसटी कर रहा है। विशेष रूप से ऊपरी असम और अरुणाचल प्रदेश के क्षेत्रों में संचालित की जा रही इन गतिविधियों में सीएसआईआर-अरोमा मिशन, जिज्ञासा, और चिकित्सा अनुसंधान एवं विकास संबंधी कार्य उल्लेखनीय रूप से शामिल हैं। संस्था द्वारा जारी एक हालिया बयान में यह जानकारी दी गई है।

सीएसआईआर-अरोमा मिशन सुगंधित पौधों की खेती, उनके मूल्यवर्धन और विपणन के माध्यम से ग्रामीण सशक्तिकरण को बढ़ावा देने के लिए प्रतिबद्ध है। जबकि, सीएसआईआर का 'जिज्ञासा' कार्यक्रम केंद्रीय विद्यालय संगठन (केवीएस) के सहयोग से संचालित किया जाने वाला एक 'छात्र-वैज्ञानिक कनेक्ट' कार्यक्रम है; जिसका उद्देश्य कक्षा में सीखने का विस्तार करना और अनुसंधान प्रयोगशाला आधारित शिक्षा पर ध्यान केंद्रित करना है।

सीएसआईआर-एनईआईएसटी की टीम समाज में वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करने के साथ-साथ लोगों को आत्मनिर्भर बनाने के तरीकों पर प्रशिक्षण देने के लक्ष्य के साथ दूरदराज के क्षेत्रों का दौरा कर रही है। ऐसी ही एक हालिया पहल के अंतर्गत, संस्थान के निदेशक प्रोफेसर जी. नरहरि शास्त्री के नेतृत्व में सीएसआईआर-एनईआईएसटी के वैज्ञानिकों की एक टीम ने ऊपरी असम और अरुणाचल प्रदेश में वैज्ञानिक सोच का प्रचार करने के लिए कृषि क्षेत्रों एवं स्कूलों का दौरा करके किसानों एवं छात्रों से मुलाकात की। 'जिज्ञासा' कार्यक्रम के अंतर्गत सीएसआईआर-एनईआईएसटी स्कूलों में किताबें, प्रयोगशाला उपकरण और औषधीय पौधे वितरित कर रहा है। सीएसआईआर की ओर से अनुसंधान संस्थानों के स्कूलों तक पहुँचने की इस मुहिम को एक महत्वपूर्ण प्रयास माना जा रहा है। इसका उद्देश्य सुनियोजित और व्यवस्थित अनुसंधान उन्मुख शिक्षण और प्रशिक्षण गतिविधियों को प्रोत्साहित करना है।

सीएआईआर-एनईआईएसटी, आईसीएमआर-क्षेत्रीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान केंद्र, (आईसीएमआर-आरएमआरसी) और डीबीटी-जैव संसाधन एवं स्थायी विकास संस्थान (आईबीएसडी) समेत पूर्वी भारत के तीन संस्थान SARs-CoV-2 वेरिएंट के जीनोम अनुक्रमण के लिए मिलकर काम कर रहे हैं। कोविड-19 परीक्षण में भी इन संस्थानों की भूमिका अग्रणी रही है।

हाल ही में, सीएसआईआर-एनईआईएसटी ने धेमाजी, असम में सीएसआईआर-अरोमा मिशन के तहत अपने 7वें 'मल्टी-लोकेशनल ट्रायल ऐंड रीजनल रिसर्च एक्सपेरिमेंटल फार्म' का उद्घाटन किया है। सीएसआईआर-अरोमा मिशन के अंतर्गत असम के धेमाजी जिले के लाईमेकुरी में सुगंधित तेल डिस्टिलेशन (आसवन) इकाई शुरू की गई है। यह इकाई ग्रामीण उद्यमिता को बढ़ावा देने और ग्रामीण निवासियों के जीवन को बेहतर बनाने उद्देश्य से स्थापित की गई है।

संस्थान अरुणाचल प्रदेश के पूर्वी सियांग जिले के ओयून और रून्ने में भी इसी तरह की आसवन इकाइयों को संचालित कर रहा है। सीएसआईआर-एनईआईएसटी ने अपने एक वक्तव्य में कहा है कि वह सीएसआईआर-अरोमा मिशन के तहत पूरे पूर्वोत्तर भारत में ऐसी आसवन इकाइयां स्थापित करने के लिए तत्पर है, जिससे पूर्वोत्तर भारत में ग्रामीण सशक्तिकरण का मार्ग प्रशस्त हो सकता है। (इंडिया साइंस वायर)

प्रभासाक्षी

पूर्वोत्तर में 'वैज्ञानिक सामाजिक उत्तरदायित्व' का वाहक बना सीएसआईआर संस्थान

इंडिया साइंस वायर Aug 31, 2021 18:28

सीएआईआर-एनईआईएसटी, आईसीएमआर-क्षेत्रीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान केंद्र और डीबीटी-जैव संसाधन एवं स्थायी विकास संस्थान समेत पूर्वी भारत के तीन संस्थान SARs-CoV-2 वेरिएंट के जीनोम अनुक्रमण के लिए मिलकर काम कर रहे हैं। कोविड-19 परीक्षण में भी इन संस्थानों की भूमिका अग्रणी रही है।

नॉर्थ ईस्ट इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस ऐंड टेक्नोलॉजी (एनईआईएसटी), जोरहाट भारत के प्रमुख अनुसंधान एवं विकास संगठन वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद (सीएसआईआर) की एक घटक प्रयोगशाला है। सीएसआईआर-एनईआईएसटी विशेष रूप से देश के पूर्वोत्तर क्षेत्र के लिए प्रासंगिक तथा बहु-विषयक अनुसंधान एवं विकास कार्य में लगा हुआ है। संस्थान के वैज्ञानिक, प्रयोगशाला के बाहर भी अपना सामाजिक योगदान दे रहे हैं। सीएसआईआर-एनईआईएसटी प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नये भारत के दृष्टिकोण और वैज्ञानिक बिरादरी एवं विज्ञान से जुड़े संस्थानों के वैज्ञानिक सामाजिक उत्तरदायित्व (एसएसआर) का अनुसरण करते हुए कार्य कर रहा है।

सामाजिक विकास के लक्ष्य को केंद्र में रखकर अपनी मातृ-संस्था सीएसआईआर द्वारा शुरू की गई विभिन्न गतिविधियों एवं योजनाओं से जनसामान्य को जोड़ने का उल्लेखनीय कार्य सीएसआईआर-एनईआईएसटी कर रहा है। विशेष रूप से ऊपरी असम और अरुणाचल प्रदेश के क्षेत्रों में संचालित की जा रही इन गतिविधियों में सीएसआईआर-अरोमा मिशन, जिज्ञासा, और चिकित्सा अनुसंधान एवं विकास संबंधी कार्य उल्लेखनीय रूप से शामिल हैं। संस्था द्वारा जारी एक हालिया बयान में यह जानकारी दी गई है।

सीएसआईआर-अरोमा मिशन सुगंधित पौधों की खेती, उनके मूल्यवर्धन और विपणन के माध्यम से ग्रामीण सशक्तिकरण को बढ़ावा देने के लिए प्रतिबद्ध है। जबकि, सीएसआईआर का 'जिज्ञासा' कार्यक्रम केंद्रीय विद्यालय संगठन (केवीएस) के सहयोग से संचालित किया जाने वाला एक 'छात्र-वैज्ञानिक कनेक्ट' कार्यक्रम है; जिसका उद्देश्य कक्षा में सीखने का विस्तार करना और अनुसंधान प्रयोगशाला आधारित शिक्षा पर ध्यान केंद्रित करना है।

सीएसआईआर-एनईआईएसटी की टीम समाज में वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करने के साथ-साथ लोगों को आत्मनिर्भर बनाने के तरीकों पर प्रशिक्षण देने के लक्ष्य के साथ दूरदराज के क्षेत्रों का दौरा कर रही है। ऐसी ही एक हालिया पहल के अंतर्गत, संस्थान के निदेशक प्रोफेसर जी. नरहरि शास्त्री के नेतृत्व में सीएसआईआर-एनईआईएसटी के वैज्ञानिकों की एक टीम ने ऊपरी असम और अरुणाचल प्रदेश में वैज्ञानिक सोच का प्रचार करने के लिए कृषि क्षेत्रों एवं स्कूलों का दौरा करके किसानों एवं छात्रों से मुलाकात की। 'जिज्ञासा' कार्यक्रम के अंतर्गत सीएसआईआर-एनईआईएसटी स्कूलों में किताबें, प्रयोगशाला उपकरण और औषधीय पौधे वितरित कर रहा है। सीएसआईआर की ओर से अनुसंधान संस्थानों के स्कूलों तक पहुँचने की इस मुहिम को एक महत्वपूर्ण प्रयास माना जा रहा है। इसका उद्देश्य सुनियोजित और व्यवस्थित अनुसंधान उन्मुख शिक्षण और प्रशिक्षण गतिविधियों को प्रोत्साहित करना है।

सीएआईआर-एनईआईएसटी, आईसीएमआर-क्षेत्रीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान केंद्र, (आईसीएमआर-आरएमआरसी) और डीबीटी-जैव संसाधन एवं स्थायी विकास संस्थान (आईबीएसडी) समेत पूर्वी भारत के तीन संस्थान SARs-CoV-2 वेरिएंट के जीनोम अनुक्रमण के लिए मिलकर काम कर रहे हैं। कोविड-19 परीक्षण में भी इन संस्थानों की भूमिका अग्रणी रही है।

हाल ही में, सीएसआईआर-एनईआईएसटी ने धेमाजी, असम में सीएसआईआर-अरोमा मिशन के तहत अपने 7वें 'मल्टी-लोकेशनल ट्रायल ऐंड रीजनल रिसर्च एक्सपेरिमेंटल फार्म' का उद्घाटन किया है। सीएसआईआर-अरोमा मिशन के अंतर्गत असम के धेमाजी जिले के लाईमेकुरी में सुगंधित तेल डिस्टिलेशन (आसवन) इकाई शुरू की गई है। यह इकाई ग्रामीण उद्यमिता को बढ़ावा देने और ग्रामीण निवासियों के जीवन को बेहतर बनाने उद्देश्य से स्थापित की गई है।

संस्थान अरुणाचल प्रदेश के पूर्वी सियांग जिले के ओयून और रून्ने में भी इसी तरह की आसवन इकाइयों को संचालित कर रहा है। सीएसआईआर-एनईआईएसटी ने अपने एक वक्तव्य में कहा है कि वह सीएसआईआर-अरोमा मिशन के तहत पूरे पूर्वोत्तर भारत में ऐसी आसवन इकाइयां स्थापित करने के लिए तत्पर है, जिससे पूर्वोत्तर भारत में ग्रामीण सशक्तिकरण का मार्ग प्रशस्त हो सकता है।

(इंडिया साइंस वायर)

FLIPBOARD

पूर्वोत्तर में 'वैज्ञानिक सामाजिक उत्तरदायित्व' का वाहक बना सीएसआईआर संस्थान

prabhasakshi.com - प्रभासाक्षी न्यूज़ नेटवर्क • 19d

नॉर्थ ईस्ट इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस ऐंड टेक्नोलॉजी (एनईआईएसटी), जोरहाट भारत के प्रमुख अनुसंधान एवं विकास संगठन वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद ...

Read more on prabhasakshi.com

दी इंडियन बुलेटिन

पूर्वोत्तर में 'वैज्ञानिक सामाजिक उत्तरदायित्व' का वाहक बना सीएसआईआर संस्थानtra

3 weeks ago

नई दिल्ली, 27 अगस्त (इंडिया साइंस वायर): नॉर्थ ईस्ट इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस ऐंड टेक्नोलॉजी (एनईआईएसटी), जोरहाट भारत के प्रमुख अनुसंधान एवं विकास संगठन वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद (सीएसआईआर) की एक घटक प्रयोगशाला है। सीएसआईआर-एनईआईएसटी विशेष रूप से देश के पूर्वोत्तर क्षेत्र के लिए प्रासंगिक तथा बहु-विषयक अनुसंधान एवं विकास कार्य में लगा हुआ है। संस्थान के वैज्ञानिक, प्रयोगशाला के बाहर भी अपना सामाजिक योगदान दे रहे हैं। सीएसआईआर-एनईआईएसटी प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नये भारत के दृष्टिकोण और वैज्ञानिक बिरादरी एवं विज्ञान से जुड़े संस्थानों के वैज्ञानिक सामाजिक उत्तरदायित्व (एसएसआर) का अनुसरण करते हुए कार्य कर रहा है।

सामाजिक विकास के लक्ष्य को केंद्र में रखकर अपनी मातृ-संस्था सीएसआईआर द्वारा शुरू की गई विभिन्न गतिविधियों एवं योजनाओं से जनसामान्य को जोड़ने का उल्लेखनीय कार्य सीएसआईआर-एनईआईएसटी कर रहा है। विशेष रूप से ऊपरी असम और अरुणाचल प्रदेश के क्षेत्रों में संचालित की जा रही इन गतिविधियों में

सीएसआईआर-अरोमा मिशन, जिज्ञासा, और चिकित्सा अनुसंधान एवं विकास संबंधी कार्य उल्लेखनीय रूप से शामिल हैं। संस्था द्वारा जारी एक हालिया बयान में यह जानकारी दी गई है।

सीएसआईआर-अरोमा मिशन सुगंधित पौधों की खेती, उनके मूल्यवर्धन और विपणन के माध्यम से ग्रामीण सशक्तिकरण को बढ़ावा देने के लिए प्रतिबद्ध है। जबकि, सीएसआईआर का 'जिज्ञासा' कार्यक्रम केंद्रीय विद्यालय संगठन (केवीएस) के सहयोग से संचालित किया जाने वाला एक 'छात्र-वैज्ञानिक कनेक्ट' कार्यक्रम है; जिसका उद्देश्य कक्षा में सीखने का विस्तार करना और अनुसंधान प्रयोगशाला आधारित शिक्षा पर ध्यान केंद्रित करना है।

सीएसआईआर-एनईआईएसटी की टीम समाज में वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करने के साथ-साथ लोगों को आत्मनिर्भर बनाने के तरीकों पर प्रशिक्षण देने के लक्ष्य के साथ दूरदराज के क्षेत्रों का दौरा कर रही है। ऐसी ही एक हालिया पहल के अंतर्गत, संस्थान के निदेशक प्रोफेसर जी. नरहरि शास्त्री के नेतृत्व में सीएसआईआर-एनईआईएसटी के वैज्ञानिकों की एक टीम ने ऊपरी असम और अरुणाचल प्रदेश में वैज्ञानिक सोच का प्रचार करने के लिए कृषि क्षेत्रों एवं स्कूलों का दौरा करके किसानों एवं छात्रों से मुलाकात की। 'जिज्ञासा' कार्यक्रम के अंतर्गत सीएसआईआर-एनईआईएसटी स्कूलों में किताबें, प्रयोगशाला उपकरण और औषधीय पौधे वितरित कर रहा है। सीएसआईआर की ओर से अनुसंधान संस्थानों के स्कूलों तक पहुँचने की इस मुहिम को एक महत्वपूर्ण प्रयास माना जा रहा है। इसका उद्देश्य सुनियोजित और व्यवस्थित अनुसंधान उन्मुख शिक्षण और प्रशिक्षण गतिविधियों को प्रोत्साहित करना है।

सीएआईआर-एनईआईएसटी, आईसीएमआर-क्षेत्रीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान केंद्र, (आईसीएमआर-आरएमआरसी) और डीबीटी-जैव संसाधन एवं स्थायी विकास संस्थान (आईबीएसडी) समेत पूर्वी भारत के तीन संस्थान SARs-CoV-2 वेरिएंट के जीनोम अनुक्रमण के लिए मिलकर काम कर रहे हैं। कोविड-19 परीक्षण में भी इन संस्थानों की भूमिका अग्रणी रही है।

हाल ही में, सीएसआईआर-एनईआईएसटी ने धेमाजी, असम में सीएसआईआर-अरोमा मिशन के तहत अपने 7वें 'मल्टी-लोकेशनल ट्रायल ऐंड रीजनल रिसर्च एक्सपेरिमेंटल फार्म' का उद्घाटन किया है। सीएसआईआर-अरोमा मिशन के अंतर्गत असम के धेमाजी जिले के लाईमेकुरी में सुगंधित तेल डिस्टिलेशन (आसवन) इकाई शुरू की गई है। यह इकाई ग्रामीण उद्यमिता को बढ़ावा देने और ग्रामीण निवासियों के जीवन को बेहतर बनाने उद्देश्य से स्थापित की गई है।

संस्थान अरुणाचल प्रदेश के पूर्वी सियांग जिले के ओयून और रून्ने में भी इसी तरह की आसवन इकाइयों को संचालित कर रहा है। सीएसआईआर-एनईआईएसटी ने अपने एक वक्तव्य में कहा है कि वह सीएसआईआर-अरोमा मिशन के तहत पूरे पूर्वोत्तर भारत में ऐसी आसवन इकाइयां स्थापित करने के लिए तत्पर है, जिससे पूर्वोत्तर भारत में ग्रामीण सशक्तिकरण का मार्ग प्रशस्त हो सकता है। (इंडिया साइंस वायर)

रिपब्लिक न्यूज़ इंडिया

पूर्वोत्तर में 'वैज्ञानिक सामाजिक उत्तरदायित्व' का वाहक बना सीएसआईआर संस्थान

By **Rupesh Dharmik** - August 27, 2021

नई दिल्ली, 27 अगस्त (इंडिया साइंस वायर): नॉर्थ ईस्ट इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस ऐंड टेक्नोलॉजी (एनईआईएसटी), जोरहाट भारत के प्रमुख अनुसंधान एवं विकास संगठन वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद (सीएसआईआर) की एक घटक प्रयोगशाला है। सीएसआईआर-एनईआईएसटी विशेष रूप से देश के पूर्वोत्तर क्षेत्र के लिए प्रासंगिक तथा बहु-विषयक अनुसंधान एवं विकास कार्य में लगा हुआ है। संस्थान के वैज्ञानिक, प्रयोगशाला के बाहर भी अपना सामाजिक योगदान दे रहे हैं। सीएसआईआर-एनईआईएसटी प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी के नये भारत के दृष्टिकोण और वैज्ञानिक बिरादरी एवं विज्ञान से जुड़े संस्थानों के वैज्ञानिक सामाजिक उत्तरदायित्व (एसएसआर) का अनुसरण करते हुए कार्य कर रहा है।

सामाजिक विकास के लक्ष्य को केंद्र में रखकर अपनी मातृ-संस्था सीएसआईआर द्वारा शुरू की गई विभिन्न गतिविधियों एवं योजनाओं से जनसामान्य को जोड़ने का उल्लेखनीय कार्य सीएसआईआर-एनईआईएसटी कर रहा है। विशेष रूप से ऊपरी असम और अरुणाचल प्रदेश के क्षेत्रों में संचालित की जा रही इन गतिविधियों में सीएसआईआर-अरोमा मिशन, जिज्ञासा, और चिकित्सा अनुसंधान एवं विकास संबंधी कार्य उल्लेखनीय रूप से शामिल हैं। संस्था द्वारा जारी एक हालिया बयान में यह जानकारी दी गई है।

सीएसआईआर-अरोमा मिशन सुगंधित पौधों की खेती, उनके मूल्यवर्धन और विपणन के माध्यम से ग्रामीण सशक्तिकरण को बढ़ावा देने के लिए प्रतिबद्ध है। जबकि, सीएसआईआर का 'जिज्ञासा' कार्यक्रम केंद्रीय विद्यालय संगठन (केवीएस) के सहयोग से संचालित किया जाने वाला एक 'छात्र-वैज्ञानिक कनेक्ट' कार्यक्रम है; जिसका उद्देश्य कक्षा में सीखने का विस्तार करना और अनुसंधान प्रयोगशाला आधारित शिक्षा पर ध्यान केंद्रित करना है।

सीएसआईआर-एनईआईएसटी की टीम समाज में वैज्ञानिक दृष्टिकोण विकसित करने के साथ-साथ लोगों को आत्मनिर्भर बनाने के तरीकों पर प्रशिक्षण देने के लक्ष्य के साथ दूरदराज के क्षेत्रों का दौरा कर रही है। ऐसी ही एक हालिया पहल के अंतर्गत, संस्थान के निदेशक प्रोफेसर जी. नरहरि शास्त्री के नेतृत्व में सीएसआईआर-एनईआईएसटी के वैज्ञानिकों की एक टीम ने ऊपरी असम और अरुणाचल प्रदेश में वैज्ञानिक सोच का प्रचार करने के लिए कृषि क्षेत्रों एवं स्कूलों का दौरा करके किसानों एवं छात्रों से मुलाकात की। 'जिज्ञासा' कार्यक्रम के अंतर्गत सीएसआईआर-एनईआईएसटी स्कूलों में किताबें, प्रयोगशाला उपकरण और औषधीय पौधे वितरित कर रहा है। सीएसआईआर की ओर से अनुसंधान संस्थानों के स्कूलों तक पहुँचने की इस मुहिम को एक महत्वपूर्ण प्रयास माना जा रहा है। इसका उद्देश्य सुनियोजित और व्यवस्थित अनुसंधान उन्मुख शिक्षण और प्रशिक्षण गतिविधियों को प्रोत्साहित करना है।

सीएआईआर-एनईआईएसटी, आईसीएमआर-क्षेत्रीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान केंद्र, (आईसीएमआर-आरएमआरसी) और डीबीटी-जैव संसाधन एवं स्थायी विकास संस्थान (आईबीएसडी) समेत पूर्वी भारत के तीन संस्थान SARs-CoV-2 वेरिएंट के जीनोम अनुक्रमण के लिए मिलकर काम कर रहे हैं। कोविड-19 परीक्षण में भी इन संस्थानों की भूमिका अग्रणी रही है।

हाल ही में, सीएसआईआर-एनईआईएसटी ने धेमाजी, असम में सीएसआईआर-अरोमा मिशन के तहत अपने 7वें 'मल्टी-लोकेशनल ट्रायल ऐंड रीजनल रिसर्च एक्सपेरिमेंटल फार्म' का उद्घाटन किया है। सीएसआईआर-अरोमा मिशन के अंतर्गत असम के धेमाजी जिले के लाईमेकुरी में सुगंधित तेल डिस्टिलेशन (आसवन) इकाई शुरू की गई है। यह इकाई ग्रामीण उद्यमिता को बढ़ावा देने और ग्रामीण निवासियों के जीवन को बेहतर बनाने उद्देश्य से स्थापित की गई है।

संस्थान अरुणाचल प्रदेश के पूर्वी सियांग जिले के ओयून और रून्ने में भी इसी तरह की आसवन इकाइयों को संचालित कर रहा है। सीएसआईआर-एनईआईएसटी ने अपने एक वक्तव्य में कहा है कि वह सीएसआईआर-अरोमा मिशन के तहत पूरे पूर्वोत्तर भारत में ऐसी आसवन इकाइयां स्थापित करने के लिए तत्पर है, जिससे पूर्वोत्तर भारत में ग्रामीण सशक्तिकरण का मार्ग प्रशस्त हो सकता है। (इंडिया साइंस वायर)

DownToEarth | डाउन टू अर्थ

New online platform to promote reuse, repair, recycle e-waste

IIT-Madras developing new model to tackle e-waste by linking stakeholders in formal, informal economy

By India Science Wire
Published: Tuesday 31 August 2021

The Indian Institute of Technology (IIT)-Madras is developing a new model to tackle electronic wastes (e-waste) by linking stakeholders in the formal and informal economy.

It will be an exchange platform that will serve as an online marketplace for waste electrical and electronic equipment and facilitate a formal supply chain between various stakeholders.

According to studies, the world presently generates 53.6 million tonnes of e-waste every year. This is expected to double in the next 16 years.

Studies also estimated that 85 per cent of this is being lost globally. E-waste is a pressing issue in India. It is the world’s third-largest producer of e-waste. But only five per cent of its e-waste is recycled properly.

IIT-Madras researchers are working to develop the model which, they estimate, can potentially open doors to a $50 billion economy.

The initiative is being spearheaded by the Chennai-based Indo-German Centre for Sustainability (IGCS) which is located at the IIT-Madras campus.

The Centre researches sustainability challenges. It is funded by the Government of India's Department for Science and Technology and the German Academic Exchange Service.

Sudhir Chella Rajan, faculty member of the Department of Humanities and Social Sciences, IIT-Madras, and IGCS, said:

e-source is an open-source platform that will evolve towards using machine learning for better traceability of e-waste in compliance with guidelines and help increase the opportunities for repair and re-use of e-waste. This will potentially improve livelihoods for youth and women in peri-urban settings by upgrading their skills and improving occupational health and safety, reduce the flow of toxic materials in waste streams, and broaden the market for affordable, second-hand e-devices.

The research team, he said, has already completed initial market research and mapping of the various stakeholders through direct conversations and consultations combined with secondary research.

“The beta version of the online platform is ready and the team is now looking at more collaborators from the ecosystem, especially informal e-waste aggregators, to kick-start the pilot run,” he said.

A key aspect of the initiative is that the team will deploy a detection system that uses a combination of image processing and natural language processing techniques to extract product information and upload it to the database.

Once significant data sets are available, the team would advance towards deploying machine learning capabilities to ensure easy retrieval and proper indexing of the products to reflect the users' perspective and the relevant aspects of the processes.

The initiative will, among other things, focus on forging collaborations and influencing the stakeholders in the informal markets who are primary users / buyers of used electronic goods and sellers of electronic spares, ICT components, and electronic equipment.

This is to ensure enough volumes are generated for repair, re-use, and recycling for larger players (authorised recyclers) to operate along with aiding stand-alone repair-men to acquire electronic components independent of the centralised grey markets. (**India Science Wire**)

Voice of the Nation
ORGANISER

A New online platform to promote reuse, repair, recycle e-waste

WEBDESK Sep 01, 2021, 01:27 PM IST

E-waste is a pressing issue in India, particularly as even while it is the world's third-largest producer of e-waste, only five per cent of its e-waste is recycled properly.

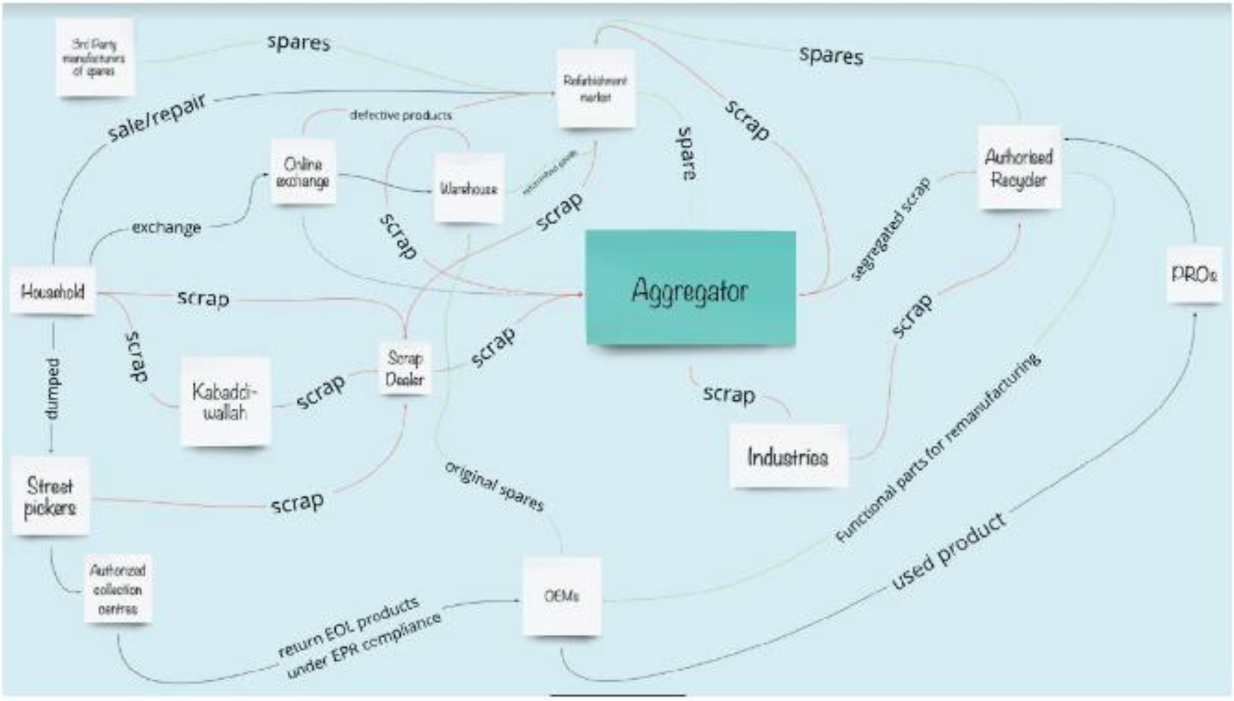

New Delhi: Indian Institute of Technology (IIT)-Madras is developing a new model to tackle electronic wastes (e-waste) by linking stakeholders in the formal and informal economy. It will be an exchange platform that will serve as an online marketplace for waste electrical and electronic equipment and facilitate a formal supply chain between various stakeholders.

According to studies, the world presently generates 53.6 million tonnes of e-waste every year. This is expected to double in the next 16 years. Studies also estimated that 85 per cent of this is being lost globally. E-waste is a pressing issue in India, particularly as even while it is the world's third-largest producer of e-waste, only five per cent of its e-waste is recycled properly.

IIT Madras researchers are working to develop the model which, they estimate, can potentially open doors to a $50 billion economy. The initiative is being spearheaded by the Chennai-based Indo-German Centre for Sustainability (IGCS) which is located at the IIT-Madras campus. The Centre researches sustainability challenges. It is funded by the Government of India's Department for Science and Technology (DST) and the German Academic Exchange Service (DAAD).

Prof. Sudhir Chella Rajan, Faculty Member of Department of Humanities and Social Sciences, IIT-Madras, and IGCS, said, "e-source is an open-source platform that will evolve towards using machine learning for better traceability of e-waste in compliance with guidelines and help increase the opportunities for repair and reuse of e-waste. This will potentially improve livelihoods for youth and women in peri-urban settings by upgrading their skills and improving occupational health and safety, reduce the flow of toxic materials in waste streams, and broaden the market for affordable, second-hand e-devices."

The research team, he said, has already completed initial market research and mapping of the various stakeholders through direct conversations and consultations combined with secondary research. "The beta version of the online platform is ready, and the team is now looking at more collaborators from the ecosystem, especially informal e-waste aggregators, to kick-start the pilot run."

A key aspect of the initiative is that the team would deploy a detection system that uses a combination of image processing and natural language processing techniques to extract product information and upload it to the database. Once significant data sets are available, the team would advance to deploying machine learning capabilities to ensure easy retrieval and proper indexing of the products to reflect the users perspective and the relevant aspects of the processes.

The initiative will, among other things, focus on forging collaborations and influencing the stakeholders in the informal markets who are primary users/buyers of used electronic goods and sellers of electronic spares, ICT components, and electronic equipment. This is to ensure enough volumes are generated for repair, reuse, and recycling for larger players (e.g., authorized recyclers) to operate along with aiding stand-alone repairmen to acquire electronic components (EC's) independent of the centralized grey markets.

Courtesy: India Science Wire

DELHI POST
Politics | Democracy | Development

New Online Platform to Promote Reuse, Repair, Recycle e-Waste

By **ISW Desk** On **Sep 4, 2021**

Indian Institute of Technology (IIT)-Madras is developing a new model to tackle electronic wastes (e-waste) by linking stakeholders in the formal and informal economy. It will be an exchange platform that will serve as an online marketplace for waste electrical and electronic equipment and facilitate a formal supply chain between various stakeholders.

The ecosystem being envisaged under the 'e-Source' initiative of IGCS, IIT Madras

According to studies, the world presently generates 53.6 million tonnes of e-waste every year. This is expected to double in the next 16 years. Studies also estimated that 85 percent of this is being lost globally. E-waste is a pressing issue in India particularly as even while it is the world's third-largest producer of e-waste, only five percent of its e-waste is recycled properly.

IIT Madras researchers are working to develop the model which, they estimate, can potentially open doors to a $50 billion economy. The initiative is being spearheaded by

the Chennai-based Indo-German Centre for Sustainability (IGCS) which is located at the IIT-Madras campus. The Centre researches sustainability challenges. It is funded by the Government of India's Department for Science and Technology (DST), and the German Academic Exchange Service (DAAD).

Prof. SudhirChellaRajan, Faculty Member of Department of Humanities and Social Sciences, IIT-Madras, and IGCS, said, "e-source is an open-source platform that will evolve towards using machine learning for better traceability of e-waste in compliance with guidelines and help increase the opportunities for repair and re-use of e-waste. This will potentially improve livelihoods for youth and women in peri-urban settings by upgrading their skills and improving occupational health and safety, reduce the flow of toxic materials in waste streams, and broaden the market for affordable, second-hand e-devices."

The research team, he said, has already completed initial market research and mapping of the various stakeholders through direct conversations and consultations combined with secondary research. "The beta version of the online platform is ready and the team is now looking at more collaborators from the ecosystem, especially informal e-waste aggregators, to kick-start the pilot run."

A key aspect of the initiative is that the team would deploy a detection system that uses a combination of image processing and natural language processing techniques to extract product information and upload it to the database. Once significant data sets are available, the team would advance towards deploying machine learning capabilities to ensure easy retrieval and proper indexing of the products to reflect the users' perspective and the relevant aspects of the processes.

The initiative will, among other things, focus on forging collaborations and influencing the stakeholders in the informal markets who are primary users/buyers of used electronic goods and sellers of electronic spares, ICT components, and electronic equipment. This is to ensure enough volumes are generated for repair, re-use, and recycling for larger players (e.g., authorized recyclers) to operate along with aiding stand-alone repair-men to acquire electronic components (EC's) independent of the centralized grey markets. (India Science Wire)

Indus Scrolls
Indian to the core

New online platform to promote reuse, repair, recycle e-waste

By **India Science Wire** - September 1, 2021

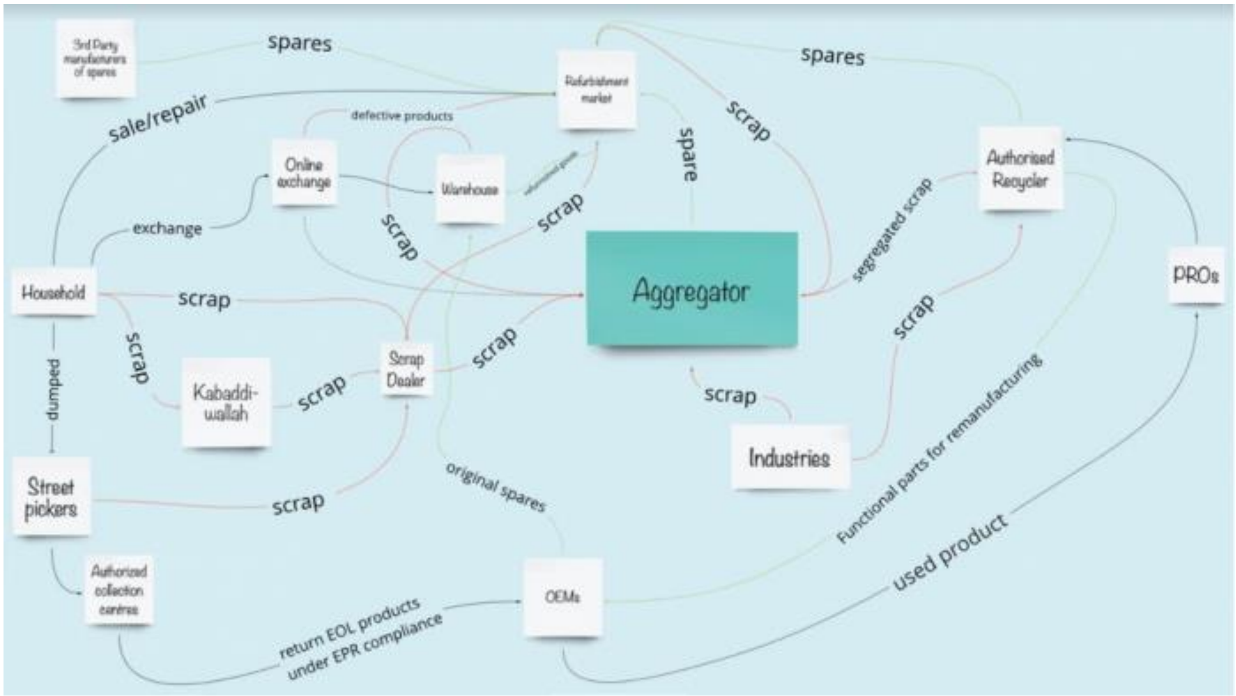

Indian Institute of Technology (IIT)-Madras is developing a new model to tackle electronic wastes (e-waste) by linking stakeholders in the formal and informal economy. It will be an exchange platform that will serve as an online marketplace for waste electrical and electronic equipment and facilitate a formal supply chain between various stakeholders.

According to studies, the world presently generates 53.6 million tonnes of e-waste every year. This is expected to double in the next 16 years. Studies also estimated that 85 percent of this is being lost globally. E-waste is a pressing issue in India particularly as even while it is the world's third-largest producer of e-waste, only five percent of its e-waste is recycled properly.

IIT Madras researchers are working to develop the model which, they estimate, can potentially open doors to a $50 billion economy. The initiative is being spearheaded by the Chennai-based Indo-German Centre for Sustainability (IGCS) which is located at the IIT-Madras campus. The Centre researches

sustainability challenges. It is funded by the Government of India's Department for Science and Technology (DST), and the German Academic Exchange Service (DAAD).

Prof. Sudhir Chella Rajan, Faculty Member of Department of Humanities and Social Sciences, IIT-Madras, and IGCS, said, "e-source is an open-source platform that will evolve towards using machine learning for better traceability of e-waste in compliance with guidelines and help increase the opportunities for repair and re-use of e-waste. This will potentially improve livelihoods for youth and women in peri-urban settings by upgrading their skills and improving occupational health and safety, reduce the flow of toxic materials in waste streams, and broaden the market for affordable, second-hand e-devices."

The research team, he said, has already completed initial market research and mapping of the various stakeholders through direct conversations and consultations combined with secondary research. "The beta version of the online platform is ready and the team is now looking at more collaborators from the ecosystem, especially informal e-waste aggregators, to kick-start the pilot run."

A key aspect of the initiative is that the team would deploy a detection system that uses a combination of image processing and natural language processing techniques to extract product information and upload it to the database. Once significant data sets are available, the team would advance towards deploying machine learning capabilities to ensure easy retrieval and proper indexing of the products to reflect the users' perspective and the relevant aspects of the processes.

The initiative will, among other things, focus on forging collaborations and influencing the stakeholders in the informal markets who are primary users/buyers of used electronic goods and sellers of electronic spares, ICT components, and electronic equipment. This is to ensure enough volumes are generated for repair, re-use, and recycling for larger players (e.g., authorized recyclers) to operate along with aiding stand-alone repair-men to acquire electronic components (EC's) independent of the centralized grey markets.

RESEARCH

NEW ONLINE PLATFORM TO PROMOTE REUSE, REPAIR, RECYCLE E-WASTE

IIT Madras researchers are working to develop the model which, they estimate, can potentially open doors to a $50 billion economy. The initiative is being spearheaded by the Chennai-based Indo-German Centre for Sustainability (IGCS) which is located at the IIT-Madras campus. The Centre researches sustainability challenges. It is funded by the Government of India's Department for Science and Technology (DST), and the German Academic Exchange Service (DAAD).

By Kautilya / September 7, 2021

Indian Institute of Technology (IIT)-Madras is developing a new model to tackle electronic wastes (e-waste) by linking stakeholders in the formal and informal economy. It will be an exchange platform that will serve as an online marketplace for waste electrical and electronic equipment and facilitate a formal supply chain between various stakeholders.

According to studies, the world presently generates 53.6 million tonnes of e-waste every year. This is expected to double in the next 16 years. Studies also estimated that 85 percent of this is being lost globally. E-waste is a pressing issue in India particularly as even while it is the world's third-largest producer of e-waste, only five percent of its e-waste is recycled properly.

IIT Madras researchers are working to develop the model which, they estimate, can potentially open doors to a $50 billion economy. The initiative is being spearheaded by the Chennai-based Indo-German Centre for Sustainability (IGCS) which is located at the IIT-Madras campus. The Centre researches sustainability challenges. It is funded by the Government of India's Department for Science and Technology (DST), and the German Academic Exchange Service (DAAD).

According to studies, the world presently generates 53.6 million tonnes of e-waste every year. This is expected to double in the next 16 years. Studies also estimated that 85 percent of this is being lost globally. E-waste is a pressing issue in India particularly as even while it is the world's third-largest producer of e-waste, only five percent of its e-waste is recycled properly.

Prof. Sudhir Chella Rajan, Faculty Member of Department of Humanities and Social Sciences, IIT-Madras, and IGCS, said, "e-source is an open-source platform that will evolve towards using machine learning for better traceability of e-waste in compliance with guidelines and help increase the opportunities for repair and re-use of e-waste. This will potentially improve livelihoods for youth and women in peri-urban settings by upgrading their skills and improving occupational health and safety, reduce the flow of toxic materials in waste streams, and broaden the market for affordable, second-hand e-devices."

The research team, he said, has already completed initial market research and mapping of the various stakeholders through direct conversations and consultations combined with secondary research. "The beta version of the online platform is ready and the team is now looking at more collaborators from the ecosystem, especially informal e-waste aggregators, to kick-start the pilot run."

A key aspect of the initiative is that the team would deploy a detection system that uses a combination of image processing and natural language processing techniques to extract product information and upload it to the database. Once significant data sets are available, the team would advance towards deploying machine learning capabilities to ensure easy retrieval and proper indexing of the products to reflect the users' perspective and the relevant aspects of the processes.

The initiative will, among other things, focus on forging collaborations and influencing the stakeholders in the informal markets who are primary users/buyers of used electronic goods and sellers of electronic spares, ICT components, and electronic equipment. This is to ensure enough volumes are generated for repair, re-use, and recycling for larger players (e.g., authorized recyclers) to operate along with aiding stand-alone repair-men to acquire electronic components (EC’s) independent of the centralized grey markets.

NATIONALAGE

New online platform to promote reuse, repair, recycle e-waste

National Age August 31, 2021

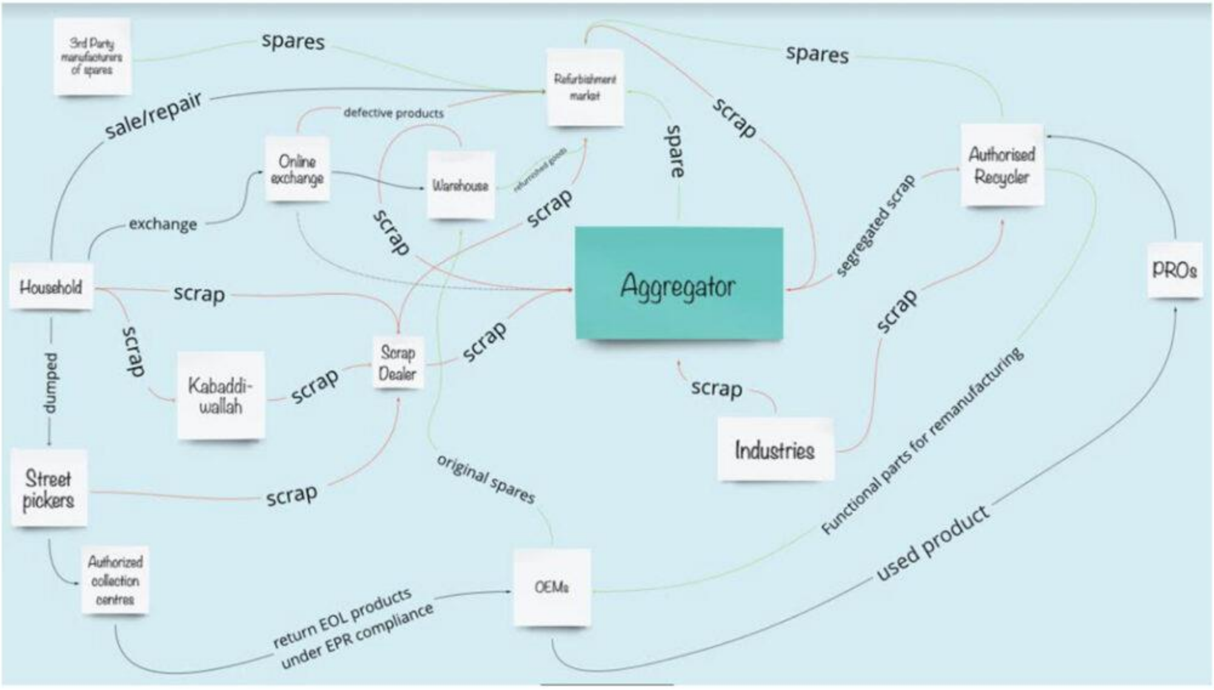

New Delhi: Indian Institute of Technology (IIT)-Madras is developing a new model to tackle electronic wastes (e-waste) by linking stakeholders in the formal and informal economy. It will be an exchange platform that will serve as an online marketplace for waste electrical and electronic equipment and facilitate a formal supply chain between various stakeholders.

According to studies, the world presently generates 53.6 million tonnes of e-waste every year. This is expected to double in the next 16 years. Studies also estimated that 85 percent of this is being lost globally. E-waste is a pressing issue in India particularly as even while it is the world's third-largest producer of e-waste, only five percent of its e-waste is recycled properly.

IIT Madras researchers are working to develop the model which, they estimate, can potentially open doors to a $50 billion economy. The initiative is being spearheaded by the Chennai-based Indo-German Centre for Sustainability (IGCS) which is located at the IIT-Madras campus. The Centre researches sustainability challenges. It is funded by the Government of India's Department for Science and Technology (DST), and the German Academic Exchange Service (DAAD).

Prof. Sudhir Chella Rajan, Faculty Member of Department of Humanities and Social Sciences, IIT-Madras, and IGCS, said, “e-source is an open-source platform that will evolve towards using machine learning for better traceability of e-waste in compliance with guidelines and help increase the opportunities for repair and re-use of e-waste. This will potentially improve livelihoods for youth and women in peri-urban settings by upgrading their skills and improving occupational health and safety, reduce the flow of toxic materials in waste streams, and broaden the market for affordable, second-hand e-devices.”

The research team, he said, has already completed initial market research and mapping of the various stakeholders through direct conversations and consultations combined with secondary research. “The beta version of the online platform is ready and the team is now looking at more collaborators from the ecosystem, especially informal e-waste aggregators, to kick-start the pilot run.”

A key aspect of the initiative is that the team would deploy a detection system that uses a combination of image processing and natural language processing techniques to extract product information and upload it to the database. Once significant data sets are available, the team would advance towards deploying machine learning capabilities to ensure easy retrieval and proper indexing of the products to reflect the users’ perspective and the relevant aspects of the processes.

The initiative will, among other things, focus on forging collaborations and influencing the stakeholders in the informal markets who are primary users/buyers of used electronic goods and sellers of electronic spares, ICT components, and electronic equipment. This is to ensure enough volumes are generated for repair, re-use, and recycling for larger players (e.g., authorized recyclers) to operate along with aiding stand-alone repair-men to acquire electronic components (EC’s) independent of the centralized grey markets. (India Science Wire)

e-Source-A new online platform to promote reuse, repair, recycle e-waste

August 31, 2021

India Science Wire

Indian Institute of Technology (IIT)-Madras is developing a new model to tackle electronic wastes (e-waste) by linking stakeholders in the formal and informal economy. It will be an exchange platform that will serve as an online marketplace for waste electrical and electronic equipment and facilitate a formal supply chain between various stakeholders.

According to studies, the world presently generates 53.6 million tonnes of e-waste every year. This is expected to double in the next 16 years. Studies also estimated that 85 percent of this is being lost globally. E-waste is a pressing issue in India particularly as even while it is the world's third-largest producer of e-waste, only five percent of its e-waste is recycled properly.

IIT Madras researchers are working to develop the model which, they estimate, can potentially open doors to a $50 billion economy. The initiative is being spearheaded by the Chennai-based Indo-German Centre for Sustainability (IGCS) which is located at the IIT-Madras campus. The Centre researches sustainability challenges. It is funded by the Government of India's Department for Science and Technology (DST), and the German Academic Exchange Service (DAAD).

Prof. Sudhir ChellaRajan, Faculty Member of Department of Humanities and Social Sciences, IIT-Madras, and IGCS, said, "e-source is an open-source platform that will evolve towards using machine learning for better traceability of e-waste in compliance with guidelines and help increase the opportunities for repair and re-use of e-waste. This will potentially improve livelihoods for youth and women in peri-urban settings by upgrading their skills and improving occupational health and safety, reduce the flow of toxic materials in waste streams, and broaden the market for affordable, second-hand e-devices."

The research team, he said, has already completed initial market research and mapping of the various stakeholders through direct conversations and consultations combined with secondary research. "The beta version of the online platform is ready and the team is now looking at more collaborators from the ecosystem, especially informal e-waste aggregators, to kick-start the pilot run."

A key aspect of the initiative is that the team would deploy a detection system that uses a combination of image processing and natural language processing techniques to extract product information and upload it to the database. Once significant data sets are available, the team would advance towards deploying machine learning capabilities to ensure easy retrieval and proper indexing of the products to reflect the users' perspective and the relevant aspects of the processes.

The initiative will, among other things, focus on forging collaborations and influencing the stakeholders in the informal markets who are primary users/buyers of used electronic goods and sellers of electronic spares, ICT components, and electronic equipment. This is to ensure enough volumes are generated for repair, re-use, and recycling for larger players (e.g., authorized recyclers) to operate along with aiding stand-alone repair-men to acquire electronic components (EC's) independent of the centralized grey markets.

keywords: Indian Institute of Technology, IIT, Madras, stakeholders, exchange platform, marketplace, electrical, electronic, equipment, supply chain, circular economy, Indo-German Centre for Sustainability, IGCS, Department for Science and Technology, DST, German Academic Exchange Service, DAAD, open-source, machine learning, traceability, repair, re-use, recycle

New online platform to promote reuse, repair, recycle e-waste

Editor | Aug 31, 2021 - 20:55

The Indian Institute of Technology (IIT)-Madras is creating a new approach for addressing electronic trash (e-waste) by bringing together formal and informal sector partners. It will be an exchange platform that acts as an online marketplace for surplus electrical and electronic equipment and facilitates the establishment of a formal supply chain among various parties.

The globe currently generates 53.6 million tonnes of e-waste every year, according to research. This figure is predicted to more than double during the next 16 years. Additionally, studies suggest that 85% of this is lost globally. E-waste is a critical issue in India, particularly because, despite being the third largest producer of e-waste in the world, only 5% of its e-waste is recycled effectively.

Researchers at IIT Madras are developing the model, which they think has the potential to unlock a $50 billion industry. The programme is being led by the Indo-German Centre for Sustainability (IGCS), which is housed on the campus of IIT-Madras in Chennai. The Centre conducts research on sustainability issues. It is supported by the Department of Science and Technology (DST) of the Government of India and the German Academic Exchange Service (DAAD).

Prof. Sudhir Chella Rajan, Faculty Member of the Department of Humanities and Social Sciences at IIT-Madras and IGCS, stated, "e-source is an open-source platform that will evolve toward utilising machine learning to improve the traceability of e-waste in accordance with guidelines and to expand opportunities for repair and re-use of e-waste." This might potentially improve the livelihoods of youth and women in peri-urban areas by enhancing their skills and occupational health and safety, reducing the flow of dangerous chemicals into waste streams, and expanding the market for affordable, used e-devices."

According to him, the research team has already conducted early market research and stakeholder mapping through direct interactions and consultations, as well as secondary research. "The web platform's beta version is complete, and the team is now seeking additional partners from the ecosystem, particularly informal e-waste aggregators, to kick-start the trial run."

A critical part of the endeavour is that the team will deploy a detection system that will extract product information and upload it to the database using a combination of image processing and natural language processing techniques. Once large data sets are available, the team will progress to applying machine learning capabilities to ensure quick retrieval and proper indexing of the goods in order to accurately reflect the users' perspective and relevant parts of the processes.

The programme will focus on establishing collaborations with and influencing informal market stakeholders who are the key users/buyers of used electronic items and suppliers of electronic spares, ICT components, and electronic equipment. This is to ensure that sufficient volumes for repair, re-use, and recycling are generated to support larger players (e.g., authorised recyclers) while also assisting stand-alone repair technicians in acquiring electronic components (EC's) outside of the centralised grey markets.

Republic NewsIndia

New online platform to promote reuse, repair, recycle e-waste

By **Rupesh Dharmik** - August 31, 2021

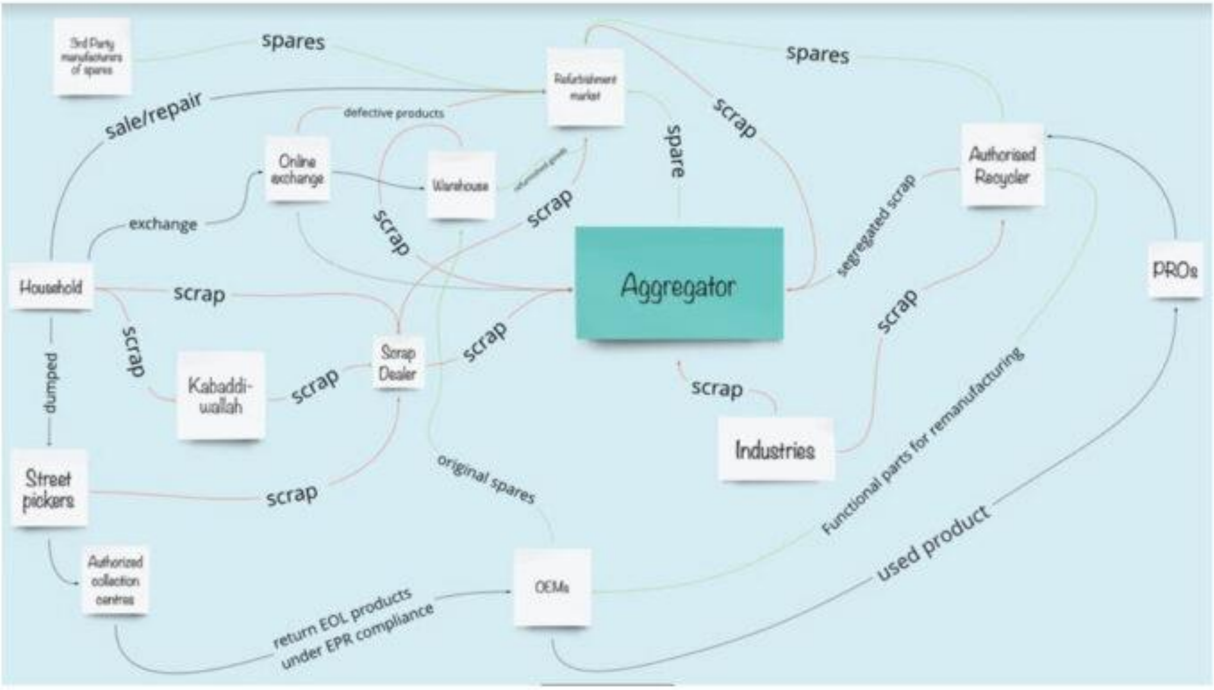

The ecosystem being envisaged under the 'e-Source' initiative of IGCS, IIT Madras

New Delhi: Indian Institute of Technology (IIT)-Madras is developing a new model to tackle electronic wastes (e-waste) by linking stakeholders in the formal and informal economy. It will be an exchange platform that will serve as an online marketplace for waste electrical and electronic equipment and facilitate a formal supply chain between various stakeholders.

According to studies, the world presently generates 53.6 million tonnes of e-waste every year. This is expected to double in the next 16 years. Studies also estimated that 85 percent of this is being lost globally. E-waste is a pressing issue in India particularly as even while it is the world's third-largest producer of e-waste, only five percent of its e-waste is recycled properly.

IIT Madras researchers are working to develop the model which, they estimate, can potentially open doors to a $50 billion economy. The initiative is being spearheaded by the Chennai-based Indo-German Centre for Sustainability (IGCS) which is located at the IIT-Madras campus. The Centre researches sustainability challenges. It is funded by the Government of India's Department for Science and Technology (DST), and the German Academic Exchange Service (DAAD).

Prof. Sudhir Chella Rajan, Faculty Member of Department of Humanities and Social Sciences, IIT-Madras, and IGCS, said, "e-source is an open-source platform that will evolve towards using machine learning for better traceability of e-waste in compliance with guidelines and help increase the opportunities for repair and re-use of e-waste. This will potentially improve livelihoods for youth and women in peri-urban settings by upgrading their skills and improving occupational health and safety, reduce the flow of toxic materials in waste streams, and broaden the market for affordable, second-hand e-devices."

The research team, he said, has already completed initial market research and mapping of the various stakeholders through direct conversations and consultations combined with secondary research. "The beta version of the online platform is ready and the team is now looking at more collaborators from the ecosystem, especially informal e-waste aggregators, to kick-start the pilot run."

A key aspect of the initiative is that the team would deploy a detection system that uses a combination of image processing and natural language processing techniques to extract product information and upload it to the database. Once significant data sets are available, the team would advance towards deploying machine learning capabilities to ensure easy retrieval and proper indexing of the products to reflect the users' perspective and the relevant aspects of the processes.

The initiative will, among other things, focus on forging collaborations and influencing the stakeholders in the informal markets who are primary users/buyers of used electronic goods and sellers of electronic spares, ICT components, and electronic equipment. This is to ensure enough volumes are generated for repair, re-use, and recycling for larger players (e.g., authorized recyclers) to operate along with aiding stand-alone repair-men to acquire electronic components (EC's) independent of the centralized grey markets. (India Science Wire)

हस्तक्षेप.com

MAKE THE WORLD A BETTER PLACE WITH HASTAKSHEP NEWS

New online platform to promote reuse, repair, recycle e-waste

TOPICS:E-Waste Indian Institute Of Technology (IIT)-Madras

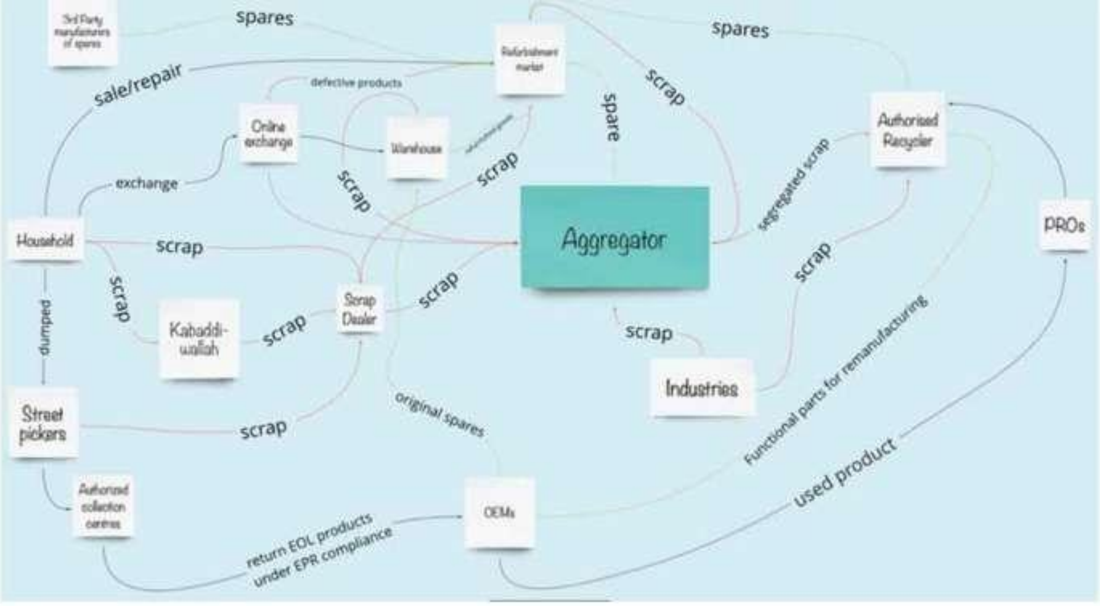

The ecosystem being envisaged under the 'e-Source' initiative of IGCS, IIT Madras

POSTED BY: HASTAKSHEP NEWS 31ST AUGUST 2021

New Delhi, Aug 31: **Indian Institute of Technology (IIT)-Madras** is developing a new model to tackle electronic wastes (**e-waste**) by linking stakeholders in the formal and informal economy. It will be an exchange platform that will serve as an online marketplace for waste electrical and electronic equipment and facilitate a formal **supply chain** between various stakeholders.

According to studies, the world presently generates 53.6 million tonnes of e-waste every year. This is expected to double in the next 16 years. Studies also estimated that 85 per cent of this is being lost globally. E-waste is a pressing issue in India particularly as even while it is the world's third-largest producer of e-waste, only five per cent of its e-waste is recycled properly.

IIT Madras researchers are working to develop the model which, they estimate, can potentially open doors to a $50 billion economy. The initiative is being spearheaded by the Chennai-based Indo-German Centre for Sustainability (IGCS) which is located at the IIT-Madras campus. The Centre researches sustainability challenges. It is funded by the Government of India's Department for Science and Technology (DST), and the German Academic Exchange Service (DAAD).

Prof. Sudhir Chella Rajan, Faculty Member of Department of Humanities and Social Sciences, IIT-Madras, and IGCS, said, "e-source is an open-source platform that will evolve towards using machine learning for better traceability of e-waste in compliance with guidelines and help increase the opportunities for repair and re-use of e-waste. This will potentially improve livelihoods for youth and women in peri-urban settings by upgrading their skills and improving occupational health and safety, reduce the flow of toxic materials in waste streams, and broaden the market for affordable, second-hand e-devices."

The research team, he said, has already completed initial market research and mapping of the various stakeholders through direct conversations and consultations combined with secondary research. "The beta version of the online platform is ready and the team is now looking at more collaborators from the ecosystem, especially informal e-waste aggregators, to kick-start the pilot run."

A key aspect of the initiative is that the team would deploy a detection system that uses a combination of image processing and natural language processing techniques to extract product information and upload it to the database. Once significant data sets are available, the team would advance towards deploying machine learning capabilities to ensure easy retrieval and proper indexing of the products to reflect the users' perspective and the relevant aspects of the processes.

The initiative will, among other things, focus on forging collaborations and influencing the stakeholders in the informal markets who are primary users/buyers of used electronic goods and sellers of electronic spares, ICT components, and electronic equipment. This is to ensure enough volumes are generated for repair, re-use, and recycling for larger players (e.g., authorized recyclers) to operate along with aiding stand-alone repair-men to acquire electronic components (EC's) independent of the centralized grey markets.

(India Science Wire)

The Indian Bulletin
www.theindianbulletin.com

New online platform to promote reuse, repair, recycle e-waste

By **The Indian Bulletin Online** - August 31, 2021

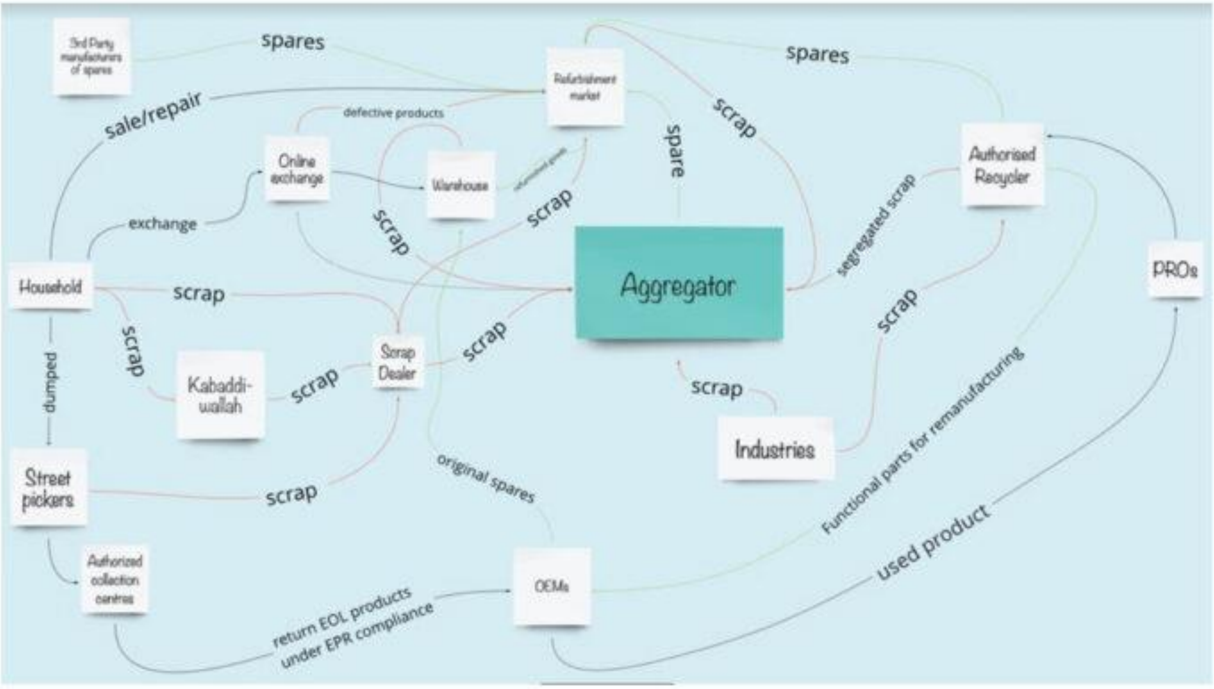

The ecosystem being envisaged under the 'e-Source' initiative of IGCS, IIT Madras

New Delhi: Indian Institute of Technology (IIT)-Madras is developing a new model to tackle electronic wastes (e-waste) by linking stakeholders in the formal and informal economy. It will be an exchange platform that will serve as an online marketplace for waste electrical and electronic equipment and facilitate a formal supply chain between various stakeholders.

According to studies, the world presently generates 53.6 million tonnes of e-waste every year. This is expected to double in the next 16 years. Studies also estimated that 85 percent of this is being lost globally. E-waste is a pressing issue in India particularly as even while it is the world's third-largest producer of e-waste, only five percent of its e-waste is recycled properly.

IIT Madras researchers are working to develop the model which, they estimate, can potentially open doors to a $50 billion economy. The initiative is being spearheaded by the Chennai-based Indo-German Centre for Sustainability (IGCS) which is located at the IIT-Madras campus. The Centre researches sustainability challenges. It is funded by the Government of India's Department for Science and Technology (DST), and the German Academic Exchange Service (DAAD).

Prof. Sudhir Chella Rajan, Faculty Member of Department of Humanities and Social Sciences, IIT-Madras, and IGCS, said, "e-source is an open-source platform that will evolve towards using machine learning for better traceability of e-waste in compliance with guidelines and help increase the opportunities for repair and re-use of e-waste. This will potentially improve livelihoods for youth and women in peri-urban settings by upgrading their skills and improving occupational health and safety, reduce the flow of toxic materials in waste streams, and broaden the market for affordable, second-hand e-devices."

The research team, he said, has already completed initial market research and mapping of the various stakeholders through direct conversations and consultations combined with secondary research. "The beta version of the online platform is ready and the team is now looking at more collaborators from the ecosystem, especially informal e-waste aggregators, to kick-start the pilot run."

A key aspect of the initiative is that the team would deploy a detection system that uses a combination of image processing and natural language processing techniques to extract product information and upload it to the database. Once significant data sets are available, the team would advance towards deploying machine learning capabilities to ensure easy retrieval and proper indexing of the products to reflect the users' perspective and the relevant aspects of the processes.

The initiative will, among other things, focus on forging collaborations and influencing the stakeholders in the informal markets who are primary users/buyers of used electronic goods and sellers of electronic spares, ICT components, and electronic equipment. This is to ensure enough volumes are generated for repair, re-use, and recycling for larger players (e.g., authorized recyclers) to operate along with aiding stand-alone repair-men to acquire electronic components (EC's) independent of the centralized grey markets. (India Science Wire)

जनसत्ता

वैज्ञानिकों को मिले निकटवर्ती आकाशगंगा में विलीन होते विशालकाय ब्लैक-होल

ब्लैक-होल, सामान्य सापेक्षता का एक ऐसा क्षेत्र है, जहाँ गुरुत्वाकर्षण इतना शक्तिशाली होता है कि कोई भी कण या यहाँ तक कि विद्युत चुम्बकीय विकिरण जैसा प्रकाश भी इससे बच नहीं सकता है।

Written By जनसत्ता

Updated: September 1, 2021 3:53:39 am

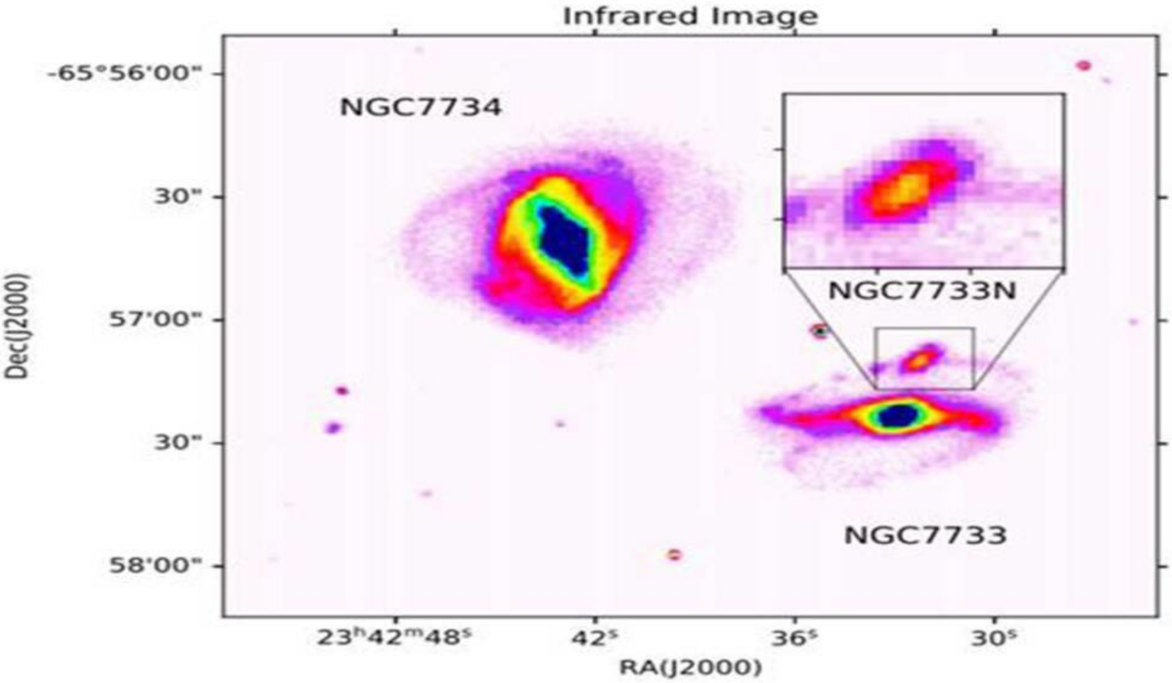

इन्फ्रारेड छवि!

ब्लैक-होल, सामान्य सापेक्षता का एक ऐसा क्षेत्र है, जहाँ गुरुत्वाकर्षण इतना शक्तिशाली होता है कि कोई भी कण या यहाँ तक कि विद्युत चुम्बकीय विकिरण जैसा प्रकाश भी इससे बच नहीं सकता है। ब्लैक-होल में वस्तुएँ गिर तो सकती हैं, परन्तु बाहर नहीं आ सकती। भारतीय वैज्ञानिकों ने अपने एक ताजा अध्ययन में निकटवर्ती आकाशगंगा में विलीन होते विशालकाय ब्लैक-होल्स का पता लगाया है।

वैज्ञानिकों के मुताबिक, विशालकाय ब्लैक-होल (Supermassive black hole), ब्लैक-होल का सबसे बड़ा प्रकार है। ऐसा अनुमान है कि अधिकांश – या संभवतः सभी – आकाशगंगाएँ अपने केंद्रों पर एक विशालकाय ब्लैक-होल रखती हैं। इस अध्ययन में शोधकर्ताओं ने हमारी निकटवर्ती आकाशगंगा में आपस में विलीन हो रहे तीन विशालकाय ब्लैक-होल्स का पता लगाया है, जो एक साथ मिलकर एक ट्रिपल सक्रिय गैलेक्टिक न्यूक्लियस बनाते हैं।

इस नयी खोज के बारे में वैज्ञानिकों का कहना है कि यह हमारी निकटवर्ती आकाशगंगा के केंद्र में एक ऐसा ठोस क्षेत्र है, जिसमें सामान्य से बहुत अधिक चमक है। हमारी निकटवर्ती आकाशगंगाओं में घटित यह दुर्लभ घटना बताती है कि विलय होने वाले छोटे समूह बहुसंख्यक विशालकाय ब्लैक होल का पता लगाने के लिए आदर्श प्रयोगशालाएं हैं और ये ऐसी दुर्लभ घटनाओं का पता लगाने की संभावना को बढ़ाते हैं। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय द्वारा जारी एक वक्तव्य में यह जानकारी दी गई है।

किसी प्रकार का प्रकाश उत्सर्जित नहीं करने के कारण विशालकाय ब्लैक-होल्स का पता लगाना कठिन होता है। लेकिन, वे अपने परिवेश के साथ समाहित होकर अपनी उपस्थिति प्रकट कर सकते हैं। जब आसपास से धूल और गैस ऐसे किसी विशालकाय ब्लैक-होल पर गिरती है तो उसका कुछ द्रव्यमान ब्लैक-होल द्वारा निगल लिया जाता है। लेकिन, इसमें से कुछ द्रव्यमान ऊर्जा में परिवर्तित हो जाता है और विद्युत चुम्बकीय विकिरण के रूप में उत्सर्जित होता है, जिससे वह ब्लैक-होल बहुत चमकदार दिखाई देता है। इन्हें एक्टिव गैलेक्टिक न्यूक्लियस-एजीएन कहा जाता है। ऐसे नाभिक आकाशगंगा और उसके वातावरण में भारी मात्रा में आयनित कण और ऊर्जा छोड़ते हैं। इसके बाद ये दोनों आकाशगंगा के चारों ओर का माध्यम विकसित करने और अंततः आकाशगंगा के विकास और उसकी आकार वृद्धि में योगदान देते हैं।

भारतीय ताराभौतिकी संस्थान (इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ एस्ट्रोफिजिक्स) और फ्रांस के शोधकर्ताओं ने मिलकर एनजीसी-7733 और एनजीसी-7734 नामक आकाशगंगा का संयुक्त रूप से अध्ययन किया है। शोधकर्ताओं ने एक ज्ञात इंटर-एक्टिव आकाशगंगा एनजीसी-7734 के केंद्र से असामान्य उत्सर्जन और एनजीसी-7733 की उत्तरी भुजा के साथ एक बड़े चमकीले झुरमुटनुमा (क्लम्प) पुंज का पता लगाया है। उनकी पड़ताल से पता चला है कि यह आकाशगंगा एनजीसी-7733 की तुलना में एक अलग ही गति से आगे बढ़ रहा है। वैज्ञानिकों का यहाँ आशय यह भी था कि यह झुरमुटनुमा पुंज एनजीसी-7733 का हिस्सा न होकर उत्तरी भुजा के पीछे की एक छोटी, मगर अलग आकाशगंगा थी। उन्होंने इस आकाशगंगा का नाम एनजीसी-7733एन रखा है।

भारतीय ताराभौतिकी संस्थान के वैज्ञानिकों का कहना है कि अगर दो आकाशगंगाएं आपस में टकराती हैं तो उनके ब्लैक-होल भी अपनी गतिज ऊर्जा को आसपास की गैस में स्थानांतरित करके पास आ जाएंगे। ब्लैक-होल्स के बीच की दूरी समय के साथ तब तक घटती जाती है, जब तक कि उनके बीच का अंतर एक पारसेक (3.26 प्रकाश-वर्ष) के आसपास न हो जाए। इसके बाद दोनों ब्लैक- होल तब अपनी और अधिक गतिज ऊर्जा का व्यय नहीं कर पाते हैं ताकि वे और करीब आकर एक-दूसरे में विलीन हो सकें। इसे अंतिम पारसेक समस्या के रूप में जाना जाता है। वैज्ञानिकों का मानना है कि तीसरे ब्लैक-होल की उपस्थिति इस समस्या को हल कर सकती है। आपस में विलीन हो रहे दोनों ब्लैक-होल ऐसे में अपनी ऊर्जा को तीसरे ब्लैक-होल में स्थानांतरित कर सकते हैं और तब एक दूसरे के साथ विलय कर सकते हैं।

इस अध्ययन में पहली भारतीय अंतरिक्ष वेधशाला पर लगे एस्ट्रोसैट अल्ट्रा-वायलेट इमेजिंग टेलीस्कोप (यूवीआईटी), यूरोपियन इंटीग्रल फील्ड ऑप्टिकल टेलीस्कोप, जिसे एमयूएसई भी कहा जाता है, और चिली में स्थापित बहुत बड़े आकार के दूरदर्शी (वेरी लार्ज टेलीस्कोप – वीएलटी) से मिले आंकड़ों के साथ दक्षिण अफ्रीका में ऑप्टिकल टेलीस्कोप से प्राप्त (आईआरएसएफ) से प्राप्त इन्फ्रारेड चित्रों का उपयोग किया गया है।

अल्ट्रा-वायलेट-यूवी और एच-अल्फा छवियों ने निकल रही तरंगों के अतिम सिरे (टाइडल टेल्स) के साथ एक नये तारे के निर्माण का प्रकटीकरण करके वहाँ तीसरी आकाशगंगा की उपस्थिति का भी समर्थन किया, जो एक बड़ी आकाशगंगा के साथ एनजीसी-7733 एन के विलय से बन सकती थी। इन दोनों आकाशगंगाओं के केंद्र

(नाभिक) में एक सक्रिय विशालकाय ब्लैक-होल बना हुआ है। इसलिए, इनसे एक बहुत ही दुर्लभ एजीएन सिस्टम बन जाता है।

शोधकर्ताओं के अनुसार, आकाशगंगा के विकास को प्रभावित करने वाला एक प्रमुख कारक आकाशगंगाओं की परस्पर क्रिया है। विभिन्न आकाशगंगाएं एक-दूसरे के निकट आती हैं और एक-दूसरे पर अपना जबरदस्त गुरुत्वाकर्षण बल लगाती हैं। इस तरह आकाशगंगाओं के आपस में मिलते समय उनमे मौजूद विशालकाय ब्लैक-होल्स के भी एक-दूसरे के एक दूसरे के पास आने की संभावना बढ़ जाती हैं। ऐसी स्थिति में, द्विगुणित हो चुके ब्लैक-होल्स अपने परिवेश से गैस का उपभोग करना शुरू कर देते हैं और दोहरी सक्रिय मंदाकिनीय नाभिक प्रणाली (एजीएन) में परिवर्तित हो जाते हैं।

यह अध्ययन शोध-पत्रिका एस्ट्रोनॉमी ऐंड एस्ट्रोफिजिक्स में प्रकाशित किया गया है। इस अध्ययन में, भारतीय ताराभौतिकी संस्थान के शोधकर्ता ज्योति यादव, मौसमी दास एवं सुधांशु बर्वे के अलावा फ्रांस स्थित पेरिस ऑब्जर्वेटरी के शोधकर्ता फ्रेंकोइस कॉम्बेस शामिल हैं। -(इंडिया साइंस वायर)

Mnews24.in
खबर दिन भर..

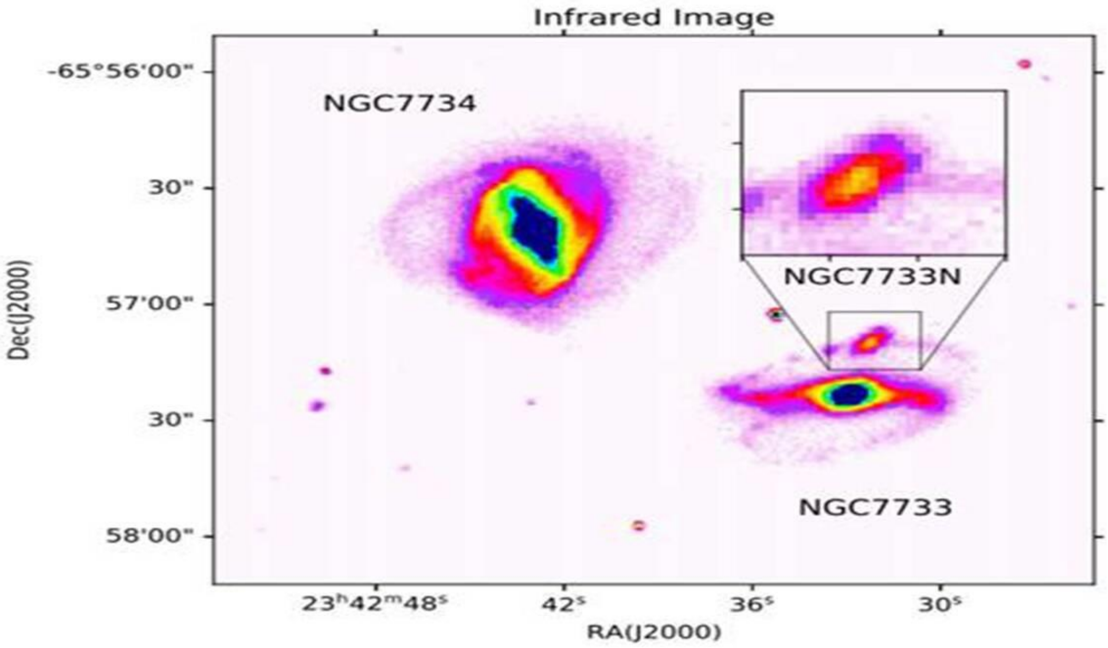

वैज्ञानिकों को मिले निकटवर्ती आकाशगंगा में विलीन होते विशालकाय ब्लैक-होल

August 31, 2021 mnews24

ब्लैक होल सामान्य सापेक्षता का एक क्षेत्र है जहां गुरुत्वाकर्षण इतना मजबूत होता है कि कोई भी कण या प्रकाश जैसे विद्युत चुम्बकीय विकिरण इससे बच नहीं सकता है।

ब्लैक होल सामान्य सापेक्षता का एक क्षेत्र है जहां गुरुत्वाकर्षण इतना मजबूत होता है कि कोई भी कण या प्रकाश जैसे विद्युत चुम्बकीय विकिरण इससे बच नहीं सकता है। वस्तुएं ब्लैक होल में गिर सकती हैं, लेकिन बाहर नहीं आ सकतीं। हाल के एक अध्ययन में भारतीय वैज्ञानिकों ने सुपरमैसिव ब्लैक-होल का पास की आकाशगंगा में विलय होने का पता लगाया है।

वैज्ञानिकों के अनुसार सुपरमैसिव ब्लैक होल ब्लैक होल का सबसे बड़ा प्रकार है। यह अनुमान लगाया गया है कि अधिकांश – या संभवतः सभी – आकाशगंगाओं के केंद्रों में एक सुपरमैसिव ब्लैक-होल होता है। इस अध्ययन में, शोधकर्ताओं ने हमारी पास की आकाशगंगा में तीन विलय वाले सुपरमैसिव ब्लैक-होल का पता लगाया है, जो एक साथ एक ट्रिपल सक्रिय गैलेक्टिक न्यूक्लियस बनाते हैं।

इस नई खोज के बारे में वैज्ञानिकों का कहना है कि यह हमारी पास की आकाशगंगा के केंद्र में एक ठोस क्षेत्र है, जो सामान्य से कहीं अधिक चमकीला है। हमारी आस-पास की आकाशगंगाओं में यह दुर्लभ घटना बताती है कि छोटे समूहों का विलय करना अधिकांश सुपरमैसिव ब्लैक होल का पता लगाने के लिए आदर्श प्रयोगशाला है और इस तरह की दुर्लभ घटनाओं का पता लगाने की संभावना को बढ़ाता है। यह जानकारी विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्रालय की ओर से जारी एक बयान में दी गई है।

किसी भी प्रकार के प्रकाश का उत्सर्जन न करने के कारण सुपरमैसिव ब्लैक होल का पता लगाना मुश्किल होता है। हालांकि, वे अपने परिवेश के साथ एकीकृत होकर अपनी उपस्थिति प्रकट कर सकते हैं। जब इतने बड़े ब्लैक होल पर आसपास की धूल और गैस गिरती है, तो इसका कुछ द्रव्यमान ब्लैक-होल द्वारा निगल लिया जाता है। लेकिन, इस द्रव्यमान में से कुछ ऊर्जा में परिवर्तित हो जाता है और विद्युत चुम्बकीय विकिरण के रूप में उत्सर्जित होता है, जिससे ब्लैक-होल बहुत उज्ज्वल दिखाई देता है। इन्हें सक्रिय गैलेक्टिक न्यूक्लियस-एजीएन कहा जाता है। इस तरह के नाभिक भारी मात्रा में आयनित कणों और ऊर्जा को आकाशगंगा और उसके वातावरण में छोड़ते हैं। ये दोनों तब आकाशगंगा के चारों ओर माध्यम के विकास में योगदान करते हैं, और अंततः आकाशगंगा के विकास और आकार में योगदान करते हैं।

इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ एस्ट्रोफिजिक्स (इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ एस्ट्रोफिजिक्स) और फ्रांस के शोधकर्ताओं ने संयुक्त रूप से NGC-7733 और NGC-7734 नाम की आकाशगंगाओं का अध्ययन किया है। शोधकर्ताओं ने NGC-7734 के केंद्र से असामान्य उत्सर्जन का पता लगाया है, जो एक ज्ञात अंतःक्रियात्मक आकाशगंगा है, और NGC-7733 की उत्तरी भुजा के साथ एक बड़ा चमकीला झुरमुट है। उनकी जांच से पता चला कि यह आकाशगंगा NGC-7733 से अलग गति से आगे बढ़ रही है। यहां वैज्ञानिकों का मतलब यह भी था कि यह झुरमुट NGC-7733 का हिस्सा नहीं था, बल्कि उत्तरी भुजा के पीछे एक छोटी, लेकिन अलग आकाशगंगा थी। उन्होंने इस आकाशगंगा का नाम NGC-7733N रखा।

इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ एस्ट्रोफिजिक्स के वैज्ञानिकों का कहना है कि अगर दो आकाशगंगाएं टकराती हैं, तो उनके ब्लैक होल भी उनकी गतिज ऊर्जा को आसपास की गैस में स्थानांतरित करके करीब आ जाएंगे। ब्लैक होल के बीच की दूरी समय के साथ घटती जाती है जब तक कि उनके बीच की दूरी लगभग एक पारसेक (3.26 प्रकाश-वर्ष) न हो जाए। इसके बाद दो ब्लैक होल अब अपनी गतिज ऊर्जा का ज्यादा खर्च नहीं कर पाते हैं ताकि वे करीब आ सकें और एक-दूसरे में विलीन हो सकें। इसे अंतिम पारसेक समस्या के रूप में जाना जाता है। वैज्ञानिकों का मानना है कि तीसरे ब्लैक होल की मौजूदगी इस समस्या का समाधान कर सकती है। दो विलय वाले ब्लैक-होल अपनी ऊर्जा को तीसरे ब्लैक-होल में स्थानांतरित कर सकते हैं और फिर एक-दूसरे के साथ विलीन हो सकते हैं।

अध्ययन में पहली भारतीय अंतरिक्ष वेधशाला का एस्ट्रोसैट अल्ट्रा-वायलेट इमेजिंग टेलीस्कोप (यूवीआईटी), यूरोपीय इंटीग्रल फील्ड ऑप्टिकल टेलीस्कोप, जिसे एमयूएसई भी कहा जाता है, और चिली में स्थापित वेरी लार्ज टेलीस्कोप (वीएलटी) पाया गया। दक्षिण अफ्रीका में ऑप्टिकल टेलीस्कोप (IRSF) से प्राप्त इन्फ्रारेड छवियों का उपयोग डेटा के साथ किया गया है।

अल्ट्रा-वायलेट-यूवी और एच-अल्फा छवियों ने भी एक तीसरी आकाशगंगा की उपस्थिति का समर्थन किया, जो कि उत्सर्जित तरंग की ज्वारीय पूंछ के साथ एक नए तारे के गठन का खुलासा करती है, जो एनजीसी-7733 के साथ एक बड़ी आकाशगंगा है। यह एन के विलय से बन सकता था। इन दोनों आकाशगंगाओं के केंद्र (नाभिक) में एक सक्रिय सुपरमैसिव ब्लैक-होल रहता है। इसलिए, ये एक बहुत ही दुर्लभ AGN प्रणाली बनाते हैं।

शोधकर्ताओं के अनुसार, आकाशगंगा के विकास को प्रभावित करने वाला एक प्रमुख कारक आकाशगंगाओं की परस्पर क्रिया है। अलग-अलग आकाशगंगाएं एक-दूसरे के करीब आती हैं और एक-दूसरे पर अपना जबरदस्त

गुरुत्वाकर्षण बल लगाती हैं। इस तरह जब आकाशगंगाएं आपस में मिलती हैं तो उनमें मौजूद विशालकाय ब्लैक होल के भी एक-दूसरे के करीब होने की संभावना बढ़ जाती है। ऐसी स्थिति में, द्विगुणित ब्लैक-होल अपने परिवेश से गैस का उपभोग करने लगते हैं और एक दोहरे सक्रिय गैलेक्टिक न्यूक्लियस सिस्टम (AGN) में बदल जाते हैं।

यह अध्ययन शोध पत्रिका एस्ट्रोनॉमी एंड एस्ट्रोफिजिक्स में प्रकाशित हुआ है। इस अध्ययन में भारतीय खगोल भौतिकी संस्थान के शोधकर्ता ज्योति यादव, मौसमी दास और सुधांशु बर्वे के अलावा फ्रांस में पेरिस वेधशाला के फ्रांकोइस कॉम्ब्स शामिल हैं। -(इंडिया साइंस वायर)

msn

जनसत्ता

वैज्ञानिकों को मिले निकटवर्ती आकाशगंगा में विलीन होते विशालकाय ब्लैक-होल

Bishwa Jha | 31-08-2021

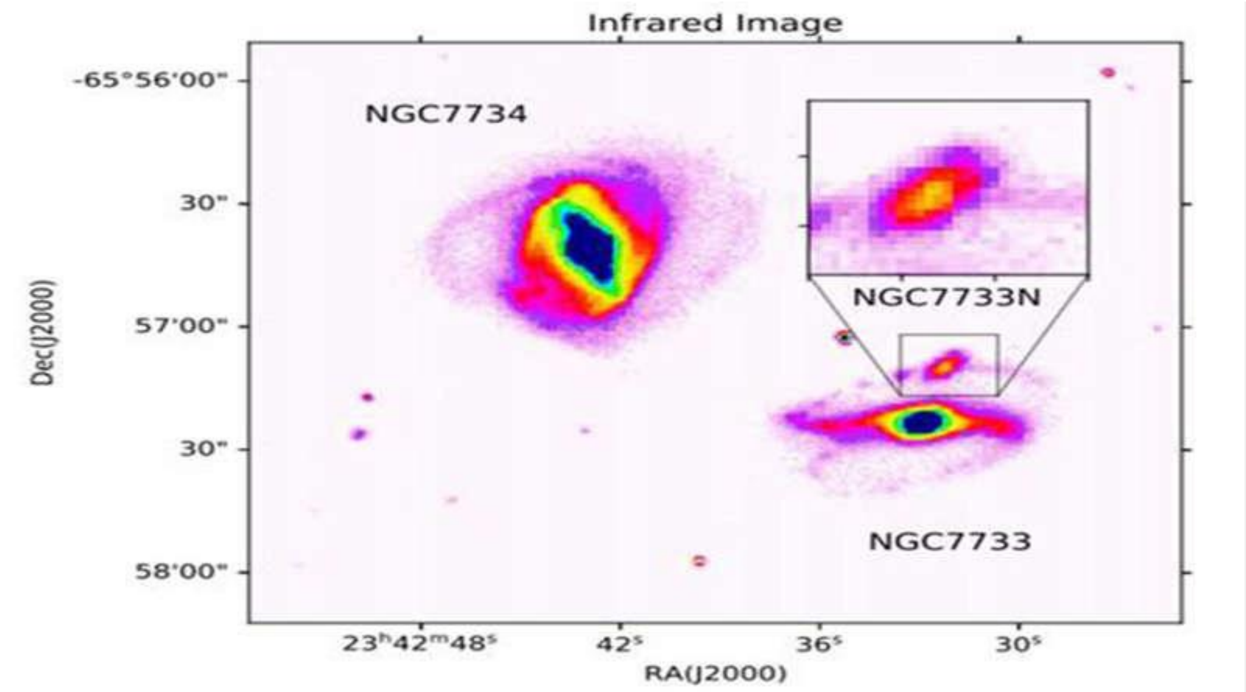

© Jansatta द्वारा प्रदत्त इन्फ्रारेड छवि!

ब्लैक-होल, सामान्य सापेक्षता का एक ऐसा क्षेत्र है, जहाँ गुरुत्वाकर्षण इतना शक्तिशाली होता है कि कोई भी कण या यहाँ तक कि विद्युत चुम्बकीय विकिरण जैसा प्रकाश भी इससे बच नहीं सकता है। ब्लैक-होल में वस्तुएँ गिर तो सकती हैं, परन्तु बाहर नहीं आ सकती। भारतीय वैज्ञानिकों ने अपने एक ताजा अध्ययन में निकटवर्ती आकाशगंगा में विलीन होते विशालकाय ब्लैक-होल्स का पता लगाया है।

वैज्ञानिकों के मुताबिक, विशालकाय ब्लैक-होल (Supermassive black hole), ब्लैक-होल का सबसे बड़ा प्रकार है। ऐसा अनुमान है कि अधिकांश – या संभवतः सभी – आकाशगंगाएँ अपने केंद्रों पर एक विशालकाय ब्लैक-होल रखती हैं। इस अध्ययन में शोधकर्ताओं ने हमारी निकटवर्ती आकाशगंगा में आपस में विलीन हो रहे तीन विशालकाय ब्लैक-होल्स का पता लगाया है, जो एक साथ मिलकर एक ट्रिपल सक्रिय गैलेक्टिक न्यूक्लियस बनाते हैं।

इस नयी खोज के बारे में वैज्ञानिकों का कहना है कि यह हमारी निकटवर्ती आकाशगंगा के केंद्र में एक ऐसा ठोस क्षेत्र है, जिसमें सामान्य से बहुत अधिक चमक है। हमारी निकटवर्ती आकाशगंगाओं में घटित यह दुर्लभ घटना बताती है कि विलय होने वाले छोटे

समूह बहुसंख्यक विशालकाय ब्लैक होल का पता लगाने के लिए आदर्श प्रयोगशालाएं हैं और ये ऐसी दुर्लभ घटनाओं का पता लगाने की संभावना को बढ़ाते हैं। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय द्वारा जारी एक वक्तव्य में यह जानकारी दी गई है।

किसी प्रकार का प्रकाश उत्सर्जित नहीं करने के कारण विशालकाय ब्लैक-होल्स का पता लगाना कठिन होता है। लेकिन, वे अपने परिवेश के साथ समाहित होकर अपनी उपस्थिति प्रकट कर सकते हैं। जब आसपास से धूल और गैस ऐसे किसी विशालकाय ब्लैक-होल पर गिरती है तो उसका कुछ द्रव्यमान ब्लैक-होल द्वारा निगल लिया जाता है। लेकिन, इसमें से कुछ द्रव्यमान ऊर्जा में परिवर्तित हो जाता है और विद्युत चुम्बकीय विकिरण के रूप में उत्सर्जित होता है, जिससे वह ब्लैक-होल बहुत चमकदार दिखाई देता है। इन्हें एक्टिव गैलेक्टिक न्यूक्लियस-एजीएन कहा जाता है। ऐसे नाभिक आकाशगंगा और उसके वातावरण में भारी मात्रा में आयनित कण और ऊर्जा छोड़ते हैं। इसके बाद ये दोनों आकाशगंगा के चारों ओर का माध्यम विकसित करने और अंततः आकाशगंगा के विकास और उसकी आकार वृद्धि में योगदान देते हैं।

भारतीय ताराभौतिकी संस्थान (इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ एस्ट्रोफिजिक्स) और फ्रांस के शोधकर्ताओं ने मिलकर एनजीसी-7733 और एनजीसी-7734 नामक आकाशगंगा का संयुक्त रूप से अध्ययन किया है। शोधकर्ताओं ने एक ज्ञात इंटर-एक्टिव आकाशगंगा एनजीसी-7734 के केंद्र से असामान्य उत्सर्जन और एनजीसी-7733 की उत्तरी भुजा के साथ एक बड़े चमकीले झुरमुटनुमा (क्लम्प) पुंज का पता लगाया है। उनकी पड़ताल से पता चला है कि यह आकाशगंगा एनजीसी-7733 की तुलना में एक अलग ही गति से आगे बढ़ रहा है। वैज्ञानिकों का यहाँ आशय यह भी था कि यह झुरमुटनुमा पुंज एनजीसी-7733 का हिस्सा न होकर उत्तरी भुजा के पीछे की एक छोटी, मगर अलग आकाशगंगा थी। उन्होंने इस आकाशगंगा का नाम एनजीसी-7733एन रखा है।

भारतीय ताराभौतिकी संस्थान के वैज्ञानिकों का कहना है कि अगर दो आकाशगंगाएं आपस में टकराती हैं तो उनके ब्लैक-होल भी अपनी गतिज ऊर्जा को आसपास की गैस में स्थानांतरित करके पास आ जाएंगे। ब्लैक-होल्स के बीच की दूरी समय के साथ तब तक घटती जाती है, जब तक कि उनके बीच का अंतर एक पारसेक (3.26 प्रकाश-वर्ष) के आसपास न हो जाए। इसके बाद दोनों ब्लैक-होल तब अपनी और अधिक गतिज ऊर्जा का व्यय नहीं कर पाते हैं ताकि वे और करीब आकर एक-दूसरे में विलीन हो सकें। इसे अंतिम पारसेक समस्या के रूप में जाना जाता है। वैज्ञानिकों का मानना है कि तीसरे ब्लैक-होल की उपस्थिति इस समस्या को हल कर सकती है। आपस में विलीन हो रहे दोनों ब्लैक-होल ऐसे में अपनी ऊर्जा को तीसरे ब्लैक-होल में स्थानांतरित कर सकते हैं और तब एक दूसरे के साथ विलय कर सकते हैं।

इस अध्ययन में पहली भारतीय अंतरिक्ष वेधशाला पर लगे एस्ट्रोसैट अल्ट्रा-वायलेट इमेजिंग टेलीस्कोप (यूवीआईटी), यूरोपियन इंटीग्रल फील्ड ऑप्टिकल टेलीस्कोप, जिसे एमयूएसई भी कहा जाता है, और चिली में स्थापित बहुत बड़े आकार के दूरदर्शी (वेरी लार्ज टेलीस्कोप – वीएलटी) से मिले आंकड़ों के साथ दक्षिण अफ्रीका में ऑप्टिकल टेलीस्कोप से प्राप्त (आईआरएसएफ) से प्राप्त इन्फ्रारेड चित्रों का उपयोग किया गया है।

अल्ट्रा-वायलेट-यूवी और एच-अल्फा छवियों ने निकल रही तरंगों के अतिम सिरे (टाइडल टेल्स) के साथ एक नये तारे के निर्माण का प्रकटीकरण करके वहाँ तीसरी आकाशगंगा की उपस्थिति का भी समर्थन किया, जो एक बड़ी आकाशगंगा के साथ एनजीसी-7733 एन के विलय से बन सकती थी। इन दोनों आकाशगंगाओं के केंद्र (नाभिक) में एक सक्रिय विशालकाय ब्लैक-होल बना हुआ है। इसलिए, इनसे एक बहुत ही दुर्लभ एजीएन सिस्टम बन जाता है।

शोधकर्ताओं के अनुसार, आकाशगंगा के विकास को प्रभावित करने वाला एक प्रमुख कारक आकाशगंगाओं की परस्पर क्रिया है। विभिन्न आकाशगंगाएं एक-दूसरे के निकट आती हैं और एक-दूसरे पर अपना जबरदस्त गुरुत्वाकर्षण बल लगाती हैं। इस तरह आकाशगंगाओं के आपस में मिलते समय उनमे मौजूद विशालकाय ब्लैक-होल्स के भी एक-दूसरे के एक दूसरे के पास आने की संभावना बढ़ जाती हैं। ऐसी स्थिति में, द्विगुणित हो चुके ब्लैक-होल्स अपने परिवेश से गैस का उपभोग करना शुरू कर देते हैं और दोहरी सक्रिय मंदाकिनीय नाभिक प्रणाली (एजीएन) में परिवर्तित हो जाते हैं।

यह अध्ययन शोध-पत्रिका एस्ट्रोनॉमी ऐंड एस्ट्रोफिजिक्स में प्रकाशित किया गया है। इस अध्ययन में, भारतीय ताराभौतिकी संस्थान के शोधकर्ता ज्योति यादव, मौसमी दास एवं सुधांशु बर्वे के अलावा फ्रांस स्थित पेरिस ऑब्जर्वेटरी के शोधकर्ता फ्रेंकोइस कॉम्बेस शामिल हैं। -(इंडिया साइंस वायर)

दी इंडियन बुलेटिन

वैज्ञानिकों को मिले निकटवर्ती आकाशगंगा में विलीन होते विशालकाय ब्लैक-होल

2 weeks ago

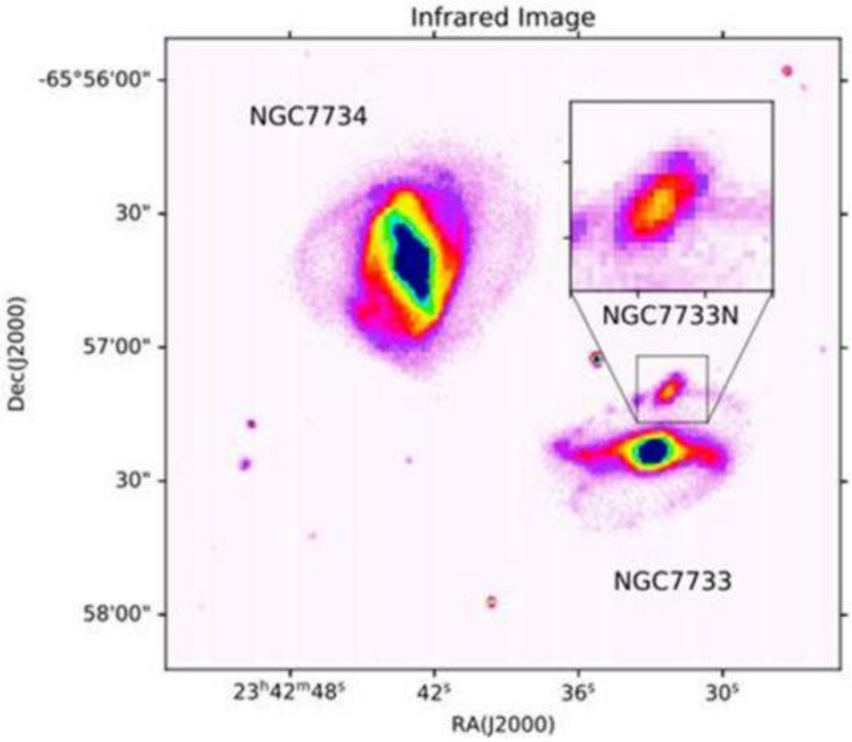

नई दिल्ली, 31 अगस्त: ब्लैक-होल, सामान्य सापेक्षता का एक ऐसा क्षेत्र है, जहाँ गुरुत्वाकर्षण इतना शक्तिशाली होता है कि कोई भी कण या यहाँ तक कि विद्युत चुम्बकीय विकिरण जैसा प्रकाश भी इससे बच नहीं सकता है।ब्लैक-होलमें वस्तुएँ गिर तो सकती हैं, परन्तु बाहर नहीं आ सकती।भारतीय वैज्ञानिकों ने अपने एक ताजा अध्ययन में निकटवर्तीआकाशगंगा में विलीन होतेविशालकाय ब्लैक-होल्स का पता लगाया है।

वैज्ञानिकों के मुताबिक, विशालकाय ब्लैक-होल(Supermassive black hole), ब्लैक-होल का सबसे बड़ा प्रकार है। ऐसा अनुमान है कि अधिकांश – या संभवतः सभी – आकाशगंगाएँ अपने केंद्रों पर एक विशालकाय ब्लैक-होल रखती हैं। इस अध्ययन में शोधकर्ताओं ने हमारी निकटवर्ती आकाशगंगा में आपस में विलीन हो रहे तीन विशालकाय ब्लैक-होल्स का पता लगाया है, जो एक साथ मिलकर एक ट्रिपल सक्रिय गैलेक्टिक न्यूक्लियस बनाते हैं।

इस नयी खोज के बारे में वैज्ञानिकों का कहना है कि यह हमारीनिकटवर्ती आकाशगंगा के केंद्र में एक ऐसा ठोस क्षेत्र है, जिसमें सामान्य से बहुत अधिक चमक है। हमारी निकटवर्ती आकाशगंगाओं में घटित यह दुर्लभ घटना बताती है कि विलय होने वाले छोटे समूह बहुसंख्यक विशालकायब्लैक होल का पता लगाने के लिए आदर्श प्रयोगशालाएं हैं और ये ऐसी दुर्लभ

घटनाओं का पता लगाने की संभावना को बढ़ाते हैं। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय द्वारा जारी एक वक्तव्य में यह जानकारी दी गई है।

किसी प्रकार का प्रकाश उत्सर्जित नहीं करने के कारण विशालकाय ब्लैक-होल्स का पता लगाना कठिन होता है। लेकिन, वे अपने परिवेश के साथ समाहित होकर अपनी उपस्थिति प्रकट कर सकते हैं। जब आसपास से धूल और गैस ऐसे किसी विशालकायब्लैक-होल पर गिरती है तो उसका कुछ द्रव्यमान ब्लैक-होल द्वारा निगल लिया जाता है। लेकिन, इसमें से कुछ द्रव्यमान ऊर्जा में परिवर्तित हो जाता है और विद्युत चुम्बकीय विकिरण के रूप में उत्सर्जित होता है, जिससे वह ब्लैक-होल बहुत चमकदार दिखाई देता है। इन्हें एक्टिव गैलेक्टिक न्यूक्लियस-एजीएन कहा जाता है। ऐसे नाभिक आकाशगंगा और उसके वातावरण में भारी मात्रा में आयनित कण और ऊर्जा छोड़ते हैं। इसके बाद ये दोनों आकाशगंगा के चारों ओर का माध्यम विकसित करने और अंततः आकाशगंगा के विकास और उसकी आकार वृद्धि में योगदान देते हैं।

भारतीय ताराभौतिकी संस्थान (इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ एस्ट्रोफिजिक्स) और फ्रांस के शोधकर्ताओं ने मिलकर एनजीसी-7733 और एनजीसी-7734 नामक आकाशगंगा का संयुक्त रूप से अध्ययन किया है। शोधकर्ताओं ने एक ज्ञात इंटर-एक्टिव आकाशगंगा एनजीसी-7734 के केंद्र से असामान्य उत्सर्जन और एनजीसी-7733 की उत्तरी भुजा के साथ एक बड़े चमकीले झुरमुटनुमा (क्लम्प) पुंज कापता लगाया है। उनकी पड़ताल से पता चला है कि यह आकाशगंगा एनजीसी-7733 की तुलना में एक अलग ही गति से आगे बढ़ रहा है। वैज्ञानिकों का यहाँ आशय यह भी था कि यह झुरमुटनुमापुंज एनजीसी-7733 का हिस्सा नहोकर उत्तरी भुजा के पीछे की एक छोटी, मगर अलग आकाशगंगा थी। उन्होंने इस आकाशगंगा का नाम एनजीसी-7733एनरखा है।

भारतीय ताराभौतिकी संस्थान के वैज्ञानिकों का कहना है कि अगर दो आकाशगंगाएं आपस में टकराती हैं तो उनके ब्लैक-होल भी अपनी गतिज ऊर्जा को आसपास की गैस में स्थानांतरित करके पास आ जाएंगे। ब्लैक-होल्स के बीच की दूरी समय के साथ तब तक घटती जाती है, जब तक कि उनके बीच का अंतर एक पारसेक (3.26 प्रकाश-वर्ष) के आसपास न हो जाए। इसके बाद दोनों ब्लैक- होल तब अपनी और अधिक गतिज ऊर्जा का व्यय नहीं कर पाते हैं ताकि वे और करीब आकरएक-दूसरे में विलीन हो सकें। इसे अंतिम पारसेक समस्या के रूप में जाना जाता है।वैज्ञानिकों का मानना है कि तीसरे ब्लैक-होल की उपस्थिति इस समस्या को हल कर सकती है। आपस में विलीन हो रहे दोनों ब्लैक-होल ऐसे में अपनी ऊर्जा को तीसरे ब्लैक-होल में स्थानांतरित कर सकते हैं और तब एक दूसरे के साथ विलय कर सकते हैं।

इस अध्ययन में पहली भारतीय अंतरिक्ष वेधशाला पर लगे एस्ट्रोसैट अल्ट्रा-वायलेट इमेजिंग टेलीस्कोप (यूवीआईटी), यूरोपियन इंटीग्रल फील्ड ऑप्टिकल टेलीस्कोप, जिसे एमयूएसई भी कहा जाता है, और चिली में स्थापित बहुत बड़े आकार के दूरदर्शी (वेरी लार्ज टेलीस्कोप – वीएलटी) से मिले आंकड़ों के साथ दक्षिण अफ्रीका में ऑप्टिकल टेलीस्कोप से प्राप्त (आईआरएसएफ) से प्राप्त इन्फ्रारेड चित्रों का उपयोग किया गया है।

अल्ट्रा-वायलेट-यूवी और एच-अल्फा छवियों ने निकल रही तरंगों के अतिम सिरे (टाइडल टेल्स) के साथ एक नये तारे के निर्माण का प्रकटीकरण करके वहाँ तीसरी आकाशगंगा की उपस्थिति का भी समर्थन किया, जो एक बड़ी आकाशगंगा के साथ एनजीसी-7733 एन के विलय से बन सकती थी। इन दोनों आकाशगंगाओं के केंद्र (नाभिक) में एक सक्रिय विशालकाय ब्लैक-होल बना हुआ है। इसलिए, इनसे एक बहुत ही दुर्लभ एजीएन सिस्टम बन जाता है।

शोधकर्ताओं के अनुसार, आकाशगंगा के विकास को प्रभावित करने वाला एक प्रमुख कारक आकाशगंगाओं की परस्पर क्रिया है। विभिन्न आकाशगंगाएं एक-दूसरे के निकट आती हैं और एक-दूसरे पर अपना जबरदस्त गुरुत्वाकर्षण बल लगाती हैं। इस तरह आकाशगंगाओं के आपस में मिलते समय उनमे मौजूद विशालकाय ब्लैक-होल्स के भी एक-दूसरे के एक दूसरे के पास आने की संभावनाबढ़ जाती हैं। ऐसी स्थिति में, द्विगुणित हो चुके ब्लैक-होल्स अपने परिवेश से गैस का उपभोग करना शुरू कर देते हैं और दोहरी सक्रिय मंदाकिनीय नाभिक प्रणाली (एजीएन) में परिवर्तित हो जाते हैं।

यह अध्ययन शोध-पत्रिका *एस्ट्रोनॉमी ऐंड एस्ट्रोफिजिक्स* में प्रकाशित किया गया है। इस अध्ययन में, भारतीय ताराभौतिकी संस्थान के शोधकर्ता ज्योति यादव, मौसमी दास एवं सुधांशु बर्वे के अलावा फ्रांस स्थित पेरिस ऑब्जर्वेटरी के शोधकर्ताफ्रिंकोइस कॉम्बेसशामिल हैं। अगस्त (इंडिया साइंस वायर)

वैज्ञानिकों को मिले निकटवर्ती आकाशगंगा में विलीन होते विशालकाय ब्लैक-होल

31/08/2021 V3news India

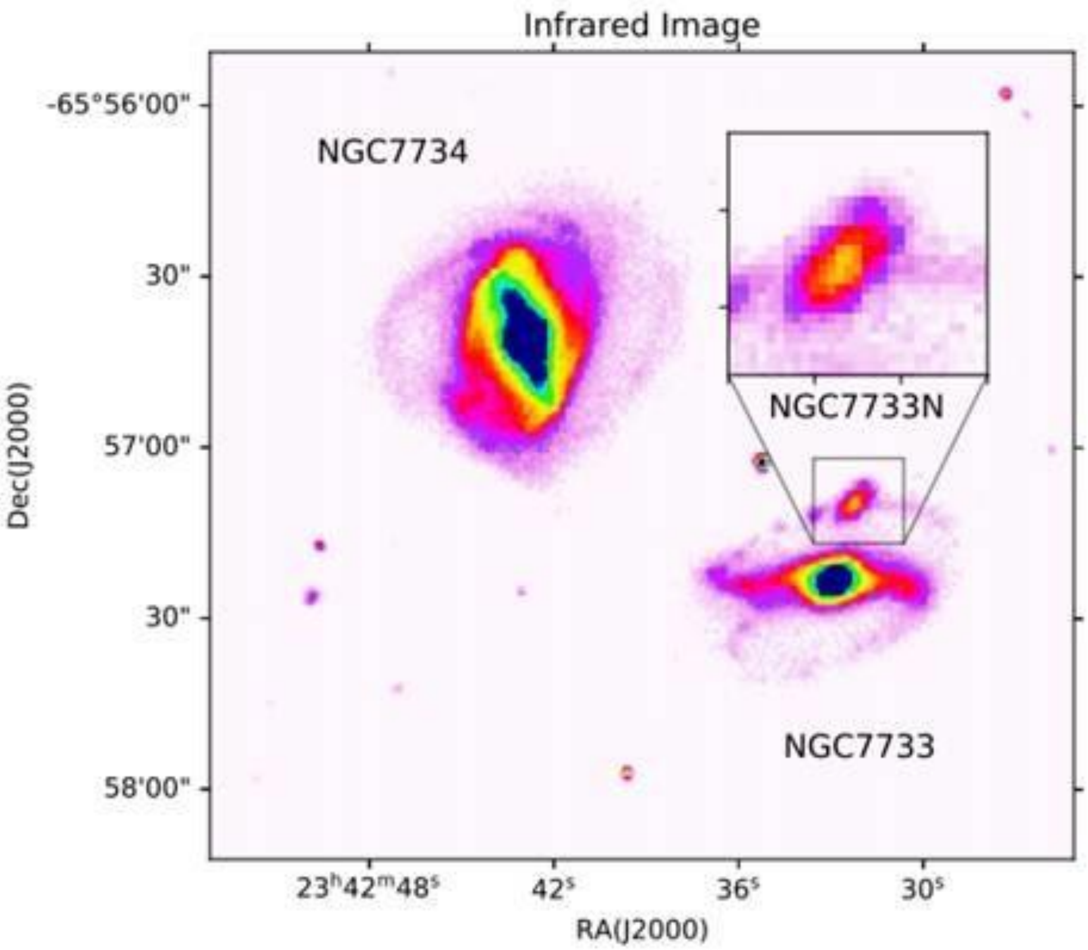

नई दिल्ली, 31 अगस्त (इंडिया साइंस वायर): ब्लैक-होल, सामान्य सापेक्षता का एक ऐसा क्षेत्र है, जहाँ गुरुत्वाकर्षण इतना शक्तिशाली होता है कि कोई भी कण या यहाँ तक कि विद्युत चुम्बकीय विकिरण जैसा प्रकाश भी इससे बच नहीं सकता है। ब्लैक-होल में वस्तुएँ गिर तो सकती हैं, परन्तु बाहर नहीं आ सकती। भारतीय वैज्ञानिकों ने अपने एक ताजा अध्ययन में निकटवर्ती आकाशगंगा में विलीन होते विशालकाय ब्लैक-होल्स का पता लगाया है।

वैज्ञानिकों के मुताबिक, विशालकाय ब्लैक-होल (Supermassive black hole), ब्लैक-होल का सबसे बड़ा प्रकार है। ऐसा अनुमान है कि अधिकांश – या संभवतः सभी – आकाशगंगाएँ अपने केंद्रों पर एक विशालकाय ब्लैक-होल रखती हैं। इस

अध्ययन में शोधकर्ताओं ने हमारी निकटवर्ती आकाशगंगा में आपस में विलीन हो रहे तीन विशालकाय ब्लैक-होल्स का पता लगाया है, जो एक साथ मिलकर एक ट्रिपल सक्रिय गैलेक्टिक न्यूक्लियस बनाते हैं।

इस नयी खोज के बारे में वैज्ञानिकों का कहना है कि यह हमारी निकटवर्ती आकाशगंगा के केंद्र में एक ऐसा ठोस क्षेत्र है, जिसमें सामान्य से बहुत अधिक चमक है। हमारी निकटवर्ती आकाशगंगाओं में घटित यह दुर्लभ घटना बताती है कि विलय होने वाले छोटे समूह बहुसंख्यक विशालकाय ब्लैक होल का पता लगाने के लिए आदर्श प्रयोगशालाएं हैं और ये ऐसी दुर्लभ घटनाओं का पता लगाने की संभावना को बढ़ाते हैं।

विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय द्वारा जारी एक वक्तव्य में यह जानकारी दी गई है। किसी प्रकार का प्रकाश उत्सर्जित नहीं करने के कारण विशालकाय ब्लैक-होल्स का पता लगाना कठिन होता है। लेकिन, वे अपने परिवेश के साथ समाहित होकर अपनी उपस्थिति प्रकट कर सकते हैं। जब आसपास से धूल और गैस ऐसे किसी विशालकाय ब्लैक-होल पर गिरती है तो उसका कुछ द्रव्यमान ब्लैक-होल द्वारा निगल लिया जाता है।

लेकिन, इसमें से कुछ द्रव्यमान ऊर्जा में परिवर्तित हो जाता है और विद्युत चुम्बकीय विकिरण के रूप में उत्सर्जित होता है, जिससे वह ब्लैक-होल बहुत चमकदार दिखाई देता है। इन्हें एक्टिव गैलेक्टिक न्यूक्लियस- एजीएन कहा जाता है। ऐसे नाभिक आकाशगंगा और उसके वातावरण में भारी मात्रा में आयनित कण और ऊर्जा छोड़ते हैं। इसके बाद ये दोनों आकाशगंगा के चारों ओर का माध्यम विकसित करने और अंततः आकाशगंगा के विकास और उसकी आकार वृद्धि में योगदान देते हैं।

भारतीय ताराभौतिकी संस्थान (इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ एस्ट्रोफिजिक्स) और फ्रांस के शोधकर्ताओं ने मिलकर एनजीसी-7733 और एनजीसी-7734 नामक आकाशगंगा का संयुक्त रूप से अध्ययन किया है। शोधकर्ताओं ने एक ज्ञात इंटर-एक्टिव आकाशगंगा एनजीसी-7734 के केंद्र से असामान्य उत्सर्जन और एनजीसी-7733 की उत्तरी भुजा के साथ एक बड़े चमकीले झुरमुटनुमा (क्लम्प) पुंज का पता लगाया है।

उनकी पड़ताल से पता चला है कि यह आकाशगंगा एनजीसी-7733 की तुलना में एक अलग ही गति से आगे बढ़ रहा है। वैज्ञानिकों का यहाँ आशय यह भी था कि यह झुरमुटनुमा पुंज एनजीसी-7733 का हिस्सा न होकर उत्तरी भुजा के पीछे की एक छोटी, मगर अलग आकाशगंगा थी। उन्होंने इस आकाशगंगा का नाम एनजीसी-7733एन रखा है।

भारतीय ताराभौतिकी संस्थान के वैज्ञानिकों का कहना है कि अगर दो आकाशगंगाएं आपस में टकराती हैं तो उनके ब्लैक-होल भी अपनी गतिज ऊर्जा को आसपास की गैस में स्थानांतरित करके पास आ जाएंगे। ब्लैक-होल्स के बीच की दूरी समय के साथ तब तक घटती जाती है, जब तक कि उनके बीच का अंतर एक पारसेक (3.26 प्रकाश-वर्ष) के आसपास न हो जाए। इसके बाद दोनों ब्लैक- होल तब अपनी और अधिक गतिज ऊर्जा का व्यय नहीं कर पाते हैं ताकि वे और करीब आकर एक-दूसरे में विलीन हो सकें।

इसे अंतिम पारसेक समस्या के रूप में जाना जाता है। वैज्ञानिकों का मानना है कि तीसरे ब्लैक-होल की उपस्थिति इस समस्या को हल कर सकती है। आपस में विलीन हो रहे दोनों ब्लैक-होल ऐसे में अपनी ऊर्जा को तीसरे ब्लैक-होल में स्थानांतरित कर सकते हैं और तब एक दूसरे के साथ विलय कर सकते हैं। इस अध्ययन में पहली भारतीय अंतरिक्ष वेधशाला पर लगे एस्ट्रोसैट अल्ट्रा-वायलेट इमेजिंग टेलीस्कोप (यूवीआईटी),

यूरोपियन इंटीग्रल फील्ड ऑप्टिकल टेलीस्कोप, जिसे एमयूएसई भी कहा जाता है, और चिली में स्थापित बहुत बड़े आकार के दूरदर्शी (वेरी लार्ज टेलीस्कोप – वीएलटी) से मिले आंकड़ों के साथ दक्षिण अफ्रीका में ऑप्टिकल टेलीस्कोप से प्राप्त (आईआरएसएफ) से प्राप्त इन्फ्रारेड चित्रों का उपयोग किया गया है। अल्ट्रा-वायलेट-यूवी और एच-अल्फा छवियों ने निकल रही

तरंगों के अतिम सिरे (टाइडल टेल्स) के साथ एक नये तारे के निर्माण का प्रकटीकरण करके वहाँ तीसरी आकाशगंगा की उपस्थिति का भी समर्थन किया,

जो एक बड़ी आकाशगंगा के साथ एनजीसी-7733 एन के विलय से बन सकती थी। इन दोनों आकाशगंगाओं के केंद्र (नाभिक) में एक सक्रिय विशालकाय ब्लैक-होल बना हुआ है। इसलिए, इनसे एक बहुत ही दुर्लभ एजीएन सिस्टम बन जाता है। शोधकर्ताओं के अनुसार, आकाशगंगा के विकास को प्रभावित करने वाला एक प्रमुख कारक आकाशगंगाओं की परस्पर क्रिया है। विभिन्न आकाशगंगाएं एक-दूसरे के निकट आती हैं और एक-दूसरे पर अपना जबरदस्त गुरुत्वाकर्षण बल लगाती हैं।

इस तरह आकाशगंगाओं के आपस में मिलते समय उनमे मौजूद विशालकाय ब्लैक-होल्स के भी एक-दूसरे के एक दूसरे के पास आने की संभावना बढ़ जाती हैं। ऐसी स्थिति में, द्विगुणित हो चुके ब्लैक-होल्स अपने परिवेश से गैस
का उपभोग करना शुरू कर देते हैं और दोहरी सक्रिय मंदाकिनीय नाभिक प्रणाली (एजीएन) में परिवर्तित हो जाते हैं। यह अध्ययन शोध-पत्रिका एस्ट्रोनॉमी ऐंड एस्ट्रोफिजिक्स में प्रकाशित किया गया है। इस अध्ययन में, भारतीय तारा भौतिकी संस्थान के शोधकर्ता ज्योति यादव, मौसमी दास एवं सुधांशु बर्वे के अलावा फ्रांस स्थित पेरिस ऑब्जर्वेटरी के शोधकर्ता फ्रेंकोइस कॉम्बेस शामिल हैं।

वैज्ञानिकों को मिले निकटवर्ती आकाशगंगा में विलीन होते विशालकाय ब्लैक-होल

By RD Times Hindi | August 31, 2021

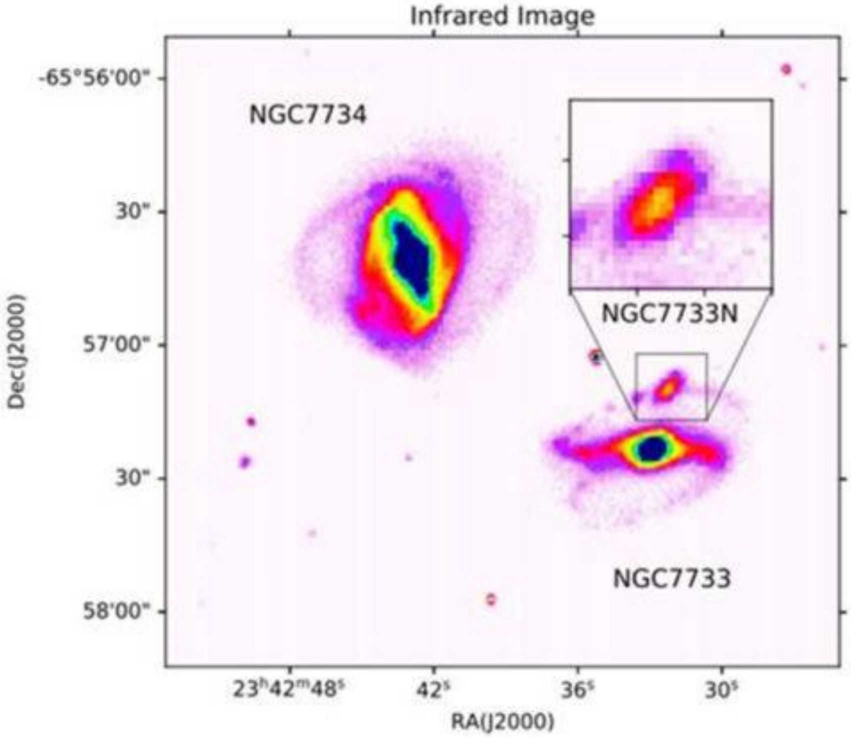

नई दिल्ली, 31 अगस्त: ब्लैक-होल, सामान्य सापेक्षता का एक ऐसा क्षेत्र है, जहाँ गुरुत्वाकर्षण इतना शक्तिशाली होता है कि कोई भी कण या यहाँ तक कि विद्युत चुम्बकीय विकिरण जैसा प्रकाश भी इससे बच नहीं सकता है।ब्लैक-होलमें वस्तुएँ गिर तो सकती हैं, परन्तु बाहर नहीं आ सकती।भारतीय वैज्ञानिकों ने अपने एक ताजा अध्ययन में निकटवर्तीआकाशगंगा में विलीन होतेविशालकाय ब्लैक-होल्स का पता लगाया है।

वैज्ञानिकों के मुताबिक, विशालकाय ब्लैक-होल(Supermassive black hole), ब्लैक-होल का सबसे बड़ा प्रकार है। ऐसा अनुमान है कि अधिकांश – या संभवतः सभी – आकाशगंगाएँ अपने केंद्रों पर एक विशालकाय ब्लैक-होल रखती हैं। इस अध्ययन में शोधकर्ताओं ने हमारी निकटवर्ती आकाशगंगा में आपस में विलीन हो रहे तीन

विशालकाय ब्लैक-होल्स का पता लगाया है, जो एक साथ मिलकर एक ट्रिपल सक्रिय गैलेक्टिक न्यूक्लियस बनाते हैं।

इस नयी खोज के बारे में वैज्ञानिकों का कहना है कि यह हमारीनिकटवर्ती आकाशगंगा के केंद्र में एक ऐसा ठोस क्षेत्र है, जिसमें सामान्य से बहुत अधिक चमक है। हमारी निकटवर्ती आकाशगंगाओं में घटित यह दुर्लभ घटना बताती है कि विलय होने वाले छोटे समूह बहुसंख्यक विशालकायब्लैक होल का पता लगाने के लिए आदर्श प्रयोगशालाएं हैं और ये ऐसी दुर्लभ घटनाओं का पता लगाने की संभावना को बढ़ाते हैं। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय द्वारा जारी एक वक्तव्य में यह जानकारी दी गई है।

किसी प्रकार का प्रकाश उत्सर्जित नहीं करने के कारण विशालकाय ब्लैक-होल्स का पता लगाना कठिन होता है। लेकिन, वे अपने परिवेश के साथ समाहित होकर अपनी उपस्थिति प्रकट कर सकते हैं। जब आसपास से धूल और गैस ऐसे किसी विशालकायब्लैक-होल पर गिरती है तो उसका कुछ द्रव्यमान ब्लैक-होल द्वारा निगल लिया जाता है। लेकिन, इसमें से कुछ द्रव्यमान ऊर्जा में परिवर्तित हो जाता है और विद्युत चुम्बकीय विकिरण के रूप में उत्सर्जित होता है, जिससे वह ब्लैक-होल बहुत चमकदार दिखाई देता है। इन्हें एक्टिव गैलेक्टिक न्यूक्लियस-एजीएन कहा जाता है। ऐसे नाभिक आकाशगंगा और उसके वातावरण में भारी मात्रा में आयनित कण और ऊर्जा छोड़ते हैं। इसके बाद ये दोनों आकाशगंगा के चारों ओर का माध्यम विकसित करने और अंततः आकाशगंगा के विकास और उसकी आकार वृद्धि में योगदान देते हैं।

भारतीय ताराभौतिकी संस्थान (इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ एस्ट्रोफिजिक्स) और फ्रांस के शोधकर्ताओं ने मिलकर एनजीसी-7733 और एनजीसी-7734 नामक आकाशगंगा का संयुक्त रूप से अध्ययन किया है। शोधकर्ताओं ने एक ज्ञात इंटर-एक्टिव आकाशगंगा एनजीसी-7734 के केंद्र से असामान्य उत्सर्जन और एनजीसी-7733 की उत्तरी भुजा के साथ एक बड़े चमकीले झुरमुटनुमा (क्लम्प) पुंज कापता लगाया है। उनकी पड़ताल से पता चला है कि यह आकाशगंगा एनजीसी-7733 की तुलना में एक अलग ही गति से आगे बढ़ रहा है। वैज्ञानिकों का यहाँ आशय यह भी था कि यह झुरमुटनुमापुंज एनजीसी-7733 का हिस्सा नहोकर उत्तरी भुजा के पीछे की एक छोटी, मगर अलग आकाशगंगा थी। उन्होंने इस आकाशगंगा का नाम एनजीसी-7733एनरखा है।

भारतीय ताराभौतिकी संस्थान के वैज्ञानिकों का कहना है कि अगर दो आकाशगंगाएं आपस में टकराती हैं तो उनके ब्लैक-होल भी अपनी गतिज ऊर्जा को आसपास की गैस में स्थानांतरित करके पास आ जाएंगे। ब्लैक-होल्स के बीच की दूरी समय के साथ तब तक घटती जाती है, जब तक कि उनके बीच का अंतर एक पारसेक (3.26 प्रकाश-वर्ष) के आसपास न हो जाए। इसके बाद दोनों ब्लैक- होल तब अपनी और अधिक गतिज ऊर्जा का व्यय नहीं कर पाते हैं ताकि वे और करीब आकरएक-दूसरे में विलीन हो सकें। इसे अंतिम पारसेक समस्या के रूप में जाना जाता है।वैज्ञानिकों का मानना है कि तीसरे ब्लैक-होल की उपस्थिति इस समस्या को हल कर सकती है। आपस में विलीन हो रहे दोनों ब्लैक-होल ऐसे में अपनी ऊर्जा को तीसरे ब्लैक-होल में स्थानांतरित कर सकते हैं और तब एक दूसरे के साथ विलय कर सकते हैं।

इस अध्ययन में पहली भारतीय अंतरिक्ष वेधशाला पर लगे एस्ट्रोसैट अल्ट्रा-वायलेट इमेजिंग टेलीस्कोप (यूवीआईटी), यूरोपियन इंटीग्रल फील्ड ऑप्टिकल टेलीस्कोप, जिसे एमयूएसई भी कहा जाता है, और चिली में

स्थापित बहुत बड़े आकार के दूरदर्शी (वेरी लार्ज टेलीस्कोप – वीएलटी) से मिले आंकड़ों के साथ दक्षिण अफ्रीका में ऑप्टिकल टेलीस्कोप से प्राप्त (आईआरएसएफ) से प्राप्त इन्फ्रारेड चित्रों का उपयोग किया गया है।

अल्ट्रा-वायलेट-यूवी और एच-अल्फा छवियों ने निकल रही तरंगों के अतिम सिरे (टाइडल टेल्स) के साथ एक नये तारे के निर्माण का प्रकटीकरण करके वहाँ तीसरी आकाशगंगा की उपस्थिति का भी समर्थन किया, जो एक बड़ी आकाशगंगा के साथ एनजीसी-7733 एन के विलय से बन सकती थी। इन दोनों आकाशगंगाओं के केंद्र (नाभिक) में एक सक्रिय विशालकाय ब्लैक-होल बना हुआ है। इसलिए, इनसे एक बहुत ही दुर्लभ एजीएन सिस्टम बन जाता है।

शोधकर्ताओं के अनुसार, आकाशगंगा के विकास को प्रभावित करने वाला एक प्रमुख कारक आकाशगंगाओं की परस्पर क्रिया है। विभिन्न आकाशगंगाएं एक-दूसरे के निकट आती हैं और एक-दूसरे पर अपना जबरदस्त गुरुत्वाकर्षण बल लगाती हैं। इस तरह आकाशगंगाओं के आपस में मिलते समय उनमे मौजूद विशालकाय ब्लैक-होल्स के भी एक-दूसरे के एक दूसरे के पास आने की संभावनाबढ़ जाती हैं। ऐसी स्थिति में, द्विगुणित हो चुके ब्लैक-होल्स अपने परिवेश से गैस का उपभोग करना शुरू कर देते हैं और दोहरी सक्रिय मंदाकिनीय नाभिक प्रणाली (एजीएन) में परिवर्तित हो जाते हैं।

यह अध्ययन शोध-पत्रिका *एस्ट्रोनॉमी ऐंड एस्ट्रोफिजिक्स* में प्रकाशित किया गया है। इस अध्ययन में, भारतीय ताराभौतिकी संस्थान के शोधकर्ता ज्योति यादव, मौसमी दास एवं सुधांशु बर्वे के अलावा फ्रांस स्थित पेरिस ऑब्जर्वेटरी के शोधकर्ताफ्रेंकोइस कॉम्बेसशामिल हैं। अगस्त (इंडिया साइंस वायर)

भारत हेराल्ड

वैज्ञानिकों को मिले निकटवर्ती आकाशगंगा में विलीन होते विशालकाय ब्लैक-होल

3 weeks ago

नई दिल्ली, 31 अगस्त: ब्लैक-होल, सामान्य सापेक्षता का एक ऐसा क्षेत्र है, जहाँ गुरुत्वाकर्षण इतना शक्तिशाली होता है कि कोई भी कण या यहाँ तक कि विद्युत चुम्बकीय विकिरण जैसा प्रकाश भी इससे बच नहीं सकता है।ब्लैक-होलमें वस्तुएँ गिर तो सकती हैं, परन्तु बाहर नहीं आ सकती।भारतीय वैज्ञानिकों ने अपने एक ताजा अध्ययन में निकटवर्तीआकाशगंगा में विलीन होतेविशालकाय ब्लैक-होल्स का पता लगाया है।

वैज्ञानिकों के मुताबिक, विशालकाय ब्लैक-होल(Supermassive black hole), ब्लैक-होल का सबसे बड़ा प्रकार है। ऐसा अनुमान है कि अधिकांश – या संभवतः सभी – आकाशगंगाएँ अपने केंद्रों पर एक विशालकाय ब्लैक-होल रखती हैं। इस अध्ययन में शोधकर्ताओं ने हमारी निकटवर्ती आकाशगंगा में आपस में विलीन हो रहे तीन विशालकाय ब्लैक-होल्स का पता लगाया है, जो एक साथ मिलकर एक ट्रिपल सक्रिय गैलेक्टिक न्यूक्लियस बनाते हैं।

इस नयी खोज के बारे में वैज्ञानिकों का कहना है कि यह हमारीनिकटवर्ती आकाशगंगा के केंद्र में एक ऐसा ठोस क्षेत्र है, जिसमें सामान्य से बहुत अधिक चमक है। हमारी निकटवर्ती आकाशगंगाओं में घटित यह दुर्लभ घटना बताती है कि विलय होने वाले छोटे समूह बहुसंख्यक विशालकायब्लैक होल का पता लगाने के लिए आदर्श प्रयोगशालाएं हैं और ये ऐसी दुर्लभ घटनाओं का पता लगाने की संभावना को बढ़ाते हैं। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय द्वारा जारी एक वक्तव्य में यह जानकारी दी गई है।

किसी प्रकार का प्रकाश उत्सर्जित नहीं करने के कारण विशालकाय ब्लैक-होल्स का पता लगाना कठिन होता है। लेकिन, वे अपने परिवेश के साथ समाहित होकर अपनी उपस्थिति प्रकट कर सकते हैं। जब आसपास से धूल और गैस ऐसे किसी विशालकायब्लैक-होल पर गिरती है तो उसका कुछ द्रव्यमान ब्लैक-होल द्वारा निगल लिया जाता है। लेकिन, इसमें से कुछ द्रव्यमान ऊर्जा में परिवर्तित हो जाता है और विद्युत चुम्बकीय विकिरण के रूप में उत्सर्जित होता है, जिससे वह ब्लैक-होल बहुत चमकदार दिखाई देता है। इन्हें एक्टिव गैलेक्टिक न्यूक्लियस-एजीएन कहा जाता है। ऐसे नाभिक आकाशगंगा और उसके वातावरण में भारी मात्रा में आयनित कण और ऊर्जा छोड़ते हैं। इसके बाद ये दोनों आकाशगंगा के चारों ओर का माध्यम विकसित करने और अंततः आकाशगंगा के विकास और उसकी आकार वृद्धि में योगदान देते हैं।

भारतीय ताराभौतिकी संस्थान (इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ एस्ट्रोफिजिक्स) और फ्रांस के शोधकर्ताओं ने मिलकर एनजीसी-7733 और एनजीसी-7734 नामक आकाशगंगा का संयुक्त रूप से अध्ययन किया है। शोधकर्ताओं ने

एक ज्ञात इंटर-एक्टिव आकाशगंगा एनजीसी-7734 के केंद्र से असामान्य उत्सर्जन और एनजीसी-7733 की उत्तरी भुजा के साथ एक बड़े चमकीले झुरमुटनुमा (क्लम्प) पुंज कापता लगाया है। उनकी पड़ताल से पता चला है कि यह आकाशगंगा एनजीसी-7733 की तुलना में एक अलग ही गति से आगे बढ़ रहा है। वैज्ञानिकों का यहाँ आशय यह भी था कि यह झुरमुटनुमापुंज एनजीसी-7733 का हिस्सा नहोकर उत्तरी भुजा के पीछे की एक छोटी, मगर अलग आकाशगंगा थी। उन्होंने इस आकाशगंगा का नाम एनजीसी-7733एनरखा है।

भारतीय ताराभौतिकी संस्थान के वैज्ञानिकों का कहना है कि अगर दो आकाशगंगाएं आपस में टकराती हैं तो उनके ब्लैक-होल भी अपनी गतिज ऊर्जा को आसपास की गैस में स्थानांतरित करके पास आ जाएंगे। ब्लैक-होल्स के बीच की दूरी समय के साथ तब तक घटती जाती है, जब तक कि उनके बीच का अंतर एक पारसेक (3.26 प्रकाश-वर्ष) के आसपास न हो जाए। इसके बाद दोनों ब्लैक- होल तब अपनी और अधिक गतिज ऊर्जा का व्यय नहीं कर पाते हैं ताकि वे और करीब आकरएक-दूसरे में विलीन हो सकें। इसे अंतिम पारसेक समस्या के रूप में जाना जाता है।वैज्ञानिकों का मानना है कि तीसरे ब्लैक-होल की उपस्थिति इस समस्या को हल कर सकती है। आपस में विलीन हो रहे दोनों ब्लैक-होल ऐसे में अपनी ऊर्जा को तीसरे ब्लैक-होल में स्थानांतरित कर सकते हैं और तब एक दूसरे के साथ विलय कर सकते हैं।

इस अध्ययन में पहली भारतीय अंतरिक्ष वेधशाला पर लगे एस्ट्रोसैट अल्ट्रा-वायलेट इमेजिंग टेलीस्कोप (यूवीआईटी), यूरोपियन इंटीग्रल फील्ड ऑप्टिकल टेलीस्कोप, जिसे एमयूएसई भी कहा जाता है, और चिली में स्थापित बहुत बड़े आकार के दूरदर्शी (वेरी लार्ज टेलीस्कोप – वीएलटी) से मिले आंकड़ों के साथ दक्षिण अफ्रीका में ऑप्टिकल टेलीस्कोप से प्राप्त (आईआरएसएफ) से प्राप्त इन्फ्रारेड चित्रों का उपयोग किया गया है।

अल्ट्रा-वायलेट-यूवी और एच-अल्फा छवियों ने निकल रही तरंगों के अतिम सिरे (टाइडल टेल्स) के साथ एक नये तारे के निर्माण का प्रकटीकरण करके वहाँ तीसरी आकाशगंगा की उपस्थिति का भी समर्थन किया, जो एक बड़ी आकाशगंगा के साथ एनजीसी-7733 एन के विलय से बन सकती थी। इन दोनों आकाशगंगाओं के केंद्र (नाभिक) में एक सक्रिय विशालकाय ब्लैक-होल बना हुआ है। इसलिए, इनसे एक बहुत ही दुर्लभ एजीएन सिस्टम बन जाता है।

शोधकर्ताओं के अनुसार, आकाशगंगा के विकास को प्रभावित करने वाला एक प्रमुख कारक आकाशगंगाओं की परस्पर क्रिया है। विभिन्न आकाशगंगाएं एक-दूसरे के निकट आती हैं और एक-दूसरे पर अपना जबरदस्त गुरुत्वाकर्षण बल लगाती हैं। इस तरह आकाशगंगाओं के आपस में मिलते समय उनमे मौजूद विशालकाय ब्लैक-होल्स के भी एक-दूसरे के एक दूसरे के पास आने की संभावनाबढ़ जाती हैं। ऐसी स्थिति में, द्विगुणित हो चुके ब्लैक-होल्स अपने परिवेश से गैस का उपभोग करना शुरू कर देते हैं और दोहरी सक्रिय मंदाकिनीय नाभिक प्रणाली (एजीएन) में परिवर्तित हो जाते हैं।

यह अध्ययन शोध-पत्रिका *एस्ट्रोनॉमी ऐंड एस्ट्रोफिजिक्स* में प्रकाशित किया गया है। इस अध्ययन में, भारतीय ताराभौतिकी संस्थान के शोधकर्ता ज्योति यादव, मौसमी दास एवं सुधांशु बर्वे के अलावा फ्रांस स्थित पेरिस ऑब्जर्वेटरी के शोधकर्ताफ्रेंकोइस कॉम्बेसशामिल हैं। अगस्त (इंडिया साइंस वायर)

वैज्ञानिकों को मिले निकटवर्ती आकाशगंगा में विलीन होते विशालकाय ब्लैक-होल

भारतीय वैज्ञानिकों ने अपने एक ताजा अध्ययन में निकटवर्ती आकाशगंगा में विलीन होते विशालकाय ब्लैक-होल्स का पता लगाया है। वैज्ञानिकों के मुताबिक, विशालकाय ब्लैक-होल **(Supermassive black hole),** ब्लैक-होल का सबसे बड़ा प्रकार है।

By Guest Writer | Tue, 31 Aug 2021

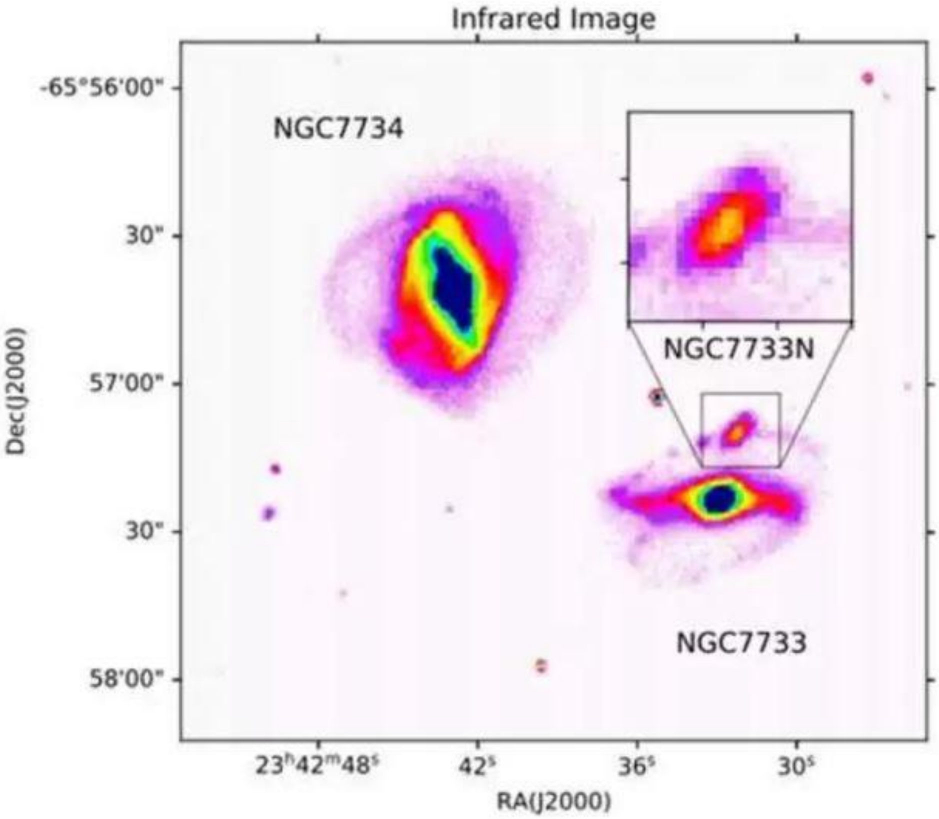

Scientists find giant black-hole merging in a nearby galaxy

ब्लैक-होल क्या है ? What is Black-hole?

नई दिल्ली, 31 अगस्त 2021: ब्लैक-होल, सामान्य सापेक्षता का एक ऐसा क्षेत्र है, जहाँ **गुरुत्वाकर्षण (gravity)** इतना शक्तिशाली होता है कि कोई भी कण या यहाँ तक कि विद्युत चुम्बकीय विकिरण जैसा प्रकाश भी इससे बच नहीं सकता है। ब्लैक-होल में वस्तुएँ गिर तो सकती हैं, परन्तु बाहर नहीं आ सकती।

भारतीय वैज्ञानिकों ने अपने एक ताजा अध्ययन में निकटवर्ती आकाशगंगा में विलीन होते विशालकाय ब्लैक-होल्स का पता लगाया है।

वैज्ञानिकों के मुताबिक, विशालकाय ब्लैक-होल (Supermassive black hole), ब्लैक-होल का सबसे बड़ा प्रकार है। ऐसा अनुमान है कि अधिकांश - या संभवतः सभी - आकाशगंगाएँ अपने केंद्रों पर एक विशालकाय ब्लैक-होल रखती हैं। इस अध्ययन में शोधकर्ताओं ने हमारी निकटवर्ती आकाशगंगा में आपस में विलीन हो रहे तीन विशालकाय ब्लैक-होल्स का पता लगाया है, जो एक साथ मिलकर एक ट्रिपल सक्रिय गैलेक्टिक न्यूक्लियस बनाते हैं।

इस नयी खोज के बारे में वैज्ञानिकों का कहना है कि यह हमारी निकटवर्ती आकाशगंगा के केंद्र में एक ऐसा ठोस क्षेत्र है, जिसमें सामान्य से बहुत अधिक चमक है। हमारी निकटवर्ती आकाशगंगाओं में घटित यह दुर्लभ घटना बताती है कि विलय होने वाले छोटे समूह बहुसंख्यक विशालकाय ब्लैक होल का पता लगाने के लिए आदर्श प्रयोगशालाएं हैं और ये ऐसी दुर्लभ घटनाओं का पता लगाने की संभावना को बढ़ाते हैं। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी मंत्रालय द्वारा जारी एक वक्तव्य में यह जानकारी दी गई है।

किसी प्रकार का प्रकाश उत्सर्जित नहीं करने के कारण विशालकाय ब्लैक-होल्स का पता लगाना कठिन होता है। लेकिन, वे अपने परिवेश के साथ समाहित होकर अपनी उपस्थिति प्रकट कर सकते हैं। जब आसपास से धूल और गैस ऐसे किसी विशालकाय ब्लैक-होल पर गिरती है तो उसका कुछ द्रव्यमान ब्लैक-होल द्वारा निगल लिया जाता है। लेकिन, इसमें से कुछ द्रव्यमान ऊर्जा में परिवर्तित हो जाता है और विद्युत चुम्बकीय विकिरण के रूप में उत्सर्जित होता है, जिससे वह ब्लैक-होल बहुत चमकदार दिखाई देता है। इन्हें एक्टिव गैलेक्टिक न्यूक्लियस-एजीएन कहा जाता है। ऐसे नाभिक आकाशगंगा और उसके वातावरण में भारी मात्रा में आयनित कण और ऊर्जा छोड़ते हैं। इसके बाद ये दोनों आकाशगंगा के चारों ओर का माध्यम विकसित करने और अंततः आकाशगंगा के विकास और उसकी आकार वृद्धि में योगदान देते हैं।

भारतीय ताराभौतिकी संस्थान (इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ एस्ट्रोफिजिक्स) और फ्रांस के शोधकर्ताओं ने मिलकर एनजीसी-7733 और एनजीसी-7734 नामक आकाशगंगा का संयुक्त रूप से अध्ययन किया है।

शोधकर्ताओं ने एक ज्ञात इंटर-एक्टिव आकाशगंगा एनजीसी-7734 के केंद्र से असामान्य उत्सर्जन और एनजीसी-7733 की उत्तरी भुजा के साथ एक बड़े चमकीले झुरमुटनुमा (क्लम्प) पुंज का पता लगाया है। उनकी पड़ताल से पता चला है कि यह आकाशगंगा एनजीसी-7733 की तुलना में एक अलग ही गति से आगे बढ़ रहा है। वैज्ञानिकों का यहाँ आशय यह भी था कि यह झुरमुटनुमा पुंज एनजीसी-7733 का हिस्सा न होकर उत्तरी भुजा के पीछे की एक छोटी, मगर अलग आकाशगंगा थी। उन्होंने इस आकाशगंगा का नाम एनजीसी-7733एन रखा है।

भारतीय ताराभौतिकी संस्थान के वैज्ञानिकों का कहना है कि अगर दो आकाशगंगाएं आपस में टकराती हैं तो उनके ब्लैक-होल भी अपनी गतिज ऊर्जा को आसपास की गैस में स्थानांतरित करके पास आ जाएंगे। ब्लैक-होल्स

के बीच की दूरी समय के साथ तब तक घटती जाती है, जब तक कि उनके बीच का अंतर एक पारसेक (3.26 प्रकाश-वर्ष) के आसपास न हो जाए। इसके बाद दोनों ब्लैक- होल तब अपनी और अधिक गतिज ऊर्जा का व्यय नहीं कर पाते हैं ताकि वे और करीब आकर एक-दूसरे में विलीन हो सकें। इसे अंतिम पारसेक समस्या के रूप में जाना जाता है।

वैज्ञानिकों का मानना है कि तीसरे ब्लैक-होल की उपस्थिति इस समस्या को हल कर सकती है। आपस में विलीन हो रहे दोनों ब्लैक-होल ऐसे में अपनी ऊर्जा को तीसरे ब्लैक-होल में स्थानांतरित कर सकते हैं और तब एक दूसरे के साथ विलय कर सकते हैं।

इस अध्ययन में पहली भारतीय अंतरिक्ष वेधशाला पर लगे एस्ट्रोसैट अल्ट्रा-वायलेट इमेजिंग टेलीस्कोप (यूवीआईटी), यूरोपियन इंटीग्रल फील्ड ऑप्टिकल टेलीस्कोप, जिसे एमयूएसई भी कहा जाता है, और चिली में स्थापित बहुत बड़े आकार के दूरदर्शी (वेरी लार्ज टेलीस्कोप - वीएलटी) से मिले आंकड़ों के साथ दक्षिण अफ्रीका में ऑप्टिकल टेलीस्कोप से प्राप्त (आईआरएसएफ) से प्राप्त इन्फ्रारेड चित्रों का उपयोग किया गया है।

अल्ट्रा-वायलेट-यूवी और एच-अल्फा छवियों ने निकल रही तरंगों के अतिम सिरे (टाइडल टेल्स) के साथ एक नये तारे के निर्माण का प्रकटीकरण करके वहाँ तीसरी आकाशगंगा की उपस्थिति का भी समर्थन किया, जो एक बड़ी आकाशगंगा के साथ एनजीसी-7733 एन के विलय से बन सकती थी। इन दोनों आकाशगंगाओं के केंद्र (नाभिक) में एक सक्रिय विशालकाय ब्लैक-होल बना हुआ है। इसलिए, इनसे एक बहुत ही दुर्लभ एजीएन सिस्टम बन जाता है।

शोधकर्ताओं के अनुसार, आकाशगंगा के विकास को प्रभावित करने वाला एक प्रमुख कारक आकाशगंगाओं की परस्पर क्रिया है। विभिन्न आकाशगंगाएं एक-दूसरे के निकट आती हैं और एक-दूसरे पर अपना जबरदस्त गुरुत्वाकर्षण बल लगाती हैं। इस तरह आकाशगंगाओं के आपस में मिलते समय उनमे मौजूद विशालकाय ब्लैक-होल्स के भी एक-दूसरे के एक दूसरे के पास आने की संभावना बढ़ जाती हैं। ऐसी स्थिति में, द्विगुणित हो चुके ब्लैक-होल्स अपने परिवेश से गैस का उपभोग करना शुरू कर देते हैं और दोहरी सक्रिय मंदाकिनीय नाभिक प्रणाली (एजीएन) में परिवर्तित हो जाते हैं।

यह अध्ययन शोध-पत्रिका *एस्ट्रोनॉमी ऐंड एस्ट्रोफिजिक्स* में प्रकाशित किया गया है। इस अध्ययन में, भारतीय ताराभौतिकी संस्थान के शोधकर्ता ज्योति यादव, मौसमी दास एवं सुधांशु बर्वे के अलावा फ्रांस स्थित पेरिस ऑब्जर्वेटरी के शोधकर्ता फ्रेंकोइस कॉम्बेस शामिल हैं।

(इंडिया साइंस वायर)

Topics: Active galactic nucleus, NGC 7733–7734, Indian Institute of Astrophysics, Observatoire de Paris, LERMA, Galaxy interactions, supermassive black hole (SMBH), आकाशगंगा में विलीन होते विशालकाय ब्लैक-होल